यह नरदेह

यह नरदेह

बिमल मित्र

खण्ड : 2

जो लोग भाग्य पर विश्वास नहीं करते वे जीवन पर विश्वास करते हैं। आदमी के जीवन का कोई-न-कोई अर्थ है, इसे वे मानते है। मानते हैं कि जीवन नदी जैसा है। कही पतला, कही मोटा, कही गहरा, कही छिछला, कही नीला, कही पीला, कही शीतल और कही उष्ण। नदी की नाईं ही वे सचल हैं। तमाम नदियों का उद्देश्य होता है आगे की ओर बढ़ना और समुद्र में मिलकर एकाकार हो जाना। समुद्र में जाकर विलीन होना, समुद्र में मिल जाना। अनन्त से मिलकर अनन्त होना। अन्तर्लीन होना।

लेकिन आदमी ?

आदमी के साथ भी यही बात है। लेकिन एक मामले में आदमी से नदी का अन्तर है। नदी जब बहती है तो वह चाहती है, उसके आसपास की जमीन सरस हो, उसमें फसल पैदा हो, वहां के बाशिन्दे उस फसल को खाकर जीवन जिएं, सुखी होएं।

लेकिन आदमी के साथ ठीक उससे विपरीत स्थिति है। आदमी कहता है—तुम्हारा चाहे भला हो या बुरा, यह देखना मेरी जिम्मेदारी नहीं। तुम्हें भर पेट खाना मिला या नही, तुम जिन्दा रहो या मर जाओ, तुम सुखी हो सके या नही, उसके लिए मुझे कोई चिन्ता नही। मैं स्वयं को लेकर ही जीवित रहूंगा। मुझे घर-द्वार, खाना-पीना मिल जाने और मेरे परिवार के लोगो के सुखी होने पर मैं निश्चिन्त हो जाऊंगा। जिन्दगी के आखिरी दौर में मुझे अमृत प्राप्त होगा या नही, इस सम्बन्ध में सोच-सोचकर आए दिन के आराम को मैं नष्ट नही होने दूंगा। मेरे लिए वर्तमान ही सत्य है। अतीत और भविष्य के बारे में सोचने का मेरे पास वक्त नही है। कल की बात कल सोचूंगा, आज तुम्हारे पास जो कुछ है, वह मुझे दो, मैं उसका उपभोग करूं।

यह बात जिसने कही थी वह है ऋषि याज्ञवल्क की पत्नी मैत्रेयी।

धरती पर जब आंधी-तूफान चलने लगता है तो वही शान्त नदी ही पानी से लबालब भरकर बाढ़ मे पूरे जनपद को डुबाकर, बहाकर आदमी के द्वारा उगाई गई फसल को बर्बाद कर देती है, आदमी की जान ले लेती है वह। जोरो का धक्का देकर वह अपनी आपत्ति का इजहार करती है। यह आपत्ति क्यों करती है ?

वह आपत्ति है आदमी के अत्याचार और अनाचार के विरोध मे, आदमी की अवहेलना के विरोध मे, आदमी के अन्याय के विरोध में।

आदमी ने नदी पर क्या कोई कम अत्याचार-अनाचार किया है ? कोई कम उपेक्षा की है उसकी ? आदमी ने क्या उसके अन्दर कम कूड़ा-कचरा और गदगी फेंकी है ? लिहाजा नदी अगर कोई विरोध करती है, बदला लेती है तो उसका कौन-सा दोष है ? तुम लोगो ने नदी को क्या कभी प्यार किया है ? तुम्हारा तो नदी से सिर्फ आवश्यकता का ही रिश्ता है। तुमने नदी को कभी स्नेह नही दिया, कभी उससे मुहब्बत नही की।

उस याज्ञवल्क की पत्नी मैत्रेयी जैसा अनमोल वचन और किसने कहा है ?

अगर कुछ लोगो ने कहा भी है तो आदमी ने उसका गला घोंट डाला है। उनकी हत्या कर, उनका खात्मा कर आदमी ने कृतार्थ होना चाहा है। लेकिन इतिहास ?

संदीप भी उस समय इतिहास के बारे में ही सोच रहा था। उसने विशाखा से शादी कर मौसीजी के जीवन की एकमात्र इच्छा को साकार रूप देना चाहा था। दूसरे के उपकार के लिए अपना सारा कुछ निछावर करना चाहा था। इसके लिए उसने अपने पैतृक मकान तक को बंधक रख दिया था। फिर ऐसा क्यों हुआ ?

संपूर्ण विवाह-घर तब उत्तेजना से थर-थर कांप रहा था। इस अप्रत्याशित घटना को देखने के लिए तब अगल-बगल के मकानों से भी लोग दौड़े-दौड़े चले आए थे। एक-दूसरे से पूछ रहा था, "क्या हुआ भाई साहब ? विवाह-घर में इतने पुलिस-कर्मी क्यों घुस आए हैं ?"

इस बात का जवाब कौन देगा ? जो दे सकता था वह है संदीप। लेकिन संदीप तब आदमी और पुलिस के हाथों बंदी था। बूढ़े चटर्जी बाबू को कन्यादान करने के दौरान बाधा का सामना करना पड़ा। वे भी इस आकस्मिक घटना से भौंचक-से रह गए।

संदीप के सामने तब दादी मां खड़ी थीं। संदीप अपलक उनकी ओर ताकता रहा। उसकी आंखों में आकुल प्रश्न उभर आया। मल्लिकजी ने संदीप से कहा, "तुम हटकर खड़ा हो जाओ संदीप—"

संदीप की समझ में कुछ भी नहीं आया बोला, "यह सब क्या बात है चाचाजी, मैं कुछ भी नहीं समझ पा रहा हूं।"

इस बीच दादी मां सौम्यपद को गाड़ी से नीचे उतार चुकी थीं।

संदीप ने सौम्यपद बाबू की तरफ गौर से देखा। उनका वह चेहरा कहां गायब हो गया ? कहां लापता हो गई उनकी जवानी ? जेल में रहने के कारण ही क्या उनकी शक्ल-सूरत में यह तब्दीली आ गई है ?

संदीप जैसे ही उठकर खड़ा हुआ, मल्लिकजी ने उसके स्थान पर सौम्यपद को बिठा दिया। सात-आठ पुलिसकर्मी उसे घेरकर खड़े हो गए ताकि वह कहीं भाग न जाए।

पुरोहितजी भी तब ठगे-से दिख रहे थे। उनके मुंह से कोई शब्द नहीं निकल रहा था।

शायद वे आपत्ति करनेवाले थे, पर मल्लिकजी ने कहा, "अब इस नए पात्र के हाथ में ही कन्यादान करें पुरोहितजी। देर नहीं करें, हाथ में ज्यादा वक्त नहीं है।"

लेकिन चटर्जी साहब विरोध करते हुए उठकर खड़े हो गए। बोले, "आप लोग यह सब क्या कर रहे हैं ?"

उसके बाद मल्लिकजी पर निगाह पड़ते ही उन्हें याद आया कि इस व्यक्ति को वे पहचानते हैं। बोले, "आप पहचाने-पहचाने जैसे लगते हैं—"

मल्लिकजी बोले, "मैं परमेश हूं। मैं बेड़ापोता का ही रहने वाला हूं। मैं संदीप के पिता हरिपद लाहिड़ी का दोस्त था। मेरा नाम है परमेश मल्लिक—"

"आपलोग अचानक यह सब कांड क्यों कर रहे हैं ? इस लड़की से संदीप की शादी की कन्यादान की रस्म की अदायगी मैं ही कर रहा हूं। आप लोगों ने दूल्हे के स्थान पर किसे लाकर बिठा दिया ? यह कौन है ?"

दादी मां ने कहा, "यह मेरा पोता है।"

"सो पात्र भले ही आपका पोता हो, लेकिन इस शादी में व्यवधान डालने का आप लोगों को किसने अधिकार दिया ? मैं इस अन्याय को किसी भी हालत में बरदाश्त नहीं करूंगा—कानून तोड़ने के अपराध में मैं आप लोगों पर कोर्ट में मुकदमा दायर कर दूंगा—"

दादी मां बोलीं, "आपको यदि यह अधिकार है तो आप वैसा कर सकते हैं, लेकिन मैं यह शादी कराऊंगी ही।"

चटर्जी बाबू बोले, "मुझे देखना है कि मेरे रहते आपलोग इस विवाह को कैसे रोक देते हैं। इस लड़की की मा कैंसर की मरीज़ा है, उसी की मर्जी से संदीप इससे शादी कर रहा है।"

दादी मां ने कहा, "उसके कैंसर की बीमारी के इलाज मे जो भी खर्च होगा, मैं दूंगी। लेकिन अपने पोते से इस लड़की की शादी मैं कराऊंगी ही। अपने पोते से शादी कराने के खयाल से मैंने बचपन से ही इसके खाने-पहनने की सारी चीजों का इन्तज़ाम कर इसे हर तरह से योग्य बनाया है। संदीप को सारा कुछ मालूम है। संदीप को बुलाइए—"

चटर्जी बाबू यह सुनकर अवाक् हो गए।

बोले, "विशाखा को खाना-पीना, कपडा देकर आपने पाला-पोसा है?"

"हां, यकीन न हो तो आप इस पात्री से ही पूछ लीजिए। विशाखा सबकुछ जानती है। आप विशाखा से पूछ लीजिए।"

चटर्जी बाबू ने झुककर पूछा, "क्या बिटिया, यह बात सच है? उन्होंने ही तुम्हें अपने पोते मे शादी कराने के इरादे से कपड़ा-लत्ता, खाना-पीना देकर तुम्हारा लालन-पालन किया है?"

दादी मा ने कहा, "सिर्फ खिलाया-पिलाया ही नहीं है बल्कि अपना पैसा खर्च कर इसे बी० ए० पास कराया है। अपने साहबी मुहल्ले के मकान में बगैर कोई किराया लिए मा और लड़की को रख, उनके लिए महरी और ड्राइवर नियुक्त कर उसे हर तरह से योग्य बनाया है। इस मद में मेरे कई लाख रुपये खर्च हुए हैं।"

चटर्जी बाबू ने कहा, "तो फिर मा और बेटी उस मकान को छोड बेड़ापोता क्यों चली आईं?"

"आप यह बात पात्री से ही पूछें। वह आपके सामने ही बैठी हुई है। उससे पूछिए।"

चटर्जी बाबू ने विशाखा की तरफ देखकर पूछा, "क्या बिटिया, वे जो कुछ कह रही हैं, सच है?"

विशाखा जिस तरह सिर झुकाए बैठी थी, उसी तरह बैठी रही। किसी भी बात का उत्तर नहीं दिया। चटर्जी बाबू ने दुबारा पूछा, "क्यों, तुम कुछ बोल क्यों नही रही? जवाब दो। कुछ तो बोलो···"

फिर भी विशाखा को खामोश पाकर दादी मा अधीर हो उठी। बोली, "ज़रा जल्दबाज़ी कीजिए। मुझे बहू को कलकत्ता ले जाना है···पुरोहितजी, आप देर नही करें।"

चटर्जीबाबू बोल उठे, "कहां? संदीप कहा गया?"

आस-पास तब अन्दर-बाहर के निमंत्रित-अनिमन्त्रित, अनाहूत-आहूत औरतों और मर्दों की भीड थी। वे लोग इसके पहले बहुत सारे विवाह-घर के उत्सव-अनुष्ठान मे शरीक हो चुके हैं, लेकिन इनमें से किसी ने न तो इस तरह की कभी घटना देखी थी और न सुनी थी। उस समय वे दूल्हे की तलाश में व्यस्त थे। दूल्हा का मतलब संदीप। संदीप कहा गया? इस सम्बन्ध में उसकी अनुमति की आवश्यकता है। वह कहा है? कहा है वह?

चटर्जीबाबू ने एक जाने-पहचाने व्यक्ति से कहा, "अरे कार्तिक, संदीप को बुला लाओ तो। वह कहां गया?"

इन्दौर से सवेरे हवाई जहाज से मुक्तिपद के कलकत्ता पहुंचने की बात थी। लेकिन कल-पुर्जे की कुछ गड़बड़ी के कारण वे तीसरे पहर पांच बजे पहुंचे।

अपने विडन स्थित भवन में मां को पहले ही टेलीफोन से सूचित कर देना चाहते थे लेकिन टेलीफोन लाइन खराब थी और इसीलिए ऐसा करना संभव नहीं हो सका था। दमदम हवाई अड्डे पर उतर उन्होंने थोड़ा खाना खा लिया।

पहले से पता होता तो घर से गाड़ी भेज दी गई होती। आने-जाने में असुविधा नहीं होती। पर किया ही क्या जा सकता है! एयरपोर्ट से टैक्सी पर आना पड़ा।

एकबारगी सीधे कॉलिन्स स्ट्रीट आए। कहां सवेरे जाना था, लेकिन शाम के सात बज गए। रास्ता खाली रहता तो एक घंटा और पहले ही पहुंच जाते। हो सकता है उनका इन्तजार करते-करते आखिर में निराश होकर मिस्टर हाजरा चले गए होंगे। कब तक उनका इन्तजार करता रहेगा? जो लोग कामकाजी हैं। उनका वक्त कीमती होता है। वे कब तक इन्तजार करेंगे?

उनके जाते ही हरदयाल आगे बढ़कर आया। बोला, 'आइए सर, मेरा नाम हरदयाल है।"

मुक्तिपद ने पूछा, "मिस्टर हाजरा कहा हैं?"

हरदयाल ने कहा, "वे बहुत देर तक आपका इन्तजार करते रहे। अभी थोड़ी देर पहले गए हैं। आज तीसरे पहर पार्टी ऑफिस में उनकी मीटिंग है।"

मुक्तिपद ने कहा, "रास्ते में प्लेन में खराबी आ गई थी, इसी वजह से देर हो गई। अभी उन्हें पार्टी ऑफिस में फोन किया जा सकता है?"

"किया जा सकता है। लेकिन मिलेंगे या नहीं, मालूम नहीं।"

"अच्छा, मैं बैठ रहा हूं, देखिए मिलते हैं या नहीं।"

"देखता हूं—"

यह कहकर हरदयाल टेलीफोन करने चला गया। वे अकेले ही कमरे में बैठे रहे।

थोड़ी देर बाद एक महिला एक प्याली कॉफी लेकर आई और बोली, "तब तक कॉफी पीजिए।"

इस बीच हरदयाल पार्टी ऑफिस में टेलीफोन कर रहा है।

"वहां गोपाल-दा हैं? मैं हरदयाल बोल रहा हूं—"

"जरा थामे रहिए।"

'थामे रहिए' कहने के बावजूद काफी देर हो गई। गोपाल बाबू व्यस्त आदमी हैं। हरदयाल कान में रिसीवर लगाए इन्तजार करता रहा।

असल में मंत्री श्रीपति मिश्र के दो हाथ हैं। एक हाथ है लेबर लीडर वरदा घोपाल और दूसरा गोपाल हाजरा। वे दोनों न रहते हैं तो श्रीपति मिश्र का काम ठप्प पड़ जाता है। इसलिए पार्टी मीटिंग में इन लोगों का रहना बहुत जरूरी है।

गोपाल हाजरा के न रहने से जिस प्रकार श्रीपति मिश्र का काम नहीं चलता, उसी प्रकार देश का काम भी नहीं चलता। देश के कल-कारखाने, खेतीबारी, खाना-पहनना, स्कूल-कॉलेज वगैरह गोपाल हाजरा और वरदा घोपाल के कारण ही चल रहे हैं। कौन कलकत्ता युनिवर्सिटी का वाइस चांसलर होगा, किसे रवीन्द्र पुरस्कार या विद्यासागर पुरस्कार या बंकिम पुरस्कार मिलेगा, इसका निर्णय वरदा घोपाल और गोपाल हाजरा ही करते हैं। इसके अलावा राजनीतिक और सांस्कृतिक मामले की बाग-डोर भी ये दोनों ही संभालते हैं।

लेकिन गोपाल हाजरा में एक गुण है—वह कभी सामने नहीं आना चाहता। उसे मन्त्री का पद भी दिया जाए तो वह स्वीकार नहीं करेगा। वह अक्लमन्द की तरह

परदे की आड मे रहना ही पसन्द करता है। परदे की आड़ में रहकर ही काम को सुचारु रूप में चलाना पसन्द करता है। उसका कोई निश्चित मुकाम भी नही है। उसे खोजकर निकालना बड़ा ही कठिन काम है। क्योकि वह कब कहा रहेगा, इसका पता आदमी क्या, ईश्वर को भी नही चल सकता।

ऐसे व्यक्ति का पता मुक्तिपद को जो चल गया है, यह उनके लिए बड़े ही सौभाग्य की बात है। इतना जरूर है कि पता पाने में उन्हे जो सफलता हासिल हुई है वह मिस्टर ए सी. चटर्जी के सहयोग के कारण ही। ये वही ए. सी. चटर्जी या अतुल चटर्जी हैं, जिनका लडका सुधीर चटर्जी लेबर लीडर है और जिनकी लडकी विनीता से सौम्यपद की शादी होने की बात थी। वे तरह-तरह के काम मे पूरी दुनिया का चक्कर काटते रहते हैं। इसी सिलसिले मे वे एक दिन इन्दौर गए थे और पिकनिक की चर्चा छिड़ गई थी।

किसी प्रसग में अतुल बाबू ने कहा था, "आप गोपाल हाजरा को पहचानते हैं?"

मुक्तिपद ने कहा था, "बहुतेरे व्यक्तियो से उसका नाम सुना है।"

अतुल बाबू ने कहा था, "दरअसल पूरा कलकत्ता ही गोपाल के कंट्रोल में है।"

"कैसे?"

अतुल बाबू ने कहा था, "हा, मैं ठीक ही कह रहा हूं। लेबर लीडर वरदा घोपाल और गोपाल ये दोनो जने ही फिलहाल कलकत्ता का सचालन कर रहे हैं—"

"मैंने इस वरदा घोपाल को कितने लाख रुपये दिए होंगे, इसका कोई ठिकाना नही। तो भी मुझे अपना कारखाना कलकत्ता से मध्यप्रदेश लाना पडा।"

अतुल चटर्जी 'चटर्जी इन्टरनेशनल एटरप्राइज' के निर्माता हैं और बेहद गरीबी से उठकर ऊचाई तक पहुचे हैं। उनकी बात की उपेक्षा नही की जा सकती।

उन्होने कहा था, "आप अपनी फैक्टरी मध्यप्रदेश उठाकर ले आए हैं, यह अच्छा ही किया है। लेकिन अब आप गोपाल हाजरा से सपर्क करें, तभी आप वेस्ट बंगाल में एक और फैक्टरी की स्थापना कर सकिएगा।"

मुक्तिपद बाबू ने कहा था, "यह काम इतनी जल्दबाजी मे नही हो सकेगा। इसके बारे में देखा जाएगा। अभी पिकनिक के बारे में प्राब्लम है। मेरी लडकी—"

"क्यों? आपकी लड़की के बारे में कौन-सा प्रोब्लेम है?"

मुक्तिपद ने कहा था, "कई दिनो से वह लापता है।"

"क्यो? उसके साथ क्या वाकया हुआ? पुलिस को सूचित कर दिया है?"

"आज के पुलिसकर्मी क्या पहले जैसे हैं?"

अतुल बाबू ने कहा था, "सो नही हो सकते हैं, लेकिन आपने खोज-पडताल की है?"

"हा, खोज-पडताल की है। बाप होकर क्या चुपचाप बैठा रह सकता हूं? मैं बम्बई गया था। वहा मेरा एजेंट है। वे लोग भी कोशिश कर रहे हैं लेकिन कोई पता नही चला।"

अतुल बाबू ने पूछा था, "और कलकत्ता?"

"कलकत्ता की भी तमाम पार्टियो को सूचना भेज दी है। वे लोग भी कोशिश करने के बावजूद कामयाब नही हो पा रहे हैं।"

"गोपाल हाजरा से सपर्क स्थापित किया है?"

"नही।"

अतुल बाबू ने कहा था, "तो आपने असली आदमी से ही सपर्क स्थापित नही किया है। उससे सपर्क कीजिए।"

"उसका पता कैसे मिलेगा?"

अतुल बाबू ने कहा था, "ठीक है, सुधीर उसका पता बता देगा। मैं अबकी कलकत्ता जाकर उसका पता लेकर आपके पास भेज दूंगा।"

यही बात हुई थी मिस्टर चटर्जी से। उन्होंने ही कॉलिन्स स्ट्रीट के पते की सूचना दी थी। पता मिलते ही मुक्तिपद ने देर नहीं की। सीधे टेलीफोन किया था। उसके बाद दिन और समय निश्चित कर हवाई जहाज़ से आकर सीधे कॉलिन्स स्ट्रीट चले गए थे।

मगर किसे मालूम था कि हवाई जहाज़ विश्वासघात करेगा। वरना सब कुछ तो ठीक ही था। गोपाल हाजरा जैसे व्यस्त आदमी के लिए छह घण्टा बर्बाद करना संभव नहीं है। लिहाज़ा उसे बाध्य होकर पार्टी-मीटिंग में चला जाना पड़ा था।

बहुत देर तक रिसीवर थामे रहने के बाद गोपाल हाजरा को टेलीफोन पर आने का वक्त मिला। पूछा, "कौन ? हरदयाल ?"

"हां सर। मिस्टर मुखर्जी आपसे मिलने के लिए यहां बैठे हुए हैं। इन्दौर के प्लेन को कलकत्ता पहुंचने में छह घंटे की देर हो गई। इसीलिए···"

गोपाल हाजरा ने कहा, "उन्हें बैठने कहो, मैं आ रहा हूं—"

यह कहकर दोनों तरफ के रिसीवर दोनों व्यक्तियों ने रख दिए।

मुक्तिपद ने पूछा, "गोपाल बाबू आ रहे हैं ?"

हरदयाल ने कहा, "हां सर, आप थोड़ी देर बैठ जाइए—"

ज्यादा देर तक इन्तज़ार नहीं करना पड़ा। गोपाल हाजरा कॉलिन्स स्ट्रीट के मकान में पहुंच गया। आते ही कहा, "अन्यथा न लें सर। पार्टी-ऑफिस की आवश्यक मीटिंग में देर हो गई। कहिए, अब आपकी बात सुनूं—"

मुक्तिपद ने मिस्टर चटर्जी का उल्लेख किया। उन्हीं से मिस्टर हाजरा का पता और टेलीफोन नंबर मिला है, यह भी बताया।

अब गोपाल हाजरा ने कहा, "बताइए मिस्टर मुखर्जी, मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूं ?"

मुक्तिपद बोले, "आज दस-बारह दिन से मेरी लड़की मेरे इन्दौर के मकान से लापता हो गई है। कहीं उसका 'ट्रेस' नहीं मिल रहा है। मिस्टर चटर्जी ने बताया था, आपसे कॉनटैक्ट करने से आप उसका उद्धार कर दे सकते हैं।"

"आपने मध्य प्रदेश, बम्बई, दिल्ली, मद्रास वगैरह स्थानों में खोज-पड़ताल की है ? या उन जगहों के पुलिसकर्मियों के पास सूचना भेज दी है ?"

"हां, उसी दिन उन लोगों को इत्तिला कर दिया है। लेकिन मुझे लगता है, वह कलकत्ता में ही है।"

"क्यों ?"

"इसलिए कि वह कलकत्ता के सेंट जिवियर्स कॉलेज में ही पढ़ती थी। उसके जितने भी दोस्त-मित्र हैं, सब उसके साथ यहीं पढ़ते थे। जब उसने सुना कि उसे कलकत्ता छोड़ इन्दौर जाना है तो उसने काफी विरोध प्रकट किया था। कहा था, वह इन्दौर नहीं जाएगी, यहीं के स्टूडेंट्स होस्टल में रहकर अपनी पढ़ाई जारी रखेगी।"

गोपाल हाजरा ने कहा, "आपने ठीक ही कहा है, आपकी लड़की कलकत्ता में ही है। आपका टेलीफोन मिलते ही मैंने कलकत्ता के तमाम अड्डों के बारे में सूचना बटोरी थी। लेकिन एक ही मुश्किल है।"

मुक्तिपद का चेहरा आशा, आनन्द और विस्मय से अधीर जैसा हो गया।

"तो पिकनिक मिल गई है ?"

"हां, मैं उसे अभी तुरन्त आपके पास ला दे सकता हूं। लेकिन मैं तो बता ही चुका हूं कि इसमें एक कठिनाई है।"

"यहां के गुंडे आजकल पैसे के बड़े ही लोभी हो गए हैं। रुपया न दीजिए तो वे बात तक करने को तैयार नहीं होते।"

"रुपया? रुपया तो मैं अपने साथ लाया हूं। कितने रुपये?"

गोपाल बोला, "वे लोग तीन लाख मांग रहे हैं। कहते हैं, तीन लाख लिए बगैर छोड़ेंगे नहीं। लेकिन मैंने कहा है, पचास हज़ार मे एक भी पैसा ज्यादा नहीं दूंगा।"

मुक्तिपद बोले, "अभी तो मेरे पास तीन लाख रुपये नहीं हैं। इन्दौर जाने पर भेज दे सकता हूं। पिकनिक के लिए तीन लाख क्या, चार लाख भी दे सकता हूं। आप मेरी लड़की को वापिस करने कह दें।"

गोपाल हाजरा बोला, "अभी आप कितने रुपये दे सकते हैं?"

मुक्तिपद ने कहा, "अभी मैं अपने साथ पचास हज़ार रुपया ही लाया हूं—कैश—"

गोपाल हाजरा ने कहा, "तो फिर उतनी रकम ही दे दीजिए। देखूं, मैं उन हरामजादों को पचास हज़ार मे राजी कर पाता हूं या नहीं।"

मुक्तिपद ने अब देर नहीं की। ब्रीफकेस खोलकर पचास हज़ार रुपया निकाला और गोपाल हाजरा को देते हुए बोले, "आप गिन लीजिए मिस्टर हाजरा—"

गोपाल हाजरा बोला, "आपका रुपया मैं गिनकर लूंगा? आप यह क्या कह रहे हैं?"

उसके बाद कुर्सी छोड़ उठकर खड़ा हो गया। बोला, "आप ज़रा बैठे रहिए। मैं अभी फ्री स्कूल स्ट्रीट उन हरामजादों के अड्डे पर जाता हूं। देखूं, उन्हें मना-धनाकर राजी कर पाता हूं या नहीं। मैं एक घंटे मे आ जाऊंगा—"

यह कहकर कमरे के बाहर चला गया। सीढ़ी के पास हरदयाल और अंटी खड़े थे।

गोपाल हाजरा ने आहिस्ता से पूछा, "पिकनिक कैसी है? बातचीत करती है?"

अंटी बोली, "हां सर। थोड़ी देर पहले सोकर उठी है।"

गोपाल हाजरा ने कहा, "मैंने मिस्टर मुखर्जी से कहा है, वह फ्री स्कूल स्ट्रीट के गुंडों के अड्डे पर है। उस लड़की को एक अच्छी-सी साड़ी पहना दो और थोड़ा-सा गरम दूध पिला दो। उसका मुंह-हाथ धोकर चेहरे पर स्नो-पाउडर लगा दो। मैं एक घंटे में आ रहा हूं। मिस्टर मुखर्जी को पता नहीं चलना चाहिए कि पिकनिक यहां है—"

यह कहकर वह वहां नहीं रुका। दनादन सीढ़ियां उतर सड़क पर खड़ी अपनी गाड़ी में जाकर बैठ गया।

गाड़ी तुरन्त फ्री स्कूल स्ट्रीट की तरफ भागने लगी। रात होनी शुरू हो गई है। थोड़ी देर बाद रात जितनी गहराती जाएगी, इस मुहल्ले की मौज-मस्ती में उतना ही जमाव आने लगेगा। उस समय जो लोग ड्यूटी पर तैनात रहते हैं वे कुछ रुपये-पैसे की उम्मीद में चारों तरफ तेज निगाह से ताकते रहते हैं। खासकर गाड़ीवाले लोगों पर निगाह पड़ती है तो वे चिल्लाने लगते हैं: "ऐ रोक के—"

गाड़ी रोककर वे गाड़ी का लाइसेंस और 'टैक्स-टोकन' देखना चाहते हैं। अगर कोई कहता है, टैक्स-टोकन घर में है तो उसे छोड़ा नहीं जाता। ऐसे मे महसूल और रुपया देना पड़ेगा।

जो लोग रात मे इस मुहल्ले में आते हैं वे आमतौर पर शराब पीने और औरतों के साथ सहवास करने आते हैं। वे हंगामा या हुज्जत करना नहीं चाहते। रुपया देकर छुटकारा पाना चाहते हैं। उसके बाद किसी मकान के अन्दर घुसकर दरवाज़ा बन्द कर देते हैं। और एक बार घुसते हैं तो हरदयाल या फटिक के चंगुल में फंस जाते हैं। उस

समय पैसे के लिए खून-खराबे तक की नौबत आ जाती है। खून-खराबा होने से भी डरने की कोई बात नहीं है। क्योंकि गोपाल हाजरा है। हरदयाल और फटिक इन दोनों पर इस इलाके की ज़िम्मेदारी थोपी गई है। वे गुण्डागर्दी कर जो कमाते-धमाते हैं उस पर गोपाल हाजरा को हिस्सा मिलता है।

सामने पुलिसकर्मी पहरा दे रहा था। वह साहब को पहचान नहीं सका, इसलिए कहा, "ऐ रोक के—"

यह कहते ही बच्चू को अपनी गलती का अहसास हुआ। अहसास होते ही हाथ उठाकर सलाम किया। तुरन्त अपने आपको संयत करते हुए कहा, "सलाम हुज़ूर—"

गोपाल हाजरा ने कहा, "क्यों रे बच्चू, तेरा हालचाल ठीक है न?"

यह वही बच्चू है जिसके कारण फटिक और हरदयाल ने कॉरपोरेशन को धोखा देकर कलकत्ता जैसे शहर में मकान बनवाए हैं। यह वही बच्चू है जिसके कारण गोपाल हाजरा इस मुहल्ले का एकछत्र सम्राट बनकर राज्य कर रहा है।

गोपाल हाजरा के सवाल के जवाब में बच्चू ने कहा, "आपकी मेहरबानी है साहब—"

"सब कुछ ठीक-ठाक चल रहा है तो?"

"जी हुज़ूर!"

बस, इतना ही काफी है। ज़मींदारी की देखरेख करने के लिए आने पर जिस प्रकार प्रजा सलाम करती है, यह भी उसी तरह की बात है। यह कलकत्ता मानो गोपाल हाजरा की जमींदारी है।

"फटिक कहां है जी?"

बच्चू जानता है, गोपाल हाजरा साहब यदि नाराज़ हो जाएं तो कलकत्ता का यह जन्नत जैसा मुहल्ला एक ही दिन में जहन्नुम में तब्दील हो जाएगा। उस समय भले ही उसे तनख्वाह मिलना बन्द नहीं होगा लेकिन ऊपरी आमदनी? ऊपरी आय से ही तो कलकत्ता के बच्चुओं की गृहस्थी चलती है।

जमींदारी की देखरेख करने में ही गोपाल हाजरा का एक घंटा बीत गया। कलाई घड़ी की ओर देखने पर पता चला कि उसके लौटने का वक्त हो गया है। बगैर देर किए गोपाल हाजरा कॉलिन्स स्ट्रीट की तरफ गाड़ी चलाने लगा।

जब वह हरदयाल के घर पहुंचा उस समय घड़ी रात के दस बजा रही थी। आते ही पूछा, "मुखर्जी साहब अभी तक बैठे हुए हैं?"

"हां, आपका इन्तज़ार कर रहे हैं।"

"कुछ बोल रहे थे?"

"हां, कह रहे थे कि आने में इतनी देर क्यों हो रही है।"

"तुमसे पूछा था या हरदयाल से?"

"हरदयाल बाबू से पूछा था। मैं उनके सामने नहीं गई थी।"

गोपाल हाजरा ने कहा, "न जाकर अच्छा ही किया है। लड़की को साफ-सुथरा कर दिया है? वह अभी कैसी है?"

अंटी ने कहा, "आइए, आकर देख जाइए कि किस तरह सजा-संवार कर रखी है। दो-तल्ले को पार कर तीन-तल्ले पर ही लड़कियों को रखा जाता है। वहां उन्हब युवक-युवतियों को रखा जाता है जो पैसेवालों की संतान हैं। दवा खिलाते रहने से वे सई कुछ भूल-बिसर जाते हैं। वे अपना नाम भूल जाते हैं। जब देखने को मिलता है कि को उनके दावेदार नहीं हैं तो उन्हें मोटी रकम में बेच दिया जाता है या मसान में फेंक दिय जाता है। अब तक इस घर में यही नियम चलता आ रहा है।"

अटी ने तीन-मंजिले के एक कमरे का ताला खोला। गोपाल हाजरा ने अन्दर घुसकर देखा, वह लड़की एक बिस्तर पर निढाल पड़ी हुई है। अटी ने करीब जाकर पुकारा, "उठो बेटी, उठो—"

लड़की को धवधव सफेद एक साड़ी पहना दी गई है, चेहरे पर स्नो-पाउडर लगा दिया गया है ताकि वह स्वस्थ दिखे।

हरदयाल पीछे खड़ा था। अटी और हरदयाल ने मिलकर लड़की को खड़े होने मे सहायता की। लड़की ने चारो तरफ आखे दौडाकर पूछा, "मैं कहां हू ?"

गोपाल हाजरा ने कहा, "तुम कलकत्ता में हो, फ्री स्कूल स्ट्रीट मे—"

लड़की ने कहा, "मैं यहा क्यो हू ?"

गोपाल हाजरा ने कहा, "तुम बीमार हो, इसीलिए तुम्हे फ्री स्कूल स्ट्रीट के मकान में रखा गया है।"

लड़की ने कहा, "मुझे चॉकलेट दीजिए—"

"नही, अब चॉकलेट नही खाना है। अब चलो, तुम्हारे पिताजी आए हैं—"

"मेरे पिताजी ?"

पिताजी की याद आते ही लड़की के चेहरे पर मुस्कुराहट तिर आई। स्मृति-शक्ति ने विश्वासघात नही किया। तीन-मंजिले से पकड-धकड़ कर उसे दो-मंजिले पर लाया गया। उसके बाद मुक्तिपद जिस कमरे में बैठे हुए थे वही लाया गया उसे।

पिकनिक को धर-पकडकर लाते देखकर मुक्तिपद दहशत से सिहर उठे।

बोले, "पिकनिक · "

"बाबूजी···"

एक साधारण बात से ही उस घटना की जानलेवा त्रासदी का पक्ष तसवीर की नाई सामने उभरकर चला आया। उस समय लड़की ने अपने बाहुओ मे पिता को आबद्ध कर रोना शुरू कर दिया था। साथ ही मुक्तिपद की आखो मे भी आसू भर आए।

गोपाल हाजरा की ओर ताकते हुए पूछा, "यह कहा मिली ?"

गोपाल हाजरा ने कहा, "फ्री स्कूल स्ट्रीट के गुडों के अड्डे।"

"पचास हजार मे राजी हो गए ?"

गोपाल हाजरा बोला, "होंगे क्यो नही ? कह रहे थे, और एक लाख रुपया चाहिए। मैंने कहा, सो बाद मे मिलेगा, अभी पचास हजार में ही इसे छोड़ देना पड़ेगा। मेरी बात तो वे काट नही सकते। आखिर मैं इसे जबरन ले आया।"

मुक्तिपद लड़की को पाकर बेहद खुश हैं। बोले, "अब किसी को एक टैक्सी ले आने कहिए, मुझे जाना है—"

पिकनिक उस समय भी अपने बाप को कसकर पकड़े हुए थी। बोली, "बाबूजी, मुझे चॉकलेट खरीद दीजिए।"

दरबान इस बीच एक टैक्सी ले आया था। बहुत देर तक बैठे रहने की वजह से मुक्तिपद बेचैन हो उठे थे। वे बिडन स्ट्रीट के मकान मे पहुच जाए तो राहत की सास लेने का मौका मिले। इतने दिनों के बाद पिकनिक मिली है इसलिए उन्हे शांति का अहसास हो रहा है। टैक्सी पर बैठते ही बोले, "बिडन स्ट्रीट चलो भाई—"

टैक्सी पर बैठने के बावजूद पिकनिक छटपट कर रही थी। मुक्तिपद ने उससे पूछा, "तू यहा कैसे आई ? कौन तुझे यहा ले आया था ? तू कॉलेज गई थी न ? वहा से इतनी दूर कलकत्ता कैसे आई ?"

पिकनिक का खुमार अब भी दूर नही हुआ है। बात करने मे उसकी जीभ जड़ जैसी हो जाती है। बोली, "मुझे चॉकलेट खरीद दीजिए बाबूजी।"

मुक्तिपद ने कहा, "चॉकलेट खाने से क्या होगा ?"

पिकनिक ने कहा, "चॉकलेट खाने की बहुत इच्छा हो रही है—"

मुक्तिपद ने कहा, "इतनी रात में सारी दुकानें बन्द हो गई होंगी। कल सवेरे तुझे चॉकलेट खरीद दूंगा। अभी विडन स्ट्रीट चलकर डिनर खा लेना—"

फिर भी पिकनिक बुड़बुड़ाने लगी। जैसे उसे बेहद नींद आ रही हो और बिस्तर पर लिटाते ही वह नींद में विभोर हो जाएगी।

लड़की की हरकत देखकर मुक्तिपद को भय का अहसास हुआ। पहले तो पिकनिक इस तरह की नहीं थी। इन कई दिनों के दरमियान उसमें कितना बदलाव आ गया है! इन्दौर से कलकत्ता करीब नहीं है। वह अकेले इतनी दूर कैसे आई ?

टैक्सी जैसे ही विडन स्ट्रीट के अन्दर जाएगी, थोड़े-से फासले पर ही उनका मकान है। शायद मां अब तक सो चुकी होगी। मां ने सदर का गेट नौ बजते ही दरबान को बन्द कर देने का हुक्म दिया है।

लेकिन नहीं, गेट अब भी खुला हुआ ही है। क्या बात है ? अभी तो रात के लगभग ग्यारह बज रहे होंगे। ऐसा होता नहीं। फिर गेट अब भी खुला हुआ क्यों हैं ?

मुक्तिपद ने टैक्सी ड्राइवर से कहा, "यहीं रोक दो सरदारजी—"

गिरिधारी तब भी अपनी जगह पर खड़ा होकर ड्यूटी पर तैनात था।

मालिक पर नज़र पड़ते ही उसने आगे बढ़कर सलाम किया। मुक्तिपद टैक्सी का किराया चुकाकर गेट के पास आए। पिकनिक को धर-पकड़कर ले आए। वह उस समय भी लड़खड़ा रही थी।

गिरिधारी से पूछा, "इतनी रात तक गेट खुला हुआ क्यों रखा है ? मांजी को खबर पहुंचा आ कि मैं आया हूं।"

गिरिधारी ने कहा, "मांजी कोठी में नहीं हैं हुजूर—"

"नहीं है ? इतनी रात में कहां गई हैं ?"

"मुझे यह मालूम नहीं हुजूर।"

मुक्तिपद ने पूछा, "मांजी कब बाहर निकली हैं ?"

गिरिधारी ने कहा, "दोपहर में —"

"तो फिर मैनेजर साहब को बुला ला—"

गिरिधारी ने कहा, "मैनेजर साहब भी कोठी में नहीं हैं।"

"मैनेजर साहब कहां गया है ?"

"मैनेजर साहब मांजी के साथ गए हैं।"

"वे दोनों कहां गए हैं ?"

गिरिधारी ने कहा, "मालूम नहीं मालिक—"

मुक्तिपद ने खूब तड़के ही घर से निकल प्लेन पकड़ा था। उसके बाद उनका पूरा दिन मानसिक यातना में बीता है। उसके बाद दमदम एयरपोर्ट शाम के समय पहुंचे थे। उसके बाद रात के साढ़े दस बजे तक का वक्त वहां गुज़रा था। अब रात ग्यारह बजे घर आने पर सुनने को मिल रहा है कि यहां कोई नहीं है। मूड यों भी पहले से ही बिगड़ा हुआ था। अब यह सुनकर और भी बिगड़ गया। बोले, "बिन्दु है न ?"

गिरिधारी ने कहा, "जी हुजूर—"

मुक्तिपद ने कहा, "उसे खबर पहुंचा आ। कहना, मैं पिकनिक को अपने साथ लेकर आया हूं। हम लोगों के खाने-पीने का इन्तज़ाम चटपट कर दे। जा—"

गिरिधारी अन्दर जाकर दौड़ने लगा। बिन्दु से बातें करने के लिए सीधे तीन-तल्ले पर पहुंचना है। वह तीन-तल्ले के चार्ज की महरी है।

बिन्दु तब आराम से कमरे के फर्श पर लेटी हुई थी। आम तौर पर ऐसा मौका नही मिलता। हर वक्त दादी मां के आदेश का पालन करते-करते वह नाकोदम हो जाती है। उस दिन थोड़ा-सा वक्त मिलते ही वह लेट गई थी और उसके बाद गहरी नीद मे खो गई थी। ठीक उसी वक्त गिरिधारी ने आकर उसे पुकारा।

"ऐ बिन्दु, बिन्दु, ऐ बिन्दु—"

नीद टूटते ही बिन्दु हड़बड़ाकर उठकर बैठ गई। "अरे, दादी मा आ गई! क्यो, क्या बात है? दादी मां आ गई?"

"अरे, नही-नही, मंझले बाबू आए हैं। मंझले बाबू—"

"मंझले बाबू!!"

बिन्दु झट से उठकर खड़ी हो गई। "इतनी रात में मंझले बाबू आए हैं? अब क्या होगा?"

गिरिधारी ने कहा, "मंझले बाबू खाना खाकर नही आए हैं। खाना पकाना है।"

"खाना?"

बिन्दु के सिर पर जैसे गाज गिर पड़ी। महाराज को खबर पहुचाने जल्दी-जल्दी नीचे चली जा रही थी। इतनी रात मे महाराज को खाना पकाना होगा।

लेकिन एकाएक मझले बाबू सामने ही दिख गए। उस पर नज़र पडते ही मंझले बाबू ने कहा, "मा कहां है, बिन्दु?"

बिन्दु ने सिर पर घूघट डाल लिया। बोली, "दादी मा बाहर निकली हैं।"

"कहा गई हैं।"

"यह बताकर नही गई हैं। मैनेजर साहब को अपने साथ ले गई हैं। मैं महाराज को जाकर आपके लिए खाना पकाने कहने जा रही हूं—"

पिकनिक की उस समय भी नीद से आंखें बोझिल थी। मुक्तिपद ने उसे मां के बिस्तर पर लिटा दिया। सवेरे से अब तक का उनका वक्त बेतरह व्यस्तता के बीच गुज़रा है, एक क्षण के लिए भी आराम नही मिला है उन्हें। स्नानघर के फुहारे के नीचे खड़े होकर वे यही बात सोचने लगे। किस तरह उन्होंने जिन्दगी की शुरुआत की थी और किस तरह जिन्दगी आखिरी पडाव की तरफ बढ़ रही है। अब वे कितने दिन जिन्दा रहेंगे ही! उनके पिता की मृत्यु हुई थी पैंतालीस साल की उम्र मे और बडे भाई शक्तिपद की पचीस साल की उम्र में। इस लिहाज से वे उन लोगो से अधिक भाग्यशाली हैं।

लेकिन यह जीना किस तरह का जीना है! इसे क्या जीवन जीना कहा जा सकता है! बाहर के लोग, हो सकता है उनसे रश्क करते हो और यह रश्क रुपये के कारण है। जब वे अपनी फैक्टरी के अन्दर घुसते हैं तो देखते हैं लोग पके हुए भुट्टे चबा-चबाकर खा रहे हैं। या कभी-कभी देखते हैं कि उनकी गाड़ी के अन्दर उनका ड्राइवर पाच मिनट के दरमियान ही गहरी नीद मे खो गया है और खर्राटे भर रहा है। यह दृश्य देखकर उनके मन में क्या प्रतिक्रिया जगती है इसका पता बाहरी लोगो को नही चलता और न ही किसी को जानने की ख्वाहिश होती है।

नहाने के बाद उन्हें जैसे थोड़ी-सी मानसिक शान्ति का अहसास हुआ। दुबारा नल की टोंटी खोलकर वे पानी के नीचे बहुत देर तक बैठे रहे।

गिरिधारी तब भी सदर गेट के सामने खडा होकर पहरा दे रहा था। रात और ज्यादा गहरा गई है। सडक पर राहगीरो का चलना-फिरना कम हो गया है।

घर के एक मालिक आज घर मे हैं और दादी मा व मैनेजर बाबू अब तक वापस नही आए हैं, ऐसी हालत में गिरिधारी कैसे आराम करने जा सकता है।

इस मकान में वह कितनी ही तब्दीलियां देख चुका है, इस घर मे कितने ही साल

बीत चुके हैं उसके। कितनी वारदातें और कितने हादसे वह इस घर में देख चुका है, उसका हिसाब करने के दौरान सारा कुछ गड्मड हो गया। वह गृहस्वामी की मृत्यु देख चुका है, बड़े बाबू की मृत्यु देखी है और मुन्ना बाबू की बीवी का भी खून होते हुए उसने देखा है। इस नौकरी में रहने पर वह और कितनी घटनाएं देखेगा, इसका कोई ठिकाना नहीं।

एकाएक गिरिधारी की तंद्रा टूट गई।

उसने देखा, दादी मां की गाड़ी गेट के सामने आकर ब्रेक कसकर खड़ी हो गई।

गिरिधारी दौड़ता हुआ गया और गाड़ी के पिछले दरवाज़े को खोल दिया।

दरवाजा खोलते ही दादी मां नीचे उतरीं और किसी को पुकारते हुए कहा, "आओ बहूरानी, नीचे उतरो—"

अन्दर से एक दुल्हन उनके साथ नीचे उतरी। रात के अंधेरे के कारण उसका चेहरा साफ-साफ दिखाई नहीं पड़ा।

सामने की सीट से मैनेजर बाबू पहले ही उतर चुके थे। वे दादी मां के पीछे-पीछे मकान के अन्दर की तरफ जाने लगे। जब सब लोग अन्दर चले गए, गिरिधारी ने ड्राइवर से पूछा, "इतनी देर क्यों हुई ड्राइवर जी? कहां गए थे?"

"बहुत दूर गिरिधारी, बहुत ही दूर। बेड़ापोता—"

"वहां क्या था?"

"विवाह-घर।"

"विवाह-घर? किसका विवाह?"

ड्राइवर ने कहा, "मुन्ना बाबू का।"

"मुन्ना बाबू का विवाह? दुबारा विवाह?"

गिरिधारी को यह सुनकर हैरानी हुई। बोला, "और मुन्ना बाबू कहां चले गए?"

ड्राइवर ने कहा, "पुलिसकर्मी मुन्ना बाबू को लेकर चले गए।"

"कहां लेकर चले गए?"

"जेलखाने में।"

गिरिधारी की आंखों के सामने यह रहस्य जैसे और भी पेचीदा और भी जटिल हो उठा।

उधर दादी मां के आने की सूचना बिन्दु को मालूम हो गई है। मालूम होते ही वह दौड़कर सीढ़ियां उतरने जा रही थी लेकिन उसके पहले ही दादी मां सीढ़ियां चढ़कर ऊपर आ चुकी थीं। दादी मां को देखते ही बिन्दु ने कहा, "दादी मां, मंझले बाबू आए हुए हैं।"

"कौन? मुक्ति?"

बिन्दु बोली, "हां, मंझले बाबू और उनकी पिकनिक—"

"वह कब आया? एकाएक?"

इस बीच मुक्तिपद सीढ़ी के पास आ चुके हैं। उन्हें देखकर दादी मां बोलीं, "क्या बात है, तू एकाएक आ गया? इतनी रात में?"

मुक्तिपद ने कहा, "मैं एक खास काम से एकाएक चला आया। लेकिन तुम इतनी रात, बारह बजे तक कहां थीं?"

दादी मां के पीछे बनारसी साड़ी पहने एक युवती को देखकर मुक्तिपद के आश्चर्य की सीमा न रही।

दादी मां ने अपने कमरे की ओर जाते हुए कहा, "मुझे क्या कोई कम परेशानी है!

इस बुढ़ापे में जरा भगवान का नाम लूं, इसका भी उपाय नहीं।"

मुक्तिपद ने पूछा, "तुम्हारे साथ यह कौन है मां ?"

दादी मा बोली, "मेरी बहूरानी —"

"बहूरानी ? बहूरानी का मतलब ?"

दादी मां बोली, "मुन्ना की पत्नी —"

"सौम्य की पत्नी ? लेकिन वह कहां गया ?"

दादी मा बोली, "पुलिसकर्मी मुन्ना को लेकर जेलखाने चले गए। कोर्ट से जज साहब ने मात्र आठ घटे के लिए शादी करने के वास्ते मुन्ना को पैरोल पर छोड़ा था। आठ घटे बीत गए, इसलिए वे लोग उसे यहां से लेकर अपने साथ ले गए।"

कमरे के अन्दर जाने पर दादी मा ने देखा, उसके बिस्तर पर [illegible] है। बोली, "आखिर खोज-पड़ताल करने पर यह मिल गई ? कहां मिली ?"

मुक्तिपद ने कहा, "फ्री स्कूल स्ट्रीट के गुण्डों के मुहल्ले में —"

"वहां से वह गुण्डों के मुहल्ले में क्या करने आई थी ? उसे कौन ले आया था ?"

मुक्तिपद बोले, "यह एक लंबी दास्तान है मां, बाद में तुम्हें [illegible] बताऊंगा। अभी मुन्ना के बारे में बताओ। तुमने मुन्ना की शादी तो की मगर सुहागरात और प्रीति-भोज आयोजन कैसे होगा ? कहां होगा ?"

दादी मां बोली, "यह सब [illegible] में एक ही साथ हो गया है।"

मुक्तिपद ने पूछा, "यह सब एक साथ कैसे हुआ ?"

दादी मा बोली, "जिस तरह की शादी होती है उसी तरह की सुहागरात और प्रीतिभोज भी होता है—"

उसके बाद बहूरानी की तरफ मुखातिब होकर बोली, "आओ बहूरानी, आज तुम इसी कमरे में सोओगी। इसके पहले खाना खा लो।"

मुक्तिपद ने नई दुल्हन की तरफ गौर से देखा। [illegible] रहा है। वह सिकुड़ी-सिमटी-सी है और किसी की ओर ताकने में [illegible] हो रहा है। हो सकता है अन्दर ही अन्दर भय से [illegible] रही हो।

दादी मा ने पूछा, "तुम लोग खाना खा चुके ?"

मुक्तिपद ने कहा, "नहीं, [illegible] है—"

"तो फिर अब खाना खा ले।"

उसके बाद बिन्दु की ओर देखती हुई दादी मा बोली, "[illegible] जाकर वह था कि खाना ले आए —"

आज इतने लंबे अरसे के बाद भी [illegible] ज्यों की त्यों है। [illegible] जिन्दा है। वह अब तक मरा नहीं है। [illegible]

क्यों वह बरकरार है ? क्यों वह जिन्दा है ?

इसलिए जिन्दा है कि [illegible]

[illegible]

[illegible]

चंचलता को देखकर आदमी आतंक से सिहर उठते हैं। लेकिन उससे क्या समुद्र विच्छिन्न होता है ?

नहीं, इससे समुद्र में कोई हेर-फेर नहीं होता। और हेर-फेर न होने का कारण है, समुद्र स्थिर रहना जानता है, इसलिए लहरें उसका कुछ बिगाड़ नहीं पातीं। समुद्र निश्चल है, निरुद्वेग और उत्तापहीन।

इस तरह का निश्चल, निरुद्वेग और उत्तापहीन होने का कारण क्या है ? कारण है, वह जानता है कि अनन्त 'एक' है। उसी एक को वह जानता-पहचानता है, उसी एक पर वह विश्वास करता है और इसीलिए उसे कोई भय नहीं है। वह 'एक' है अकूल समुद्र के चरणों के तले की मिट्टी। चारों तरफ के पानी के बीच उसे अपने चरणों के तले की मिट्टी पर विश्वास है, उसी 'एक' को उसने जाना-पहचाना है।

दूसरे ही दिन संदीप को ऑफिस में देखकर मुहम्मद हाशिम के आश्चर्य का कोई ठिकाना नहीं रहा। बोला, "सर, आप ! कल ही आपकी शादी थी और आज आप ऑफिस चले आए ?"

उस बात का जवाब न देकर संदीप ने कहा, "आज हम लोगों की वीकली स्टेटमेन्ट भेजने की तारीख है न ?"

हाशिम ने कहा, "उसे मैंने तैयार कर लिया है सर।"

"ठीक है। उसे मेरे पास भेज दो, मैं उस पर हस्ताक्षर कर दूंगा।"

यह कहकर संदीप एक ज़रूरी फाइल निकाल उसे ध्यान से देखने लगा। दुर्योग का कांटा तब भी उसके मस्तिष्क को बार-बार वेध रहा था। कांटे की पीड़ा जब शरीर के अंग-अंग में समा जाती है तो वह गुलाब के फूल में रूपान्तरित हो जाती है। गुलाब में रूपान्तरित होने में ही कांटे का गौरव छिपा रहता है।

स्वयं को स्थिर रखना क्या सहज है ? बहुत अध्यवसाय और संयम के बाद ही मन की यातना बिसराई जा सकती है। संदीप हर क्षण खुद को व्यस्त रखकर पिछली रात के विपर्यय को भूलने की कोशिश करने लगा। मुहम्मद हाशिम बीच में एक बार आकर वीकली स्टेटमेन्ट रख गया था। संदीप ने कहा, "इसे अच्छी तरह देख लिया है न ?"

हाशिम ने कहा, "हां।"

"फिर मैं इस पर निश्चिन्तता के साथ हस्ताक्षर कर दूं ?"

यह कहकर उत्तर का इन्तजार किए बगैर संदीप ने हस्ताक्षर कर दिया।

ऐसा ही होता है। पारस्परिक विश्वास पर ही बैंक का काम चलाना पड़ता है। वरना बैंक के निर्धारित समय का काम अचल हो जाता है। संदीप ने हस्ताक्षर कर दिया है परन्तु उस समय भी पिछली रात की वारदातें उसके मन में उथल-पुथल मचाए हुए थीं। मल्लिकजी की बातें उसके कान में गूंज रही थीं—"विशाखा की मां का इलाज कराने में तुम्हें कितना खर्च करना होगा, बताओ ? दस हजार रुपया ?"

संदीप ने कहा था, "डॉक्टर लाहिड़ी ने बताया था—बीस हज़ार रुपया।"

मल्लिकजी ने कहा था, "बीस हज़ार क्यों कह रहे हो ? पचास हज़ार रुपया देने से तुम्हारा काम चल जाएगा ? और उससे भी काम न चले तो एक लाख रुपये से काम चल जाएगा ?"

संदीप क्या कहे, उसकी समझ में नहीं आ रहा था। दूसरी ओर बगल के कमरे में मां और मौसीजी उत्कंठा के साथ पल-क्षण गिन रही थीं।

"अच्छा, मान लो एक लाख में काम न हो तो दो लाख। दो लाख मांगोगे तो तुम्हें दो लाख ही दिया जाएगा। जिन्दगी से रुपये की कीमत ज्यादा नहीं, कम ही होती

है। ज़बान खोलकर तुम जो भी मांगोगे, दादी मां देंगी। दादी मां ने जिन्दगी में बहुत रुपए देखे हैं, दादी मां की जिन्दगी मे बेशुमार रुपए आए हैं। रुपया जाने पर रुपया फिर से आ सकता है, लेकिन आदमी की जिन्दगी ? एक बार चली जाए तो फिर आने का नाम नही लेगी।…"

उस समय यह सब बात सदीप के कान में प्रवेश नही कर रही थी। करमचंद मालव्य जी, दादी मां, मुक्तिपद बाबू, गोपाल हाजरा, सौम्यपद, तारक घोष, वरदा घोषाल, श्रीपति मिश्र वगैरह जैसे एक ही साथ उस पर हमला बोलने को उद्यत हो गए थे। हमारे पास अब वक्त नही है। अब देर करने से लग्न टल जाएगा। बोलो-बोलो, हमारी बात का जवाब दो। हमारे एक हाथ में रुपये हैं और दूसरे मे विशाखा, एक हाथ में अर्थ है और दूसरे में परमार्थ, एक हाथ में मृत्यु और दूसरे में परमार्थ। तुम किसका चुनाव करोगे, बताओ ? जवाब दो, मैंने ही एक दिन कलकत्ता आने पर तुम्हारे लिए खाने-पहनने और नौकरी का इन्तज़ाम कर दिया था। उस समय तुम्हारी मा पराये घर में रसोई पकाने का काम करती थी। मैंने तुम्हे इसान बनने की सारी सुविधा प्रदान की थी और इसीलिए आज तुम स्वावलंबी बन सके हो, बैंक का मैनेजर बन सके हो। मैं उस दिन यह सुयोग और सुविधा नही देता तो क्या होता ! अब तुम हमारे उस कर्ज़ को उतारो। तुम्हारी मुसीबत के दिनो मे हमने तुम्हे हर तरह का सहयोग दिया था, अब हमारी मुसीबत की घड़ी में तुम्हारा क्या कोई कर्त्तव्य नही है ? बोलो, बोलो, हमारे इस प्रश्न का उत्तर दो। खामोश क्यो हो ? बोलो।

"नाम क्या है ?"

संदीप ने कहा, "योगमाया गागुली।"

"उम्र ?"

तमाम छोटी-मोटी बातें खाते मे दर्ज़ करने के बाद भलेमानस ने कहा, "रुपया ?"

सदीप ने पूछा, "मुझे कितना रुपया देना पडेगा ?"

"बीस हज़ार। और डाक्टर साहब का फीस उन्हें अलग से देना पडेगा।"

सदीप ने पूछा, "कितना ?"

"यह डाक्टर साहब से ही पूछ लीजिएगा।"

सदीप ने पूछा, "डाक्टर साहब क्या अभी अपने कमरे मे हैं ?"

भलामानस और भी बहुत सारे खाते लेकर उनमे उलझे हुए थे। काम करते हुए ही बोले, "डाक्टर साहब अभी शायद ऑपरेशन थियेटर मे हैं। आप उनके कमरे के चपरासी से जाकर पूछिए।"

संदीप उसी तरफ जा रहा था। काउन्टर के भलेमानस ने कहा, "रसीद नही ले गए ?"

संदीप दुबारा लौटकर आया और रसीद ले ली। बीस हज़ार रुपये की रसीद। संदीप को महसूस हुआ, वह बीस हजार रुपये की रसीद नही बल्कि उसकी फांसी का परवाना है। उस परवाने को डाक्टर साहब के पास पहुचाते ही वे उसे फासी पर लटका देंगे।

सो चाहे हो, लेकिन इतना डरने से काम नही चलेगा, क्योकि नर्सिग होम आने का मतलब ही है फासी पर चढना। जिस दिन डाक्टर लाहिडी ने उसे पहले पहल कहा था कि नर्सिग होम मे भर्ती होने के वक्त ही बीस हजार रुपया एडमिशन फीस देना होगा,

उसी दिन वह सड़क पर वेहोश होकर गिर पड़ा था।

डाक्टर लाहिड़ी उस समय अपने चेम्बर में नहीं थे, यह देखकर संदीप बाहर खड़ा हो गया।

ऑपरेशन थियेटर से लौटने के वाद ही डाक्टर से मुलाकात होगी।

उधर टैक्सी के अन्दर मौसीजी को लिटाकर आया है। वेड़ापोता से ट्रेन पर चढ़ाकर शुरू में हावड़ा स्टेशन ले आया था। वहां कुलियों की मदद से पकड़ धरकर टैक्सी की तलाश की थी। वहुत देर के वाद टैक्सी मिलने पर उस पर चढ़ाकर नर्सिंग होम लाना क्या कोई आसान काम था? और लेकर आया तो डाक्टर के इन्तज़ार में खड़ा रहना पड़ा।

काम के वारे में सोचना जितना सहज है उसे करना क्या उतना सरल है? आने के दौरान मां ने कुछ नहीं कहा था। उस दुर्योग के दिन से ही मां एक तरह से गूंगी जैसी हो गई थी। वेटे के सामने रोने से वेटे के मन में कहीं कष्ट न पहुंचे, यह सोचकर मां उसके रूवरू होना ही नहीं चाहती। खुद को उसकी आंखों की ओट में रखती। मां की कितने दिनों की तमन्ना थी कि उसका लडका अपने पैरों पर खड़ा होगा, उसकी शादी रचाएगी और घर-संसार वसाएगी। अपने मन के लायक घर-गृहस्थी सजाने-संवारने के अलावा उसकी और कोई इच्छा-अभिलाषा नहीं थी।

केवल मां नहीं, बल्कि बेड़ापोता के जितने लोग उस दिन नियन्त्रण पाकर घर में आए थे, वे उस कारनामे को उस दिन देखकर हतप्रभ जैसे हो गए थे। इस तरह की वारदात आमतौर पर नहीं होती। इस तरह की वारदात देखने या सुनने के सौभाग्य या दुर्भाग्य का भारत में किसी को सामना नहीं करना पड़ा है।

सभी के चेहरे और आंखों में एक ही प्रश्न था : "वे लोग कौन हैं? कौन इस तरह एक व्यक्ति का कलेजा छीनकर ले गया? इसका सवव क्या है? वे लोग क्या अपने लड़के के लिए किसी दूसरी पात्री का जुगाड़ नहीं कर सके? किसी दूसरे आदमी की लड़की का? या फिर संदीप उनकी पसन्दीदा पात्री को छिपाकर ले आया था और उससे शादी करने की तैयारियां कर रहा था?

किसी ने कहा, "अरे नहीं, असली चीज़ है रुपया। रुपये से सारा कुछ संभव हो सकता है।"

"रुपया? इसका मतलव?"

"इसका मतलव रुपया तुम पहचानते नहीं? चांदी से तैयार किए हुए गोल-गोल रुपये। उन्हीं रुपयों की करामात है यह।"

फिर भी वात किसी की समझ में नहीं आई। रुपये से शादी का कौन-सा सरोकार है?

एक आदमी ने कहा, "देखा नहीं कि उन लोगों की गाड़ी कितनी वड़ी थी? धनी-मानी व्यक्ति न हो तो किसी की गाड़ी इतनी वड़ी हो सकती है?"

"मगर पुलिस क्यों थी? शादी से पुलिस का कौन-सा सरोकार है?"

"अरे, यह भी समझ नहीं सके? कहीं वर-पक्ष अड़चन न डाले इसीलिए पुलिस ले आए हैं। पैसा फेंकने से पुलिस क्या, पुलिस का वाप भी आ जाएगा। तुम मुझे रुपये दो और मैं सवको लाकर यहां हाज़िर कर दूंगा। रुपये में क्या कोई कम ताकत है!"

इस किस्म की कितनी ही वातें उसके कान में पहुंची थीं। जव वे लोग ज़वरन विशाखा से सौम्य वावू की शादी कराकर वेड़ापोता से चले गए थे, उस समय काफी रात हो चुकी थी। उस दिन किसी को नींद नहीं आई थी। सिर्फ संदीप के घर में ही नहीं, वल्कि चटर्जी वावू के घर में भी किसी को नींद नहीं आई थी

जाने के दौरान मल्लिकजी कह गए थे, "संदीप, तुम्हारे बाकी रुपये मैं कल ही दे दूंगा। आज दादी मा के पास जो कुछ है, वही ले लो।—"

संदीप चुपचाप खड़ा था। एक भी शब्द नही निकली थी उसकी जबान से।

"लो, अभी पचास हजार रुपया रख लो, बाकी रकम कल दे दूंगा।"

फिर भी संदीप ने रुपया लेने को हाथ नही बढ़ाया था।

"क्या हुआ? रुपया नही लोगे? हमें जाने मे देर हो रही है, लो—"

संदीप भी एक शरीफ आदमी है, यह बात मल्लिकजी जैसे दूरदर्शी आदमी भी क्यों भूल गए थे?

इस पर भी संदीप को चुप्पी में डूबा हुआ देखकर कहा था, "तुम क्योंकि नही ले रहे हो इसलिए ये रुपये भाभीजी को ही जाकर दे देना पड़ेगा।"

यह कहकर उन्होंने इसके बाद वहां वक्त जाया नही किया था। एकबारगी सीधे उसके घर पर चले गए थे। वहां मा को पुकारकर कहा था, "भाभीजी, मैं रुपया देने की खातिर आपके पास ही आया—"

मा शायद तब भी रो रही थी। मां ने पूछा था, "किस चीज का रुपया?"

मल्लिकजी ने कहा था, "इन रुपयों को मैंने संदीप को देना चाहा था पर उसने नही लिया। लिहाजा आपको देने चला आया।"

मा ने दुबारा पूछा था, "किस चीज का रुपया?"

मल्लिकजी ने कहा था, "संदीप की शादी रोक दी मैंने। देखा, उसका दिल टूट गया है। मैं महसूस कर सकता हू कि उसके मन की हालत का ऐसा होना गलत नही है। मेरे साथ यह वाकया होता तो मुझे भी इसी तरह की ठेस पहुचती। इसके अलावा शादी के चलते उसके भी ढेर सारे पैसे खर्च हो गए हैं। हमें इस पहलू पर भी गौर करना है।"

मा चुप्पी साधे रही। मल्लिकजी ने दुबारा कहा, 'लीजिए, इसमे पचास हजार रुपये हैं, गिन लीजिए—"

मा ने कहा, "उसी की शादी थी, इसलिए रुपया भी उसी का है। रुपये आप उसी को दीजिए, मुझे क्यों देने आए है?"

मल्लिकजी ने कहा, "चाहे उसे दू या आपको, बात एक ही है। संदीप आपका लड़का है, आपको देने का मतलब है संदीप को देना। लीजिए-लीजिए—"

मां ने कहा, "कृपया आप रुपया लेने के लिए मुझ पर दबाव नही डालें—"

"क्यों? आप ही तो उसकी मा हैं।"

मा बोली, "माना, मैं मा हूं, लेकिन संदीप यदि रुपया लेने मे आपत्ति करे तो ऐसी हालत मे मैं कैसे रुपया ले सकती हू?"

मल्लिकजी ने कहा, "आप यह मत सोचिए कि मात्र पचास हजार रुपया देकर ही इसकी क्षतिपूर्ति की जा रही है। मैंने संदीप से कहा है कि अभी हम लोगों के पास पचास हजार रुपये ही है इसलिए इतने रुपये ही दे रहे हैं। लेकिन हम लोगो के घर जाने पर संदीप जितना भी चाहेगा, उसे दिया जाएगा। दो लाख, तीन लाख, चार लाख तक हमारी दादी मा देंगी। विशाखा के मा के कैंसर के इलाज के लिए बहुत रुपयो की जरूरत पड़ेगी। दादी मा पूरी रकम देने को तैयार हैं। दादी मा उतनी नादान नहीं हैं—संदीप जितना भी मागेगा, वे देंगी। मैं यहां खड़े होकर आपके समक्ष वादा कर रहा हू। आप मेरी बात पर अवश्य ही यकीन कीजिएगा।"

मा ने कहा, "आप संदीप को भलीभांति पहचानते है। मैं नए सिरे से उससे आपकी जान-पहचान कराऊंगी! इसलिए···"

मल्लिकजी बोले, "आप दादी मा के इकलौते पोते के बारे मे भी एक बार सोचिए

भाभीजी। वह फांसी का मुजरिम है, कोर्ट के जज का फैसला सुनाने का वक्त आ गया है···अब···"

मां ने पूछा, "फांसी का मुजरिम ? कौन है ?"

मल्लिकजी ने कहा, "मेरी मालकिन का इकलौता पोता। वह भी अपनी मेम वीवी के खून के अपराध के कारण फांसी का मुजरिम है। उससे विशाखा की शादी करने के खयाल से ही हम आए हैं—"

यह सुनकर मां आश्चर्यचकित हो गई। बोली, "विशाखा से आप लोग फांसी के मुजरिम की शादी कर रहे हैं ? विशाखा इस शादी के लिए राजी है ? आप लोगों ने उससे पूछा है ?"

मल्लिकजी ने कहा, "विशाखा से हम लोगों के सौम्य बाबू की शादी पहले ही तय हो चुकी थी। यह कोई नई बात नहीं है।"

मां बोली, "लेकिन उस समय आपके सौम्य बाबू फांसी के मुजरिम नहीं थे। विशाखा फांसी के मुजरिम से शादी करने को राजी होगी ?"

मल्लिकजी बोले, "विशाखा के राजी होने या न होने का प्रश्न खड़ा ही नहीं होता। क्योंकि जिस ज्योतिषी ने विशाखा की जन्मपत्री देखी थी उन्होंने बताया था, इस जातिका से शादी कराने से सौम्य बाबू को फांसी नहीं होगी।"

मां बोली, "यह क्या ! क्यों ?"

मल्लिकजी बोले, "हां, ज्योतिषी ने बार-बार यही कहा कि इस जातिका से चाहे जिस लड़के की शादी क्यों न हो, जातिका कभी विधवा नहीं होगी। मांग के सिंदूर से वह मृत्यु का वरण करेगी। मांग का सिंदूर अक्षय रहेगा।"

"मां ने पूछा, उन्हें विशाखा की जन्मपत्री कहां मिली ?"

मल्लिकजी ने कहा, "बहुत दिन पहले विशाखा की जन्मपत्री लेकर उसकी मां बेलघाटा के एक विख्यात ज्योतिषी के पास उसका भविष्य जानने के खयाल से गई थी। उन्हीं के खाते में विशाखा की जन्मपत्री थी। उन्होंने ही विशाखा का नाम और पता दिया है। विशाखा का नाम और पता देखकर ही हम यहां आए हैं—"

इस बात को सुनने के बाद मां और क्या कहे !

सिर्फ इतना ही कहा, "संदीप इस शादी के लिए राजी हो गया है ?"

"कोई क्या राजी होता है ? राजी नहीं हुआ है। उसे हमने रुपया देना चाहा। उससे कहा, विशाखा की मां को कैंसर हुआ है, इन रुपयों से वह विशाखा की मां का इलाज कराए। लेकिन उसने न तो रुपया लिया न ही वह कुछ बोला। ऐसी हालत में मैं क्या करता ! इसी वजह से आपके पास आया हूं—"

मां उधेड़बुन में फंस गई, मुन्ना को बताए बगैर मां कैसे हाथ फैलाकर रुपया ले ? इस मल्लिकजी के कारण ही मुन्ना योग्य और शिक्षित हो सका है, उन्हीं के कारण दुनिया में सिर ऊंचा कर खड़ा हो सका है, दूसरे के घर में दासी वृत्ति करने से छुटकारा दिलाया है। लेकिन जब इतने दिनों के बाद मां को जब ज़रा सुख की शक्ल देखने का मौका मिला तो यह मुसीबत आन खड़ी हुई !

मां ने कहा, "मेरा मुन्ना कहां है ?"

मल्लिकजी ने कहा, "वह उस विवाह-घर में ही है।"

"उसे एक बार मेरे पास बुला लाइए।"

मल्लिकजी ने कहा, "आप उसकी मां हैं भाभीजी, संदीप और आप में कोई फर्क नहीं है। आपको रुपया देने का मतलब है संदीप को रुपया देना।"

मां बोली, "नहीं देवरजी, वह बालिग है। वह शिक्षित युवक है। रुपये पैसे के

बारे में मुझे कोई समझदारी भी नही है। मैं उसका रुपया नहीं लूंगी। उसे बैंक में जो वेतन मिलता है, मैं उसे छूती तक नही। वेतन की पूरी रकम वह बैंक में ही रख देता है। हर हफ्ते वह गृहस्थी का खर्च निकालकर मुझे देता है। इससे अधिक मुझे कोई जानकारी नही है।"

"तो फिर विशाखा की विधवा मां हैं। बीमार भी वही हैं। उन्ही के हाथ में रुपए सौप जाता हूं।"

मां ने कहा, "उनकी तबीयत बहुत ही खराब है, डाक्टर ने नीद की दवा देकर उन्हें सुलाकर रखा है।"

तभी बाहर से कोई पुकारने लगा, "मैनेजर साहब, ओ मैनेजर साहब—"

"हमारा ड्राइवर मुझे पुकार रहा है भाभीजी, मैं चलता हूं। शायद शादी की रस्म पूरी हो गई···"

उसके बाद पचास हजार रुपये के नोटो की गड्डिया मां के पैर के सामने फर्श पर रखते हुए बोले, "रुपए रख दिए हैं भाभीजी, सदीप से ले लेने कहिएगा। मैं अब चलता हूं—"

यह कहकर जाते-जाते फिर लौटकर चले आए।

बोले, "इतने कम रुपये में शायद कैंसर का इलाज न हो पाएगा। हो सकता है और रुपये लगें। सो जितनी भी रकम लगेगी, दादी मां देंगी। एक लाख, दो लाख, तीन लाख, चार लाख, जो भी खर्च होगा, दादी मा देंगी। संदीप एक बार सूचना भेज देगा तो मैं खुद आकर रुपया दे जाऊंगा। सदीप से कहिएगा कि वह रुपया मागने मे शर्म न करे।"

नोटो की गड्डिया मा के पैरों के सामने ही पडी रहीं।

मल्लिकजी घर से बाहर चले गए। वहा तब दूल्हा, दुल्हन, दादी मा, पुरोहित और नाई मल्लिकजी का इन्तजार कर रहे थे।

वे जैसे ही गाड़ी के अन्दर जाकर बैठ गए, गाड़ी चल पड़ी। सामने एक पुलिस की गाड़ी है और पीछे भी पुलिस की ही गाड़ी है। वे लोग बेड़ापोता से कलकत्ता के लिए रवाना हो गए।

तब भी मां की आखों से विस्मय और बेकली का अवशेष नही छटा था। मां चुपचाप एक ही जगह स्थिर खड़ी थी। अचानक किसी की आवाज से उनकी चेतना लौट आई।

"यह क्या मा? मां—"

यह सदीप के गले की आवाज है। सदीप पर नजर पड़ते ही मा बेकल हो उठी। दोनो मे से किसी के मुह से एक भी शब्द नही निकला। कौन किससे क्या कहे, दोनों में से कोई यह सोच नही सका। बाहर गहरी रात रेंग रही है। धरती का सारा कुछ अंधेरे में डूब गया है। लेकिन दोनों को महसूस हुआ, उनके मन के अदर के विपर्यय का अधकार बाहर के अंधेरे से ज्यादा प्रगाढ़, भयावह और पीड़ादायक है।

एकाएक पैर से किसी वस्तु के टकराने से सदीप ने देखा, नोटो की कुछेक गड्डियां हैं।

"यहा इतने सारे रुपये कहां से आए मा?"

मा ने झट से अपने पल्लू से आखो को पोछकर कहा, "तेरे मल्लिक चाचा दे गए है।"

सदीप उत्तेजना से बरस पड़ा, "बोलो, तुमने वह रुपया लिया? तुमने उन रुपयों का स्पर्श किया?"

मा के मुंह से कोई जवाब नही निकला।

संदीप अब अपने को रोक नहीं सका। तत्क्षण अपने हाथों से नोटों की गड्डियां बटोरने लगा। बटोरते हुए कहा, "लड़की की बिक्री के इन नोटों को आज मैं जलाकर खाक कर दूंगा, तभी दम लूंगा—"

संदीप तब भी नोटों को बटोरने में व्यस्त था। मां ने तुरन्त संदीप के हाथों को कसकर पकड़ लिया। बोली, "अरे मुन्ना रुक जा, इन रुपयों को बर्बाद मत कर। मल्लिक चाचा ने यह रकम तुम्हारे लिए नहीं दी है—"

"मुझे नहीं दिया है तो किसको दिया है ?" संदीप ने कहा।

मां ने कहा, "यह रकम विशाखा की मां के इलाज के लिए दिया है। कहा है, विशाखा की मां के लिए और भी रुपयों की ज़रूरत होगी तो देंगे।"

संदीप के हाथों में पड़े नोट तब भी उसे असह्य दंशन से वेध रहे थे। बोला, "मल्लिक चाचा ने यह बात कही थी ? ज़रूरत पड़ने पर मैं उस घर में रुपया मांगने जाऊंगा ?"

मां अपने लड़के के हाथों से रुपये लेने गई। बोली, "मुझे यह सब रुपया दे दे—बर्बाद मत कर। वे रुपये न तो तेरे हैं न ही मेरे, बल्कि दीदी के इलाज के लिए हैं।"

संदीप ने रुपये मां के हाथ में थमाते हुए कहा, "मल्लिक चाचा की बात के उत्तर में तुमने क्या कहा ?"

मां ने कहा, "मैं क्या कहती ! चुप्पी साधे रही।"

"उसके बाद ?"

मां ने कहा, "तू रुपये मांगने में शर्म मत करना। ज़रूरत पड़ने पर एक लाख, दो लाख, तीन लाख रुपये भी तुम्हें दे सकते हैं।"

संदीप ने कहा, "सबने क्या सोचा है मां ? सोचा है कि हर कोई भिखमंगा है ? रुपये की आवश्यकता तो मैं महसूस करता हूं मगर रुपये के लिए मैं कितने निचले स्तर तक उतरू ?"

मां बोली, "नहीं, रे नहीं, एक बार उन लोगों की हालत पर गौर करो। पोता फांसी का मुजरिम है—उनका इकलौता पोता ! इस हालत में मन में कैसे शान्ति रह सकती है ? उस तरह की हमारी हालत होती तो हमारी क्या दशा होती, बताओ तो ?"

उसके बाद ज़रा रुककर फिर बोली, "तू दिन भर निराहार रहा है, मैं खाना ला देती हूं, कुछ खा ले—"

यह कहकर मां जा रही थी लेकिन अचानक खिड़की के बाहर आंखें जाते ही बोली, "अरे, अब तो बिलकुल सुबह हो गई—"

बाहर की ओर ताकने पर संदीप, अवाक् हो गया। सच, उत्तेजना में दोनों का समय कैसे बीत गया, इसका पता ही नहीं चला। मां या बेटा दोनों में से किसी को सोने की याद नहीं रही। एकाएक कमला की मां बाहर से अन्दर आई। कल भात-सब्जी लेकर घर लौटने में उसे काफी रात हो गई थी। शायद उसे भी अच्छी तरह नींद नहीं आई है। यही वजह है कि और दिनों की अपेक्षा आज ज़रा जल्द ही आ गई है।

संदीप ने कहा, "मां, मैं अभी कुछ नहीं खाऊंगा। कमला की मां से कहो कि आज ज़रा जल्दी ही खाना पका दे, मुझे ऑफिस जाना है।"

"क्यों ? ऑफिस क्यों जाएगा ? आज तो तुझे छुट्टी है।"

संदीप ने कहा, "शादी रुक गई तो फिर छुट्टी बर्बाद क्यों करूं ?"

मां ने कहा, "रात-भर तू सोया नहीं, आज ज़रा आराम कर लेता तो अच्छा रहता।"

संदीप ने कहा, "इसका नतीजा उल्टा ही होगा। बेहतर यही रहेगा कि काम में

अपने को खो दूं ताकि दिमाग थोड़ा ठण्डा हो जाए।"

मां ने कहा, "ठीक है। जो अच्छा समझ वही कर। व्यर्थ ही तुझे फजीहत का सामना करना पड़ा।"

सच, यह फजीहत ही है। मौसीजी के दबाव के कारण वह विशाखा से शादी करने को तैयार हुआ था। आदमी का उपकार करना यदि पाप है और उस पाप के अपराध के कारण यदि उसे कोई सजा मिलती है तो उसे वह सर-आंखों पर रखने को प्रस्तुत है।

यही वजह है कि नर्सिंग होम में खड़े-खड़े वह यही बात सोच रहा था। विशाखा अब बेहाफोना में नहीं है। वह अब ससुराल चली गई है। वहां उसके दिन कैसे बीत रहे हैं, यह वही जानती है। लेकिन मौसीजी को भले ही कोई शारीरिक सुख प्राप्त न हुआ हो लेकिन मानसिक दृष्टि से उन्हें थोड़ी-बहुत शान्ति जरूर मिली है। यह जानकर संदीप को भी खुशी हुई है।

गाड़ी से आने के दौरान मौसीजी थोड़ी-बहुत बातें कर रही थीं। मौसीजी के मुंह से सिर्फ एक ही बात निकल रही थी—विशाखा और विशाखा। एक बार पूछा था, "विशाखा का कोई समाचार तुम्हें मिला है बेटा? वहां जाने के बाद वह कम-से-कम एक चिट्ठी दे सकती थी।"

संदीप ने मौसीजी को सांत्वना देने के ख्याल से कहा, "वह अवश्य ही सकुशल है। आप चिन्ता नहीं करें। वह मजे में है।"

"तुम उसकी ससुराल गए थे?"

संदीप क्या कहे! बस इतना ही कहा, "हां मौसीजी, मैं गया था।"

"गए थे? देखने पर वह कैसी लगी? अच्छी है न?"

संदीप जानता है, इस झूठ में कोई अन्याय नहीं है। रोगी को स्वस्थ बनाने के लिए सत्य-असत्य का विचार नहीं करना चाहिए।

"हां, अच्छी तरह है।"

"मेरे बारे में कुछ बोल रही थी?"

संदीप ने कहा, "हां, आपके बारे में बार-बार कह रही थी। पूछ रही थी—मां कैसी है?"

"तुमने क्या कहा? मेरी बीमारी की चर्चा नहीं की है न?"

"नहीं; कहा कि तुम्हारी मां अच्छी तरह हैं।"

"अच्छा ही किया तुमने। वह सुखी हुई है, मेरे लिए यही सौभाग्य की बात है बेटा। अब मैं मर भी जाऊं तो मुझे कोई दुःख नहीं होगा।" उसके बाद जरा चुप रहकर मौसीजी बोलीं, "और मेरा दामाद?"

संदीप ने कहा, "सौम्य बाबू भी मजे में हैं।"

"विशाखा की शादी हो गई, अब तुम भी शादी कर लो बेटा। तुम्हारी मां भी अब काफी उम्रदार हो चुकी हैं। बहू आकर उनकी थोड़ी सेवा-सुश्रुषा करे। अब कितने दिनों तक तुम्हारी मां हाथ जलाकर खाना पकाएंगी?

आने के समय मां ने कहा था, "दुर्गा—दुर्गा—"

यात्रा शुरू करने के पहले 'दुर्गा' नाम का स्मरण करने से, कहा जाता है, शुभ होता है। लेकिन संदीप का इतना अशुभ क्यों हुआ? संदीप को क्यों जिन्दगी-भर बदकिस्मती का शिकार होना पड़ा? क्यों और किसलिए उसे इतने बरसों तक जेल की सजा भुगतनी पड़ी?

याद है, इतनी यातनाओं के बीच भी वह मौसीजी के चेहरे पर हल्की-सी मुस्कुराहट उभार सका था, बस यही उसके मन की सांत्वना के लिए पर्याप्त है।

संदीप अब अपने को रोक नहीं सका। तत्क्षण अपने हाथों से नोटों की गड्डियां बटोरने लगा। बटोरते हुए कहा, "लड़की की बिक्री के इन नोटों को आज मैं जलाकर खाक कर दूंगा, तभी दम लूंगा—"

संदीप तब भी नोटों को बटोरने में व्यस्त था। मां ने तुरन्त संदीप के हाथों को कसकर पकड़ लिया। बोली, "अरे मुन्ना रुक जा, इन रुपयों को बर्बाद मत कर। मल्लिक चाचा ने यह रकम तुम्हारे लिए नहीं दी है—"

"मुझे नहीं दिया है तो किसको दिया है?" संदीप ने कहा।

मां ने कहा, "यह रकम विशाखा की मां के इलाज के लिए दिया है। कहा है, विशाखा की मां के लिए और भी रुपयों की ज़रूरत होगी तो देंगे।"

संदीप के हाथों में पड़े नोट तब भी उसे असह्य दंशन से वेध रहे थे। बोला, "मल्लिक चाचा ने यह बात कही थी? जरूरत पड़ने पर मैं उस घर में रुपया मांगने जाऊंगा?"

मां अपने लड़के के हाथों से रुपये लेने गई। बोली, "मुझे यह सब रुपया दे दे—बर्बाद मत कर। वे रुपये न तो तेरे हैं न ही मेरे, बल्कि दीदी के इलाज के लिए हैं।"

संदीप ने रुपये मां के हाथ में थमाते हुए कहा, "मल्लिक चाचा की बात के उत्तर में तुमने क्या कहा?"

मां ने कहा, "मैं क्या कहती! चुप्पी साधे रही।"

"उसके बाद?"

मां ने कहा, "तू रुपये मांगने में शर्म मत करना। ज़रूरत पड़ने पर एक लाख, दो लाख, तीन लाख रुपये भी तुम्हें दे सकते हैं।"

संदीप ने कहा, "सबने क्या सोचा है मां? सोचा है कि हर कोई भिखमंगा है? रुपये की आवश्यकता तो मैं महसूस करता हूं मगर रुपये के लिए मैं कितने निचले स्तर तक उतरूं?"

मां बोली, "नहीं, रे नहीं, एक बार उन लोगों की हालत पर गौर करो। पोता फांसी का मुजरिम है—उनका इकलौता पोता! इस हालत में मन में कैसे शान्ति रह सकती है? उस तरह की हमारी हालत होती तो हमारी क्या दशा होती, बताओ तो?"

उसके बाद ज़रा रुककर फिर बोली, "तू दिन भर निराहार रहा है, मैं खाना ला देती हूं, कुछ खा ले—"

यह कहकर मां जा रही थी लेकिन अचानक खिड़की के बाहर आंखें जाते ही बोली, "अरे, अब तो बिलकुल सुबह हो गई—"

बाहर की ओर ताकने पर संदीप, अवाक् हो गया। सच, उत्तेजना में दोनों का समय कैसे बीत गया, इसका पता ही नहीं चला। मां या बेटा दोनों में से किसी को सोने की याद नहीं रही। एकाएक कमला की मां बाहर से अन्दर आई। कल भात-सब्जी लेकर घर लौटने में उसे काफी रात हो गई थी। शायद उसे भी अच्छी तरह नींद नहीं आई है। यही वजह है कि और दिनों की अपेक्षा आज ज़रा जल्द ही आ गई है।

संदीप ने कहा, "मां, मैं अभी कुछ नहीं खाऊंगा। कमला की मां से कहो कि आज ज़रा जल्दी ही खाना पका दे, मुझे ऑफिस जाना है।"

"क्यों? ऑफिस क्यों जाएगा? आज तो तुझे छुट्टी है।"

संदीप ने कहा, "शादी रुक गई तो फिर छुट्टी बर्बाद क्यों करूं?"

मां ने कहा, "रात-भर तू सोया नहीं, आज ज़रा आराम कर लेता तो अच्छा रहता।"

संदीप ने कहा, "इसका नतीजा उल्टा ही होगा। बेहतर यही रहेगा कि काम में

अपने को खो दूं ताकि दिमाग थोड़ा ठण्डा हो जाए।"

मां ने कहा, "ठीक है। जो अच्छा समझ वही कर। व्यर्थ ही तुझे फजीहत का सामना करना पड़ा।"

सच, यह फजीहत ही है। मौसीजी के दबाव के कारण वह विशाखा से शादी करने को तैयार हुआ था। आदमी का उपकार करना यदि पाप है और उस पाप के अपराध के कारण यदि उसे कोई सजा मिलती है तो उसे वह सर-आखो पर रखने को प्रस्तुत है।

यही वजह है कि नर्सिंग होम में खड़े-खड़े वह वही बात सोच रहा था। विशाखा अब बेहापोला मे नही है। वह अब ससुराल चली गई है। वहां उसके दिन कैसे बीत रहे हैं, यह वही जानती है। लेकिन मौसीजी को भले ही कोई शारीरिक सुख प्राप्त न हुआ हो लेकिन मानसिक दृष्टि से उन्हें थोड़ी-बहुत शान्ति जरूर मिली है। यह जानकर संदीप को भी खुशी हुई है।

गाड़ी से आने के दौरान मौसीजी थोड़ी-बहुत बातें कर रही थी। मौसीजी के मुह से सिर्फ एक ही बात निकल रही थी—विशाखा और विशाखा। एक बार पूछा था, "विशाखा का कोई समाचार तुम्हें मिला है बेटा? वहा जाने के बाद वह कम-से-कम एक चिट्ठी दे सकती थी।"

संदीप ने मौसीजी को सांत्वना देने के खयाल से कहा, "वह अवश्य ही सकुशल है। आप चिन्ता नही करें। वह मजे में है।"

"तुम उसकी ससुराल गए थे?"

संदीप क्या कहे! बस इतना ही कहा, "हा मौसीजी, मैं गया था।"

"गए थे? देखने पर वह कैसी लगी? अच्छी है न?"

संदीप जानता है, इस झूठ में कोई अन्याय नही है। रोगी को स्वस्थ बनाने के लिए सत्य-असत्य का विचार नही करना चाहिए।

"हां, अच्छी तरह है।"

"मेरे बारे में कुछ बोल रही थी?"

संदीप ने कहा, "हां, आपके बारे मे बार-बार कह रही थी। पूछ रही थी—मां कैसी है?"

"तुमने क्या कहा? मेरी बीमारी की चर्चा नही की है न?"

"नही, कहा कि तुम्हारी मा अच्छी तरह हैं।"

"अच्छा ही किया तुमने। वह सुखी हुई है, मेरे लिए यही सौभाग्य की बात है बेटा। अब मैं मर भी जाऊं तो मुझे कोई दुःख नही होगा।" उसके बाद जरा चुप रहकर मौसीजी बोली, "और मेरा दामाद?"

संदीप ने कहा, "सौम्य बाबू भी मजे मे हैं।"

"विशाखा की शादी हो गई, अब तुम भी शादी कर लो बेटा। तुम्हारी मा भी अब काफी उम्रदार हो चुकी हैं। बहू आकर उनकी थोड़ी सेवा-सुश्रुषा करे। अब कितने दिनों तक तुम्हारी मा हाथ जलाकर खाना पकाएंगी?

आने के समय मा ने कहा था, "दुर्गा—दुर्गा—"

यात्रा शुरू करने के पहले 'दुर्गा' नाम का स्मरण करने से, कहा जाता है, शुभ होता है। लेकिन संदीप का इतना अशुभ क्यों हुआ? संदीप को क्यो जिन्दगी-भर बदकिस्मती का शिकार होना पड़ा? क्यो और किसलिए उसे इतने बरसो तक जेल की सजा भुगतनी पड़ी?

याद है, इतनी यातनाओ के बीच भी वह मौसीजी के चेहरे पर हल्की-सी मुस्कुराहट उभार सका था, बस यही उसके मन की सांत्वना के लिए पर्याप्त है।

खूब तड़के ही बेड़ापोता से निकल जब वह कलकत्ता पहुंचा तो काफी वक्त गुज़र चुका था। उस वक्त उसे जोरों से भूख भी लगी थी। खड़े-खड़े संदीप के पैर दुखने लगे थे। बाहर टैक्सी में मौसीजी अधलेटी हालत में पड़ी हुई थीं।

लगभग एक घंटे के बाद डाक्टर साहब ऑपरेशन थियेटर से वापस आए। संदीप को देखकर पहचान लिया डाक्टर लाहिड़ी ने। बोले, "पेशेण्ट को ले आए हैं?"

संदीप ने कहा, "हां सर।"

"पेशेण्ट कहां है?"

"बाहर टैक्सी में लिटाकर रख दिया है।"

इसके बाद डाक्टर साहब ने कहा, "रुपया जमा कर दिया है?"

"हां सर, यही तो—" यह कहकर संदीप ने पॉकेट से रसीद निकालकर दिखाई।

डाक्टर साहब ने रसीद लेकर उसे ध्यान से देखा।

उसके बाद बोले, "बारह नंबर केबिन में रख आइए।"

लेकिन किस तरह बारह नंबर के केबिन में मरीजा को ले जाएगा, यह कोई नहीं बता रहा है।

"मेरा फीस ले आए हैं?"

संदीप ने कहा, "हां ले आया हूं। कितने रुपये सर?"

डाक्टर लाहिड़ी ने कहा, "अभी ढाई हज़ार देने से ही काम चल जाएगा—"

संदीप ने पॉकेट से रुपये निकाल उन्हें गिना और डाक्टर लाहिड़ी की ओर बढ़ा दिया। डाक्टर ने पॉकेट में रख लिया।

संदीप ने कहा, "सर, आपने रुपयों को गिना नहीं?"

"हां-हां, ठीक है।"

यह कहकर मेज़ पर रखे एक स्विच को दबाया। फौरन एक चपरासी ने आकर सलाम किया।

डाक्टर साहब ने कहा, "स्टेचर लाकर पेशेन्ट को बारह नंबर केबिन में ले जाने कहो।"

उसके बाद संदीप की ओर देखते हुए बोले, "पचास रुपया काउन्टर पर दे दें, वे लोग आपको रसीद देंगे। जाइए—"

उसके बाद मौसीजी को टैक्सी से स्टेचर पर रखकर नर्सिंग होम के बारह नंबर केबिन में ले जाया गया। मौसीजी को बिस्तर पर लिटाने के बाद संदीप ने कहा, "मौसीजी, अब मैं चलता हूं—"

मौसीजी की आंखें उस समय आंसुओं से छलछला आई थीं। उसी हालत में बोलीं, "तुम चले जाओगे? मैं अकेले यहां कैसे रहूंगी?"

संदीप ने कहा, "बैंक में छुट्टी होने के बाद मैं दुबारा आकर आपसे मिल लूंगा। आप फिक्र नहीं करें। आपको जिस चीज़ की भी जरूरत पड़े, यहां की नर्स से कहिएगा। वह सारा कुछ कर देगी—चिन्ता नहीं कीजिएगा—"

यह कहकर संदीप जा रहा था लेकिन मौसीजी बोलीं, "बेटा, एक बात और। तुम एक बार बिशाखा के हालचाल का पता लगाना। शादी के बाद वह कैसी है, ससुराल कैसी है—यह सब जानने की मुझे बड़ी ही इच्छा हो रही है—"

संदीप ने कहा, "ठीक है, मैं चलता हूं—"

यह कहकर संदीप बैंक चला गया। पहले से ही आधे दिन की छुट्टी ले ली थी। हाशिम साहब ने कहा, "सर, मालव्यजी ने टेलीफोन किया था, मैंने उन्हें बताया कि

आपने हाफ-डे की छुट्टी ली है। इसके अलावा यह भी पूछा कि आपकी शादी हो गई या नहीं—"

"तुमने क्या कहा?"

"मैंने कहा कि हां, शादी होने के दूसरे ही दिन आप बैंक आए थे। उसके बाद बोले, वे आध घंटा बाद फिर फोन करेंगे—"

संदीप ने कहा, "ठीक है, तुम जाओ—"

आधे घंटे बाद ही करमचंदजी ने टेलीफोन किया। बोले, "सुनने में आया, तुम शादी के दूसरे ही दिन ऑफिस आ गए थे!"

संदीप ने कहा, "हां सर।"

"इतनी जल्दी ऑफिस आने की कौन-सी आवश्यकता थी? अब भी तुम लोगों के बहुत से फंक्शन बाकी होंगे। वह सब खत्म होने के पहले ही ऑफिस क्यों चले आए?"

संदीप ने कहा, "नहीं सर, मेरी शादी नहीं हुई।"

करमचंदजी आश्चर्यचकित हो गए, "शादी नहीं हुई? इसका मतलब?"

संदीप ने कहा, "सब गड़बड़ हो गया। मैं शादी करने को राजी था। लेकिन आपको जिन मुखर्जी बाबुओं के बारे में बताया था···"

"हां-हां, याद है।"

संदीप ने कहा, "उन्हीं लोगों ने बेड़ापोता में आकर सब गड़बड़ कर दिया।"

"क्यों?"

संदीप ने कहा, "वह लंबी दास्तान है सर, मैं किसी दिन आपके पास जाऊंगा और सारा कुछ बताऊंगा। अभी मेरे बहुत ही बुरे दिन चल रहे हैं। मैंने तो आपको सारा कुछ बताया था—"

"ठीक है, तुम्हें नहीं आना है। मैं ही किसी दिन तुम्हारे पास जाऊंगा।"

यह कहकर उन्होंने टेलीफोन रख दिया।

आदमी का आनंद सबसे बढ़कर किसमें है? इंसान बनने में या हैवान बनने में?

किसी को पैसा कमाने पर आनन्द मिलता है और किसी को ख्याति अर्जित करने पर। किसी को खाने-पहनने में आनन्द मिलता है और किसी को चाटुकारिता प्राप्त करने पर। कोई स्वयं को पहचानकर आनन्द पाता है और कोई स्वयं को बेपहचाने ही। बहुतेरे लोग इन्हें आनन्द कहकर स्वीकार नहीं करते। लेकिन असली आनन्द क्या है?

और एक तरह का आनन्द है। वह आनन्द नियम पालन करने का आनन्द या नियम तोड़ने का आनन्द है। नियमों की पाबन्दी तोड़कर बहुतों को शराब पीकर रास्ते में लुढ़ककर गिरने में आनन्द मिलता है।

लेकिन असली आनन्द क्या है?

असली आनन्द है हवा में। परिन्दे ने एक दिन कहा—मैं आकाश को पाना चाहता हूं। यह कहकर उसने अपना बसेरा छोड़कर उड़ना शुरू किया। जिन्दगी-भर रोज-रोज आसमान में उड़ते रहने पर भी उसने कहा—मैं आसमान को पा नहीं सका। आकाश को पाने के बावजूद आकाश नहीं मिलता। क्योंकि आकाश अनन्त है। इसलिए आदमी कहता है, मैं ऐसा कुछ पाना चाहता हूं जो प्राप्त नहीं होता। जिसे पाने के बावजूद महसूस हो कि मैं कुछ पा नहीं सका।

लेकिन जिसे पाने के लिए मैं इतना आग्रहशील हूं वह आग्रह क्या कुछ भी नहीं

है ? वह प्रयास भी मिथ्या है ? नहीं, उस आकुलता, आग्रह और प्रयास का ही नाम है 'होना'।

उसी 'होने' के निमित्त धरती के सभी महापुरुष, साधु-संत, अमर शहीद जीवन-भर संघर्ष करते रहे हैं। उस 'होने' का संघर्ष ही मनुष्य के जीवन की सर्वश्रेष्ठ सार्थकता है।

अब भी संदीप को अपने कान से सुनी उस दिन की हाईकोर्ट की घटनाएं याद हैं। वह सौम्य बाबू की ज़िन्दगी के आखिरी फैसले का दिन था। उस दिन कितने लोगों की तीव्र प्रतीक्षा का अन्त होने वाला है ! उस दिन कितने लोगों की निद्राहीन रातों की यातना का निवारण होगा ! सिर्फ दादी मां, मुक्तिपद की ही नहीं—यहां तक कि अकेले मल्लिकजी या 'सैक्सबी मुखर्जी' कम्पनी के कर्मचारियों की ही नहीं, बल्कि तमाम लोगों की शुभेच्छा की परिणति देखने के आग्रह की समाप्ति होगी।

उसके बाद हैं एडवोकेट दासगुप्त। अगर उन्हें इस मुकदमे की शुभ परिणति देखने का मौका मिले तो वकील और बैरिस्टरों के समुदाय में उनकी ख्याति शिखर पर पहुंच जाएगी। और सभी वास्तविक व्यक्तित्वों के अन्तराल में और भी अनेक अशरीरी आत्माएं हैं। देवीपद मुखर्जी, जो इस खानदान के सफल संस्थापक हैं, वे भी तमाम लोगों के अगोचर में आकर खड़े हैं।

इन लोगों के अतिरिक्त शक्तिपद मुखर्जी खड़े हैं। उनके अन्दर आग्रह रहना स्वाभाविक है। क्योंकि सौम्यपद के फांसी का हुक्म उनकी अपमृत्यु की तरह ही वेधक साबित होगा।

और उनकी बगल में खड़ी हैं सौम्यपद की मां। उनकी बेकली का कोई अन्त नहीं, क्योंकि सौम्यपद उन्हीं की कोख से पैदा हुआ था।

उनके साथ हैं अदालत के बेंच-क्लर्क, चपरासी और प्यादे। वे बहुत दिनों से इस मुकदमे के प्रत्यक्षदर्शी साक्षी हैं। तमाम लोग यह जानने को आग्रहशील हैं कि क्या होगा ! हत्या के एक अपराधी के न्याय के अन्तिम अंक के अन्तिम दृश्य का किस तरह यवनिका-पात होगा !

और दर्शक-दीर्घा में ? मुकम्मल कलकत्ता के बाशिन्दे जैसे जज के इजलास में आकर इकट्ठे हो गए हैं। तमाम लोगों की दृष्टि एक ही बिन्दु पर केन्द्रित है।

"वह कौन है जी ?"

तमाम लोगों का एक ही सवाल है—"वह कौन है ? वह दुल्हन ?"

सभी एक-दूसरे से चुपचाप यही सवाल कर रहे हैं। सवाल जारी है मगर जवाब किसी को मालूम नहीं। जवाब मालूम है केवल दादी मां, मुक्तिपद मुखर्जी, मल्लिकजी और एडवोकेट मिस्टर दासगुप्त को।

इन लोगों के अलावा और किसी को मालूम है तो वह हैं जज साहब।

लेकिन वह जवाब बहुत देर तक छिपा नहीं रह सका। एक-एक कर सबको जानकारी प्राप्त हो गई। बात इस कान से उस कान में पहुंची। उसके बाद सब लोग ध्यान से देखने लगे। देह का रंग दूधिया गोराई लिए हुए। चटकदार लाल बनारसी पहने एक दुल्हन। देखने से लगता है, कुल मिलाकर अभी हाल ही में शादी हुई है। लेकिन सबसे पहले निगाह जिस चीज़ पर टिकती है वह है मांग में दमकता हुआ सिंदूर।

जिसे देखने को सभी लोग उत्कंठित हैं उसकी दृष्टि कहीं भी नहीं है। वह अचंचल स्थिर हालत में एक ही जगह बैठी है—एकबारगी सामने पंक्ति में। दुनिया में जो लोग जिन्दा रहना चाहते हैं, जुल्म और अत्याचार से राहत पाना चाहते हैं, वे ही न्यायाधीश के इजलास में आकर धरना देते हैं, वे ही अपनी अर्जी पेश करते हैं, वे ही प्रार्थना करते

है—"मुझ पर रहम कर मुझे बरी कर दें धर्मावतार। मैं निरपराध हूं, मैं घुटने टेककर आपसे न्याय की मांग करता हूं—"

मिस्टर दासगुप्त तब कानून की तरह-तरह की युक्तियां पेश कर, कानून की तरह-तरह की धाराओं का उल्लेख कर, यही प्रार्थना कर रहे थे। वे कह रहे थे—"झूठ से मौजूदा वक्त को गुमराह किया जा सकता है। जैसे बादल कुछ क्षणों के लिए सूर्य को ढंक दे सकता है। उस समय लग सकता है, बादल ही सत्य है और सूर्य असत्य। अंश को सम्पूर्ण समझकर चाहे और कोई गलती कर सकता है, लेकिन धर्मावतार ऐसा हर्गिज नहीं कर सकते। मेरा मोवक्किल कलकत्ता के एक ऐसे खानदान की संतान है जो कोई अन्याय नहीं कर सकता। अन्याय उसके स्वभाव के विरुद्ध है। अगर ऐसी बात होती तो कोई मां खून के अपराध के गुनहगार मुजरिम से अपनी गर्भजात लड़की की शादी करती? धर्मावतार, दया कर सामने की ओर देखने का कष्ट करें। मेरे मोवक्किल की सद्य *विवाहित धर्मपत्नी की आंखों से आंसू की धारा प्रवाहित हो रही है।* उसकी शादी के बाद अब भी अड़तालीस घंटे नहीं बीते हैं। फैसला करने के पहले धर्मावतार, मेरे मोवक्किल की सहधर्मिणी के बारे में एक बार विवेचना करने की दया करें। वह सद्य विवाहिता है, उसकी हालत के बारे में धर्मावतार क्या एक बार भी नहीं सोचेंगे? हमारे धर्म में क्षमा को सर्वश्रेष्ठ धर्म के रूप में स्वीकार किया गया है। धर्मावतार, विश्व के अन्यतम श्रेष्ठ कवि नोबेल पुरस्कार विजेता रवीन्द्रनाथ की एक कविता की कुछ पंक्तियों का मैं *पाठ कर रहा हूं। निवेदन है कि कृपया उसे सुनें।*"

यह कहकर बगल से 'संचयिता' पुस्तक को अपने हाथ में लिया। उसके बाद बोले, "मैं धर्मावतार को रवीन्द्रनाथ के 'गांधारी का निवेदन' कविता से कुछ पंक्तियां पढ़कर *सुना रहा हूं। यहां गांधारी धृतराष्ट्र से कह रही हैं—*

"···प्रभु, दंडित के साथ
दंडदाता रोता जब सामान आघात से
तो वह है सर्वश्रेष्ठ न्याय। जिसके लिए प्राणों को
नहीं होता किसी व्यथा का अनुभव उसे दंड देना
प्रबल का अत्याचार। जो दण्ड-पीड़ा
पुत्र को नहीं दे सकते वह किसी को न देना,
जो तुम्हारा पुत्र नहीं, उसका भी है पिता
महा अपराधी होओगे तुम उसके समक्ष
न्यायकर्त्ता।···"

चारों तरफ पुलिसकर्मियों से घिरा सौम्यपद मुखर्जी मुजरिम के कठघरे, लोहे के पिंजरे, में खड़ा सबकुछ सुन रहा था। लेकिन किसी प्रकार की प्रतिक्रिया व्यक्त किए बगैर वह निर्विकार, उद्वेगहीन और निस्तार दृष्टि से सारा कुछ देख रहा था।

घड़ी तब दोपहर के एक बजे की सूचना दे रही थी। जज साहब एडवोकेट मिस्टर दासगुप्त की एक-एक बात को ध्यान से सुन रहे हैं और बीच-बीच में अपने सामने रखे कागज पर कुछ नोट कर रहे हैं। क्योंकि आदमी के जीवन से जुड़ा हुआ सवाल है और इसलिए सतर्कता के साथ फैसला सुनाना है।

जब ठीक एक बज गया तो जज साहब उठ गए। अभी आधे घंटे तक उनकी फुर्सत का समय है।

मिस्टर दासगुप्त को जो कुछ करना था वह खत्म हो चुका है। अब जज साहब के फैसले पर सारा कुछ निर्भर करता है। दासगुप्त साहब अपने चेंबर की ओर जाने लगे। दादी मां, मुक्तिपद और मल्लिकजी उनके पीछे-पीछे जाने लगे। उनके साथ है नई

है ? वह प्रयास भी मिथ्या है ? नहीं, उस आकुलता, आग्रह और प्रयास का ही नाम है 'होना'।

उसी 'होने' के निमित्त धरती के सभी महापुरुष, साधु-संत, अमर शहीद जीवन-भर संघर्ष करते रहे हैं। उस 'होने' का संघर्ष ही मनुष्य के जीवन की सर्वश्रेष्ठ सार्थकता है।

अब भी संदीप को अपने कान से सुनी उस दिन की हाईकोर्ट की घटनाएं याद हैं। वह सौम्य बाबू की ज़िन्दगी के आख़िरी फैसले का दिन था। उस दिन कितने लोगों की तीव्र प्रतीक्षा का अन्त होने वाला है ! उस दिन कितने लोगों की निद्राहीन रातों की यातना का निवारण होगा ! सिर्फ दादी मां, मुक्तिपद की ही नहीं—यहां तक कि अकेले मल्लिकजी या 'सैक्सवी मुखर्जी' कम्पनी के कर्मचारियों की ही नहीं, बल्कि तमाम लोगों की शुभेच्छा की परिणति देखने के आग्रह की समाप्ति होगी।

उसके बाद हैं एडवोकेट दासगुप्त। अगर उन्हें इस मुकदमे की शुभ परिणति देखने का मौका मिले तो वकील और बैरिस्टरों के समुदाय में उनकी ख्याति शिखर पर पहुंच जाएगी। और सभी वास्तविक व्यक्तित्वों के अन्तराल में और भी अनेक अशरीरी आत्माएं हैं। देवीपद मुखर्जी, जो इस खानदान के सफल संस्थापक हैं, वे भी तमाम लोगों के अगोचर में आकर खड़े हैं।

इन लोगों के अतिरिक्त शक्तिपद मुखर्जी खड़े हैं। उनके अन्दर आग्रह रहना स्वाभाविक है। क्योंकि सौम्यपद के फांसी का हुक्म उनकी अपमृत्यु की तरह ही वेधक साबित होगा।

और उनकी बगल में खड़ी हैं सौम्यपद की मां। उनकी बेकली का कोई अन्त नहीं, क्योंकि सौम्यपद उन्हीं की कोख से पैदा हुआ था।

उनके साथ हैं अदालत के बैंच-क्लर्क, चपरासी और प्यादे। वे बहुत दिनों से इस मुकदमे के प्रत्यक्षदर्शी साक्षी हैं। तमाम लोग यह जानने को आग्रहशील हैं कि क्या होगा ! हत्या के एक अपराधी के न्याय के अन्तिम अंक के अन्तिम दृश्य का किस तरह यवनिका-पात होगा !

और दर्शक-दीर्घा में ? मुकम्मल कलकत्ता के बाशिन्दे जैसे जज के इजलास में आकर इकट्ठे हो गए हैं। तमाम लोगों की दृष्टि एक ही बिन्दु पर केन्द्रित है।

"वह कौन है जी ?"

तमाम लोगों का एक ही सवाल है—"वह कौन है ? वह दुल्हन ?"

सभी एक-दूसरे से चुपचाप यही सवाल कर रहे हैं। सवाल जारी है मगर जवाब किसी को मालूम नहीं। जवाब मालूम है केवल दादी मां, मुक्तिपद मुखर्जी, मल्लिकजी और एडवोकेट मिस्टर दासगुप्त को।

इन लोगों के अलावा और किसी को मालूम है तो वह हैं जज साहब।

लेकिन वह जवाब बहुत देर तक छिपा नहीं रह सका। एक-एक कर सबको जान-कारी प्राप्त हो गई। बात इस कान से उस कान में पहुंची। उसके बाद सब लोग ध्यान से देखने लगे। देह का रंग दूधिया गोराई लिए हुए। चटकदार लाल बनारसी पहने एक दुल्हन। देखने से लगता है, कुल मिलाकर अभी हाल ही में शादी हुई है। लेकिन सबसे पहले निगाह जिस चीज़ पर टिकती है वह है मांग में दमकता हुआ सिंदूर।

जिसे देखने को सभी लोग उत्कंठित हैं उसकी दृष्टि कहीं भी नहीं है। वह अचंचल स्थिर हालत में एक ही जगह बैठी है—एकबारगी सामने पंक्ति में। दुनिया में जो लोग ज़िन्दा रहना चाहते हैं, जुल्म और अत्याचार से राहत पाना चाहते हैं, वे ही न्यायाधीश के इजलास में आकर धरना देते हैं, वे ही अपनी अर्जी पेश करते हैं, वे ही प्रार्थना करते

हैं—"मुझ पर रहम कर मुझे बरी कर दें धर्मावतार। मैं निरपराध हूं, मैं घुटने टेककर आपसे न्याय की मांग करता हूं—"

मिस्टर दासगुप्त तब कानून की तरह-तरह की युक्तियां पेश कर, कानून की तरह-तरह की धाराओं का उल्लेख कर, यही प्रार्थना कर रहे थे। वे कह रहे थे—"झूठ से मौजूदा वक्त को गुमराह किया जा सकता है। जैसे बादल कुछ क्षणों के लिए सूर्य को ढंक दे सकता है। उस समय लग सकता है, बादल ही सत्य है और सूर्य असत्य। अंश को सम्पूर्ण समझकर चाहे और कोई गलती कर सकता है, लेकिन धर्मावतार ऐसा हर्गिज नहीं कर सकते। मेरा मोवक्किल कलकत्ता के एक ऐसे खानदान की संतान है जो कोई अन्याय नहीं कर सकता। अन्याय उसके स्वभाव के विरुद्ध है। अगर ऐसी बात होती तो कोई मां खून के अपराध के गुनहगार मुजरिम से अपनी गर्भजात लड़की की शादी करती? धर्मावतार, दया कर सामने की ओर देखने का कष्ट करें। मेरे मोवक्किल की सद्य विवाहित धर्मपत्नी की आंखों से आंसू की धारा प्रवाहित हो रही है। उसकी शादी के बाद अब भी अड़तालीस घंटे नहीं बीते हैं। फैसला करने के पहले धर्मावतार, मेरे मोवक्किल की सहधर्मिणी के बारे में एक बार विवेचना करने की दया करें। वह सद्य विवाहिता है, उसकी हालत के बारे में धर्मावतार क्या एक बार भी नहीं सोचेंगे? हमारे धर्म में क्षमा को सर्वश्रेष्ठ धर्म के रूप में स्वीकार किया गया है। धर्मावतार, विश्व के अन्यतम श्रेष्ठ कवि नोबेल पुरस्कार विजेता रवीन्द्रनाथ की एक कविता की कुछ पंक्तियों का मैं पाठ कर रहा हूं। निवेदन है कि कृपया उसे सुनें।"

यह कहकर बगल से 'सचयिता' पुस्तक को अपने हाथ में लिया। उसके बाद बोले, "मैं धर्मावतार को रवीन्द्रनाथ के 'गांधारी का निवेदन' कविता से कुछ पंक्तियां पढ़कर सुना रहा हूं। यहां गांधारी धृतराष्ट्र से कह रही हैं—

"···प्रभु, दंडित के साथ
दंडदाता रोता जब सामान आघात से
तो वह है सर्वश्रेष्ठ न्याय। जिसके लिए प्राणों को
नहीं होता किसी व्यथा का अनुभव उसे दंड देना
प्रबल का अत्याचार। जो दण्ड-पीड़ा
पुत्र को नहीं दे सकते वह किसी को न देना,
जो तुम्हारा पुत्र नहीं, उसका भी है पिता
महा अपराधी होओगे तुम उसके समक्ष
न्यायकर्त्ता।···"

चारों तरफ पुलिसकर्मियों से घिरा सौम्यपद मुखर्जी मुजरिम के कठघरे, लोहे के पिंजरे, में खड़ा सबकुछ सुन रहा था। लेकिन किसी प्रकार की प्रतिक्रिया व्यक्त किए बगैर वह निर्विकार, उद्वेगहीन और निस्ताप दृष्टि से सारा कुछ देख रहा था।

घड़ी तब दोपहर के एक बजे की सूचना दे रही थी। जज साहब एडवोकेट मिस्टर दासगुप्त की एक-एक बात को ध्यान से सुन रहे हैं और बीच-बीच में अपने सामने रखे कागज पर कुछ नोट कर रहे हैं। क्योंकि आदमी के जीवन से जुड़ा हुआ सवाल है और इसलिए सतर्कता के साथ फैसला सुनाना है।

जब ठीक एक बज गया तो जज साहब उठ गए। अभी आधे घंटे तक उनकी फुर्सत का समय है।

मिस्टर दासगुप्त को जो कुछ करना था वह खत्म हो चुका है। अब जज साहब के फैसले पर सारा कुछ निर्भर करता है। दासगुप्त साहब अपने चेंबर की ओर जाने लगे। दादी मां, मुक्तिपद और मल्लिकजी उनके पीछे-पीछे जाने लगे। उनके साथ है नई

वह विशाखा।

दादी मां ने मिस्टर दास गुप्त से पूछा, "आपका अनुमान क्या है मिस्टर दास-गुप्त?"

मिस्टर दासगुप्त ने मुंह से कुछ कहे बगैर आसमान की ओर हाथ उठाकर कुछ समझाना चाहा। इसका मतलब—ऊपरवाले से ही पूछिए—

समस्त वस्तुओं का अन्त होता है लेकिन मृत्यु का क्या कोई अन्त है?

संदीप जेल में सिर्फ यही बात सोचता—आकाश का अन्त है, समुद्र का अन्त है। लेकिन मृत्यु का?

उसके करीब आने का मौका सहदेव को ही मिला। कहता, "बाबूजी, पेट भरा है तो?"

संदीप पूछता, "क्यों? तुम यह बात क्यों कह रहे हो?"

"इसलिए कह रहा हूं कि यहां किसी को भी भर पेट खाना नहीं मिलता—"

संदीप ने कहा, "क्यों?"

सहदेव ने कहा, "यहां सभी चोर हैं बाबूजी, चोर!"

संदीप ने इस बात का कोई जवाब नहीं दिया। सहदेव ने फिर बातचीत शुरू की, "मैं भी चोर ही हूं। मैं मैंने चोरी की है इसलिए मुझे जेल आना पड़ा है।"

आप चोर हैं या नहीं, मुझे यह कहने का अधिकार नहीं है बाबूजी। लेकिन जेल के अन्दर जो लोग काम करते हैं उनका अगर किसी दिन इंसाफ किया जाए तो सभी को जेल की सजा भुगतनी पड़ेगी।"

"ऐसी बात है?"

सहदेव ने कहा, "हां। यहां आपलोगों को जिस चावल का भात मिलना चाहिए था, वह चावल बाहर चला जाता है। उस चावल को मोटी रकम में बेचकर सस्ती किस्म का चावल खरीदा जाता है और वही कैदियों को खाने के लिए दिया जाता है।"

"यह सब काम कौन लोग करते हैं?"

सहदेव कहता, "कौन नहीं करता है यही पूछिए! जेल के जो सबसे बड़े अधिकारी हैं, अगर किसी दिन इंसाफ किया जाए तो सबसे पहले उन्हें ही जेल की सजा भुगतनी पड़ सकती है।"

यह कहकर सहदेव अपनी आवाज़ में धीमापन ले आता। कहता, "आपको कहने में दोष नहीं है। मैं भी चोरी करता हूं।" सहदेव की बात सुनकर संदीप को आश्चर्य होता कहता, "तुम भी चोरी करते हो?"

सहदेव कहता, "हां बाबूजी, आपके सामने कहने में शर्म महसूस नहीं कर रहा। जब मैं यहां पहले पहल आया था तब चोरी नहीं करता था। लेकिन जब मैंने देखा, ऊपर से लेकर निचले दर्जे तक के सभी कर्मचारी चोरी करते हैं तो मैंने भी चोरी करना शुरू कर दिया—"

संदीप ने पूछा, "तुम किस चीज़ की चोरी करते हो?"

सहदेव बोला, "जो भी मिलता है चुरा लेता हूं।"

"मतलब?"

सहदेव बोला, "आपलोगों को जो कुछ मिलना चाहिए वह सब क्या दिया जाता है? आप लोगों को जो दूध दिया जाता है उसके आधे हिस्से में पानी मिलाकर बाकी दूध कौन बेच देता है? मैं।"

"तुम दूध में पानी मिलाते हो ?"

सहदेव कहता है, "यहां अगर चोरी न करूं तो मेरी नौकरी चली जाएगी।"

"क्यों ?"

सहदेव ने कहा, "हां बाबू, जब मैं यहां पहले-पहल आया था तो भला आदमी बनकर रहना चाहा था। जो हुक्म मिलता ईमानदारी से उसका पालन करता। यह देखकर सब लोग मेरे दुश्मन हो गए। सबने मुझे दल से बाहर निकाल दिया। उसके बाद मुझे अपनी गलती का अहसास हुआ। उसके बाद मैंने उन लोगों से तालमेल बिठाकर चलना शुरू किया। अब वे लोग सभी मेरे दोस्त बन गए हैं।"

उसके बाद जरा रुककर बोला, "बाबूजी, आप अफीम वगैरह खाना चाहें तो मैं सप्लाई कर सकता हूं। या फिर शराब···"

"शराब ? यहां शराब भी मिलती है ?"

सहदेव ने कहा, "कौन-सी शराब ? आपको किस किस्म की शराब चाहिए, बताइए। आप मुझे अपने घर का पता बता दें। आपको जिस चीज की जरूरत हो, वहां से लाकर दे सकता हूं। सिर्फ इतना बता दीजिए कि क्या चाहिए।"

सदीप ने कहा, "मैं जो चाहता हूं तुम वह चीज लाकर मुझे नहीं दे सकोगे सहदेव—!"

"आप यह क्या कह रहे हैं ! आप एक बार देखिए कि मैं ला पाता हूं या नहीं—"

उसके बाद जरा रुककर बोला, "ठीक है, अभी आपको बताने नहीं कह रहा हूं। आप सोच लीजिए। अच्छी तरह सोच लेने के बाद मुझे बताइएगा। मैं तभी वह चीज सप्लाई करूंगा।"

सहदेव अक्सर यह बात कहता। बीच-बीच में आकर इस बात की याद भी दिला देता।

लेकिन सदीप क्या मांगेगा ? क्या मांगने से उसके मन की ख्वाहिश मुकम्मल होगी ? क्या मिलने से उसकी तमाम चाहें सार्थक होंगी ? संसार में ऐसी कौन-सी वस्तु है जो मिलने पर आदमी कह सके—अब मेरे लिए चाहने को कुछ बाकी नहीं रहा ?

सच, ससार में चाहने की वस्तु की क्या कोई कमी है ? दादी मां के पास इतने रुपये रहने के बावजूद उनकी चाह का कभी अन्त नहीं हुआ था। वे उस समय भी चाहती थीं कि उनका पोता शादी कर गृहस्थ बने। मल्लिक चाचा चाहते थे कि उनकी नौकरी बनी रहे और वे मजे में जिन्दगी बिता दें। मझले बाबू चाहते थे कि उनकी लड़की और पत्नी जीवन जीते हुए उनके घर संसार को उज्ज्वल करें और उनके कारखाने के कर्मचारी ईमानदारी से काम करते हुए उन्हें सुख-समृद्धि प्रदान करें। गोपाल हाजरा भी यही चाहता था। वह चाहता था कि वह हरेक प्रकार के नशीले द्रव्य की बिक्री कर और अधिक पैसे का मालिक बने और समूची दुनिया को अपनी मुट्ठी में कर ले।

और तपेश गागुली ? तपेश गागुली की माग बिलकुल छोटी-सी थी। लेकिन अपनी उस छोटी-सी माग को पहाड़ का रूप देकर खुद को जीवन-भर क्षुद्र वृत्ति का धारक-वाहक बनाना चाहता था।

जेल के अन्दर बैठे-बैठे जेल के बाहर देखे जगत का ही सदीप एकाग्रचित्त से विवेचन और विश्लेषण करता। उसे ढूढ़ने पर भी कोई ऐसा आदमी नहीं मिलता जो कुछ न चाहता हो। मौसीजी चाहती थीं, उनकी विशाखा की शादी एक ऐसे पात्र से हो जाए जो न केवल भला आदमी हो बल्कि पैसेवाला भी हो।

किसी की आशा-आकांक्षा की इस जीवन में पूर्ति हुई है ? किसी की आशा-

आकांक्षा क्या पूरी होती है ?

उस दिन भी सहदेव ने आकर कहा, "आप कैसे हैं बाबूजी ?"

संदीप ने कहा, "अच्छा ही हूं।"

उसके बाद सहदेव ने कहा, "आपको क्या कुछ चाहिए बाबूजी ?"

संदीप ने कहा, "नहीं—"

सहदेव ने कहा, "आप किस किस्म के आदमी हैं बाबूजी ? यहां सभी कैदी कुछ-न-कुछ चाहते हैं। एक आप ही हैं जो कुछ नहीं चाहते। आपको क्या किसी चीज़ की ज़रूरत नहीं है ?"

संदीप ने कहा, "मुझे जिन चीज़ों की ज़रूरत है वह सब तुम लोग दे ही रहे हो। भात, दाल, सब्जी, रोटी, लोटा, कम्बल सारा कुछ तो दे ही रहे हो। इसके अलावा एक आदमी को और किस चीज़ की ज़रूरत हो सकती है ?"

सहदेव ने कहा, "कोई नशीला पदार्थ…"

संदीप ने कहा, "मैं तो किसी नशे का सेवन नहीं करता भाई—"

"पान, बीड़ी, सिगरेट, खैनी, जर्दा—"

संदीप ने कहा, "मैं चाय तक नहीं पीता और तुम पान, बीड़ी, सिगरेट…ज़िन्दा रहने के लिए क्या इन सब चीज़ों का सेवन ज़रूरी है ?"

"फिर सब लोग यह सब क्यों खाते-पीते हैं ?"

संदीप ने कहा, "पहले यह बताओ कि सभी आदमी हैं या नहीं ? दो हाथ, दो पैर, दो आंख और दो कान रहने से ही किसी को आदमी कहा जा सकता है ?"

सहदेव जैसे आदमी से इस बात के उत्तर की अपेक्षा करना अनुचित है। सहदेव ने जेल के अन्दर जिन लोगों को देखा है, उन्हें आदमी ही समझा है। लेकिन इसके लिए उसे दोषी नहीं ठहराया जा सकता। वह खुद को एक आदमी ही समझता है। वह सचमुच ही क्या एक आदमी है ?

फिर भी वह प्रश्न करना बन्द नहीं करता। बीच-बीच में आकर वह एक ही प्रश्न को दुहराता है। आखिर में संदीप ने उस प्रश्न के उत्तर में कहा, "मैं जो चाहूंगा, तुम वह दे नहीं सकोगे सहदेव।"

सहदेव ने कहा, "बताइए न, वह क्या है ? अण्डा ? मांस ? हिलसा मछली ?"

संदीप ने कहा, "नहीं—"

सहदेव ने कहा, "चॉप, कटलेट, चिकेन-टोस्ट ?"

संदीप ने कहा, "नहीं, यह सबकुछ भी नहीं। मुझे यदि कुछ देना है तो वह दो जो किसी काल में न खोए और न ही नष्ट हो।"

सहदेव बहुत देर तक सोचता रहा। लेकिन सोचने पर भी उसे कोई कूल-किनारा नहीं मिला। बोला, "वह क्या है बाबूजी ?"

संदीप ने कहा, "तुम ज़रा सोचो। अच्छी तरह सोचने पर मिल जाएगा। एक ऐसी चीज़ है जो कभी मरती नहीं।"

सहदेव ने कहा, "वह कौन-सी चीज है, समझ में नहीं आ रहा।"

संदीप ने कहा, "लेकिन उस चीज़ की चाहना कोई नहीं करता।"

फिर भी सहदेव समझ नहीं पाता। कौन ऐसी चीज है जिसकी चाहना कोई नहीं करता फिर भी वह सबसे कीमती है ? वह क्या है ?

अन्ततः संदीप ने समझा दिया था कि वह क्या है। संदीप ने कहा था, "वह है मृत्यु। संसार में मृत्यु जैसी अमर वस्तु और कुछ नहीं है। लेकिन कोई उसकी चाह नहीं करता। अगर किसी को फांसी की सजा दी जाती है तो उससे छुटकारा पाने के लिए वह

जीवन के सबकुछ को तिलांजलि देने को तैयार हो जाता है। किसी के जन्म लेने पर आदमी हंसता है और किसी की मौत होने पर रोता है। मैं मर जाऊं तो राहत की सांस लेने का मौका मिले—"

सहदेव संदीप की बातों का अर्थ समझ नही पाता।

संदीप कहता, "अगर मेरी उस तरह की मृत्यु हो तो मैं हंसने की ही चेष्टा करूंगा। जो लोग आज भी दुनिया में अमर हैं उनमें से कोई मृत्यु के समय रोया नही था। बल्कि अपने आसपास के तमाम लोगो से हंसने कहा है, खुशियां मनाने कहा है। ऐसी मृत्यु कितनों की होती है, बताओ?"

सचमुच, सहदेव इन बातो का अर्थ समझ नही पाता। सोचता, बाबूजी ज़रूर ही पागल हैं। पागल न हो तो कोई इस तरह की बातें करता है? सिगरेट, बीड़ी, पान का सेवन नही करते, चॉप-कटलेट-चिकेन टोस्ट नही खाते—तो फिर इस तरह के व्यक्ति भी हैं इस दुनिया में! लेकिन एक बात वह समझ नही पाता कि इस तरह का आदमी क्यों जेल की सजा भुगत रहा है। नब्बे लाख रुपये की चोरी के अभियोग में क्यों अदालत के हाकिम ने इस किस्म के आदमी को जेल की सजा भुगतने का आदेश दिया है?

उन दिनों मौसीजी का इलाज डाक्टर लाहिड़ी के नर्सिंग होम में चल रहा था। दवा की फेहरिस्त का बिल देखकर संदीप चौंक उठता। एक ही महीने में कितने रुपये खर्च हो गए, इसका कोई ठिकाना नही। और कितना खर्च होगा, उसका भी अग्रिम हिसाब डाक्टर साहब नही बताते थे।

तीरथ के कौवे की तरह संदीप डाक्टर साहब की राह जोहता रहता। लेकिन डाक्टर साहब से भेंट होना क्या इतना सरल है? आदमी की मुलाकात भगवान से होना सहज हो सकता है लेकिन डाक्टर लाहिड़ी से मुलाकात होना असम्भव है। जो कुछ कहना है काउण्टर के क्लर्क से कहो।

वह बड़ा ही व्यस्त आदमी है। अकेले हर तरफ की बागडोर संभालना उसके लिए कठिन काम है। उसने कहा, "सुनिए, आपका एक बिल है।"

"कितने रुपयो का बिल?"

"अस्सी रुपये।"

अस्सी रुपये! यही तो उस दिन संदीप ने तीन सौ रुपया चुकाया है।

"यह किस चीज का बिल है?"

"आपकी रिश्तेदार का ब्लड-प्रेशर चेक किया गया है और यूरिन की जाच की गई है। उसी की बाबत यह रकम देनी है।"

"लेकिन यही तो उस दिन मैंने ब्लड-प्रेशर चेक करने और यूरिन की जाच की बाबत तीन सौ रुपया चुकाया है। उसमें न जाने और क्या-क्या लिखा हुआ था।"

उस आदमी ने कहा, "एक बार ही चेक करने से काम चल जाता है? बार-बार चेक करने की जरूरत पड़ती है। आपकी रिश्तेदार का केस आसान नहीं, बहुत सीरिअस है। अच्छी तरह जाच किए बिना काम नही चल सकता।"

संदीप ने कहा, "डाक्टर साहब से एक बार मुलाकात हो जाती तो अच्छा रहता।"

उस आदमी ने एक खाता बढ़ा दिया। बोला, "फिर यहा अपना नाम और पता दर्ज कर दीजिए, उसके बाद आपको पता चलेगा कि कब आपसे मुलाकात हो सकती है। वे दिन, समय और तारीख की सूचना दे देंगे।"

संदीप ने खाते को खोलकर देखा, उसमें बहुत सारे लोगों के नाम लिखे हुए हैं। सभी वेटिंग लिस्ट में नाम लिख गए। आखिरी नम्बर है इक्यावन। उसका नम्बर होगा बावन। इक्यावन लोगों से मिलने के बाद वे संदीप से मिलेंगे। तभी उन्हें मुलाकात करने या बातें करने का समय मिलेगा। और मुलाकात करने का मतलब है पचहत्तर रुपये का धक्का। पहले पचहत्तर रुपया जमा करना होगा तभी मुलाकात होगी।

काउण्टर-क्लर्क के पास खाता सौंपकर संदीप सड़क पर निकला। बैंक के टिफिन टाइम में वह नर्सिंग होम आया था। अब तुरन्त ही उसे बैंक वापस जाना है। संदीप एक बस पर सवार हो गया। कहीं बैठने की जगह नहीं है। इससे कोई हानि नहीं। खड़े-खड़े जाने की आदत हो गई है उसे।

लेकिन रुपये की वजह से उसे मुश्किल का सामना करना पड़ा। मल्लिक चाचा के द्वारा दिया गया पचास हज़ार रुपया जल्दी-जल्दी खर्च होता जा रहा है। इसी अनुपात में यदि खर्च होता रहा तो फिर क्या होगा? फिर क्या मल्लिक चाचा के पास जाकर हाथ फैलाना पड़ेगा?

घर जाकर मां से रुपया मांगना पड़ता। मां पूछती, "कितने रुपये—"

संदीप कहता, "अभी एक सौ रुपया देने से ही काम चल जाएगा—"

मां कहती, "यही तो उस दिन तू चार सौ ले गया। फिर एक सौ?"

संदीप कहता, "रुपया क्या मैं अपने लिए मांग रहा हूं? मैंने तुम्हें बताया ही था कि एक बार डाक्टरखाने में जाने पर फिर उसके हाथ से छुटकारा नहीं मिलता। हर रोज़ किसी-न-किसी बहाने रुपये का बिल हाथ में थमा देगा।"

मां अपने बक्से से एक सौ रुपये का एक नोट निकाल बेटे के हाथ में देती।

उसका बेटा उस नोट को पॉकेट में रख ऑफिस के लिए रवाना हो जाता। उसके बाद मां अकेले ही घर में काम करते हुए लड़के के बारे में सोचती रहती। पहले विशाखा थी, विशाखा की मां थी इसलिए वक्त किसी प्रकार गुज़र जाता। लेकिन उसके बाद मां को एक तरह से कोई काम ही नहीं रहता। कमला की मां जिस तरह पहले काम कर जाती थी, अब भी कर जाती है। उस समय लड़के की प्रतीक्षा करने के अतिरिक्त कोई काम ही नहीं रहता।

संदीप भी मां के बारे में सोचता। लेकिन ऑफिस पहुंचते ही किस तरह समय बीत जाता पता ही नहीं चलता। अचानक घड़ी की तरफ निगाह जाते ही वह चौंक पड़ता। किस तरह दो बज जाते उसका खयाल ही नहीं रहता उसे। उस समय आधे घण्टे या एक घण्टे के लिए आराम मिलता। और उसके बाद ही काम का पहाड़ खड़ा हो जाता। काम का पहाड़ जैसे उसके जेहन पर चढ़कर बैठ जाता।

उसके बाद जब छुट्टी होती तो वह दूसरे ही धन्धे में फंस जाता। उस समय एक टैक्सी पकड़ डाक्टर लाहिड़ी के नर्सिंग होम जाना पड़ता। उसी समय रुपये का दबाव महसूस करना पड़ता। आज तीन सौ, कल अस्सी, परसों पांच सौ, तरसों डेढ़ हज़ार। रोज़-दर-रोज़ रुपयों की जैसे बाढ़ उमड़ आती। मां कहती, "रुपया तो खत्म होता जा रहा है, और कितना रुपया लगेगा?"

उस दिन संदीप बदस्तूर नर्सिंग होम पहुंचा। पहुंचकर सीढ़ियां तय कर ऊपर जानेवाला ही था कि सामने लोगों का हुजूम दिख पड़ा।

भीड़ क्यों है? थोड़ी देर बाद पता चला कि भीड़ के लोग एक आदमी की लाश की अर्थी उठाकर बाहर निकाल रहे हैं। कोई मर गया है। इसी नर्सिंग होम में उसका इलाज दो महीने से चल रहा था। आज उसकी मौत हो गई।

संदीप ने लाश की ओर ध्यान से देखा। उस महिला को कीमती बनारसी साड़ी

पहनाई गई है। जो लोग अर्थी उठाकर बाहर निकल रहे हैं उनकी शक्ल देखने से ही पता चल जाता है कि वे धनी-मानी व्यक्ति हैं। बाहर सड़क पर कीमती गाड़ियां खड़ी थीं। शायद लाश किसी मारवाड़ी महिला की है। सभी की पोशाक में आभिजात्य का स्पष्ट चिह्न है। ये लोग करोड़ों से कम रुपये को रुपया ही नहीं समझते। फिर भी रोग उन्हें कोई रियायत नहीं देते।

उस दृश्य को देखते-देखते उसे याद आ गया बहुत दिन पहले की यात्रा का वह दृश्य। निवारण चाचा का वही 'विल्वमंगल' का अभिनय। उसकी बातें बहुत दिनों के बाद उसके कानों में गूंजने लगीं :–

यह नरदेह
बह जाता जल में
नोच-नोचकर खाते कुत्ते और शृगाल
यह नारी उसका भी परिणाम यही'''

हर दिन मौसीजी जो पूछती थीं, उस दिन भी वही बात पूछी। पूछा, "तुम कल नहीं आए थे बेटा—"

संदीप ने कहा, "मैं आया था मगर आपको नींद में सुलाकर रखा गया था। इसीलिए मुझ पर नजर नहीं पड़ी।"

[illegible] ?"

[illegible] जाऊंगा। लेकिन मुझसे मुलाकात होगी या नहीं, मालूम नहीं।"

"मुलाकात क्यों नहीं होगी?"

संदीप ने कहा, "वह तो अब बड़े आदमी के घर की बहू है। मेरे जैसे अदना आदमी से वे लोग क्या मिलने देंगे?"

मौसीजी बोलीं, "क्यों मिलने नहीं देंगे? तुम मेरा हवाला देना। उसे मालूम है कि मैं बीमार हूं। मुझसे मुलाकात करने की खातिर उसे तो एक बार आना चाहिए। बड़े आदमी से शादी हुई है तो मां लड़की के लिए पराई हो जाएगी?"

संदीप इस बात का क्या जवाब दे? बोला, "अगर सम्भव हुआ तो मुलाकात करने कहूंगा।"

मौसीजी बोलीं, "मेरी लड़की भी किस किस्म की है? शादी के बाद मां की भी इच्छा होती है कि वह एक बार अपनी लड़की से मिले। और मेरा दामाद भी किस किस्म का है? शादी हुए इतने दिन हो गए, कम-से-कम एक चिट्ठी तो लिख सकता था!"

संदीप ने सांत्वना भरे स्वर में कहा, "वे लोग अच्छी तरह हैं और दोनों मजे में दिन बिता रहे हैं। उन लोगों के बारे में सोच-सोचकर आप अपनी सेहत न बिगाड़ें। आपकी लड़की की शादी हो चुकी है। सुपात्र मिला है उसे। अब आपके लिए चिन्ता की कौन-सी बात है? आप सिर्फ अपने बारे में ही सोचें।"

मौसीजी बोलीं, "ऐसा होना क्या सम्भव है बेटा? मेरा तो मां का दिल है, लड़की-दामाद को देखने की इच्छा होती है।"

उसके बाद जरा रुककर फिर बोलीं, "तुमने क्या विशाखा को बताया है कि मैं अस्पताल में हूं? बताया है तुमने?"

संदीप ने कहा, "नहीं, नहीं बताया है। सुनने पर कहीं उसे दुःख न पहुंचे, इसी

वजह से नहीं वताया है। आप कहिए तो उसकी ससुराल जाकर सवकुछ वता आऊं—"

मौसीजी ने चन्द लमहों तक मन-ही-मन कुछ सोचा। उसके वाद वोली, "नहीं वेटा, मेरी वीमारी के वारे में उसे नहीं वताना है। तुम जाकर सिर्फ देख आओ कि वह कैसी है। इतना ही काफी है। वह सुखी है, यह मालूम होते ही मुझे सुख का अहसास होगा।"

उस दिन संदीप यही वात सुनकर चला आया था।

लेकिन वह विशाखा की ससुराल कैसे जाए? वहां जाकर वह क्या कहेगा? रास्ते में सोचते रहने के वावजूद वह किसी निर्णय पर नहीं पहुंच सका। दिन-भर की ऑफिस की कड़ी मेहनत के दौरान यह सव वात याद नहीं आती है। इसलिए काम में डूवे रहने से शरीर के साथ-साथ मन भी स्वस्थ रहता है। मन के कारण ही आदमी को समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इसीलिए मन को एकाग्र करने के लिए ही ऋषि-मुनियों ने इतनी चेष्टाएं की हैं। यह जो ट्रेन की इंजन चलती है वह यदि एक वार अन्यमनस्क हो जाए तो फिर क्या होगा? जो व्यक्ति इंजन चलाता है उसके भी अन्यमनस्क होने से कहीं काम चल सकता है?

लेकिन संदीप का स्वभाव ऐसा है कि उसे हर वक्त सवों की याद आती है। उनके सुख में उसे सुख और उनके दुख में उसे दुख प्राप्त होता है। इसी किस्म के लोगों की वजह से इतिहास को माथापच्ची करनी पड़ती है। यही वजह है कि संदीप सोचता है, मैं क्या सिर्फ अपने लिए ही हूं? मैं खुद को लेकर व्यस्त रहता तो मुझे वेशक वहुत आराम मिलता। लेकिन मैं सिर्फ अपने-आपके लिए नहीं हूं। मैं तमाम लोगों के लिए हूं। फल क्या सिर्फ फल के लिए ही होता है? पेड़ के लिए नहीं? पेड़ की शाखा, पत्ते और जड़ से जुड़े रहने के कारण ही उसका अस्तित्व है। उन्हें छोड़ दिया जाए तो उसका कोई अस्तित्व ही नहीं।

संदीप भी उसी किस्म का है। वह अपनी मां और मौसीजी के लिए एक जैसा है। वह मौसीजी की देखरेख न करेगा तो फिर कौन करेगा? और सिर्फ मौसीजी ही नहीं, वह विशाखा के लिए भी है। इसके अलावा वह मल्लिक चाचा, दादी मां, मुक्तिपद वावू और सौम्यपद वावू के लिए भी है। सच कहा जाए तो समूची दुनिया का वह भागीदार है। इसलिए समूची दुनिया के भले-वुरे के साथ उसके भले-वुरे का रिश्ता जुड़ा हुआ है? जव तक वह अकेला रहता है, उसे यही सव चिन्ता रहती है। घर आने पर मां को उत्कण्ठा के साथ प्रतीक्षा करते हुए पाता।

कहती, "आज दीदी कैसी है?"

संदीप कहता, "पहले की ही तरह।"

"खाना खा पाती है?"

संदीप कहता, "नहीं। अव भी खाना खाने लायक हालत नहीं हुई है। अव भी पहले की नाईं ही ग्लूकोज-इंजेक्शन दिया जाता है।"

"और पैर का दर्द?"

"उसे दवा देकर जड़ वना दिया गया है। वे समझ गई हैं कि अव ज्यादा दिनों तक जिन्दा नहीं रहेंगी। उन्हें यह नहीं वताया गया है कि फांसी के एक मुजरिम से विशाखा की शादी हुई है। लड़की से मिलने को व्याकुल हो उठी हैं। सिर्फ लड़की से ही मिलने का तकाज़ा करती रहती हैं। मैं क्या करूं, वताओ?"

वेटे से वात करते-करते मां खाना परोसकर उसके सामने रख देती। खाना खाने के दौरान ही दोनों में वातचीत होती। संदीप सवेरे ही घर से निकल जाता और अस्पताल में मौसीजी से मिलकर घर लौटता तो काफी रात हो जाती। उस समय वातचीत कर मां

अपने लड़के को विरक्त करना नही चाहती। संदीप कहता, "विशाखा के मामले में क्या करूं मां ? एक बार विशाखा के घर से हो आऊं मां ? तुम्हारा क्या कहना है ?"

मां क्या कहे, वह खुद भी समझ नही पाती। थोड़ी देर तक सोचने के बाद कहती, "मल्लिक देवरजी तो कह ही गए हैं कि जरूरत पड़ने पर और रुपया देंगे।"

संदीप कहता, "तुम्हारे पास जो पचास हजार रुपया था वह भी तो खर्च होता जा रहा है।"

मां कहती, "इलाज की वजह से पैसा पानी की तरह खर्च होता जा रहा है। रुपया रहेगा कैसे ?"

संदीप कहता, "क्या करूं, समझ में नही आता ! उधर जब मौसीजी को जब भी होश आता है तो सिर्फ विशाखा की ही चर्चा करती हैं। विशाखा की ससुराल जाऊंगा तो मल्लिक चाचा सोचेंगे, रुपया मागने आया हूं—"

मां कहती, "खैर, यह सब बात रहने दे। यह सब सोचते रहेगा तो कहीं तेरी तबीयत फिर खराब न हो जाए। तुम्हारी मौसीजी की देखरेख करने के लिए कोई न कोई है। विशाखा के साथ भी यही बात है, लेकिन तू यदि बीमार पड़ जाएगा तो कौन तेरी देखरेख करेगा ? जा, जाकर सो रह, तुझे फिर कल सवेरे ही जगना है।"

लेकिन बिस्तर पर लेटने के बावजूद वही सब बात उसे याद आती रहती। उसे पूरे व्यतीत के घटनाक्रमो और लोगो की याद आती। उसके बाद थकावट के कारण वह कब नीद के आगोश मे खो जाता, उसे पता नही चलता। उस समय उसे किसी चीज की याद नही आती। लगता, यह नीद कभी न टूटे तो कितना अच्छा रहे !

मझले बाबू आसानी से किसी को छोडनेवाले नही हैं। यह उनका हमेशा से स्वभाव रहा है। उनकी फैक्टरी की हानि हो रही है, यह देखकर वे एक दिन जिस प्रकार फैक्टरी को हटाकर इन्दौर ले गए थे, उसी प्रकार अपनी लड़की के बारे में ये बेहद चिन्तित हो उठे थे। पता लगाने पर उनकी समझ मे आया कि न केवल उनकी लडकी, बल्कि इस किस्म के बहुत सारे लडके-लडकिया ठीक तीसरे पहर चार बजे एक मकान में इकट्ठे होते हैं और रात बारह बजे अपने-अपने घर चले जाते हैं।

इन चार घण्टों के दरमियान वे लड़के-लडकिया वहां क्या करते हैं ?

उस समय उन्हें दिया जाता है हशिश, मारिजुआना, गाजा, चरस—तरह-तरह के नशीले पदार्थ। इसके लिए पैसा कौन देता है ? लडके-लडकिया ही अपने पॉकेट से पैसा देते हैं।

बाप एक-एक कर सवाल पूछते हैं और पिकनिक हर सवाल का जवाब देती है। "तू इन्दौर से यहां कैसे आई ? तुझे कौन इन्दौर से यहा ले आया ?"

पिकनिक ने कहा, "मैं खुद ही आई थी, मुझे कोई नही ले आया था।"

"इन लोगों से तेरी जान-पहचान कैसे हुई ?"

"हम एक ही कॉलेज मे पढ़ते थे। तभी उन लोगों मे जान-पहचान हुई थी।"

"उन लोगों के नाम क्या-क्या हैं ?"

"सो क्या एक ही आदमी है ? कितने सारे नाम बताऊ ?"

"फिर भी एक-दो जनो का नाम-धाम बता। इन लोगों के मा-बाप का पता याद है तो बता।"

पिकनिक ने कुछ देर तक सोचा। अब भी उसकी तबीयत पूरी तरह ठीक नही हुई है। वह किसी का नाम-धाम नही बता सकी। मुक्तिपद बोले, "बता। किसी का नाम

याद नहीं है ?"

पिकनिक ने कहा, "नहीं—"

"इन नशीले पदार्थों के लिए रुपया तो देना ही पड़ता होगा। कौन तुझे रुपये देता था ?"

"मैं।"

"तेरे पास इतने रुपये कहां से आते थे ?"

पिकनिक ने कहा, "बैंक की चेक-बही मेरे पास है। मैं चेक काट देती थी।"

"देखूं, तेरी चेक-बही। कहां रखा है ? अपने हैण्डबैग में ?"

यह कहकर अपनी लड़की का हैण्डबैग खोलकर देखा। मुक्तिपद ने इतने दिनों तक अपनी लड़की का हैण्डबैग खोलकर नहीं देखा था। अब बैग खोलकर देखा और देखते ही भौंचक-से रह गए। उसके अन्दर क्या नहीं है ? बैंक का पास बुक, चेक-बही, सारा कुछ। कई सौ नकद रुपये और उनके साथ कुछेक कॉनट्रासेपटिव और अनगिनत पिल, खाने की चीजें हैं ? वे भी क्या कॉनट्रासेपटिव पिल हैं ?

"यह सब किस चीज की दवा है ?"

पिकनिक ने कहा, "मालूम नहीं। अंटी ने दिया है।"

"अंटी ? अंटी कौन है ?"

"अंटी, अंटी—"

मुक्तिपद भय और दहशत से सिहर उठे। वे अपने काम, इनकम, इनकम-टैक्स, फैक्टरी के उत्पादन और बिक्री के लिए ही इतने दिनों तक व्यस्त थे और इसी की ओट में यह सब करतूत चल रही थी ? वे यदि वह सब छोड़, इन कामों में डूबे रहते तो उनकी फैक्टरी की देखरेख कौन करता ? उनके लिए क्या महत्त्वपूर्ण है—उनका परिवार या फैक्टरी ? उनके लिए क्या ज़रूरी है ? रुपया कमाने के दौरान उन्हें किस ओर ज्यादा ध्यान देना चाहिए था ? अगर परिवार ही ज़रूरी था तो उनकी मिसेज का क्या काम था ? मिसेज क्या केवल उनके घर की शोभा है ?

बिन्दु ने आकर पुकारा, "मंझले बाबू, दादी मां आपको बुला रही हैं।"

"कह दे, आ रहा हूं—"

यह कहकर पिकनिक से बोले, "तू यहां बैठी रह। कमरे से बाहर मत निकलना। मैं बाहर से सांकल बन्द किए जा रहा हूं। दादी मां क्या कह रही हैं, सुन आऊं—"

यह कहकर दरवाज़ा बन्द कर सांकल चढ़ाकर चले गए।

उधर दादी मां तब अपने कमरे में विशाखा के सामने बैठी हुई थीं। बहुत दिन पहले उन्होंने विशाखा को पसन्द कर रखा था। उसके बाद कितने ही बाधा-विघ्नों ने दादी मां को परेशान किया था ! कहां किस मनसातल्ला लेन की किस गली से एकबारगी रसेल स्ट्रीट के फ्लैट में उसे लाकर रखा था। उसके बाद कहां किस घोर देहात बेड़ापोता जाकर उसे खोजकर निकाला था। वही विशाखा आज किसी घटनाचक्र में पड़कर उसकी पौत्रवधू बन उन्हीं के सामने बैठी हुई है।

मंझले बाबू ने कमरे के अन्दर घुसकर कहा, "तुम मुझे बुला रही थीं मां ?"

दादी मां बोलीं, "हां, इस घर में आने के बाद से मेरी पौत्रवधू केवल रोती रहती है। इसकी रुलाई थमने का नाम नहीं ले रही है।"

सच, उस आधी रात में बेड़ापोता के घर में शादी होने के बाद से ही विशाखा ने रोना शुरू कर दिया था। आदमी की रुलाई बहुत तरह की होती है। कोई रोती है मां-बाप को छोड़ ससुराल आने के समय। एक पौध को जब ज़मीन से उखाड़कर दूसरी ज़मीन

में रोपा जाता है तो शुरुआत के कई दिनों तक पौध सूख जाती है। पत्तियां निष्प्राण हो जाती हैं। फूल में कली का लगना तो दूर की बात, सीधे होकर तनकर खडी भी नही हो सकती है। लेकिन जब जमीन से जड़ का रिश्ता मजबूत हो जाता है तो उसमें पुनः ताजगी आ जाती है।

दादी मां जानती थी, लडकियो के साथ भी वही बात है। ससुराल से एकबार आत्मीयता का संबंध कायम हो जाता है तो लड़किया मायके की याद बिलकुल भूल जाती हैं। उन्होने खुद के बारे में सोचकर देखा है। जब वे दुल्हन बनकर पहले-पहल इस घर मे आई थी तब कितनी रोई थीं! लेकिन अब?

पहले दिन विशाखा को वे अपनी बगल मे ही लेकर सोई थी। उस रात न तो उनको नीद आई थी और न ही विशाखा को।

"बहूरानी?"

विशाखा ने कहा, "हां।"

"तुम्हें नीद नहीं आ रही?"

"नही।"

दादी मां ने कहा, "जरा कोशिश करो, नीद आ जाएगी।"

यह कह करवट लेकर सो गईं। सोने से क्या होगा, मन तो बहूरानी के गिर्द ही मडराता रहा।

थोड़ी देर बाद महसूस हुआ, बहूरानी छटपटा रही है। यह कोई अस्वाभाविक बात नही है। स्वाभाविक विवाह होने पर भी शुरू के दो-तीन रात तक किसी दुल्हन को नींद नही आती। और इसे तो एक किस्म का अस्वाभाविक विवाह ही कहा जाएगा। हाईकोर्ट मे आठ घण्टे के लिए पेरोल पर छुट्टी दी थी हाकिम ने। साथ में पुलिस का पहरा था ताकि मुजरिम भाग न सके। हाईकोर्ट से हर तरह का पुख्ता हुक्म ही जारी किया गया था। दासगुप्त साहब ने कहा था, "सुहागरात या प्रीतिभोज का आयोजन भले ही न हो, मन्त्र पढकर शादी तो होगी। इसीसे आपका पोता बच जाएगा। देखिएगा, फासी का हुक्म रद्द हो जाएगा।"

सचमुच यही हुआ। हाकिम भी आखिर इंसान ही हैं। हो सकता है, उनका भी घर-संसार हो। उनके भी लडके, लड़के की पत्नी या पोता और पौत्रवधू वगैरह हो सकते हैं। मुजरिम को फासी का हुक्म देने मे उनका भी हाथ काप उठेगा। जो मर चुकी है वह फिर से जिन्दा नही हो सकती। ऐसी हालत मे मुजरिम को फासी देने से लाभ ही क्या है? वह अगर मन ही मन अनुताप करे तो उसका सारा पाप दूर हो जाएगा।

मिस्टर दासगुप्त ने अपने स्वभावसिद्ध भाषा के माध्यम से दया की भीख की प्रार्थना की थी कि मुजरिम की शादी एक दिन पहले हुई है। उसको सजा देने का मायने है उसकी नवविवाहिता पत्नी को भी सजा देना। इन बातो पर गौर करते हुए मुजरिम को रिहा कर देना ही समुचित न्याय होगा। अतः मैं धर्मावतार से प्रार्थना करता हूं कि वे मुजरिम की नवविवाहिता पत्नी की स्थिति का विवेचन कर उसे रिहा कर दें—"

धर्मावतार ने यही किया था। यह भी एक तरह का रिहा करना ही है। मात्र कई बरसो के लिए जेल की सजा। जो देखते-देखते खत्म हो जाएगी। उस समय पति-पत्नी के सुखी जीवन का प्रारम्भ होगा। अभी नई बहू ससुराल मे एकाकी जीवन बिता[illegible] बाद मे पति के रिहा होने पर बाकायदा सुहाग-रात और प्रीतिभोज की रस्म [illegible] होगी। इस बीच विशाखा अपनी ददिया सास के साथ एक ही बिस्तर पर [illegible] जिन्दगी बिताएगी।

लेकिन बात ऐसी नही है। बात यह है कि विशाखा एक तरह से [illegible]

मंगेतर ही थी। मंगेतर का मानी है एक तरह से शादी पक्की हो जाना। रस्म अदायगी कोई अहम सवाल नहीं, वल्कि गौण है। वचन देना ही अहम है। वाग्दान चूंकि वहुत दिन पहले ही हो चुका था, इसलिए विशाखा उसी समय से इस घर की वहू हो गई थी। उस दिन, 13 फागुन को विशाखा की शादी होने के वाद से ही वह रो रही थी।

घटनाचक्र से मंझले वावू भी उस समय एकाएक कलकत्ता आ गए थे। सारी घटना के वारे में सुनने के वाद मुक्तिपद ने कहा था, "मिस्टर दासगुप्त ने ऐसी सलाह दी है तो इसका नतीजा वुरा नहीं होगा। सौम्य को अवश्य ही रिहा कर दिया जाएगा।"

दादी मां वोलीं, "पता नहीं, ईश्वर की क्या मर्जी है! मैं रात-दिन उन्हीं का स्मरण करती हूं।"

मुक्तिपद ने पूछा, "इस ज्योतिषी का पता तुम्हें कैसे मिला?"

"वेलेघाटा में।"

मुक्तिपद को आश्चर्य हुआ, "वेलेघाटा में?"

दादी मां वोलीं, "हां। मैंने कितने ही ज्योतिषियों के पीछे हज़ारों रुपये खर्च किए, मल्लिकजी को कितनी ही जगह भेजा। इसी में मेरे पन्द्रह-वीस हज़ार से ज्यादा रुपये खर्च हो गए। काशी, हरिद्वार, मथुरा, वृन्दावन, कानपुर, जालन्धर, होशियारपुर—कहां नहीं गए मल्लिकजी! सौम्य के लिए पैसा खर्च करने में मैंने कोई कोताही नहीं की। आखिर में इस लड़की की जन्मपत्री मिली वेलेघाटा के एक ज्योतिषी के पास।"

"वेलेघाटा के ज्योतिषी को वहूरानी की जन्मपत्री कैसे मिली?"

दादी मां वोलीं, "जब वहूरानी और उसकी मां को मैंने अपने रसेल स्ट्रीट के मकान में रखा था, वहूरानी की मां अपनी वेटी की जन्मपत्री लेकर वेलेघाटा के ज्योतिषी के पास गई थीं। मैं जैसे ही वहां पहुंची, ज्योतिषी ने मुझे यह जन्मपत्री दिखलाई। वोला : इस जातिका की शादी अगर अव भी न हुई हो तो इससे अपने पोते की शादी कर दें। आपके पोते की मृत्यु नहीं होगी।"

यह सुनकर मंझले वावू अवाक् हो गए। वोले, "ज्योतिषी ने वता दिया? उसके वाद क्या हुआ?"

"उसके वाद जातिका का नाम सुनते ही समझ गई कि यह तो मेरे द्वारा पसन्द की गई पात्री वही विशाखा है। मैं उसी वक्त दासगुप्त साहव के पास गई। उन्होंने हाकिम से कहकर मुजरिम के लिए आठ घण्टे की छुट्टी का इन्तज़ाम करा दिया। और एक गाड़ी पुलिस वल का भी इन्तजाम कर दिया। मल्लिकजी और मैं तभी सौम्य को लेकर वेड़ापोता पहुंचे। उस समय वहूरानी की कन्यादान की रस्म अदायगी एक-दूसरे पात्र से शुरू हो गई थी। हमें वहां पहुंचने में और दस मिनट की देर हो जाती तो हमारे किए-कराए पर पानी फिर जाता।"

मुक्तिपद सवकुछ सुन रहे थे। वोले, "आश्चर्य! कलियुग में ऐसा भी होता है?"

दादी मां ने कहा, "यह होता है यह तो तू अपनी आंखों से ही देख रहा है। अव मैं अपनी वहूरानी को कैसे धीरज वंधाऊं? यह रात-भर मेरी वगल में लेटकर रोती रही। अव इसे कैसे संभालूं, वताओ? वह वेड़ापोता जाने के लिए वेचैन है—"

मुक्तिपद क्या कहें, समझ में नहीं आया। उनकी खुद की भी तो हज़ारों समस्याएं हैं। फैक्टरी की समस्या तो है ही, उस पर पत्नी और लड़की के कारण अव हज़ारों किस्म की समस्याएं पैदा हो गई हैं।

दादी मां वोलीं, "तू चुप्पी साधे हुए है! मुझे कुछ सलाह दे। मुझसे अव कुछ हो नहीं पा रहा है। एक साल से सोचते-सोचते मेरी पागल जैसी हालत हो गई है, उस पर कई सालों से नींद भी नहीं आ रही है। अव मुझे जिन्दा रहने की इच्छा नहीं होती।

लगता है मर जाऊं तो राहत मिले—"

मुक्तिपद ने कहा, "मां, तुम मर जाओगी तो मैं भी मर जाऊंगा। मुझे भी अब जिन्दा रहने की इच्छा नहीं होती—"

"तू यह बात मत कह। तू है इसीलिए अब भी मैं जिन्दा हूं, यह जानता है?"

"मां, जो लोग मुझे दूर से देखते हैं वे मेरी किस्मत पर रश्क करते हैं। मेरा घर और गाड़ी देखकर सोचते हैं, मैं कितना भाग्यशाली हूं! काश! वे मेरे भीतर झांककर देख पाते—"

दादी मां ने कहा, "यह सब बात रहने दे, यह सब बहुत सुन चुकी हूं। अब बहूरानी के चलते क्या करूं, यही बता। इस तरह हर रोज यदि रोती रहेगी तो जिन्दा कैसे रहेगी? तू जरा उसे समझाकर कह—"

मुक्तिपद बोले, "मुझे कौन समझाता-बुझाता है, यह बात बताओ तो मां। हर आदमी सोचता है, उसके जैसा दुखी आदमी संसार में कोई नहीं है। वे लोग सभी मेरे पास शान्ति पाने की उम्मीद में आते हैं। सुनकर मुझे हंसने का मन करता है। सोचता हूं, काश! वे मेरे अन्तर्मन में झांककर देख पाते!"

दादी मां बोलीं, "यह सब बात रहने दे, यह सब मैं बहुत सुन चुकी हूं। अब मैं क्या करूं, यही बता। बहूरानी को कैसे धीरज बंधाऊं, यही बता।"

मुक्तिपद बोले, "तुम बहूरानी के साथ कुछ दिनों के लिए मेरे यहां चले चलो। अब मुकदमे का झमेला नहीं रहा। ऐसा करने से तुम्हें आराम मिलेगा, साथ-साथ बहूरानी को भी। दोनों की सेहत सुधर जाएगी।"

मां बोली, "माफ करो बाबा! भगवान न करे कि मुझे कभी तेरे घर पर जाना पड़े। इससे तो बेहतर मेरे लिए मौत ही हो सकती है।"

मुक्तिपद बोले, "तुम अगर मेरे घर नहीं जा सकती हो तो फिर काशी चली जाओ। वहां तुम्हारे गुरुदेव का आश्रम है। तुमने बहुत सारे रुपये देकर गुरुदेव के आश्रम का मंदिर बनवा दिया है। वहां जाओगी तो तुम्हें और बहूरानी को थोड़ा आराम मिलेगा।"

दादी मां ने विशाखा की ठोड़ी पकड़ उसका मुखड़ा अपनी ओर घुमाया। बोली, "तू मेरे साथ काशी चलेगी? काशी चलेगी मेरे साथ? तू कभी काशी नहीं गई है। मेरे साथ चलेगी?"

विशाखा अब तक किसी तरह अपनी रुलाई का वेग थामे हुए थी। मगर अब रोक नहीं सकी। दादी मां के कलेजे से लगकर दहाड़ मारकर रोने लगी।

"अरी चुप रह, रो मत। ठीक है, ठीक है, तुझे कहीं नहीं जाना है। मैं कहीं नहीं जाऊंगी, कलकत्ता में ही रहूंगी। अब हुआ न?"

यह कहकर दादी मां विशाखा को अपनी बाहों में भरकर सांत्वना देने लगीं। मुक्तिपद ने पूछा, "तुमने मुझे क्यों बुला भेजा था? क्या कहना था?"

दादी मां ने कहा, "और क्या, अपनी इस पौत्रवधू के कारण ही। यह इतना रो रही थी कि मैं डर गई। अगर रात-भर रोती रहे तो मैं इसे जिन्दा कैसे रखूंगी? बहरहाल, तेरी पिकनिक अब कैसी है?"

"अब जरा अच्छी है।"

दादी मां ने पूछा, "उसे क्या हुआ था?"

मुक्तिपद ने कहा, "और क्या होगा! कलकत्ता में सबके साथ जो कुछ हो रहा है वही हुआ था। यहां जो तुम लोग अभी जिन्दा हो, यही गनीमत है।"

दादी मां ने कहा, "उसकी शादी करा दे। तभी सारा कुछ ठीक हो जाएगा।

उसकी देख-रेख करने का न तो तेरे पास वक्त है और न ही तेरी बीवी के पास। उसका पति उसकी देखरेख करेगा। उस तरह का एक भला पात्र देखकर उसकी शादी करा दे। तब कहीं भाग नहीं सकेगी—"

मुक्तिपद बोले, "वैसा पात्र कहां मिल रहा है ?"

"खोजने पर अवश्य ही मिल जाएगा। दरअसल मां-बाप बुरे हों तो लड़के-लड़कियां कहीं अच्छे हो सकते हैं ? मैंने किस तरह सौम्य के लिए पात्री की तलाश की ? सौम्य के लिए मैं कहां-कहां की धूल छानती रही, कल्पना कर सकता है तू ? इतनी कोशिश की थी, इसीलिए आज यह पात्री मिली है।"

मुक्तिपद इस बात का क्या जवाब दे !

सिर्फ इतना कहा, "सबकुछ तकदीर की बात है मां, तकदीर की। वरना मुझे क्यों कलकत्ता से फैक्टरी उठाकर इन्दौर ले जाना पड़ता ? यहां क्या किसी की फैक्टरी नहीं चल रही ? उनके यहां क्या लेबर-ट्रबल नहीं है ?"

"पाप करने से पाप करने का फल भोग नहीं करना पड़ेगा क्या ?"

मुक्तिपद ने कहा, "यह तुम किस तरह की बात कर रही हो मां ? और किसी ने पाप नहीं किया, पाप किया केवल मैंने···"

"तेरे अतिरिक्त और किसने तुझ जैसा पाप किया है ? अपनी छाती पर हाथ रखकर कह। तूने पाप नहीं किया है ?"

"क्या पाप किया है बताओ ?"

दादी मां ने कहा, "तू अपनी पत्नी और लड़की के साथ मकान छोड़कर अलहदा हो गया, यह क्या पाप नहीं है ? इसके कारण तूने मेरे दिल में कितनी ठेस पहुंचाई है, इस पर एक बार सोचकर तो देख।"

"यह भी मेरी तकदीर का फेर है मां, तकदीर का फेर !"

"अरे, हर मामले में तकदीर पर दोष मढ़ेगा तो ईश्वर क्या तुम्हें क्षमा कर देंगे ? अभी क्या हुआ है, और भी कितना दुख तेरे कपाल में लिखा है, यह मैं अपनी आंखों के सामने देख रही हूं। तब मेरी बात का स्मरण करना।"

अचानक सुधा ने आकर पुकारा, "मंझले बाबू, मुन्नी रानी रो रही है, फौरन चलिए—"

मुक्तिपद घबरा गए। कहा, "मैं चलता हूं। देखूं, पिकनिक ने अब कौन-सी हरकत शुरू कर दी है—"

यह कहकर उस कमरे से अपने कमरे की ओर चले गए।

संदीप को अब भी उस अविस्मरणीय घटना की याद है। अविस्मरणीय इसलिए कि उसी दिन उसने महसूस किया था कि आदमी को खुद ही अपनी अस्मिता को संपूर्ण बनाना पड़ता है। यह आकाश, यह सूर्य, ग्रह-नक्षत्र, ये पशु-पक्षी सभी का सृजन संपूर्ण रूप में ही होता है। जिस तरह किसी दिन उनका सृजन होता है उसी तरह किसी दिन अंत भी होता है। लय होने के समय वे कह जाते हैं—"हमारा अंत हो रहा है।"

लेकिन एकमात्र आदमी का ही सृजन आधे-अधूरे रूप में होता है। उसके सृष्टिकर्ता उसका सृजन आधे-अधूरे के रूप में ही करते हैं। सृजन करने के बाद कहते हैं—"अब से तुम संपूर्ण होने की चेष्टा करो।" इसीलिए पैदा होते ही आदमी के संपूर्ण होने की मुहिम शुरू हो जाती है। उस मुहिम के बाद बड़ी बात यह नहीं कि 'क्या लेकर जा रहा हूं', बल्कि यह कि 'क्या देकर जा रहा हूं।' पाने की अपेक्षा देने से ही आदमी का जीवन

सार्थक होता है। जाने के समय जो कह सकता है, "मैंने थोड़ी-बहुत अज्ञानता का विनाश किया है, थोड़े-बहुत अभाव को दूर किया है", वही संपूर्ण आदमी है। जो कह सके, मैंने कुछ लोगों के आंसू पोंछे हैं, कुछ लोगों के दुख का भार हल्का किया है, वही सफल आदमी है।

लेकिन सही अर्थों में संपूर्ण कितने मनुष्यों ने इस संसार में जन्म लिया है ? या कितनों ने उस प्रकार पूर्णतः सार्थक होने की कोशिश की है ?

उन दिनों ये बातें सर्वदा संदीप के जेहन में चक्कर काटती रहती थीं। उसने क्या होना चाहा था और क्या हुआ है, उसका हिसाब करने के दौरान उसे अपनी रोकड़ बही में शून्य ही देखने को मिला है। जिस दिन वह इस धरती को छोड़कर चला जाएगा, उस दिन क्या वह सचमुच कहकर जा पाएगा कि मनुष्य की इस धरती पर मैं स्वर्ग का हल्का-सा आभास रखकर जा रहा हूं ? यदि ऐसा कहकर न जा पाएगा तो अपने संपूर्ण होने के संघर्ष में उसे पराजित हो जाना पड़ेगा।

याद है, उस 13 फागुन की तिथि की बात। जब उसे विवाह के पीढ़े से हटाकर उसकी जगह पर सौम्य बाबू को बिठा दिया गया तो विशाखा की आंखों से टप-टप आंसू चू रहे थे। वहां जो लोग इस अविस्मरणीय घटना के निर्वाक् साक्षी थे, उनके लिए भी यह दृश्य अनदेखा नहीं रह गया था।

संदीप लेकिन विशाखा की रुलाई का कारण समझ नहीं सका था। विशाखा क्या उस शादी से खुश नहीं थी ? यदि खुश नहीं थी तो उसने विरोध क्यों नहीं किया ? क्यों उठकर नहीं कहा कि मैं यह शादी नहीं करूंगी—

या फिर विवाह-घर से वह भाग क्यों नहीं गई ?

तो क्या दो गाड़ी पुलिस बल देखकर वह भयभीत हो गई थी ?

मां बीच-बीच में दूसरी बातों के साथ-साथ यह भी पूछती, "विशाखा का क्या हाल-चाल है मुन्ना ? तुझे कुछ मालूम है ?"

संदीप को कुछ मालूम रहे तब न वह जवाब दे ! मां की आकुलता का भी कोई अंत नहीं था। संदीप को तनख्वाह की जितनी रकम मिलती, पूरी रकम वह मां को सौंप देता। उसके बाद मां से मांग भी लेता।

मां फिर कहती, "क्यों रे, कुछ बोल क्यों नहीं रहा है ? विशाखा का हालचाल मालूम है ? तू दुबारा उस घर में गया था ?"

संदीप कहता, "नहीं।"

मां कहती, "एक बार वक्त निकालकर जाना। वहीं जो वे लोग लड़की को लेकर गए उसके बाद वह कैसी है, यह जानने की हमें भी तो इच्छा होती है।"

संदीप ऑफिस जाने के दौरान कहता, "किसी दिन समय निकालकर जाऊंगा।"

यह कहकर दफ्तर रवाना हो जाता। उसके बाद बैंक में एक ही काम की पुनरावृत्ति, एक ही जैसे चेहरों को देखना और डेली पैसेंजरी करना। उसके बाद छुट्टी होने पर डाक्टर लाहिड़ी के नर्सिंग-होम जाकर मौसीजी से मिलना और विशाखा के संबंध में मौसीजी का एक ही प्रश्न। मौसीजी पूछतीं, "विशाखा ससुराल में कैसी है बेटा ? मेरी बीमारी के बारे में उसे नहीं बताया न ?"

संदीप कहता, "नहीं-नहीं मौसीजी, भला ऐसा कह सकता हूं ?"

"हां, मेरी बीमारी के बारे में वह सुनेगी तो छटपटाने लगेगी। वह ससुराल में भली-चंगी रहे, मैं यही चाहती हूं। उसे देखने पर कैसा लगा ? बिलकुल हंसता हुआ चेहरा ? मेरे बारे में कुछ पूछताछ की ?"

संदीप कहता, "कल ही मिलकर आया हूं। आपके पास से जाते ही विशाखा से मिला था—"

"उस समय विशाखा क्या कर रही थी?"

संदीप कहता, "शायद सौम्य बाबू के साथ सिनेमा देखकर घर लौटी थी।"

"अब पहले की तरह रोती-धोती नहीं है न?"

संदीप ने कहा, "अभी तो हंसी से दमकता हुआ चेहरा देखा। मुझे खाने को भी दिया।"

"क्या खिलाया?"

संदीप कहता, "दो रसगुल्ला, एक केक और उसके साथ एक कप चाय। और भी देना चाहती थी लेकिन मैंने मना कर दिया।"

मौसीजी को यह सब सुनने में बहुत ही अच्छा लगता। जितना ही सुनती आंखों से उतने ही आंसू बहने लगते। उसकी लड़की का भाग्य इस तरह चमक उठा है, इस खुशी को छिपाकर रख नहीं पाती। उसकी खुशियां जैसे आंसू बनकर आंखों से टपकने लगतीं। उस दिन दफ्तर का काम करने के दौरान संदीप पूरी तरह काम में मशगूल हो गया था। एकाएक हाशिम साहब ने कमरे के अन्दर प्रवेश किया। बोला, "सर, आपका पत्र—"

मेरा पत्र! अपने नाम के व्यक्तिगत पत्र को देखकर वह अवाक् हो गया। दफ्तर के पते पर उसे किसने पत्र भेजा है? वह पत्र उसके बैंक के श्यामबाज़ार ब्रांच के पते पर आया था। आदमी की मार्फत उसके पास भेज दिया गया है। संदीप ने कहा, "जो आदमी पत्र लेकर आया था वह अभी यहीं है?"

हाशिम ने कहा, "हां, है।"

"उसे एक बार बुला लाओ।"

आदमी के अन्दर आते ही संदीप ने उसे पहचान लिया। संदीप ने पूछा, "मैनेजर साहब मज़े में हैं गिरिधारी?"

"हां बाबूजी, मज़े में हैं।"

"घर का सब समाचार ठीक है न?"

गिरिधारी ने कहा, "हां बाबूजी, सब ठीक है।"

घर के अन्दर की खबरों की जानकारी गिरिधारी को कैसे हो सकती है?

संदीप ने कहा, "ठीक है, तुम जाओ।"

संदीप ने मल्लिक चाचा का पत्र पहले ही पढ़ लिया था। अब फिर से पढ़ने लगा—प्रिय संदीप, आशा है, ईश्वर की कृपा से तुम लोग सकुशल हो। बहुत दिनों से तुमसे मुलाकात नहीं कर सका हूं। तुमसे मिलना बहुत आवश्यक है। इस पत्र को पाने के बाद तुम शीघ्रातिशीघ्र हमारे घर पर आ सको तो दादी मां को बेहद प्रसन्नता होगी। तुम्हारी प्रतीक्षा करता रहूंगा। आशा है, तुम्हारी मां सकुशल हैं। तुम्हें मेरा हार्दिक आशीर्वाद।

शुभैषी,
परमेश चंद्र मल्लिक

पत्र पढ़कर उसे बीते दिनों की सारी बातों का स्मरण हो आया। संदीप ने सोचा था, वह सारा कुछ भूल जाएगा। अतीत की तमाम घटनाओं को वह मन से परे हटा देगा और नए सिरे से जीवन की शुरूआत करेगा। एक बार जो कुछ घटित हो चुका है उसे ढोते हुए अपने जीवन की विडंबना नए सिरे से नहीं बढ़ाएगा। अशान्ति को नकारने पर जो शान्ति मिलती है उसी शान्ति की उपासना करेगा। एकाएक उसकी तमाम परिकल्पनाओं में बदलाव आ गया। हाशिम ने कहा, "सर, आप जा रहे हैं?"

संदीप ने हाशिम की ओर देखा। बोला, "मैंने आज का सारा काम खत्म कर लिया है, चाबी मेरे पास ही रहे। मुझे एक ज़रूरी काम है, मैं चलता हूं—"

उसके बाद बिना किसी ओर देखे वह जैसे ही बाहर निकला, उसे एक खाली टैक्सी मिल गई। उस पर बैठकर कहा, "चलिए, बिडन स्ट्रीट—"

गेट के सामने गिरिधारी मिला। उसने बदस्तूर सलाम किया। संदीप ने भी सलाम किया। उसके बाद सीधे अन्दर घुस गया। उस पर नज़र पड़ते ही मल्लिक चाचा उठकर खड़े हो गए। बोले, "तुम आज ही आ गए ?"

संदीप ने कहा, "आपने मुझे आने कहा था। कौन-सा ज़रूरी काम है ?"

मल्लिकजी बोले, "इस दौरान बहुत से काण्ड हो चुके हैं। दादी मा ने तुम्हें एक बार बुलाने कहा था, इसीलिए बुलवाया—"

"क्यो ? बात क्या है ?"

मल्लिकजी ने कहा, "सौम्यबाबू की समस्या सुलझाने के लिए ही विशाखा को इस घर की बहू बनाकर लाया गया और अब विशाखा ही एक समस्या बन गई है।"

"विशाखा के कारण कौन-सी समस्या खड़ी हुई है ?"

मल्लिकजी ने कहा, "उसने खाना-पीना बन्द कर दिया है। मुह मे एक बूंद पानी तक नही डालती है। केवल रोती रहती है—"

"क्यो ?"

"सो मालूम नही। इसीलिए दादी मा ने तुम्हारे पास खबर भेजकर तुम्हें बुलाने कहा था।"

"वह खाना नही खाती, केवल रोती रहती है तो मैं क्या करू ?"

"तुम उससे खाना खाने कहो। तुम कहोगे तो बात मानेगी। इस तरह उपवास किए रहेगी तो कितने दिनों तक जिन्दा रहेगी। इस तरह दिन-रात बगैर सोए रहेगी तो उसे कितने दिनो तक ज़िन्दा रखा जा सकता है ? इतना सारा रुपया खर्च कर उसे ब्याह कर लाने से कौन-सा लाभ हुआ ? सौम्य बाबू जेल से छुटकारा पाकर जब घर वापस आएंगे तो इस घर-गृहस्थी की क्या हालत होगी ?"

संदीप ने पूछा, "सौम्य बाबू को कितने सालो के बाद जेल से छुटकारा मिलेगा ?"

मल्लिकजी बोले, "आठ या नौ साल मे। वकील साहब ने तो यही बताया है। इतने दिनो तक बहूरानी को कैसे जिन्दा रखा जाएगा ? इस हालत मे एकमात्र तुम ही बहूरानी को ज़िन्दा रख सकते हो। तुम उसे ज़रा समझाओ-बुझाओ। तुम समझाओगे तभी वह सुनेगी, और किसी की मानने को वह तैयार नही है।"

संदीप भारी मुसीबत में फंस गया। विशाखा और किसी की बात नहीं मानेगी, केवल उसी की बात मानेगी ? दादी मा की धारणा इस तरह की क्यो हुई ? दादी मा को इस तरह की धारणा बनाने का सुझाव किसने दिया ?

लेकिन विशाखा अगर संदीप की बात न माने ? यदि विशाखा उसे अपमानित कर भगा दे ?

इस बीच मल्लिकजी दादी मा से बातचीत करने ऊपर चले गए थे। खबर मिलते ही दादी मां बोली, "संदीप आ गया है ? उसे ऊपर ले आइए—"

मल्लिकजी तुरन्त नीचे चले आए और संदीप से बोले, "चलो संदीप, दादी मां बुला रही हैं, चलो—"

संदीप को अपने जीवन में बहुत उतार-चढाव देखना पड़ा है। वह जानता था, पुण्य का पथ जितनी ही विघ्न-बाधाओ से भरा रहता है, पाप का पथ इतना ही मसृण

होता है। वह सारा कुछ जानता था। पुस्तक में तो पढ़ा ही है, लोगों से भी सुना है।

लेकिन उस दिन समझ नहीं पा रहा था कि वह पुण्य के रास्ते पर चल रहा है या पाप के रास्ते पर। कहां जा रहा है वह ? जो उसकी पत्नी बनने जा रही थी लेकिन अड़चन आ जाने के कारण पराई स्त्री हो गई, उससे मुलाकात करना पुण्य है या पाप ?

एकबारगी तीन-मंज़िले पर पहुंचकर मल्लिकजी ने पुकारा, "दादी मां···"

बिन्दु कमरे से निकल बाहर आई। मल्लिकजी की निगाह उस पर पड़ी तो बोले, "संदीप को लेकर आ गया हूं—"

संदीप को अपने साथ ले मल्लिकजी ने कमरे के अन्दर प्रवेश किया। दादी मां बोलीं, "आओ बेटा, विशाखा किस तरह रो-धो रही है, देखो ! तुम उसे ज़रा समझाओ-बुझाओ। मुंह में न तो एक दाना डाल रही है और न ही एक घूंट पानी पी रही है। मैं क्या करूं, समझ में नहीं आता।"

उसके बाद विशाखा की तरफ देखती हुई बोली, "ओ बहूरानी, बहूरानी, यह देखो, कौन आया है। आंख खोलकर एक बार देखो। ओ बहूरानी—"

अब विशाखा ने आंख उठाकर संदीप की ओर देखा। संदीप को लगा, इन कई दिनों के दरमियान विशाखा का शरीर जैसे आधा हो गया है। आंखें अड़हुल के फूल की तरह लाल-लाल हैं और उन आंखों में क्रोध, घृणा, भय, विद्रोह इस तरह एकाकार हो गए हैं जैसे एकाएक ज्वालामुखी की तरह संदीप पर लावा उगलने लगेंगी। विशाखा ने चिल्लाकर कहा, "तुम क्यों आए ? क्या देखने आए हो ?"

दादी मां उसकी बात के बीच ही बोल पड़ी, "यह क्या बहूरानी, तुम किससे क्या कह रही हो ? वह संदीप है। मैंने उसे बुलवाया है···"

विशाखा बोल पड़ी, "नहीं, उसे नहीं आना है। वह इस घर में नहीं आ सकता है। आपने उसे क्यों बुलवाया है ? मैं कहती हूं, उसे इस घर में नहीं आना है—"

उसके बाद उठकर बैठ गई और कहने लगी, "जाओ, इस घर से निकल जाओ। तुम्हें इस घर में आने में शर्म नहीं लगी ? निकल जाओ, निकलो यहां से···"

दादी मां बोलीं, "उसे चले जाने क्यों कह रही हो ? मैंने खुद उसे बुलाया है, वह नहीं जाएगा।"

"हां, उसे जाना होगा। मैं इस घर की बहू हूं, मेरा भी इस घर पर अधिकार है। मैं कहती हूं, उसे चले जाना होगा···तुम अब भी खड़े हो ? जाओ, निकल जाओ···"

संदीप उस समय जैसे प्रस्तर खण्ड हो गया है। प्रस्तर खण्ड की तरह ही खड़ा होकर वह अपलक विशाखा की ओर ताकता रहा, ताकता रहा। और विशाखा उत्तेजना, रुलाई और आवेश से बेचैन होकर टूट-सी गई। उसके बाद तकिए में मुंह छिपाकर कलप-कलपकर रोने लगी और अपने आंसुओं से बिस्तर-तकिया वगैरह भिगोने लगी···

वृक्ष की प्राणशक्ति असल में बाहर की रोशनी, हवा या धूप से नहीं, अपनी जड़ से मिलती है। उस जड़ को काट देने से वृक्ष की प्राणशक्ति नष्ट हो जाती है।

उसी प्रकार दुनिया में मनुष्य की प्राणशक्ति मनुष्य के समाज से ही जुड़ी रहती है। उस समाज को नकारकर कोई आदमी जीना चाहता है तो वह अपनी प्राणशक्ति खो बैठता है। उसके फलस्वरूप दो हाथ, दो पैर, दो आंख रहने पर भी कोई उसे आदमी के रूप में नहीं गिना जाता है।

लगता है, दुनिया में ऐसे ही लोगों की संख्या अधिक है। हालांकि ऐसे ही लोग अपने आपको आदमी के रूप में प्रचारित करते हैं। उनके ज़ोर-जुल्म से बचने के लिए ही

इतने कानून, इतनी वर्जनाएं, शंकाएं और अनुशासन हैं।

सदीप जब एकान्त में होता, अपने अन्दर जब वह एक तनहा आदमी हो जाता, तो वह सोचता—क्यो वह तमाम लोगो के बारे में सोचता रहता है? जो नजदीकी आदमी हैं, सिर्फ उसी से ही नहीं, बल्कि जो दूर के आदमी हैं उनके भी भले-बुरे से उसका सरोकार क्यो है। उसका सोच क्यो उनके इर्द-गिर्द चक्कर काटता रहता है? कब कितने दिन पहले उसके साथ पढता था तारक घोष, पर संदीप को उसकी भी याद आती है। सोचता, क्यों उसे इतनी निष्ठुरता के साथ अपना खून बेचकर दम तोड़ना पड़ा? क्यो गोपाल हाजरा उस पर उतना ज़ोर-जुल्म ढाहता रहा? उसकी याद आते ही आंखो के सामने मल्लिक चाचा का चेहरा तिर आता। मल्लिक चाचा ने अगर उसे सहायता न की होती तो विशाखा से उसकी जान-पहचान नही हुई होती। और विशाखा से अगर जान-पहचान न हुई होती तो वह इस दुनिया को इस तरह पहचान नही पाता। इस दुनिया के भले-बुरे, सुन्दर और असुन्दर सब तरह के लोगो से उसकी जान-पहचान इस तरह घनिष्ठ रूप मे नही हुई होती।

याद है, चटर्जी बाबू एक दिन संदीप के घर पर घूमते-घामते आए थे। चटर्जी बाबू को देखकर संदीप हैरत में आ गया था। क्योकि संदीप ने उन्हे कभी अपने घर आते नही देखा था। बोला, "आप?"

वहां उन्हें बिठाएगा, कैसे उनका स्वागत-सत्कार करेगा, यही सब सोचकर तब संदीप को शर्मिन्दगी का अहसास हो रहा था। कुछ इन्तजाम करने के पहले ही चटर्जी बाबू सदीप के बिस्तर पर बैठ गए। बैठने के बाद बोले, "घर पर सुनने को मिला, तुमने बीस हज़ार रुपये की वह रकम लौटा दी है—"

इस बीच खबर मिलने पर मा भी कमरे के अन्दर आई और उसने चटर्जी बाबू के चरणो का स्पर्श कर उन्हे प्रणाम किया। बोले, "रहने दो बिटिया, मैं संदीप से एक बात करने आया हूं। और-और दिन उसका दफ्तर खुला रहता है। आज बन्द है इसीलिए सवेरे-सवेरे चला आया।"

मां थोड़ी देर बाद ही अन्दर चली गई। चटर्जी बाबू ने संदीप से कहा, "तुम बैठो, तुम्ही से बातें करनी हैं। तुमने जो बीस हज़ार रुपया वापस कर दिया तो तुम्हे क्या कोई असुविधा नही होगी?"

सदीप ने कहा, "असुविधा हो तो भी वह घर-गिरवी की बकाया राशि थी। मैं किसी का बकाया रखकर मरना नही चाहता।"

"तो फिर अपना यह गिरवी का तमस्सुक रख लो। तुम्हें वह वापस कर रहा हूं।"

सदीप ने उस कागज को अपने हाथ में लिया और गुमसुम जैसा हो गया। चटर्जी बाबू ने कहा, "तुमने अपना घर गिरवी रखकर वह रकम अपनी मौसीजी के इलाज के लिए लिया था। उस इलाज का खर्च अब कैसे हो रहा है? तुम्हारी मौसीजी का इलाज, सुना, अब भी हो रहा है। लेकिन खर्च का रुपया कहा से आ रहा है?"

सदीप ने कहा, "आप तो विशाखा की शादी के दिन की दुर्घटना से अवगत हैं। आपको वह सब बात अवश्य ही याद होगी। उस दिन बिडन स्ट्रीट के परमेश मल्लिक चाचा मुझे बतौर हर्जाना पचास हज़ार रुपया दे गए थे। उसी पचास हज़ार रुपये की रकम से आपका बीस हजार रुपया वापस किया है। बाकी रहा तीस हज़ार रुपया।"

"लेकिन तीस हज़ार रुपये से क्या कैंसर जैसे भयकर रोग का उपचार हो सकेगा?"

सदीप ने कहा, "उसके साथ मेरी नौकरी की तनख्वाह की रकम भी तो है।

तनख्वाह की पूरी रकम मैं उनके इलाज में खर्च कर दूंगा।"

"और उससे भी खर्च पूरा न हो तो?"

"अगर पूरा न होगा तो इस घर को गिरवी रख दूंगा या बेच डालूंगा।"

चटर्जी बाबू ने कहा, "मकान बेच दोगे तो रहोगे कहां?"

संदीप ने कहा, "जिन लोगों के पास मकान नहीं है, वे जहां रहते हैं। मैं मां को लेकर वहीं रहूंगा।"

चटर्जी बाबू ने कहा, "तुम्हारी बात कहने और सुनने में अच्छी लग रही है लेकिन उसे कार्य रूप में परिणत करना उतना आसान नहीं है···"

संदीप ने इस बात का कोई जवाब नहीं दिया।

चटर्जी बाबू ज़रा चुप रहने के बाद बोले, "तुमने ईश्वर चन्द्र विद्यासागर का नाम सुना होगा।"

संदीप ने कहा, "कौन ऐसा है जिसने नहीं सुना होगा—"

"वे जो कहते थे वही करते थे, यह जानते हो न? दुनिया में ऐसे आदमी का एक दल है जो दूसरे का उपकार करता रहता है और प्रतिदान में लोग उसकी हानि ही करते रहते हैं। तुम जो लोगों का उपकार किए जा रहे हो मगर तुम्हें क्या उम्मीद है कि वे तुम्हारा आभार मानेंगे?"

संदीप ने कहा, "परिणाम की आशा कर जो लोग काम करते हैं वे आदमी नहीं, व्यवसायी हैं। मैं व्यवसायी बनना नहीं चाहता, मैं इंसान बनना चाहता हूं—"

यह सुनने के बाद चटर्जी बाबू बैठे नहीं। उठकर खड़े हो गए। बोले, "याद रखो, दुनिया में भले आदमी को ही सबसे अधिक कष्ट उठाना पड़ता है। क्योंकि द वर्ल्ड डज नोट टॉलरेट एबसॉलूट ट्रूथ।"

यह कहकर वे खड़े नहीं रहे। कमरे से निकल अपने मकान की ओर चल दिए। संदीप बहुत देर तक उनकी ओर अपलक ताकता रहा। उसके बाद एकाएक अपने हाथ के गिरवी के तमस्सुक पर उसकी निगाह गई। तत्क्षण उसे चिन्दी-चिन्दी कर बाहर के रास्ते में फेंक दिया। मानो, मन की तमाम यातना से उसे राहत मिल गई हो।

बिडन स्ट्रीट के मुखर्जी-भवन के अन्दर तब कई दिनों से एक दूसरा ही नाटक चल रहा था। हां, नाटक ही। संदीप का पूरा जीवन जैसे एक नाटक की ही तरह प्रथम अंक से शुरू होकर यवनिकापात में समाप्त हो गया है।

हां, आज यवनिकापात ही हो रहा है उसके जीवन के नाटक का। इतने दिनों के बाद वे बातें नए सिरे से उसकी आंखों के सामने तिर आईं। मुक्तिपद मुखर्जी उस ज़माने के उद्यमी के अन्तिम वंशधर थे। उन्होंने जन्म लेते ही देखा था कि वे रुपयों के पहाड़ पर पैदल घूम रहे हैं। वह इतनी रकम है कि आनेवाली चौदह पीढ़ियां भी खा-पीकर मौज-मस्ती मनाकर उसे समाप्त नहीं कर पाएंगी। इतने रुपये का मालिक होने के लिए उन्हें कोई परिश्रम नहीं करना पड़ा था, किसी का तलवा नहीं सहलाना पड़ा है, कॉलेज के अन्यान्य सहपाठियों की तरह नौकरी के लिए आवेदन-पत्र नहीं भेजना पड़ा है। यही वजह है कि कॉलेज के नौजवान उन्हें हमेशा ईर्ष्या की आंखों से देखते थे। लेकिन अब?

मुक्तिपद ने सुना था, लार्ड माउण्टबेटन नामक एक वाइसराय ने 1947 ई. के 15 अगस्त को भारत को आज़ादी दी थी। मुक्तिपद के लिए यह खबर एक इतिहास जैसी ही है। क्योंकि आज के अखबारों के प्रथम पृष्ठ की सुर्खियों पर जो कुछ लिखा रहता है, कल वही इतिहास हो जाएगा। उस समय इस कलकत्ता शहर में हिन्दू-मुस्लिम के दंगे

में खून की नदी बहने लगी थी। यह सब खबर उन्होंने पुस्तक में पढ़ी है। उन्होंने यह सब देखा भी होगा तो उन्हें याद नही है। अंग्रेज़ों के चले जाने के बाद से वे शहर को देखते आ रहे हैं, पर जितना ही देखते है, वे सोचते हैं कि अंग्रेज़ों ने यहा से जाकर अच्छा किया या बुरा। यह सवाल उन्होंने अपने-आपसे किया है और दूसरो से भी किया है। लेकिन आज तक कोई इसका ठीक-ठाक जवाब नहीं दे सका है।

जब उन्होने पैतृक कारोबार सँवसवी कपनी का कार्य-भार संभाला था, उस समय उनकी उम्र बहुत ही कम थी। उनके पिता की मौत हुई थी पैंतालीस साल की उम्र में और बडे भाई की पचीस साल की उम्र मे। उनके पैदा होने के बाद से ही भारत शायद रस तिल में पहुच गया। दमदम एयरपोर्ट पर बैठकर माइक्रोफोन से घोषणा सुनी, हवाई जहाज़ दो घण्टा विलम्ब से रवाना होगा। फिर वे इतनी देर तक क्या करें?

पिकनिक ने घोषणा सुनी थी। वह भी सुनकर चिहुक उठी। "दो घण्टा लेट का मतलब तीसरे पहर पांच बजे रवाना होगा? तो फिर लंच का क्या होगा?"

मुक्तिपद बोले, "चल, श्याम बाज़ार के किसी होटल में चलकर हम लंच खा लें—"

गाडी वापस चली गई थी। शायद वह अब विडन स्ट्रीट पहुच चुकी होगी। बाहर जाने पर ही टैक्सी मिलेगी। पिकनिक को अपने साथ ले वे एयरपोर्ट से बाहर निकले। टैक्सी पर बैठकर कहा, "श्याम बाज़ार—"

रास्ता खाली पाकर टैक्सी तेज़ रफ्तार से श्याम बाज़ार की तरफ जाने लगी। उसी रास्ते से जिस रास्ते से वे एयरपोर्ट आए थे। पहले इस तरफ इतने सारे मकान नही थे। लोग-बाग इस तरफ उतना आते भी नही थे। मा और बाबूजी के साथ वे बहुत बार इस रास्ते से होकर एयरपोर्ट पहुंच चुके हैं। विलायत जाने के दौरान। कभी इगलैण्ड गए हैं। वहां से योरोप के और भी बहुत सारी जगह गए हैं। तब 'सँवसवी मुखर्जी' कम्पनी का स्थापना-युग था। कम्पनियो के विदेशी मालिक उन दिनो कितना सम्मान करते थे उन लोगों का! वहां जाने पर वे लोग उन्हे कितनी पार्टिया देते थे! उस समय वे बहुत ही कम-उम्र के थे। स्कूल के दोस्त-मित्र मुक्तिपद से कितना रश्क करते थे! उन्हें भी मन-ही-मन फख्र का अहसास होता।

एकाएक पिकनिक पिता की ओर ताकती हुई बोली, "आप कलकत्ता छोड इन्दौर क्यो चले गए?"

मुक्तिपद बोले, "क्यो, इन्दौर तुझे अच्छी जगह नहीं लगती?"

पिकनिक ने कहा, "नही—"

"क्यों, अच्छा क्यो नही लगता?"

पिकनिक ने कहा, "इन्दौर में 'लाइफ स्लो' है।"

"स्लो लाइफ तो अच्छा होता है।"

पिकनिक ने कहा, "मुझे स्लो लाइफ अच्छा नहीं लगता। मेरी सहेलिया मुझसे कहती हैं—तू इन्दौर क्यों चली गई? कलकत्ता का लाइफ कितना फास्ट है! यहां देखते-देखते कैसे समय कट जाता है, पता ही नही चलता। इन्दौर मे दिन बीतने का नाम ही नही लेता—"

मुक्तिपद बोले, "उम्र और कुछ बढ़ जाने पर तुझे पता चलेगा कि स्लो लाइफ कितना अच्छा होता है। लाइफ जितना ही फास्ट होगा, मौत भी उतने हो करीब खिसक-कर चली आएगी। यही वजह है कि कलकत्ता के लोगों की इतनी जल्दी मृत्यु हो जाती है। मेरे पिता की मृत्यु हुई थी पैंतालीस साल की उम्र में और भैया की पचीस साल की उम्र में। इन्दौर मे होते तो वे लोग और अधिक दिनों तक जीवित रहते।"

पिकनिक ने कहा, "रविश ! लाइफ अगर एनजॉय नहीं कर सको तो ज़्यादा दिनों तक जिन्दा रहने से फायदा ही क्या ?"

मुक्तिपद ने कहा, "व्हिस्की और कॉकटेल पार्टी न हो तो जिन्दगी में मज़ा ही नहीं मिलता ?"

पिकनिक ने कहा, "यह आपकी मिडिल क्लास मेण्टलिटी है बाबूजी—"

मुक्तिपद ने कहा, "मैं जब तुम्हारी उम्र का था तो मैं भी यही सोचता था। यह धारणा तत्कालीन अंग्रेज़ों से प्रचलित हुई है ! योरोप के लोग कहते हैं, वे सुखवादी हैं और भारतीय दुखवादी हैं। गौतम बुद्ध, महावीर, चैतन्यदेव इत्यादि ने घर-संसार छोड़ मोक्ष की कामना की थी, इसीलिए योरोपियनों ने इस तरह की अफवाह फैलाई है। लेकिन असल में भारतवासी आनन्दवादी हैं—"

पिकनिक ने कहा, "आनन्दवादी ? इसका मतलब ?"

"मतलब यह कि महावीर, बुद्ध और चैतन्यदेव जो घर-संसार को छोड़ चले गए थे वह न तो सुख की खोज में और न ही दुख की खोज में, बल्कि आनन्द की खोज में। उस आनन्द का पता जब उन्हें चल गया तो उन्होंने कहा—अरे मन, अब हमें अपना असली घर मिल गया, अब तू दूर चला जा—"

इस बीच टैक्सी श्याम बाज़ार के एक होटल के सामने पहुंचकर खड़ी हो चुकी है। नामी होटल है यह। टैक्सी का किराया चुकाकर मुक्तिपद पिकनिक के साथ एक एकांत घिरे हुए केबिन के अन्दर जाकर बैठ गए। उसके बाद खाने का ऑर्डर दिया।

खाना आने में देर नहीं लगी। उस समय होटल लोगों की भीड़ से भरी हुई थी। हाथ में इतना वक्त था कि इस बीच बिडन स्ट्रीट से भी खाना खाकर आ सकते थे। लेकिन वहां जाने पर अपनी मां की एकरस शिकवा-शिकायत सुनकर उन्हें परेशान होना पड़ता। उससे अच्छा यही है। इस एकान्त में बैठकर पिकनिक को अपनी संगति का सुयोग देना ही उनका मकसद है। जिस लड़की को मां और बाप की संगति का सुयोग नहीं मिला है, वह बुरे रास्ते पर कदम बढ़ाएगी ही। अगर सम्भव होता तो मुक्तिपद पत्नी और लड़की को संगति दे सकते थे। लेकिन उनके पास वक्त कहां है ? वे दिन-रात फैक्टरी की चिन्ता में ही व्यस्त रहते हैं। घर के बारे में सोचने का उनके पास वक्त कहां है ?

नंदिता कहती, "तुम क्या सोच रहे हो ?"

मुक्तिपद कहते, "मैं अन्यमनस्क था।"

आश्चर्य ! नन्दिता उनकी बात सुनकर आश्चर्यचकित हो जाती और साथ ही मुक्तिपद खुद भी।

कहते, "जानती हो, कल फैक्टरी का एक बॉलर फट गया था, आज उसकी मरम्मत होने की बात है। मेरा मन उसी ओर था—"

नंदिता कहती, "तुम हमेशा यही सोचते रहोगे तो फिर घर क्यों आते हो ? सिर्फ सोने की खातिर ? तुम तो फैक्टरी में भी सो सकते हो। वहां तुम्हारा एयरकंडिशन्ड कमरा है, हर तरह का इन्तजाम है, हर तरह का आराम है। घर क्यों आते हो ?"

मुक्तिपद कहते, "ज़रा राहत और सुकून पाने के खयाल से ही तो घर आता हूं। इसके अलावा और क्या हो सकता है ?"

नंदिता कहती, "दिन-दिन तुम मशीन होते जा रहे हो—"

मुक्तिपद कहते, "घर किसलिए आऊं ? घर पर न तो तुम रहती हो और न ही पिकनिक। ऐसी हालत में घर आकर मैं अकेले क्या करूंगा ?"

नंदिता कहती, "तुम घर में नहीं रहते हो इसीलिए क्लब और ब्यूटी पार्लर जाती हूं।"

"और पिकनिक ?"

"तुम घर में नहीं रहते और मैं भी नहीं रहती। लिहाजा पिकनिक घर में अकेली क्या करने को रहेगी ? वह भी बाहर चली जाती है—"

यह है इन्दौर में मुक्तिपद की दिनचर्या। ठीक उसी वक्त के दरमियान पिकनिक को खोज निकालने के लिए उथल-पुथल मच गई।

"अरे पिकनिक, तू !"

"अरे रजत ! तू कहां से आ रहा है ?"

रजत ने कहा, "तू तो इन्दौर चली गई थी। कब आई ?"

पिकनिक तब अपनी जगह छोड़ केबिन के बाहर चली गई थी। बोली, "बहुत दिन पहले आई थी, आज ही इन्दौर जा रही हूं—"

"कब ? कितने बजे ?"

पिकनिक बोली, "अभी तुरन्त एयरपोर्ट जाना है, पांच बजे हवाई जहाज रवाना होने की बात है।"

रजत ने पूछा, "केबिन के अन्दर कौन है ?"

"मेरे डैडी।"

मुक्तिपद ने परदे की ओट से उस युवक की ओर देखा। ऐसे ही क्या पिकनिक के मित्र हैं ?

मुक्तिपद ने देखा, युवक के होंठों पर एक सिगरेट है। पॉकेट से एक सिगरेट निकाल पिकनिक की ओर बढ़ाते हुए युवक बोला, "ले, पी।"

पिकनिक बोली, "नहीं जी, अभी नहीं पिऊंगी, अन्दर डैडी हैं—"

' इससे क्या आता जाता है ? सिगरेट का एक कश लेकर तू फेंक दे, इसीसे काम चल जाएगा।"

पिकनिक बोली, "नहीं-नहीं, ऐसा करना ठीक नहीं रहेगा। डैडी को मेरे मुंह की बू का पता चल जाएगा।"

उसके बाद न जाने क्या सोचकर पिकनिक बोली, "चल, डैडी से तेरा परिचय करा दूं—"

"चल—"

यह कहकर युवक ने मुंह की जलती सिगरेट को फेंककर उसे जूते से मसलकर बुझा दिया। उसके बाद पिकनिक के पीछे चलता हुआ सीधे केबिन के भीतर आकर खड़ा हो गया।

"बाबूजी, यह है मेरा क्लास-फ्रेन्ड रजत सरकार। हमने सेंट जेवियर्स कॉलेज में एक साथ पढ़ा है—"

युवक ने फौरन मेज के अन्दर सिर घुसाकर मुक्तिपद के चरणों का स्पर्श किया। उसके चेहरे पर विनम्रता और पवित्रता की छाप है।

मुक्तिपद ने कहा, "बैठो, बैठो—"

युवक पिकनिक की बगलवाली कुर्सी पर बैठ गया।

मुक्तिपद ने पूछा, "क्या खाओगे ?"

"नहीं, मैंने लंच खा लिया है।"

मुक्तिपद ने पूछा, "अभी क्या कर रहे हो ?"

पिकनिक ने रजत की तरफ से उत्तर दिया, "इन लोगों का पैटर्नल बिजिनेस इलेक्ट्रोनिक गुड्स का है। अभी उसको देखरेख कर रहा है।"

मुक्तिपद ने कहा, "तुम्हारे डैडी हैं ?"

रजत सरकार ने कहा, "हां, वे ही तो हेड ऑफ़ द फैमिली हैं। हम लोग दो भाई हैं। मैं एक डाइरेक्टर हूं और मेरी मां भी एक डाइरेक्टर हैं।"

मुक्तिपद ने सब कुछ सुना। पूछा, "तुम्हारी शादी हो चुकी है?"

पिकनिक ने कहा, "वह शादी कैसे करेगा? अभी उसकी शादी की उम्र नहीं हुई है। हम दोनों हमउम्र हैं। वह मेरा मोस्ट इनटिमेंट फ्रेण्ड है—"

मुक्तिपद ने कहा, "ठीक है, हम अभी खाना खाते हैं—"

इसके बाद पिकनिक से कहा, "खाना खत्म कर—"

अचानक रजत ने पूछा, "अंकल आप कलकत्ता छोड़ मध्यप्रदेश क्यों चले गए?"

मुक्तिपद ने कहा, "क्यों गया? इसलिए कि यहां का लाइफ बहुत फास्ट है—इन्दौर का लाइफ अब भी स्लो है मगर ज्यादा दिनों तक स्लो नहीं रहेगा।"

रजत ने कहा, "फास्ट लाइफ ही तो अच्छा होता है अंकल!"

"अपनी इस उम्र में तुम लोग यही सोचते हो। लेकिन उम्र थोड़ी बढ़ेगी तो महसूस करोगे कि लाइफ जितना ही फास्ट होगा, आदमी की अशांति उतनी ही बढ़ती जाएगी। रोमन एम्पायर जो इतनी ज़ल्द बर्बाद हो गया, उसका कारण भी यही है। कम-से-कम हिस्टोरियन गिब्बन यही कह गए हैं। यही वज़ह है कि इंग्लैण्ड और अमरीका के पदाधिकारी अब बहुत भयभीत हो गए हैं। अभी वहां फिफ्टी पर्सेंट से भी अधिक डिवॉर्स रेसिओ चल रहा है। वहां तमाम वस्तुओं का विवेचन रुपयों से ही किया जा रहा है और यही डर की बात है।"

"क्यों अंकल, रुपये से अगर हर वस्तु का मूल्यांकन हो तो इसमें हानि ही क्या है?"

मुक्तिपद ने कहा, "इस बात का जवाब देने लगूं तो बहुत वक्त लगेगा। एक स्विच दबाकर एक बत्ती जलाना संभव है। तुरन्त सारा अंधेरा दूर हो जाएगा, लेकिन किसी खुशबू को तराजू के पल्ले पर तौलकर बताया जा सकता है कि उसका वज़न कितना है?"

रजत ने सारी बात सुनी, मगर कोई जवाब नहीं दिया। इस बीच दोनों का खाना खत्म हो चुका था। मुक्तिपद होटल का बिल चुकाकर उठकर खड़ा हो गया। साथ ही पिकनिक भी उठकर खड़ी हो गई। बोली, "ऐ रजत, तू एक बार इन्दौर आ।"

रजत ने कहा, "तेरा पता क्या है?"

पिकनिक ने कहा, "मेरा पता न जानने से भी कोई हानि नहीं, सिर्फ मेरे डैडी एम. पी. मुखर्जी का नाम लिखने से ही मुझे पत्र मिल जाएगा।"

यह कहकर बाहर निकल टैक्सी पकड़ी। टैक्सी दमदम एयरपोर्ट की तरफ भागने लगी। अब भी हाथ में काफी वक्त है। मुक्तिपद का मन अभी काफी बोझिल है। अब तक जिससे बातें करते रहे, ऐसे ही लोग पिकनिक के मित्र हैं! इन्हीं लोगों से हिलने-मिलने पर उनकी लड़की को प्रसन्नता होती है! जो जीवन भोग के लिए है, उसी को ये लोग चाहते हैं?

टैक्सी में बैठकर मुक्तिपद ने लड़की से पूछा, "वह युवक जो कुछ कह रहा था, तुम उसी पर आस्था रखती हो?"

पिकनिक ने कहा, "मुझे ही नहीं, बल्कि हम सभी को इसी पर विश्वास है।"

पिकनिक की बात सुनकर मुक्तिपद को हैरानी हुई।

पिकनिक ने कहा, "और सिर्फ हमें ही नहीं, हमारे प्रोफेसर भी इसी पर विश्वास रखते हैं, जबकि वे हमारे जैसे 'यंग' नहीं हैं।"

मुक्तिपद को अपनी लड़की की बात सुनकर और अधिक ताज्जुब हुआ। उन्होंने

मन-ही-मन सोचा, फिर क्या वे वाकई बूढ़े हो गए हैं? इसी को पीढ़ियों का अन्तराल कहा जाता है! तो फिर उन्होंने अच्छा ही किया है कलकत्ता छोड़कर, इन्दौर जाना उनके लिए आशीर्वाद हो गया है। उनकी अपनी लड़की ही उनके आदर्श पर विश्वास नहीं करती। यह तो उनके जीवन की सबसे बड़ी त्रासदी है। वे जीवन-भर फैक्टरी लेकर ही व्यस्त रहे। सोचा था, वे अपना कर्तव्य करते जाएंगे और परिवार की देखरेख का कर्तव्य करेगी उनकी पत्नी।

एकाएक फिर पूछा, "तू बड़ी होकर क्या करेगी?"

पिकनिक ने जरा सोचने के बाद कहा, "मैं तो बड़ी हो गई हूं बाबूजी।"

"तू बड़ी कहां हुई है? तू अभी छोटी ही है।"

पिकनिक ने कहा, "मैं छोटी कहां हूं?"

"छोटी नहीं है? तेरी क्या शादी हो चुकी है? तेरे सिर पर किसी ने जिम्मेदारी का बोझ रखा है? मैं रुपया पैदा करता हूं और तू खाती है। मगर ऐसा भी एक दिन आएगा जब मैं नहीं रहूंगा। उस दिन? उस दिन तू क्या करेगी? किस पर निर्भर करोगी? कौन तेरी देखरेख करेगा?"

पिकनिक बोल उठी, "डॉण्ट टॉक नॉनसेंस। बेकार की बातें नहीं करें। आप क्या यह कहना चाहते हैं कि अभी से फ्यूचर के बारे में सोचकर मैं वर्तमान को नष्ट करूं? मैं उस किस्म की इडियट नहीं हूं—"

मुक्तिपद ने कहा, "फ्यूचर के बारे में सोचना क्या बेवकूफी है?"

"जरूर। फ्यूचर के बारे में सोच-सोचकर जो वर्तमान को नष्ट करता है वह इडियट के अलावा और क्या हो सकता?"

मुक्तिपद लड़की की यह बात सुनकर अचकचा उठे। आज के लड़के-लड़कियां क्या केवल वर्तमान को लेकर व्यस्तता में डूबे हुए हैं? वे क्या भविष्य के बारे में नहीं सोचेंगे?

गाड़ी में जाने के दौरान मुक्तिपद चुपचाप बैठे रहे और उनके जेहन में रजत सरकार की बातें ही चक्कर काटती रहीं। तो फिर वे क्यों फैक्टरी चलाने की जी-जान से कोशिश कर रहे हैं? सिर्फ खा-पीकर अमीरी के साथ जिन्दगी जीने के लिए ही? और किसी चीज के लिए नहीं? देश की बात अनदेखी कर केवल आनेवाली पीढ़ियों के बारे में ही सोचकर वे इतना परिश्रम किए जा रहे हैं? इतनी अशांति, इतनी बेचैनी, इतनी निष्ठा क्या केवल अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए ही है?

इन सबों से उन्हें कब छुटकारा मिलेगा? उनकी मृत्यु के बाद कौन उनकी फैक्टरी को चालू हालत में रखेगा? कौन उसकी देखरेख करेगा?

फैक्टरी के बारे में सोच-सोचकर उन्हें बहुत सारे दिन और बहुत सारी रातें बेचैनी में बितानी पड़ी हैं। सोचा था, उनकी फैक्टरी बची रहेगी तभी वे जिन्दा रह सकेंगे। फैक्टरी टिकी रहेगी तभी वे या उसके परिवार के लोग टिके रहेंगे। हर साल जब उनके फर्म का ऑडिट होता है, बैलेंस सीट तैयार होता है तो उन कई दिनों के दरमियान उन्हें नींद नहीं आती और मूड भी ठीक नहीं रहता। उन कई दिनों के दरमियान वे आदमी नहीं, मशीन हो जाते हैं। उस समय उनकी पत्नी उनके लिए पत्नी नहीं रह जाती, लड़की लड़की नहीं रह जाती।

उन्होंने अपनी बगल की ओर देखा। पिकनिक अपलक बाहर की तरफ ताक रही है। उन्होंने महसूस किया, कलकत्ता छोड़कर जाने में उनकी लड़की को तकलीफ का अहसास हो रहा है। पूछा, "क्यों कलकत्ता छोड़कर जाने में तुझे तकलीफ का अहसास हो रहा है?"

पिकनिक ने कहा, "तकलीफ का अहसास नहीं होगा ?"

मुक्तिपद ने कहा, "तुझे किस चीज़ के लिए तकलीफ महसूस हो रही है ? यहां क्या है ? यहां तो केवल शोरगुल और धुआं है, केवल जुलूस और भीड़। यहां इस माहौल में आदमी क्या जिन्दा रह सकता है ?"

पिकनिक ने कहा, "ज़िन्दा रहने की ज़रूरत ही क्या है ?"

"क्या मतलब ?"

"ज्यादा दिनों तक ज़िन्दा रहने से फायदा ही क्या है ? जितने दिनों तक ज़िन्दा रहूंगी, भोग की ज़िन्दगी जीती रहूंगी और यही बेहतर है। अगर अस्सी साल तक ज़िन्दा रहूं और भोग करने की सामर्थ्य न रहे तो उसे क्या जीवन जीना कहा जा सकता है ?"

मुक्तिपद ने इस बात पर कोई राय जाहिर किए बगैर कहा, "तुम्हें इन बातों की तालीम किन लोगों ने दी है ?"

पिकनिक ने कहा, "तालीम कौन देगा ? इसे जानने के लिए किसी किताब को पढ़ने की ज़रूरत नहीं पड़ती। अपने इर्द-गिर्द जो कुछ देख रही हूं, उसी से सीख मिल रही है। बूढ़े लोग ज़िन्दा क्यों हैं ? वे मर जाते तो अच्छा रहता। वे भीड़ क्यों बढ़ा रहे हैं ?"

उसकी बातें सुन मुक्तिपद को और अधिक हैरानी हुई। पिकनिक ने फिर कहना शुरू किया, "जहां भी ज़रा रिलैक्स करने जाती हूं वहीं बूढ़े लोगों की भीड़ दिख पड़ती है। सड़क पर ज़रा आराम से पैदल चलें, इसका भी उपाय नहीं। वहां भी देखने को मिलता है, हाथ में लाठी लिए बूढ़े लोग लंगड़ाते हुए चल रहे हैं। 'पॉपलेशन एक्सालांशन' के लिए जो इतना हाय-तौबा मचा हुआ है इसके लिए कौन ज़िम्मेदार है ?"

मुक्तिपद अब कुछ नहीं बोले। समझ गए कि उनका पूरे तौर पर सत्यानाश हो चुका है अपने ही घर के अन्दर। पिकनिक को दोष देने से फायदा ही क्या ? दोष और किसी का नहीं, उनका ही है—

टैक्सी एयरपोर्ट में आकर रुक गई। किराया चुकाकर वे लड़की के साथ अन्दर चले गए। उन्होंने अगर एयरपोर्ट में ही लंच खा लिया होता तो इस युग के युवक-युवतियों की मानसिकता से परिचित नहीं हो पाते, उनके घर के अन्दर जो सर्वनाश हो गया है उसका उन्हें अन्दाज़ा नहीं हो पाता।

बारह बटे ए बिडन स्ट्रीट-भवन में उन दिनों शोक की निस्तब्धता उतर आई थी। मुक्तिपद जब तक घर में थे, उस समय घर में थोड़ी-बहुत चहल-पहल थी। थोड़ी-बहुत बातचीत करते रहने के कारण दादी मां को सुकून का अहसास होता था। लेकिन उसके बाद ?

उस समय दादी मां उस दिन की बात भूल नहीं पा रही थीं। 13 फागुन के सौम्य के ब्याह की रात की बात। ज़रा-सा के लिए वे बच गई। थोड़ी-सी और देर हो जाती तो उनके जीवन में चरम सर्वनाश उतर आता। सौम्य हमेशा के लिए खो जाता।

शादी के बाद सौम्य से दादी मां की एक मिनट के लिए मुलाकात हुई थी। उस समय सौम्य प्रस्तर की मूर्ति की नाईं नीरव निश्चल था। दादी मां को देखने के बावजूद वह कुछ भी नहीं बोला। दादी मां के मुंह से भी कोई शब्द नहीं निकला। दादी मां किसी तरह आंखों में आंसू रोके हुई थीं। पूछा था, "क्यों, तू कैसा है ?"

सौम्य ने उस बात का कोई जवाब नहीं दिया था। एकटक दादी मां की ओर ताकता रहा था।

"अच्छी तरह है न ?"

दादी मां की आंखों में उस वक्त रुलाई से धुंधलापन तिर आया था। उनके मुंह में और कुछ शब्द निकलने के पहले ही आठ पुलिसकर्मी सौम्य को गाड़ी पर बिठाकर तेज़ रफ्तार से चले गए।

उस समय आधी रात उतर आई थी। दादी मां की गाड़ी में नई पौत्रवधू थी। पूरा चेहरा बनारसी साड़ी के घूंघट से ढंका हुआ। उसके मुंह से भी कोई आवाज़ नहीं निकल रही थी। वह अभी रो रही है या सोच रही है, पता नहीं चल रहा।

सामने पुलिस की गाड़ी जा रही है। उसमें सौम्य और आठ राइफलधारी पुलिस-बल के जवान हैं। बेड़ापोता को पीछे छोड़ गाड़ी तीर की गति से कलकत्ता की तरफ बढ़ रही है और ठीक उसके पीछे-पीछे चल रही है दादी मा की गाड़ी। उस गाड़ी में वे और मल्लिकजी हैं। इसके अलावा नाई और पुरोहितजी। दादी मां की बगल में विशाखा है।

अभी उनके मुंह से कोई शब्द नही निकल रहा है। मील-दर मील तय करती हुई दोनों गाड़ियां कलकत्ता को अपना लक्ष्य बनाकर आगे बढ़ रही हैं। कलकत्ता उन लोगों का रक्षक है भक्षक भी। पाप करने के लिए जिस तरह सबको कलकत्ता आना पड़ता है उसी तरह पुण्य करने के लिए भी। कितने ही अत्याचार-अनाचार, प्रेम, त्याग, विश्वास-घात, हिंसा, निष्ठा, खून-खराबा, अकृतज्ञता और शोषण हजम करते हुए कलकत्ता नीलकंठ बनकर अब भी जीवित है तथा और कितने काल तक जीवित रहेगा, इसकी कोई इयत्ता नहीं। उन सभी लोगों का लक्ष्य कलकत्ता है, आश्रयदाता भी कलकत्ता ही है।

कलकत्ता पहुंचते ही सामनेवाली गाड़ी सहसा तेज गति से बाईं ओर मुड़ गई। उसी तरफ जेलखाना है। सौम्य को वही जाकर रहना है, वहीं जिन्दगी गुज़ारनी है।

और उसकी नवविवाहिता दुल्हन ?

उसके बारे में अभी कोई नही सोच रहा है। सौम्य का कारागार-वास ही सबके मन पर अपना अधिकार जमाए हुए है। वही मानो अभी सबके लक्ष्य का एकमात्र स्थल है। और विशाखा ? वह जैसे मात्र निमित्त हो। वह अभी सिर्फ अपने जीवन की परिक्रमा कर रही है। उस मनसातल्ला लेन के जीवन से शुरू कर वर्तमान के कठोर यथार्थ के मुकम्मल रास्ते की।

"उतरो बहूरानी। घर पहुंच गए हैं।"

बजाते-बजाते सितार का कोई तार जैसे टूट जाए, यह भी वैसी ही कुछ स्थिति है। किसी दिन इस घर की पौत्रवधू बनने के लिए ही वह मन-ही-मन प्रस्तुत हो गई थी। अन्तत: वही हुआ। लेकिन वह आना क्या उस तरह का आना था ? यह क्या वधू का वरण है ? उसके भाग्य विधाता ने क्या इसी तरह उसकी मा की इच्छा पूरी की ?

जब दादी मां विशाखा को लेकर विडन स्ट्रीट-भवन में पहुंची तो घड़ी कितना बजा रही है, यह देखने की मन स्थिति नहीं थी उसकी। शायद आधी रात गुज़र चुकी थी।

उसी रात उसके मझले ससुर इन्दौर से अपनी लड़की को साथ लिए कलकत्ता आए थे। रात में दादी मा विशाखा की बगल में ही लेटी थी। रात-भर दादी मा छट-पटाती रही थीं और विशाखा से पूछ रही थीं, "नींद नहीं आ रही है ?"

विशाखा ने कहा था, "नहीं—"

"क्यों बहूरानी, नींद क्यों नही आ रही है ? तुम नही सोओगी तो मुझे भी नींद नहीं आएगी। सोने की कोशिश करो—"

विशाखा ने इस बात का कोई जवाब नहीं दिया था। इसका वह जवाब ही क्या देगी ! उस समय वह क्या जवाब ही दे सकती थी ? उस समय उसे लग रहा था—यह किस तरह की शादी है उसकी ? यह किस तरह की ससुराल है ? वासर शय्या कहां है ? प्रीतिभोज का आयोजन कहां हो रहा है ? पुष्प शय्या कब होगी ? विधाता उसे कहां ले आए ?

दादी मां तब भी कहे जा रही थीं, "ज़रा सोने की कोशिश करो बहूरानी ! तुम न सोओगी तो मैं भी नहीं सो पाऊंगी। कल तुम्हें कोर्ट जाकर जज के सामने हाजिर होना है।"

कोर्ट !

हालांकि उसे थोड़ी-सी नींद आती मगर कोर्ट का नाम सुनते ही काफूर हो गई। पूछा, "कोर्ट क्यों जाना पड़ेगा ?"

दादी मां ने कहा, "इसी वजह से तो तुम्हें लाया गया है बहूरानी। जज साहब के सामने तुम सज-संवरकर, मांग में सिंदूर डालकर रोओगी। इससे जज साहब का दिल पसीज जाएगा और वे मुन्ना को फांसी पर चढ़ाने का हुक्म नहीं देंगे—"

फांसी पर लटकाने का हुक्म ? फांसी पर लटकाने के हुक्म का मतलब ? आदमी का खून करने से ही तो जज साहब खूनी को फांसी पर चढ़ाने का हुक्म देते हैं। फिर क्या···

विशाखा इससे ज़्यादा कुछ सोच नहीं पा रही थी। सोचना चाहती तो रुलाई के वेग से उसका कलेजा ज़ोरों से धड़कने लगता। रुलाई का वेग जितना ही आ रहा था, दादी मां बगल से उतना ही कह रही थीं, "ज़रा सोने की कोशिश करो बहूरानी, ज़रा सोने की कोशिश करो—वरना तुम्हारा शरीर बिलकुल टूट जाएगा।"

तो भी नींद न आते देखकर दादी मां उसे पुचकारती हुई सांत्वना दे रही थी। कह रही थी, "तुम अब भी रो रही हो बहूरानी ? सोचकर देखो, कितने रुपये की तुम मालकिन हो गई हो।"

उस पर भी विशाखा की रुलाई थमते न देखकर दादी मां ने कहा था, "यह भी सोचकर देखो बहूरानी, तुम जिस घर की बहू बनकर आई हो वहां तुम्हें खाने-पहनने का कोई अभाव नहीं होगा। तुम्हें अपने हाथ से कोई काम नहीं करना पड़ेगा। जिन्दगी-भर हाथ पर हाथ धरे तुम हुक्म बजाती रहोगी और नौकर-चाकर, दाई-महरी तुम्हारे उस हुक्म की तामील कर अपने आपको धन्य समझेंगे। अच्छी तरह सोचो बहूरानी, ऐसा सुख कितनी बहुओं को नसीब होता है—"

याद है, दादी मां कान के पास रात-भर यही सब बात बोलती रही थी। दादी मां की कुछ बातें विशाखा के कान में प्रवेश कर रही थीं और कुछ प्रवेश नहीं कर पा रही थीं। उस समय उसे सिर्फ मां की और संदीप की याद आ रही थी। याद आ रही थी बेड़ापोता की और मनसातल्ला के दिनों की, बिजली की और रसेल स्ट्रीट के दिनों की, शैल की···और अपने चाचा की। ज्यादातर मां की तकलीफ की ही याद आ रही थी।

विशाखा ने एक दिन नहीं, कितने ही दिन देखा है कि उसकी मां छिपकर रो रही है और साड़ी के पल्लू से आंखें पोंछ रही हैं। कहती, "ओ मां, तुम रो क्यों रही हो ? तुम्हें क्या हुआ है ?"

मां झट से पल्लू से अपनी आंखें पोंछ लेती और झुंझलाकर कहती, "तू फिर मेरे सामने आई है मुंहजली, जा मेरे सामने से चली जा—"

अपने बचपन के दौरान विशाखा समझ नहीं पाती कि मां इतना क्यों रोती है, उसे कौन-सा कष्ट है। यह भी नहीं समझ पाती कि मां चाचीजी का इतना झगड़ा क्यों

होता है और चाचीजी मां को इतनी खरी-खोटी क्यों सुनाती है। जो मां झुंझलाकर विशाखा को 'मुहजली' कहकर गाली देती वही रात में बिस्तर पर बगल में लेटकर उसे कितना दुलारती थी! कहती, "तुझे बहुत बुरा-भला कहा है न? कुछ अन्यथा मत लेना। हमेशा मेरा दिमाग ठिकाने नहीं रहता, गरम हो जाता है इसी वजह से तुझे खरी-खोटी सुनाती हूं—"

यह कहकर फिर दुलारने-पुचकारने लगती। मां जितना बिगड़ती थी, प्यार भी उतना ही करती। मां जब बिगड़ती तो विशाखा रो देती और जब प्यार करने लगती तो उसका हृदय प्यार से पिघल भी जाता।

वैसे में विशाखा मां से लिपटकर कहती, "मां, तुम कितनी अच्छी हो! कितनी अच्छी हो तुम मा! विशाखा मां से जितना ही लिपट जाती मा भी उसे उतना ही अपने बाहुपाश मे जकड़ लेती। लेकिन दूसरे ही दिन मा दुबारा और ही तरह की हो जाती। रात की मां दिन के समय पूरे तौर पर बदल जाती।

बिडन स्ट्रीट की ससुराल मे लेटी-लेटी विशाखा उन्ही दिनो की स्मृतियो मे खो गई।

एकाएक उसे लगा, दादी मां सो गई हैं। धीमे स्वर मे नाक बजने की आवाज आ रही है। विशाखा को थोड़ी-सी तसल्ली महसूस हुई। उस समय उसने सोचा, वह अगर इस मकान से भाग जाए और भागकर दुबारा किसी तरह मां के पास बेतहाशा चली जाए तो कितना अच्छा रहे!

पूरा मकान स्तब्धता में डूबा हुआ जैसे गहरी नींद की बाहो मे लिपटा हुआ है। कही से किसी की हल्की-सी भी आवाज नहीं आ रही। आहिस्ता से वह उठकर अपने बिस्तर पर बैठ गई। सचमुच, तब दादी मा गहरी नींद में खोई हुई थी। कमरे के बाहर ही छज्जा है। इस मकान मे आने के समय ही उसने देखा था। यह तो उसका यहां पहली बार आना नही है। एक बार और सत्यनारायण पूजा के अवसर पर आई थी।

उसके बाद उसने सोचा, एक बार वह यदि तीसरी मंजिल से दूसरी मंजिल पर पहुंच जाए तो उसके लिए डर की कोई बात नहीं। उसके बाद ही पहली मंजिल है। वहां भी बेशक सब लोग नींद मे मशगूल होंगे। इतनी रात में कौन स्वेच्छा से जगा हुआ होगा? किसको इतनी गरज है! कौन उसकी तरह विपत्तियों से घिरा हुआ है? और उसकी शादी?

सचमुच क्या उसकी शादी हुई है इस घर के पोते से? 13 फागुन के बाद 14 फागुन है 'कालरात्रि'। उसके बाद 15 फागुन प्रीतिभोज और पुष्पशय्या की रात्रि। वह सब कुछ भी नहीं हुआ और न होगा ही। फिर?

तो क्या वह सदैव यह अभिशप्त जीवन लेकर ही जीवित रहेगी? जीवन-भर क्या वह माग मे भरे हुए इस टटका सिन्दूर और नई पहनी इन कतरियो का गौरव लेकर ही पतिविहीन ससुराल मे व्यर्थ जीवन जिएगी? रुपये के पहाड पर लेटकर वह क्या सदैव इसी तरह निद्राहीन रातें बिताएगी? ऐसा क्यों हुआ? इसी तरह की दुर्घटना क्यो घटित हुई?

यहा उसका एक तरह से अपने के नाम पर कोई नही है। यहा जो लोग हैं वे उसके स्वजन नही हैं। ये लोग सभी उसके लिए पराये हैं। जिससे उसकी शादी हुई वह भी उसका अपना कोई नहीं है। कॉलिज में मुलाकात होने के बाद वह आदमी उसे अपने साथ लेकर एक दिन एक होटल गया था। लेकिन आज की विशाखा उस दिन की विशाखा नहीं है। वह तो कोई दूसरी ही विशाखा थी।

आज घटनाचक्र के कारण वह आदमी उसका पति बन बैठा है, उसका स्व-

संचालक बन बैठा है। इस घटनाचक्र को वह कैसे स्वीकारेगी ? किस तरह वह इस मकान को अपनी ससुराल के तौर पर स्वीकार करेगी ?

इससे बेहतर है इस घर से भाग जाना ही। भाग जाने पर उसे पकड़ेगा ही कौन ?

उसके बाद वह किसी तरह बेड़ागोता पहुंच जाए तो वहां संदीप है। वह सीधे उसी से कहेगी कि विशाखा को बचा ले। कहेगी, "तुम मुझे बचा लो संदीप, चाहे जैसे हो, तुम मुझे बचा लो—"

संदीप क्या उतना-सा भी उपकार नहीं करेगा ?

हो सकता है संदीप कहे, "मैं तुम्हें कैसे बचाऊं ? तुम्हारी तो सौम्य बाबू से शादी हो चुकी है—"

विशाखा कहेगी, "लेकिन सिर्फ मांग में सिन्दूर भरने से ही क्या शादी हो जाती है ? न कोहबर न प्रीतिभोज न पुष्पशय्या कुछ भी नहीं। ऐसे में कहीं शादी होती है ?"

संदीप कहेगा, "वह बात तो पहले से मालूम हो चुकी थी। तो फिर कन्यादान की रस्म-अदायगी जब हो रही थी तो तब भी तुमने विरोध क्यों नहीं किया ?"

विशाखा कहेगी, "मैं तो औरत ठहरी। तुम भी तो वहीं थे फिर तुमने आपत्ति क्यों नहीं की ? तुमने मुझे जबरन छीन क्यों नहीं लिया ? तुम मर्द होकर जो न कर सके औरत होकर वह काम मैं करती ? तुम इतने बुजदिल हो! तुम में क्या तनिक भी अधिकार-बोध नहीं है ? तुम इतने का-पुरुष हो ?"

इस बात के प्रत्युत्तर में हो सकता है संदीप कहे, "मैं कैसे समझ सकता था कि बड़े आदमी के घर की बहू होने के बजाय तुम मुझ जैसे गरीब आदमी की पत्नी होकर ज्यादा खुश होओगी ?"

विशाखा इस बात के उत्तर में कहेगी, "यह क्या तुम्हारे मन की बात है ? तुमने अपने मन को टटोलकर देखा है ? इसी वजह से क्या मैंने तुम्हारी बीमारी के समय बगैर खाए-पिए नर्सिंग-होम में तीन दिन गुज़ारे थे ?"

संदीप शायद एक क्षण चुप रहेगा और उसके बाद कहेगा, "मैंने तुम्हें ठीक से पहचानने में गलती की थी विशाखा—"

"तो अब तो पहचान गए। अब मेरे लिए कुछ करो।"

संदीप शायद कहेगा, "अब तो तुम्हारी शादी हो चुकी है। अब मैं तुम्हारे लिए क्या कर सकता हूं ?"

विशाखा कहेगी, "मैं तो कह चुकी हूं कि वह शादी शादी नहीं थी। हिन्दू मत के अनुसार जिसे विवाह कहा जाता है वह मेरा पूरे तौर पर नहीं हुआ है। इसलिए मेरी यह शादी अधूरी है।"

संदीप शायद इस बात को सुनने के बाद कुछ क्षण तक सोचता रहेगा। उसके बाद कहेगा, "तुम क्या यही कहने के लिए ससुराल से भागकर चली आई हो ?"

"हां, मैं भाग आई हू।"

संदीप कहेगा, "बताओ, अब मैं इस संदर्भ में क्या कर सकता हूं ?"

विशाखा कहेगी, "इस संदर्भ में तुम कम से कम कोर्ट तो जा ही सकते हो। हां, कोर्ट जाकर मेरी ओर से तलाक का मामला दायर कर सकते हो।"

"डिवॉर्स का मामला ? तुम सौम्य बाबू से शादी रद्द करने का मामला दायर करना चाहती हो ?"

विशाखा तब तीसरी मंजिल से दूसरी मंजिल पर आ चुकी थी। बिलकुल अनजान-अनपहचान मकान। इसके पहले सिर्फ एक दिन के लिए सत्यनारायण पूजा के अवसर पर वह इस मकान में आई थी। याद है, उस दिन गिनती करके देखा था, यह

तीन-मंजिला मकान है। दूसरी बार 'कालरात्रि' के अवसर पर आई थी। उस समय चारों तरफ रोशनियां जल रही थीं। अभी अंधेरा है। सिर्फ आंगन में ही एक टिमटिमाती हुई रोशनी जल रही है। उस रोशनी में साफ तौर पर कुछ नहीं दिख रहा है। फिर भी वह सावधानी के साथ दो-मंजिले से एक-मंजिले के दालान मे आकर खड़ी हुई।

लेकिन अब वह किस तरफ जाएगी? किस तरफ जाने से उसे मकान के बाहर जाने का सदर रास्ता मिलेगा?

अंधेरे मे टटोलते हुए विशाखा ने एकबारगी दाहिनी ओर जाने की कोशिश की। उस तरफ दरवाजा नहीं, सिर्फ दीवार है। दीवार की वजह से रास्ता बन्द है। उसके बाद बाईं तरफ जितनी दूर जाया जा सकता है, वहां पहुचने पर विशाखा ने देखा, लोहे का एक फाटक है। फाटक के छिद्र से बाहर की सड़क की मद्धिम रोशनी अन्दर आकर सिमट गई है। लेकिन फाटक के बीच एक ताला लटका हुआ है। ताले की जाच करने के दौरान हल्की-सी आवाज हुई और फौरन कोई बोल उठा, "कौन है?"

याद है, संदीप उन दिनों जिस राह से गुज़र रहा था, वह कांटों से भरा हुआ था। जिन कामों को करने से उसे खुशी हासिल होती थी, घूम-फिरकर उन्हीं कामों में मशगूल रहना चाहता था। किसी को कविता पढने में आनन्द मिलता है, किसी को खेल-कूद मे, किसी को संगीत में और किसी को रुपया पैदा करने मे। लेकिन संदीप को?

अन्तिम काम के प्रति ही ज्यादातर लोगों का सम्मान होता है। दुनिया मे ज्यादातर लोगो को पैसा कमाने मे ही ज्यादा आनन्द मिलता है। लेकिन संदीप को?

क्यो ऐसा हुआ था, उसे मालूम नहीं। लेकिन संसार के सब कुछ से जुड़े रहने में ही उसे सबसे अच्छा लगता। खुद की खुशहाली को ही वह सबसे बड़ी चीज नहीं मानता। सोचता, दुनिया के तमाम लोग खुशहाल रहे, सभी अपनी-अपनी मंज़िल तक पहुचने में कामयाबी हासिल करें। इस तरह की इच्छा बहुतो को थी। बुद्ध, महावीर, हजरत मुहम्मद, गुरु नानक, चैतन्य देव, ईसामसीह—इनमे से किसको यह इच्छा नही थी? सभी चाहते थे, जितने भी जीव-जन्तु हैं, आनन्द से रहें। लेकिन…

उस दिन हाशिम ने कहा, "आपकी तबीयत नाशाद है क्या सर?"

संदीप ने कहा, "नहीं तो।"

"आपका चेहरा बुझा-बुझा जैसा दिख रहा है।"

संदीप ने कहा, "कई दिनो से ठीक से नींद नही आ रही है, हो सकता है इसी वजह से ऐसा दीख रहा हो।"

हाशिम ने कहा, "तो फिर एक बार डाक्टर से जाच क्यो नही करा लेते? नींद न आने का कारण क्या है? घर पर कोई बीमार है?"

संदीप ने उसकी बात का कोई जवाब नही दिया। हाशिम समझ नही सकेगा। संदीप यदि नींद न आने की बात साफ-साफ खुले तौर पर बताए तो भी हाशिम समझ नही सकेगा। हाशिम ही क्या, दुनिया का कोई भी आदमी समझ नही सकेगा। अन्ततः संदीप ने कहा, "जानते हो हाशिम, पहले जब नौकरी नही मिली थी, उस समय सोचता था, कोई नौकरी मिलते ही मैं सुखी हो जाऊंगा। उसके बाद नौकरी मिली, फिर भी मैं सुखी नही हो सका। एक दिन नौकरी में प्रमोशन मिला, फिर भी मुझे सुख हासिल नहीं हो सका। अब लगता है, तनख्वाह मे और बढ़ोत्तरी हो जाएगी तो शायद मुझे सुख हासिल होगा। लेकिन मुझे शक है कि इससे मैं सुखी हो जाऊंगा।"

"आपको ऐसा क्यों लगता है?"

संदीप ने कहा, "इसलिए लगता है कि दरअसल इस दुनिया में 'सुख' नामक कोई वस्तु नहीं है। 'सुख' शब्द सिर्फ डिक्शनरी में ही रहने लायक चीज़ है।"

हाशिम साहब को संदीप की बात का कोई अर्थ समझ में नहीं आया। उसने और कुछ पूछा भी नहीं। संदीप ने महसूस किया कि हाशिम साहब को कुछ भी समझ में नहीं आया। इसमें हाशिम का कोई दोष नहीं। दुनिया का कोई आदमी इस बात को समझ नहीं पाएगा। खामख्वाह हाशिम से बातचीत करने से कोई लाभ नहीं होगा।

अभी दफ्तर का काम ज़ोर-शोर से शुरू हो गया है। संदीप ने कहा, "मेरी बात का मतलब तुम्हारी समझ में आया हाशिम ?"

हाशिम साधारण गृहस्थ आदमी है। उसने बेझिझक कहा, "नहीं—"

संदीप ने कहा, "इसमें तुम्हारा कोई दोष नहीं हाशिम। केवल तुम नहीं, कोई भी मेरी बात समझ नहीं पाएगा। तुम्हारा बहुत सारा काम पड़ा हुआ है, जाकर अपना काम करो। बाद में समय मिलने पर बताऊंगा कि 'सुख' शब्द क्यों सिर्फ डिक्शनरी में ही रहने लायक चीज़ है—"

उसके बाद काम के दबाव से संदीप को और कुछ देखने या सोचने का वक्त नहीं मिला।

दो बजे के बाद काम का दबाद कुछ हलका हुआ।

अचानक चपरासी ने आकर कहा, "हुजूर, एक बूढ़े सज्जन आपसे मिलना चाहते हैं। बुला लाऊं ?"

बूढ़े सज्जन ! कौन हैं ये बूढ़े सज्जन ? जो लोग काम के सिलसिले में बैंक आते हैं, उनसे मिलने-जुलने का काम हाशिम ही करता है। संदीप ने कहा, "हाशिम साहब को बुला लाओ—"

हाशिम साहब जब कमरे में दाखिल हुए तो संदीप ने पूछा, "मुझसे मिलने कौन आया है हाशिम ? हम लोगों का कोई क्लाइंट ?"

हाशिम ने कहा, "सर, उनका नाम है परमेश मल्लिक।"

यह नाम सुनते ही संदीप कुर्सी छोड़ उठकर खड़ा हो गया। पूछा, "वे कहां हैं ? तुम्हारी मेज़ पर ?"

उसके बाद संदीप खड़ा नहीं रहा। चेम्बर से निकल सीधे बाहर आया। मैनेजर साहब पर नजर जाते ही सभी ने गपशप करना बन्द कर दिया। दूर से मल्लिकजी पर नज़र पड़ते ही संदीप ने आगे बढ़कर कहा, "मल्लिक चाचा आप ! क्या हालचाल है ? आइए-आइए, मेरे कमरे में आइए। हालचाल ठीक है न ?"

मल्लिक चाचा ने कहा, "बहुत ही बुरी खबर है संदीप, बहुत ही बुरी—"

संदीप मल्लिक चाचा की बात सुनकर चिहुंक उठा और बोला, "बुरी खबर का मतलब ? विशाखा को कुछ हुआ क्या ?"

मल्लिक चाचा बोले, "हां, लेकिन अभी तो तुम अपने काम के कारण व्यस्त हो। बहुत ही जरूरी काम न होता तो तुम्हारे दफ्तर में आता ?"

"बताइए न, विशाखा को क्या हुआ है ? विशाखा अच्छी है न ?"

मल्लिकजी ने कहा, "हां, अच्छी है। यही बात कहने आज तुम्हारे दफ्तर में आया हूं। मगर तुम तो अभी बहुत व्यस्त हो। तुम एक बार हमारे घर पर आने का वक्त निकाल सकते हो ? आज शाम को ?"

संदीप ने कहा, "मैं उस दिन तो गया ही था। विशाखा एक तरह से मुझे खदेड़कर भगा ही दिया था—"

मल्लिक चाचा बोले, "उस दिन तुम्हें सारी बातें बताई नहीं गई थीं। और कुछ

भी कहना था। उस दिन विशाखा ने तुम्हें जो खदेड़कर भगा दिया, उससे दादी मां के मन मे बहुत चोट पहुंची थी।"

"यह बात है?"

"हां, तुम्हें बताया नही गया था। विशाखा ने पहले ही दिन घर में आने के बाद भाग जाने की कोशिश की थी—"

संदीप ने कहा, "यह क्या! भागकर कहां जा रही थी?"

मल्लिक चाचा ने कहा, "कौन जाने! उस समय रात का आखिरी पहर था और सब लोग कुछ देर के लिए नींद में खो गए थे। और उसी अन्तराल मे विशाखा बिस्तर छोड़ एकदम से सड़क की तरफ जा रही थी—"

"उसके बाद?"

"उसके बाद और क्या? भाग्यवश गिरिधारी ने फाटक पर ताला जड़ दिया था, इसलिए बात फैल गई—"

यह कहकर मल्लिक चाचा उठकर खड़े हो गए और बोले, "नही, अब तुम्हारा समय बर्बाद नही करूंगा। तुम अपना काम करो, मैं चलता हूं। शाम को तुम हमारे घर आओगे तो सारी बातो का पता चल जाएगा।"

संदीप उस समय विशाखा का हालचाल जानने को बेचैन हो उठा था। बोला, "नही-नही, आप बैठिए। मुझे तो हमेशा काम रहेगा। आप बताइए कि उसके बाद क्या हुआ? विशाखा पकड़ ली गई?"

"हां।"

"किसने उसे पकड़ा?" संदीप ने पूछा।

"वह सब बात तुम्हें बताऊंगा। अगर मुमकिन हो तो तुम दफ्तर की छुट्टी के बाद एक बार हमारे घर पर आना।"

संदीप ने पूछा, "अब विशाखा भागने की कोशिश नही करती है?"

मल्लिक चाचा ने कहा, "अब कैसे भागेगी?"

"क्यों?"

मल्लिक चाचा ने कहा, "अब भी भागने की कोशिश करती है। लेकिन दादी मा ने गिरिधारी को दिन-भर सदर गेट का ताला बन्द रखने को कहा है। अगर कोई घर के बाहर जाना चाहता है या अन्दर आना चाहता है तो गिरिधारी ताला खोल देता है।··· तुम आज आ रहे हो?"

संदीप ने कहा, "मेरी बात विशाखा मानेगी?"

"विशाखा तुम्हारी बात नही मानेगी, यह जानता हू। फिर भी तुम्हें बुला रहा हूं—"

"क्यों?"

"दादी मा तुमसे बातें करेंगी।" मल्लिकजी ने कहा।

"दादी मा? दादी मा मुझसे क्या बातें करेंगी?"

"बहुत सारी बातें। बहूरानी के सम्बन्ध में तुमसे सलाह-मशविरा करेंगी।"

"मुझसे सलाह-मशविरा करेंगी दादी मा? किस चीज की बाबत सलाह-मशविरा?"

मल्लिक चाचा बोले, "यह तुम उनकी जबान से ही सुन लेना।"

संदीप ने कहा, "मेरी समझ मे नही आ रहा है कि किस मसले पर सलाह-मशविरा करेंगी!"

"और किस बात की, बहूरानी के सबंध में ही सलाह-मशविरा करेंगी।"

संदीप ने कहा, "मैं तो उन्हीं की वात पर उस दिन विशाखा के पास गया था।
वे तो देख चुकी हैं कि विशाखा ने मुझे खदेड़कर भगा दिया। विशाखा ने मेरी एक
ीं सुनी। फिर भी मुझे क्यों बुला भेजा है?"

मल्लिक चाचा वोले, "वहूरानी के चलते वे परेशान हो गई हैं। क्या करें, उनकी
में नहीं आ रहा। दादी मां की उम्र काफी ढल चुकी है। वे विना सोए अव कितने
तक रहेंगी?"

संदीप ने पूछा, "दादी मां को अनिद्रा रोग हो गया है क्या?"

मल्लिक चाचा वोले, "अनिद्रा रोग नहीं होगा भला? उनकी पौत्रवधू सिर्फ
ाने की ही कोशिश करती रहे तो वे रात में कैसे सो सकती हैं? पलकें थोड़ी-सी
कते ही उन्हें लगने लगता है पौत्रवधू घर से भाग गई।"

संदीप कुछ नहीं वोला। क्या वोले, उसकी समझ में नहीं आया। मल्लिक चाचा
उसके वाद कहा, "जानते हो, दादी मां ने एक दिन सोचा, वहूरानी तो गरीव घर की
लड़की है। गहने-जेवरात मिलने से हो सकता है खुश हो जाए। इसलिए घर के सुनार को
गहने-जेवरात वनवाने के लिए बुला भेजा।"

"उसके वाद? उसके वाद क्या हुआ? गहने-जेवरात वनवाए गए?"

मल्लिकजी ने कहा, "हां, लगभग पचास हज़ार रुपये खर्च कर गहने वनवाए
गए। सो भी क्या एक ही गहना! मैं गृहस्थ आदमी नहीं हूं कि मुझे उतने गहनों के नाम
मालूम हों। गले का हार, वाला, कंगन—कितनी ही तरह के गहने। सारे गहने वनवाए
गए पौत्रवधू के लिए..."

"उसके वाद?"

मल्लिक चाचा ने कहा, "सो वाद में वताऊंगा। आज शाम को ज़रूर आना..."
यह कहकर वे चले जा रहे थे, लेकिन ज़रा रुक गए। जैसे उन्हें किसी वात की याद आ
गई हो, "विशाखा की मां वीमार थीं, अव वे कैसी हैं?"

संदीप का चेहरा अव गंभीर हो गया। वोला, "वह एक लम्वी दास्तान है।"

"डाक्टरों का कहना क्या है?"

"डाक्टर कुछ वता नहीं रहे हैं। वे अव भी नर्सिंग होम में ही हैं। पानी की तरह
सिर्फ पैसे ही खर्च हो रहे हैं।"

मल्लिक चाचा ने कहा, "शादी के दिन तुम्हें तो पचास हज़ार रुपया दिया था।
सारी रकम खर्च हो चुकी है या कुछ वची हुई है?"

संदीप ने कहा, "खर्च तो हो ही रही है। कितनी खर्च हो चुकी है और कितनी
मेरे पास पड़ी हुई है, मालूम नहीं।"

"तुम्हें मालूम नहीं है तो किसको मालूम हो सकता है?"

संदीप ने कहा, "मेरी मां को मालूम होगा। मैंने पूरा रुपया मां के हवाले
दिया था। जव रुपये की ज़रूरत पड़ती है, मां से मांग लिया करता हूं।"

मल्लिक चाचा वोले, "सो रुपया चाहे वचा हुआ हो या न हो, तुम जितनी
रकम चाहोगे, दादी मां देंगी।" संदीप चुप्पी ओढ़े रहा। मल्लिक चाचा ने इसके
कहा, "तुम दफ्तर वन्द होने के वाद आज हमारे घर पर आ रहे हो न?"

संदीप ने कहा, "मैं पहले जाऊंगा नर्सिंग होम, मौसीजी को देखने के लिए।
वाद वहां से आप लोगों के घर जाऊंगा।"

उसके वाद एक क्षण चुप रहने के वाद फिर वोला, "लेकिन मेरी समझ
आ रहा है कि दादी मां मुझसे क्यों मिलना चाहती हैं। कारण क्या है?"

मल्लिकजी ने कहा, "तुम्हें तो वता ही चुका हूं, वहूरानी के कारण, विश

कारण।"

सदीप ने कहा, "आपने कभी मेरे लिए काफी तकलीफ उठाई है, बहुत कोशिशें की हैं, आप उन दिनों यह सब न करते तो मैं भूखों मर जाता। मेरी मा को हमेशा दूसरे के घर में रसोई पकाने का काम करके ही जीवन बिताना पड़ता। आप जब जो कुछ करने कहेंगे, मैं वही करूंगा।"

"फिर मैं चलता हूं। तुम जरूर आओगे तो?"

सदीप ने कहा, "जरूर आऊंगा, अच्छा, प्रणाम—"

आदमी कितने अरमान लेकर गृहस्थी बसाता है! सुख की साध, रुपए पैसे की साध, औरत अमरता की साध लिए। आदमी की इच्छा-अभिलाषा का कोई अंत है? आदमी उम्मीद करता है, एक दिन यह घर-संसार मुझे आदर देगा, प्यार देगा, श्रद्धा देगा—मैं जो कुछ चाहूंगा सब देगा और मैं उनके साथ सुख से जीवन जिऊंगा।

लेकिन ऐसा क्या सचमुच ही होता है?

चूंकि नहीं हो पाता इसीलिए आदमी अपने ही हाथ से बुने जाल में स्वयं फसकर उससे बाहर निकलने को तड़पता रहता है। ऐसे में आदमी मुक्ति की आशा में मंदिर में देवी-देवता के समीप जाकर प्रार्थना करता है—हे प्रभु, मुझे मुक्ति दो, मुझे थोड़ी सी शांति दो—

और मंदिर का देवता?

देवता तो चिरकाल से मूक है। आदमी के हाथ से गढ़ा हुआ पत्थर या मिट्टी का [illegible]

[illegible]

[illegible]

स्नान कर देवता का आशीर्वाद पाने की चेष्टा करता है।

लेकिन उस पर भी जब कोई फल प्राप्त नहीं होता है तो अपने द्वारा बनाए गए जाल में ही उलझकर भव-लीला समाप्त करने को उसे बाध्य होना पड़ता है। इन कष्टों [illegible] का जन्म होता है। वे ही कह जाते हैं कि शांति या [illegible] से कोई लाभ नहीं होगा। स्वार्थ [illegible] से कामना-वासना को परे हटाने से ही आदमी को मुक्ति मिलती है।

सुनने में यह बहुत ही आसान बात मालूम होती है। लेकिन इस आसान वस्तु की प्राप्त करने के लिए एक राजकुमार को राज-पाट, स्त्री-पुत्र का परित्याग कर रास्ते की धूल पर आकर खड़ा होना पड़ा था। यह ढाई हजार वर्ष पहले की बात है।

लेकिन उस ढाई हजार वर्ष के बाद भी कोई उस स्वार्थ का परित्याग कर सकता है?

सिर्फ दादी मा को दोष देने से लाभ ही क्या, खुद सदीप भी ऐसा कर सका है? संदीप के जाने-पहचाने लोगों के में से कोई ऐसा कर सका है। संदीप आम लोगों के स्तर से ऊपर पहुंचा हुआ आदमी नहीं है। उस 13 फागुन की तिथि में संपन्न विशाखा की शादी के दूसरे दिन से ही अपने जीवन की परिक्रमा करते रहने के बावजूद वह किसी निर्णय पर नहीं पहुच पा रहा था।

पहले दिन से ही दादी मां की दुश्चिन्ता का कोई अन्त नहीं था। नई बहू उस समय कुल मिलाकर घर आई थी। वे पौत्रवधू को अपनी बगल में लेकर सोई हुई थीं।

यों भी उन्हें किसी रात नींद नहीं आती थी। उस रात भी उन्हें नींद नहीं आई थी। बहुत देर तक बहू को अपनी बगल में लिटाकर सांत्वना देती रहीं। आखिर में कब निगोड़ी आंखों में नींद आ गई, कौन जाने !

अचानक बिन्दु के द्वारा पुकारे जाने पर उनकी तंद्रा दूर हो गई, "दादी मां, ओ दादी मां—"

अचानक बिन्दु उन्हें पुकार क्यों रही है ? आंखें बगल की तरफ गईं। अरे बहूरानी कहां है ? बहूरानी कहां गई ? यहीं तो बहूरानी अब तक उन्हीं के पास लेटी हुई थी।

बिन्दु तब भी पुकार रही थी, "दादी मां, भारी मुसीबत आन पड़ी है, उठिए, उठिए—"

हड़बड़ाकर वे बिस्तर से उठकर खड़ी हो गईं। बोलीं, "क्या हुआ है री ? मेरी बहूरानी कहां गई ?"

बिन्दु बोली, "यहीं तो हैं दादी मां, यहीं तो—"

दादी मां ने देखा—बिन्दु बहूरानी का हाथ थामे उन्हीं के सामने खड़ी है। बिन्दु बोली, "बहूरानी को पकड़कर ले आई हूं दादी मां, यह रही आपकी बहूरानी—"

दादी मां ने कहा, "पकड़कर ले आई है मतलब ? बहूरानी कहां थी ?"

बिन्दु ने कहा, "नीचे—"

"नीचे का मतलब ?"

"नीचे का मतलब एक-मंजिले में। गिरिधारी को पता चला तो रोककर रख लिया।"

दादी मां अवाक् हो गईं। विशाखा की ओर निहारकर बोली, "बिंदु जो कुछ कह रही है, सच है ? तुम भाग रही थीं ?"

विशाखा उस समय खड़ी-खड़ी आंसू बहा रही थी।

"बताओ बहूरानी, तुम भाग रही थीं ? बोलो, मेरी बात का उत्तर दो। तुम सच-मुच ही भाग रही थीं ?"

विशाखा ने रोते-रोते सिर झुका लिया। उसके बाद बोली, "हां—"

दादी मां ने विशाखा को अपनी बांहों में भर सीने से जकड़ लिया। उसके बाद अपने पलंग पर बिठाकर उससे कहा, "क्यों बहूरानी ? तुम्हें इस घर में रहने में तकलीफ़ का अहसास हो रहा है ?"

"हां।" विशाखा ने कहा।

"क्यों, तुम्हें किस चीज की तकलीफ हो रही है ?"

विशाखा ने कहा, "मुझे मालूम नहीं।"

दादी मां बोलीं, "तुम रोओगी तो मेरे सौम्य का अमंगल होगा बहूरानी। उसके भले के लिए ही तो तुम्हें इस घर की बहू बनाकर ले आई हूं। सब कुछ जानने-सुनने के बावजूद फिर भी तुम रो रही हो ?"

जरा रुककर दादी मां फिर कहने लगीं, "जानती हो, कल मुन्ना के मुकदमे की तारीख है, उस समय तुम्हें जज साहब के सामने जाकर बैठना है। तुम्हें मैं सजा-धजाकर ले जाऊंगी। ऐसे में यदि तुम्हारी तबीयत खराब हो जाए तो क्या होगा ? बताओ, क्या होगा ?

तो भी विशाखा के मुंह से कोई शब्द नहीं निकला।

दादी मां बोलीं, "यह जो इतनी बड़ी इमारत देख रही हो, बगल की इस स्टील की अलमारी में जो लाखों रुपए हैं, यह सब तुम्हारा ही है। मैं अब कितने दिनों की

मेहमान हूं—ज्यादा से ज्यादा एक साल या दो साल की। उसके बाद यह सब कुछ तुम्हारा ही हो जाएगा। एक बार सोचकर देखो, उस समय तुम कितने सुख की जिन्दगी बसर करोगी।"

तब रात खत्म होने-होने पर थी। दादी मा ने कहा, "लो, अब तुम सो रहो बहूरानी। कोशिश करो ताकि थोड़ी-सी नीद आ जाए। मैं पंखे को जोर से चला देती हूं, तुम जरा सोने की कोशिश करो।"

यह कहकर दादी मा ने विशाखा को पकड़कर बिस्तर पर लिटा दिया, और उठकर पखे के रेगुलेटर को और आगे बढा दिया।

बोली, "लो, सो रहो, सोने की कोशिश करो। हम दरवाजा बन्द कर बाहर जा रही हैं। उसके बाद सवेरा होने पर तुम्हें जगा दूगी। तुम कुछ मत सोचना—"

यह कहकर दादी मा कमरे का दरवाजा भेड़कर बाहर चली गईं। पूरा दिन दादी मां का परेशानियो के बीच गुजरा है। कहा बेडापोता, कहा पुरोहित, कहा नाई, कहा पुलिसकर्मियो का पहरा—हर ओर ध्यान रखे रहने के कारण उनके बुढापे के शरीर पर काफी दबाव पड़ा है। उसके बाद मे जरा सोकर वे आराम करेंगी, इसका भी उपाय नही।

विशाखा को अकेली रख वे सोने तो अवश्य ही गईं पर नीद नही आई। आदमी की नीद क्या बाजार का आलू-परवल है कि पैसा खरचने से ही खरीद ली जा सकती है? बहुत देर तक कोशिश करने पर भी जब उन्हे नींद नही आई तो उठकर तैयार हो गईं।

सवेरे दस बजते न बजते हाईकोर्ट जाकर हाजिर होना है। अभी उनके सामने कितने काम हैं! उन्होने विशाखा के कमरे में जाकर देखा, बहूरानी उस समय भी जगी हुई ही थी। जगी हुई हालत मे रो रही है। रोते रहने के कारण उसकी आखें सूज गई हैं। बोली, "यह क्या बहूरानी, तुम सोई नही? अब भी रो रही हो! लो, तैयार हो जाओ, सवेरे दस बजते न बजते कोर्ट में हाजिर होना है। अब देर मत करो—"

यह कहकर चली जा रही थी लेकिन इस पर भी बहूरानी को ज्यो का त्यों स्थिति मे पाकर बोली, "क्या हुआ? मेरी बातें तुम्हारे कान में नहीं जा रही हैं? उठो, तैयार हो जाओ—"

उस पर भी उसे हिलते-डुलते न देखकर बिन्दु को पुकारा। बिन्दु तैयार ही थी। उसी से कहा कि विशाखा को तैयार कर दे। विशाखा तब भी लगातार रोए जा रही थी।

दादी मा ने फिर तकाजा किया, "क्यों, उठ क्यों नही रही हो?"

आखिर में विशाखा उठकर खडी हुई। दादी मा ने बिन्दु से कहा, "बहूरानी को नई बनारसी साडी पहना देना। बनारसी ब्लाउज अलमारी मे निकाल लेना। जाओ, बहूरानी, जाओ—"

विशाखा ने अब कोई विरोध नही किया। बिन्दु के साथ कमरे के बाहर चली गई।

तभी मुक्तिपद ने आकर अपनी मा से कहा, "तुम्हारी बहूरानी तैयार हैं न?"

दादी मा बोली, "हा, तू तैयार है?"

मुक्तिपद ने कहा, "मैं तो तैयार हू, मगर पिकनिक को किसके पास रखकर जाऊं? उसे अकेली छोडकर जाने मे डर लगता है—"

दादी मा बोली, "बात तो सही है, लेकिन इसके लिए चिन्ता मत कर। मेरी बिन्दु और सुधा तो यही रहेंगी, वे लोग उस पर नजर रखेंगी।"

आखिर मे सब लोग घर मे ठीक समय पर ही निकले। आज अग्नि-परीक्षा है।

सिर्फ सौम्यपद के जीवन की ही अग्नि-परीक्षा नहीं है, दादी मां, मुक्तिपद और विशाखा की भी अग्नि-परीक्षा है।

लेकिन सबसे अधिक व्याकुलता दादी मां को ही है। उनकी इतने दिनों की सारी साध, आशंका और आकांक्षा की पूर्ति होने जा रही है। अभी वे जरा भी चूक जाएं तो उनका पूरा विनाश हो जाएगा। ऐसे में दादी मां के लिए आत्महत्या के अतिरिक्त और कोई विकल्प नहीं रह जाएगा।

उस समय भी विशाखा अनवरत रोए जा रही थी। विवाह के लग्न से उसने जो रोना शुरू किया है वह रुलाई अब भी थमने का नाम नहीं ले रही है। खासकर जब भागने की कोशिश के दौरान गिरिधारी ने उसे पकड़ लिया था, उस समय उसकी रुलाई जैसे हजार गुना बढ़ गई थी।

मुक्तिपद ने दादी मां को ढाढ़स दिया था। कहा था, "अच्छा ही हुआ मां, बहुत ही अच्छा! बहूरानी जितना ही रोएगी, जज साहब का हृदय उतना ही द्रवित होगा। वे सौम्य को फांसी की सजा नहीं देंगे।"

सब कुछ ईश्वर की मर्जी पर निर्भर करता है। दादी मां जब तक जगी रहतीं, ईश्वर को पुकारतीं, गुरु मंत्र का जाप करतीं।

जज साहब के इजलास में एडवोकेट दासगुप्त जब सौम्यपद के पक्ष में दलील पेश करते हुए बयान दे रहे थे उस समय जज साहब कभी-कभी एकाध सेकण्ड के लिए विशाखा के रुआंसे चेहरे की तरफ निहार लेते थे। विशाखा की बनारसी साड़ी और मांग में लगे ताज़े सिंदूर की ओर भी शायद उनकी आंखें गई थीं। उसके बाद जब बयान खत्म हो गया तो जज साहब अपने कमरे में चले गए और पुलिसकर्मी सौम्य को कैदी के कठघरे से बाहर लेकर चले गए।

दादी मां अपनी पौत्रवधू को लेकर दासगुप्त के चेम्बर में गईं। दादी मां को देखकर मिस्टर दासगुप्त मुस्कराए। बोले, "अब खुश हैं न? मैंने आपसे क्या कहा था? आप व्यर्थ ही इतना रो रही थीं।"

दादी मां ने कहा, "लेकिन अभी तक फैसला नहीं सुनाया गया है।"

मिस्टर दासगुप्त बोले, "फैसला क्या सुनाया जाएगा, मैं बता दे सकता हूं। मैं जान-सुनकर ही इस जज के इजलास में ले आया हूं। उनके लड़के की भी शादी एक महीने पहले हुई है। वे बार-बार आपकी बहूरानी की मांग के सिंदूर की ओर गौर से देख रहे थे। आपने ध्यान नहीं दिया?"

दादी मां ने पूछा. "कब फैसला सुनाया जाएगा?"

मिस्टर दासगुप्त बोले, "एक सप्ताह में सुना दिया जाएगा। मैं आपके पास खबर भेज दूंगा—"

दादी मां बोलीं, "लेकिन मेरी बहूरानी शादी होने के वक्त से ही रो रही हैं। आप इसे जरा समझाएं-बुझाएं कि रोए नहीं।"

मिस्टर दासगुप्त ने विशाखा की ओर ताकते हुए कहा, "तुम इतना रो क्यों रही हो बहूरानी? जज साहब के सामने रोकर अच्छा ही किया है। अब क्यों रो रही हो? अब हंसो। जी खोलकर हंसो। तुम्हारी मांग का सिंदूर अक्षय है, कोई तुम्हारा कुछ बिगाड़ नहीं सकेगा। तुम गरीब घर की अनाथ लड़की हो, मुझे यह मालूम है। अब कितने बड़े आदमी के घर की बहू बन गई हो, इस पर सोचो-विचारो। अब आंखें पोंछ लो। सुना, कल रात भर तुम सोई नहीं, सिर्फ रोती ही रहीं। इसके अलावा घर से भाग जाने की कोशिश की। लेकिन अब तो तुम निश्चिन्त हो गईं, आज रात भर चैन से सोओ जाओ—"

इसके बाद सब लोग बिडन स्ट्रीट के मकान में लौट आए। घर आने पर भी विशाखा की रुलाई थमी नहीं।

अब बहुत दिनों से चली आ रही दुश्चिन्ता का अंत हो गया है। दादी मा ने विशाखा से कहा, "तुम अब भी रो रही हो? अपनी आखों से सब कुछ देखने के बावजूद तुम्हारी रुलाई नहीं थमी? मिस्टर दासगुप्त ने तुम्हें इतना समझाया-बुझाया, फिर भी तुम रो रही हो? अब बहूरानी तुम्हें किस बात की तकलीफ है? क्यों इतना रो रही हो। किसके बारे में सोचकर अपना मन दुखित कर रही हो? अगर कहो तो मैं उसे बुलवा लूं—बताओ न, तुम्हें क्या चाहिए?"

उधर मुक्तिपद अपनी लड़की को लेकर इन्दौर जाने को तैयार हैं। उनके हवाई जहाज रवाना होने का वक्त करीब आ गया है।

"मां, तो फिर हम चलते हैं।"

दादी मां अब भी विशाखा के कारण व्यस्त हैं। बोलीं, "देखा न, मेरे दिन कितनी अशांति के साथ गुजर रहे हैं!"

मुक्तिपद ने कहा, "बहूरानी अब भी रो रही है? रुलाई थम नहीं रही है?"

"नहीं, लगातार रोए जा रही है। बहूरानी के कारण क्या किया जाए, बताओ तो?"

मुक्तिपद ने कहा, "मैं क्या कहूं? तुम देख ही चुकी कि जायदाद के कारण मुझे कितना कष्ट झेलना पड़ रहा है। उस पर यह किचकिच। मैं अपनी फैक्टरी की देखरेख करूं या फैमिली की? इस दुनिया में जिन्दा रहना ही शायद पाप है।"

दादी मा ने कहा, "तू जा, चला जा। मैं अपनी बदकिस्मती से परेशान हूं। इस पर तुम्हारे झमेलों के बारे में सोच नहीं सकती। तू चला जा—जाकर चिट्ठी भेजना—"

मुक्तिपद के चले जाने के बाद वे दुबारा विशाखा की ओर मुखातिब हुईं। दादी मां ने कहा, "तुम्हें भूख लगी है बहूरानी? कुछ खाओगी?"

विशाखा अब और ज़ोर से रो दी। इस पर दादी मा ने कहा, "अच्छा ठीक है, अब मत रोओ। लेकिन तुम रो क्यों रही हो, यही बताओ? रुपया लोगी? गहने लोगी?"

लेकिन विशाखा ने कोई जवाब नहीं दिया। जवाब देने के बदले और ज़ोर-ज़ोर से रोने लगी।

दादी मां ने कहा, "नहीं-नहीं, अब तुम्हें रोना नहीं है। आओ, मेरे साथ—"

यह कहकर दादी मा ने विशाखा का हाथ खींचा। बोलीं, "आओ बहूरानी, मेरे साथ आओ—"

दादी मां की बात सुनकर विशाखा को शुरू में आश्चर्य हुआ। इसके बाद दादी मां के साथ-साथ जाने लगी।

दादी मां विशाखा के कमरे में दाखिल हुईं। इसके बाद कमरे के दरवाज़े की सिटकनी बन्द करके बोलीं "आओ बहूरानी, तुम्हें दिखाती हूं—"

यह कहकर कमरे की स्टील की अलमारी के पल्लों को खोला। खोलते ही विशाखा ने देखा, अलमारी के दो खाने केवल रुपयों से भरे हुए हैं। नोटों की गड्डियां तह-दर-तह रखी हुई हैं। कितने रुपये हैं, इसका अन्दाज़ा लगाना मुश्किल है। लेकिन देखने से ही पता लग जाता है कि कई लाख रुपये होंगे या हो सकता है कि इससे भी ज्यादा रकम हो। एक ही जगह विशाखा ने इतने सारे रुपये कभी कहीं नहीं देखे थे। इन लोगों के पास इतने रुपये हैं! इतने सारे रुपये इन लोगों के पास कहां से आए। किसने इतने रुपये कमाए

हैं। कितने पुरखों का यह जमा किया हुआ रुपया है, या सिर्फ एक ही पुरखे के द्वारा कमाया गया है ?

"देखा बहूरानी ? कितने रुपये हैं ? इतने सारे रुपये तुमने कभी एक साथ देखे हैं ?"

बहूरानी के चेहरे की ओर ताकने पर दादी मां को लगा, इस दवा ने अपना असर दिखाया है। सोचा, अब बहूरानी की रुलाई थम जाएगी। बोलीं, "बताओ बहूरानी, इतने सारे रुपये तुमने कहीं देखे हैं ?" बहूरानी की ओर से इसका भी कोई जवाब नहीं मिला। अब दादी मां ने अपने हाथ की आखिरी ताश की पत्ती सामने फेंक दी। बोलीं, "यह सब रुपया किसका है, बताओ तो बहूरानी ?"

विशाखा ने तो भी कोई उत्तर नहीं दिया। दुबारा बोलीं, "बताओ, इतने सारे रुपये किसके हैं ?"

विशाखा की जबान से अब शब्द बाहर निकले। बोली, "आपके—"

दादी मां ने कहा, "नहीं, मेरे नहीं, तुम्हारे। सारे रुपये तुम्हारे हैं।"

उसके बाद बोलीं, "और दिखाऊं ?"

अब एक और चेम्बर खोला। आलमारी के अन्दर ही आलमारी जैसी एक जगह। उसे खोलते ही विशाखा का चेहरा जैसे झुलस गया। बोलीं, "देख रही हो, कितने गहने-जेवरात हैं। देखो-देखो—"

दादी मां विशाखा के चेहरे और आखों को गौर से देखने लगीं। इस ख्याल से कि उसकी आंखों और चेहरे पर कोई प्रतिक्रिया जगती है या नहीं। लेकिन नहीं, वहां प्रतिक्रिया का कोई चिट्ठा नहीं है।

दादी मां ने दुबारा पूछा, "यह सब किसका है ?"

विशाखा ने उसी स्वर में कहा, "आपका—"

दादी मां ने कहा, "नहीं, मेरा नहीं, सब तुम्हारा है। मैं विधवा औरत हूं, यह सब लेकर क्या करूंगी ? इसके अलावा मैं बूढ़ी हो गई हूं, और कितने दिनों तक जिन्दा ही रहूंगी ? यह सब जो कुछ तुमने देखा, तुम्हारा है। तुम्हीं इन सब चीजों की मालकिन हो।"

लेकिन इस पर भी बहूरानी के चेहरे पर कोई प्रतिक्रिया नहीं जगी। हां, बहूरानी की रुलाई कुछ थम अवश्य ही गई है। आंखों के आंसू सूख गए हैं, ऐसा लगा।

उसके बाद दादी मां ने एक और तुरुप चाल चली। अपनी बिना किनारी की साड़ी से चाबी खोलकर विशाखा के आंचल में बांध दी। बोलीं, "चाबी तुम्हारे आंचल में ही बंधी रही, सावधानी से रहो, कहीं खो न जाए—"

विशाखा ने कोई बाधा नहीं दी, चाबी उसके आंचल में ही बंधी रही। उसके बाद तीसरा पहर हुआ, फिर शाम उतर आई। मुक्तिपद पिकनिक को अपने साथ ले तब एयर-पोर्ट जा चुके थे। विशाखा के कमरे में आकर दादी मां ने देखा, विशाखा ने बिस्तर पर लेटकर फिर से रोना शुरू कर दिया है।

दादी मां बहूरानी के पास जाकर बैठ गई। बोलीं, "तुमने फिर रोना शुरू कर दिया बहूरानी ? अभी-अभी तो मैं तुम्हें समझा-बुझाकर शान्त कर गई थी। अब फिर क्या हुआ ?"

विशाखा ने इस बात का कोई उत्तर नहीं दिया। जिस तरह रो रही थी, वैसे ही रोती रही। दादी मां भारी मुश्किल में फंस गई। यही तो कुछ देर पहले आलमारी के अन्दर के लाखों रुपये दिखाए थे। गहने का बक्सा भी दिखाया था। अपने आंचल की चाबी भी बहूरानी के आंचल में बांध दी थी। तो भी बहूरानी क्यों रो रही है ? सभी

औरतें गहना और रुपये पाकर खुश होती हैं। तो फिर बहूरानी क्या अलग किस्म की औरत है ?

"ओ बहूरानी, बहूरानी, सुनो, सुनो—"

अब पहली बार उसके मुह से आवाज निकली। विशाखा ने कहा, "आपने मेरी यह बर्बादी क्यों की ?"

दादी मा बोली, "मैंने तुम्हारी बर्बादी की है ? क्या कह रही हो तम ! बचपन में [illegible] कि तुम्हें और [illegible] था था। और [illegible] यह बात कह रही हो !

इस पर भी कुछ प्रत्युत्तर न देते देखकर दादी मां ने कहा, "बोलो, बोलो, मेरी बात का जवाब दो।"

इस पर भी बहूरानी चुप्पी साधे रही तो दादी मा बोली, "चुपचाप क्यों हो बहूरानी ? मेरी बात का जवाब दो। मैंने क्या तुम्हें और तुम्हारी मा को रसेल स्ट्रीट के मकान में लाकर नहीं रखा था ?'

अब विशाखा पटाखे के धमाके की तरह कर्कश आवाज में बोल उठी, "हम लोगों के लिए पैसा खर्च कर आपने क्या हमें खरीद लिया है ?"

दादी मा बहूरानी की बात सुनकर चौंक पडी। बोली, "तुम यह सब क्या कह रही हो बहूरानी ? तुम लोगों के खरीद लेने की बात आज क्यों उठ रही है ? अपने पोते से तुम्हारी शादी करने की मेरी इच्छा क्या आज की है—जब तुम छोटी थीं, मा के साथ गंगा नहाने जाती थीं, तभी तुम्हे अपनी पौत्रवधू बनाने के लिए मैंने पसन्द किया था। वह सब बात तुम भूल गईं ?"

विशाखा ने कहा, "भूली नहीं हू। वह सब बात मैं बिलकुल नहीं भूली हूं। लेकिन आपका उन दिनों का पोता क्या आज का यह पोता है ? यह पोता तो खून का मुजरिम है।"

बहूरानी की बात सुन दादी मां ठगी-सी रह गईं। कुछ देर तक उनके मुह से कोई शब्द नहीं निकला। बोली, "तुम्हारे पेट में इतनी शैतानी भरी हुई है ?"

विशाखा बोल उठी, "क्या कहा ?"

"यही कह रही हूं कि यह बात तुम्हारे मुंह से निकली है इसलिए आज मैंने कुछ नहीं कहा, क्योंकि अब तुम मेरी पौत्रवधू हो। लेकिन और किसी ने कहा होता तो मैं उसका मुंह तोड़ देती।"

विशाखा ने कहा, "अब यही कीजिए न ! मेरा मुह तोड ही दीजिए—"

यह कहकर फफक-फफक कर रोने लगी।

दादी मा ने बहुत कष्ट के साथ स्वयं को संयत किया। उसके बाद अपनी बिना किनारी की साडी से बहूरानी की आखें पोंछते हुए बोली, "गुस्सा मत करो बहूरानी। मैं बूढ़ी औरत हू, पोते के हादसे से मेरा दिमाग ठीक नहीं है। क्या से क्या कह बैठी। तुम अन्यथा मत लेना।" हां, यह तो बताओ, तुम्हें क्या भूख लगी है ? कुछ खाओगी ?"

विशाखा ने कहा, "नहीं।" उसके बाद बोली, "यह लीजिए, अपनी आलमारी की चाबिया रख लीजिए।"

"चाबी ?"

विशाखा ने अपने आचल से चाबियों के दो गुच्छे निकालकर दादी मा की ओर हाथ बढाया। बोली, "हां, अपने रुपये और गहनों की आलमारियों की चाबियां आप वापस ले लें। रुपये से फिर दूसरे का मन खरीदने की कोशिश नहीं कीजिए—"

दादी मां वोलीं, "तुम क्या कह रही हो वहूरानी ?"
विशाखा वोल उठी, "हां, ठीक ही कहा है। रुपये से आप चाहे जो भी खरीद
हैं लेकिन आदमी का मन खरीदने की कोशिश नहीं करें।"

"क्या कहा ? क्या कहा तुमने ?"

दादी मां शुरू में अचकचा उठी थीं, उसके वाद मुंह से कुछ देर तक कोई शब्द
निकला। उसके वाद वोलीं, "तुमने जो कुछ कहा, फिर से कहो।"

"कहा यह कि रुपये से आदमी का मन खरीदने की चाह नहीं करें—"

दादी मां ने कहा, "किसने कहा कि रुपये से मैं तुम्हारा मन खरीदना चाहती हूं ?
गरीव घर की लड़की थी, रुपये-पैसे का वहुत ही अभाव था तुम्हें। इसलिए मैंने कहा
कि इस घर की वहू वनने से तुम लोगों को रुपये-पैसे की कभी तकलीफ नहीं रहेगी।
ती-सी वात पर तुमने विगड़कर कहा कि रुपये से मैं तुम्हारा मन खरीदना चाहती हूं ?
म्हारा मन इतना घटिया है ? इतने दिनों तक तुम्हें लिखाने-पढ़ाने का यह नतीजा
आ ?"

उनकी वातें सुन विशाखा फिर से रोने लगी। उसकी रुलाई जैसे थमने का नाम
ही नहीं ले रही है।

"क्यों रो रही हो, क्यों ? मेरी वात का जवाव दो। आदमी की ज़िन्दगी में रुपये
का क्या कोई मोल नहीं है ? रुपये से भले ही आदमी का मन नहीं खरीदा जा सकता,
लेकिन आदमी की ज़िन्दगी की मुसीवतों के दौरान रुपये की क्या कोई कीमत नहीं है ?
रुपया क्या कूड़ा-कचरा है ? वोलो, मेरी वात का जवाव दो तुम।"

विशाखा वोल पड़ी, "जाइए, आप मेरे सामने से चले जाइए, मैं अव आपसे वातें
ही नहीं करना चाहती।"

दादी मां वोलीं, "मैं क्यों जाऊंगी ? यह मेरा घर है, मैं यहीं रहूंगी। मैं जव तक
ज़िन्दा रहूंगी, इस घर में रहूंगी। किसी की वात पर मैं यह घर नहीं छोड़ूंगी।"

विशाखा वोली, "तो फिर मुझे मेरे घर पर पहुंचा दीजिए—"

"तुम इस घर की वहू हो, यहां तुम्हारी ससुराल है। तुम अपनी ससुराल में नहीं
रहोगी ?"

"नहीं। यह घर मेरी ससुराल नहीं है।"

"क्यों, यह घर तुम्हारी ससुराल क्यों नहीं है ? इस घर के लड़के से तुम्हारी
शादी नहीं हुई है ?"

"नहीं, आपके पोते से मेरी शादी नहीं हुई है।"

"शादी नहीं हुई है ? मतलव ?"

विशाखा ने कहा, "जो कुछ हुआ है उसे शादी नहीं कहा जाता है।"

"शादी नहीं कहा जाता है तो क्या कहा जाता है ?"

विशाखा ने कहा, "ज़वरन शादी कराने को शादी नहीं कहा जाता है।"

दादी मां वहूरानी की वात सुनकर स्तंभित हो गईं।
वोलीं, "तुमसे सौम्य की ज़वरन शादी कराई है ?"

"हां, मुझसे संदीप की शादी हो रही थी। उसे जवरन हटाकर अपने पो
मेरी शादी करा दी। उसे ज़ोर-ज़वरन नहीं कहा जाएगा तो क्या कहा जा स
है ?"

दादी मां उस वक्त वहूरानी की वात सुनकर प्रस्तर की नाईं निर्वाक् हो ग
कुछ देर वाद वोलीं, "तुम यह वात अव कह रही हो ? जवकि विवाह के मंत्र के स
तुम लोगों की शादी हुई थी। उस विवाह के वहुत सारे लोग साक्षी भी थे—"

"हां साक्षी बेशक थे। लेकिन पुलिसकर्मियों के अलावा कौन साक्षी था?"

दादी मां ने कहा, "सिर्फ पुलिसकर्मी ही क्यों, जिन्होंने कन्यादान किया था, सुना है वे वकील हैं। वे भी साक्षी थे। और मंदीर भी तो वहीं था जिससे तुम्हारी शादी होने वाली थी।"

"लेकिन पुरोहित, हवन-नेवन, प्रीतिभोज—यह सब कहां हुआ?"

दादी मां ने कहा, "तुम्हारे मन में यदि यही बात थी तो अपनी मांग में सिन्दूर क्यों भरने दिया! तुमने इसका विरोध क्यों नहीं किया?"

विशाखा ने कहा, "विरोध? विरोध करने से आप मुझे सही-सलामत रहने देतीं?"

"क्यों, सही-सलामत क्यों नहीं रहने देती?"

विशाखा ने कहा, "मैं कुछ विरोध न कर सकूं, इसके लिए आप कोर्ट से आठ पुलिसकर्मी ले आई थीं। यह सब बात भले ही आपको याद न हो परन्तु मुझे याद है।"

"लेकिन क्यों तुम कोर्ट में जज के सामने बनारसी साड़ी पहन और मांग में सिंदूर भरकर हाजिर हुई थीं? क्यों तुमने जज के सामने नहीं कहा कि मुर्शिद से तुम्हारी शादी नहीं हुई है? उसके बाद मेरे एडवोकेट मिस्टर दासगुप्त के सामने आकर तुमने यह बात नहीं कही। क्यों नहीं कहा कि तुम्हारी वह शादी शादी नहीं थी?"

उसके बाद जरा रुककर फिर कहने लगीं, "और रुपया? उस मंदीर जिससे तुम्हारी शादी हो रही थी, उसने कितने रुपए लिए हैं, जानती हो?"

"मंदीर ने रुपया लिया है?"

दादी मां ने कहा, "लिया नहीं है? तुम सोचती हो कि उसने तुम्हें क्या यों ही छोड़ दिया? तुम मंदीर को क्या सीधा-सादा आदमी समझती हो? उसने पचास हजार रुपया लिया है!"

विशाखा को जैसे इस बात पर विश्वास नहीं हुआ। बोली, "मंदीर ने पचास हजार रुपया लिया है?"

"हां, सिर्फ पचास हजार रुपया ही नहीं। पहली किश्त के तौर पर पचास हजार रुपया लिया है। इसके बाद वह जितनी रकम की मांग करेगा, मैं दूंगी। जरूरत पड़ने पर वह दो-तीन लाख रुपए तक ले सकता है। वह जो भी मांगेगा, दूंगी। रुपया न मिलता तो वह तुम्हें यों ही छोड़ देता?"

विशाखा ने फिर पूछा, "क्या कहा? मंदीर ने सचमुच ही मुझे बेच दिया? आप सच-सच कह रही हैं?"

दादी मां ने कहा, "मेरी बात पर यकीन न हो तो तुम मंदीर से पूछ सकती हो। मैं तुम्हें झूठी बात क्यों कहूंगी?"

विशाखा क्या कहे, उसकी समझ में नहीं आया। पूछा, "मंदीर कहां है?"

"वह बैठा पोता में है। तुम उससे बातचीत करना चाहती हो?"

विशाखा ने कहा, "मुझे इस बात पर यकीन नहीं हो रहा है। क्या करूं, यह भी समझ में नहीं आ रहा है—"

दादी मां बोलीं, "ठीक है, मैं उसे मुनीमजी से बुलवा देती हूं—"

मल्लिकजी उसी दिन मंदीर को बुला लाए थे। मंदीर बैंक से छुट्टी होने के बाद आया था। मगर आने के बाद मंदीर को लगा था कि वह विशाखा की ससुराल न आया होता तो अच्छा रहता।

मंदीर ने आने के बाद कहा, "आपने मुझे क्यों बुलाया है दादी मां?"

दादी मां ने कहा था, "बुलाती नहीं तो क्या करती बेटा! बहुरानी सिर्फ रोती

उसकी रुलाई थमने का नाम नहीं ले रही है।"

संदीप ने पूछा था, "रो क्यों रही है? क्या हुआ है?"

"सो कैसे पता चल सकता है? अगर इसका पता होता तो तुम्हें बुला भेजती ही न उसकी रुलाई थम रही है और न ही कुछ खा रही है। ऐसा करने से मैं बहूरानी न्दा नहीं रख पाऊंगी। तुम उसे ज़रा समझाओ-बुझाओ—"

"वह कहां किस कमरे में है?"

संदीप ने कहा, "ओ विशाखा, विशाखा, मैं संदीप हूं। आंख उठाकर देखो खा।" संदीप की बात सुनकर विशाखा ने सिर उठाकर उसकी ओर नहीं देखा, क और ज़ोर-ज़ोर से रोने लगी थी। ऐसे में संदीप क्या करे, उसकी समझ में नहीं रहा था। कहा था, "ओ विशाखा अब मत रोओ, चुप हो जाओ। मैं संदीप हूं— ओर आंख उठाकर देखो—"

उस समय जैसे पहले पहल संदीप की बातें उसके कान में पहुंचीं। विशाखा ने ते हुए कहा था, "तुम क्यों आए हो? क्यों आए हो?"

संदीप ने कहा, "मैं तुम्हें देखने आया हूं। हां, यह देखने आया हूं कि तुम कैसी हो।"

इस बात ने जैसे आग में घी का काम किया था। विशाखा चिल्ला उठी थी, "तुम चले जाओ, मेरे सामने से दूर हो जाओ, जाओ—"

संदीप ने कहा था, "तुम यह क्या कह रही हो! तुम मुझे दुतकार कर भगा रही हो? मैं देखने आया हूं कि तुम कैसी हो।"

उसके बाद जितनी ही बार संदीप ने विशाखा को सांत्वना देने की कोशिश की विशाखा ने उसे उतनी ही बार खरी-खोटी सुनाकर कमरे से निकल जाने को कहा था। कहा था, "जाओ, निकल जाओ, निकलो। अब तुम फिर कभी इस घर में कदम नहीं रखना—"

संदीप ने कहा था, "मैं तो तुम्हारे भले के लिए ही आया था—"

"मेरा भला अब तुम्हें नहीं देखना है। मुझे नरक में फेंककर अब मेरी भलाई करने आए हो?"

संदीप ने कहा था, "मैंने तुम्हें नरक में फेंक दिया है? यह तुम क्या कह रही हो।"

विशाखा ने चिल्लाकर कहा, "नरक नहीं है? यह क्या स्वर्ग है?"

संदीप ने कहा, "ज़िन्दगी में तुम्हें कभी खाने-पहनने की चिन्ता नहीं करनी होगी। जीवन-भर हाथ पर हाथ धरे आराम करती रहोगी, इसे तुम स्वर्ग नहीं कहोगी तो और किसको कहोगी?"

अब विशाखा अपने आपको संयत नहीं रख सकी। बिस्तर पर उठकर बैठ गई। उसके बाद खड़ी होकर संदीप को धक्का देकर कमरे से बाहर करती हुई बोली थी, "जाओ, अब तुम्हें जले पर नमक नहीं छिड़कना है। जाओ, मेरे कमरे से बाहर निक जाओ—"

शोरगुल सुन दादी मां कमरे के अन्दर चली आई थीं। कहा था, "यह क्या क रही हो बहूरानी? यह क्या कर रही हो? संदीप को तुम भगा क्यों रही हो? उसे ही बुला भेजा है—मेरी बात पर ही तो संदीप इस घर में आया है—"

"क्यों बुलाया है? किसलिए?"

"और किसलिए, तुम्हारे भले की खातिर ही बुलाया है। तुम बगैर खाए रोती रहती हो, रात-दिन तुम्हें नींद नहीं आती। ऐसा करने से तुम ज़िन्दा रहोगी?

विशाखा बोल उठी थी, "फांसी के मुजरिम के साथ मेरी शादी कराकर भी आपकी उम्मीद पूरी नहीं हुई और अब मुझे जिन्दा रखना चाहती हैं ? मुझे जिन्दा रखकर आप लोग जला-जलाकर मारना चाहती हैं ? बताइए, मैंने आपकी कौन-सी हानि की है ? मैंने क्या ऐसी हानि की है कि मुझे जला-जलाकर मारिएगा ?"

दादी मा ने अब विशाखा से कुछ नही कहा। संदीप से सिर्फ कहा, "तुम चले जाओ बेटा ! मेरी बहूरानी का दिमाग खराब हो गया है। तुम अभी चले जाओ, मेरे कपाल में सुख नही है, तुम क्या करोगे !"

इसके बाद संदीप वहा खड़ा नही रहा। सीधे घर चले आया था।

लेकिन जिस विशाखा ने उसे इस तरह भगा दिया था, उसी से मुलाकात करने के लिए उसे फिर बुलावा क्यो भेजा गया ? फिर क्या उसका मन जरा शान्त हो गया है ? कौन जाने !

आफिस मे छुट्टी होते ही संदीप उठकर खड़ा हो गया। हाशिम के कमरे में गया। हाशिम उस समय भी मेज के पास बैठकर काम कर रहा था।

संदीप बोला, "मैं जा रहा हूं हाशिम, एक जरूरी काम है।"

यह कहकर सड़क पर निकल आया।

पुराण मे लिखा हुआ है, काशी पृथ्वी के बाहर है। संदीप सोचता है, वह भी शायद पृथ्वी के बाहर है। वह इस दुनिया के तमाम लोगो से तालमेल क्यो नही बिठा पाता है ? जब कि तमाम लोगों का सुख-दुख उसका निजी सुख-दुख बन जाता है ? यदि वह इस पृथ्वी के बाहर है तो मौसीजी के इलाज के लिए वह इतना क्यो चिन्तित रहता है ? विशाखा से खून के मुजरिम की शादी होने का उसने विरोध क्यो नही किया ? क्यो उस दिन उसने विद्रोह नही किया ? क्यो दादी मा के सामने उसने क्यो नही कहा कि वह इस शादी का विरोध करता है ? क्यों उसने नही कहा कि वह खुद विशाखा से शादी करेगा ?

कभी-कभी संदीप अपने आपको बहुत ही सुखी समझता है। सब कुछ खोकर सब कुछ पाने मे जो मिलता है, यह उसी किसी किस्म का सुख है। सुख केवल प्राप्ति मे ही है, ऐसी बात नही। देने मे भी सुख है। कोई प्राप्ति मे सुख का अहसास करता है और कोई देने मे। महापुरुषों का तो कहना है, देने मे जो सुख, है वही सच्चा सुख है।

लेकिन फिर भी संदीप के मन मे बीच-बीच मे तकलीफ का अहसास क्यों होता है ? क्यो इसकी वजह से मन को उदास बना लेता है ? उस आदमी के दौरान वह किसी जरूरतमन्द को उसकी आवश्यकता से अधिक क्यो दे देता है ? हाशिम को उसने क्यो प्रमोशन दिला दिया ? क्यो उस दिन उसने हावड़ा स्टेशन के बाहर एक अंधे भिखमंगे को पूरे दस रुपए का एक नोट दे दिया ? वह यह सब क्यो करता है ? इसका कारण क्या है ?

यह नही कि उसकी आवश्यकता से दूसरे की आवश्यकता बड़ी है। भिखमगा अंधा था। आमतौर पर वह दस पैसा या बीस पैसा ही पाने का अभ्यस्त रहा है। लिहाजा हाथ से टटोलकर जब वह महसूस करने की कोशिश कर रहा था कि वह किस चीज का कागज है तो संदीप ने ही कहा था ! यह दस रुपए का नोट है। कोई छीन ले सकता है, सावधानी से रखना—"

उसके बाद संदीप वहा रुका नहीं था। विशाखा की शादी होने के पहले संदीप एक किस्म का आदमी था पर विशाखा की शादी होने के बाद से दूसरी ही किस्म का आदमी हो गया था। उस समय से उसने दुनिया को दूसरी ही नजर से देखना शुरू कर

दिया था। जब तक उसे नौकरी नहीं थी और वह अर्थाभाव के दौर से गुज़र रहा था तब तक वह थोड़ा-बहुत स्वार्थी था। लेकिन विशाखा की शादी होने के बाद से ही वह मुक्त-हस्त जैसा हो गया, अपने आप पर उसका विश्वास बढ़ गया। स्वयं को उसने पूरी दुनिया में विस्तृत कर दिया। स्वयं को विस्तृत कर देने के बाद ही अपने आपको प्राप्त कर वह वैभवशाली हो गया।

विडन स्ट्रीट के मकान में जब वह पहुंचा तो देखा, घर के सामने दो-तीन गाड़ियां खड़ी हैं। बहुत दिनों के बाद गिरिधारी ने सामने आकर बदस्तूर सलाम किया। संदीप ने पूछा, "घर में कौन-कौन आए हैं गिरिधारी ?"

गिरिधारी ने कहा, "डाक्टर लोग आए हैं हुज़ूर—"

डाक्टर ? डाक्टर आने का मतलब है घर में कोई न कोई अवश्य ही बीमार है।

"कौन बीमार है गिरिधारी ? बहूरानी···"

गिरिधारी ने कहा, "मालकिन बीमार हैं हुजूर।"

"मालकिन ?"

संदीप जल्दी-जल्दी घर के अन्दर घुस गया। लेकिन मल्लिक चाचा के दफ्तर में जाकर देखा, वहां के दरवाज़े पर ताला लटका हुआ है। कहां गए मल्लिक चाचा ? मल्लिक चाचा तो दिन-भर घर के अन्दर ही रहते हैं। कभी-कभार ज़रूरी काम रहने पर बाहर जाते हैं। चन्द लमहों के बाद ही मल्लिक चाचा व्यस्तता के साथ नीचे आए। बोले, "तुम आ गए ?"

संदीप ने कहा, "हां, आपने ही तो आने को कहा था।"

दफ्तर का ताला खोल मल्लिक चाचा अन्दर चले गए। उनके साथ-साथ संदीप भी गया। मल्लिक चाचा ने कैश-बॉक्स खोला। एक गड्डी नोट निकाला। उन नोटों को अच्छी तरह गिना। उसके बाद उन नोटों को फतूही की जेब में रख फिर बाहर चले गए। बोले, "मैं आ रहा हूं, तुम बैठो। घर में अचानक भारी मुसीबत आ गई है—"

संदीप ने पूछा, "किस तरह की मुसीबत ?"

मल्लिक चाचा बोले, "तुम बैठो, आकर सारा कुछ बताऊंगा।"

यह कहकर दुबारा घर के अन्दर चले गए। पूरा मकान उस समय जैसे झपकियां ले रहा हो। थोड़ी देर बाद ही 'सिंहवाहिनी' की आरती शुरू हुई। पहले जब संदीप इस घर में रहा करता था, दादी मां हर रोज़ तीनमंजिले से मंदिर में आकर आरती देखतीं, हाथ जोड़कर सिंहवाहिनी की ओर निहारते हुए प्रणाम करतीं। हर कमरे में प्रसाद भिजवाया जाता। मल्लिक चाचा के कमरे में भी प्रसाद भिजवाया जाता।

संदीप दफ्तर में अकेला बैठा हुआ था। पहले की ही तरह मल्लिक चाचा के लिए उस दिन भी एक आदमी आकर केले के पत्ते में प्रसाद रखकर चला गया। घर में अगर कोई बीमार भी पड़ता है तो घर के नियम-कानून में कोई परिवर्तन नहीं आता। सारे नियम-कानून पूर्ववत् ही चलते रहेंगे, सिर्फ एक पीढ़ी के बाद दूसरी पीढ़ी आती रहेगी। दुनिया में कितने ही राजा-महाराजे, प्रेसिडेण्ट, प्राइममिनिस्टर आए हैं और चले गए हैं। लेकिन यह सूर्य ? इस सूर्य ने कभी क्या उगने और अस्त होने में अपने स्थान का परिवर्तन किया है ?

मल्लिक चाचा तब तक नहीं आए। अन्ततः जब वे आए तो लगभग आधा घण्टा बीत चुका था। आते ही बोले, "लगता है, प्रसाद दे गया है। खा लो—"

"आप खाइए।"

"नहीं-नहीं, तुम दफ्तर से आ रहे हो। सवेरे ही भात खाकर घर से निकले होगे। खाओ, तुम्हीं खा लो, मैं तो घर में हूं ही।"

उसके बाद कुछ समय बीतने के बाद बोले, "अभी-अभी डाक्टरों का दल लौटा है। अब मुझे दम लेने की फुर्सत मिली है।"

"दादी मां कैसी हैं ?"

मल्लिक चाचा ने कहा, "हालत ठीक नहीं है।"

संदीप ने कहा, "अचानक ऐसा क्यों हो गया ? डाक्टरों का क्या कहना है ?"

मल्लिक चाचा बोले, "अरे, मैं जब दोपहर में तुम्हारे बैंक गया था, उस समय कुछ नहीं हुआ था। तुम्हारे यहां से घर आते ही सुना, दादी मां अचानक बेहोश हो गई हैं—"

"उसके बाद क्या हुआ ?"

"उसके बाद और क्या ? मैं तुरन्त डाक्टर के घर दौड़ा-दौड़ा गया। डाक्टरों ने जांच की। अब तक वे जांच कर रहे थे। दोनों मुहल्ले के नामी डाक्टर हैं।"

"उन लोगों का कहना क्या है ?"

"और क्या कहेंगे ! दोनों ने एक ही तरह की राय जाहिर की। कहा, केस सीरियस है। दवाओं के नाम लिख दिए। मैं बाजार से उन दवाओं को खरीदकर ले आया। दादी मां को वह सब दवा खिला दी गई। एक घन्टे तक उन दवाओं का नतीजा देखने के बाद डाक्टर चले गए हैं।"

संदीप ने कहा, "दवा से कुछ अच्छे आसार नजर आ रहे हैं ?"

"नहीं, अब भी उस तरह बेहोशी की हालत में लेटी हुई हैं। नाड़ी की गति बहुत धीमी हो गई है। वही ही खौफनाक स्थिति है। आंख खोलकर ताक नहीं रही हैं। किसी भी बात का जवाब नहीं दे रही हैं। डाक्टर फिर कल सबेरे ही आएंगे। उधर मंझले बाबू को ट्रंक-कॉल कर दादी मा के बारे में सारा कुछ बताया है। वे घर पर नहीं थे। मंझली बहू को सारी बातों की सूचना दी है और उनसे कहा है कि मंझले बाबू जैसे ही घर आएं उन्हें सारी बात बता दें।"

"अभी दादी मां की देखरेख कौन कर रहा है ? नर्स रखी गई है ?"

मल्लिक चाचा ने कहा, "नहीं, लेकिन आखिर में शायद नर्स रखनी ही पड़ेगी। अभी बहूरानी देखरेख कर रही हैं। बहूरानी के अलावा घर में और कोई है भी नहीं—"

"बहूरानी ? बहूरानी देखरेख कर रही है ? मतलब ?"

"हा। हम लोगों की विशाखा।"

संदीप यह सुनकर अवाक् हो गया। विशाखा खुद भी एक मरीज ही है। वह कैसे दादी मां की देखरेख कर रही है ?

मल्लिक चाचा ने कहा, "बहूरानी की वजह से ही दादी मा की तबीयत इस तरह खराब हो गई। कोई आदमी कब तक बगैर सोए रह सकता है ? सौम्य बाबू के बारे में चिन्तित रहने के कारण दादी मां की सेहत में पहले से ही गिरावट आ रही थी, उसके बाद पुलिसकर्मियों के पहरे में बेड़ापोता जाकर पोते की दुलहन को ले आईं। वह भी क्या कोई कम झमेला था ! उसके बाद मन में थोड़ी-सी शान्ति मिले, यह भी नहीं हो सका। नई बहू ने खाना-पीना बन्द कर दिया, रोने-धोने लगी और रात में सोती भी नहीं थी। बुढ़ापे का शरीर इतनी परेशानियां कैसे बरदाश्त कर सकता है भला ! इसका नतीजा क्या हुआ, जानते हो ? कहां बहू सास की सेवा करेगी कि उसकी जगह सास ही बहू की सेवा करते-करते परेशान हो गई।"

संदीप चुपचाप उन बातों पर गौर करने लगा। उसके बाद बोला, "फिर मैं आज चलता हूं। आप लोगों की इस विपत्ति की घड़ी में मैं यहा बैठकर क्या करूंगा ?"

"तुम बहूरानी से नहीं मिलोगे?"

संदीप ने कहा, "अब क्यों मिलने जाऊं? उस दिन विशाखा ने मुझे भगा दिया था। आज भी अगर दुतकार कर भगा दे तो?"

"*नहीं-नहीं, आ चुके हो तो एकबार मिल लो। आओ, मेरे साथ आओ।*"

यह कहकर वे सीढ़ियां चढ़ने लगे। संदीप भी उनके पीछे-पीछे जाने लगा। उसके बाद तीन मंज़िले पर जाकर धीमी आवाज में पुकारने लगे, "बिन्दु, ओ बिन्दु—"

बिन्दु के आते ही मल्लिकजी ने पूछा, "बहूरानी कहां है?"

बिन्दु ने कहा, "दादी मां के सिरहाने बैठी हुई हैं—"

मल्लिक चाचा बोले, "जाकर बहूरानी को बुला ला। कहना, बेड़ापोता का संदीप आया है—बहुरानी से मिलने की ख़ातिर—"

दुनिया का यह एक अचूक नियम है कि दो परस्पर विरोधी वस्तुएं एक-दूसरे से जुड़ी रहती हैं। यदि रोशनी है तो अंधेरा रहेगा ही। दिन रहेगा तो रात रहेगी ही, सुख रहेगा तो दुख रहेगा ही। यदि मिलन है तो विरह रहेगा ही। जन्म है तो मृत्यु रहेगी ही। धरती की मध्याकर्षण शक्ति की तरह यह नियम भी अमोघ है। इसे अस्वीकार करे, दुनिया के किसी आदमी में ऐसी शक्ति नहीं है।

लेकिन इस चरम सत्य की उपलब्धि संदीप को बहुत बड़ी कीमत चुकाने के बाद ही हुई थी। जाहिर है किसी बड़ी सच्चाई को जानने के लिए एक बहुत बड़ी कीमत चुकानी पड़ती है। क्योंकि बग़ैर कुछ कीमत चुकाए कुछ भी हासिल नहीं होता।

हमारे इस उपन्यास के नायक संदीप की जीवन-गाथा उसी बहुत बड़ी कीमत चुकाने की कहानी है।

लेकिन उस बड़ी कीमत चुकाने के बदले में संदीप को क्या प्राप्त हुआ था? करोड़ों आदमी की इस दुनिया में ऐसे भी अल्पसंख्यक आदमी हैं जो केवल दोनों हाथ से लुटाते ही रहते हैं। लेकिन बदले में उन्हें क्या मिलता है? क्या हासिल होता है उन्हें?

मगर यह बात अभी रहे। इसके पहले उस दिन की बात बता दूं जिस दिन एकाएक दादी मां की तबीयत ख़राब हो जाने से पूरे घर-संसार में खलबली-सी मच गई थी।

उस खलबली ने घर के तमाम लोगों को बेचैन बना डाला था। मल्लिक चाचा यों आसानी से कभी टूटने वाले व्यक्ति नहीं हैं। बिन्दु, सुधा, कामिनी से शुरू कर घर का दरबान गिरिधारी तक उस हादसे से, मुसीबत की उस आशंका से व्याकुल हो उठे थे।

सबके मन में एक ही प्रश्न घुमड़ रहा था—अब क्या होगा?

दादी मां की बीमारी से जैसे मुकम्मल मकान बीमारी की गिरफ्त में फंस गया था। मकान की हर ईंट से शुरू कर उसकी बुनियाद तक थरथराने लगी थी। जैसे तमाम ईंटें निःशब्द चीख रही हों—अब हम लोगों का क्या हश्र होगा? अब हम लोग किस पर टिकी रहेंगी?

मल्लिक चाचा बोले, "तुम रहो। मैं चलता हूं, नीचे मुझे काम है—"

संदीप अकेले ही विशाखा के इन्तजार में खड़ा रहा। चुपचाप। आज फिर विशाखा उसके साथ कैसा सलूक करेगी, कौन जाने! यदि उसी दिन की तरह ही उसे भगा दे तो? आज भी यदि कहे—तुम निकल जाओ, फिर क्यों आए हो, तो फिर क्या होगा?

संदीप इसका क्या उत्तर देगा? वह क्या कहेगा कि उसे मल्लिक चाचा बुला लाए हैं, इसीलिए आया है?

"यह क्या, तुम ?"

विशाखा को शायद बताया नहीं गया था कि संदीप आया है। इसीलिए उसके चेहरे पर एक बेतरतीब जैसा भाव है। संदीप पर नजर जाते ही कहा, "यह क्या, तुम ?"

संदीप क्या कहे ! सिर्फ इतना ही कहा, "हां—"

एक लमहे तक दोनो की जबान से एक भी शब्द नही निकला। उसके बाद संदीप ने ही कहा, "मैं बड़े ही बुरे दिन में आ गया—"

"बुरे दिन में ? क्यो ?"

संदीप ने कहा, "मल्लिक चाचा मेरे दफ्तर मे गए थे और आने को कहा था।"

"क्यो आने को कहा था !"

संदीप ने कहा, "उन्होंने बताया कि जब से तुम इस घर में आई हो न खाना खा रही हो और न ही सोती हो। यह भी कहा कि मैं अगर आकर तुम्हें समझाऊं तो हो सकता है तुम रोना-धोना बन्द कर खाना-पीना शुरू कर दो। मेरी बात का तुम पर असर पड़ सकता है।"

"और क्या कहा था ?"

संदीप ने कहा, "लेकिन तुम्हे तो मालूम ही है कि उस बार मैंने यह सब कहा था तो तुमने गाली-गलौज कर मुझे भगा दिया था।"

विशाखा ने कहा, "मुझे सब कुछ याद रहता है और सबकुछ याद है। मगर इस बार तुम क्यो आए ?"

संदीप ने कहा, "चूंकि मल्लिक चाचा ने मुझे बुलाया तो आना ही पडा। लेकिन आने पर महसूस कर रहा हू, आज अगर न आता तो अच्छा रहता।"

"क्यो ?"

संदीप ने कहा, "आते ही मल्लिक चाचा से सुनने को मिला कि तुम्हारी ददिया सास अचानक बीमार पड गई हैं। तुम्हारी ससुराल की मुसीबत की इस घड़ी मे मैंने तुमसे मिलना नही चाहा था। मैं वापस जा रहा था लेकिन मल्लिक चाचा ने मेरी एक भी नही सुनी। बोले, "नही, यह नही होगा। तुम आए हो तो एक बार बहूरानी से मिलते जाओ—"

उसके बाद जरा रुककर बोला, "तुम्हारी ददिया सास अब कैसी हैं ?"

विशाखा ने कहा, "अब भी पहले की तरह ही बेहोशी हालत मे हैं।"

"डाक्टरो ने क्या कहा ?"

विशाखा ने कहा, "उन लोगो ने बताया, दिल का दौरा पडा है।"

"क्यों, दिल का दौरा क्यों पडा ?"

विशाखा ने कहा, "अनियमित जीवन जीने से। साथ ही मानसिक तनाव भी था।"

एकाएक कमरे के अन्दर से बिन्दु आकर सामने खड़ी हुई। बोली, "भाभीजी, अब दादी मां को दवा खिला दू ?"

विशाखा ने कहा, "नही, मैं चल रही हू। दादी मा ने आखें खोली हैं ?"

बिन्दु ने कहा, "नहीं। लेकिन तीन-तीन घण्टे पर दवा खिलाने की बात है। इसीलिए पूछ रही हू—"

विशाखा बोली, "तू जा, मैं आ रही हूं। मैं जाकर दवा खिलाऊंगी—"

यह कहकर संदीप की ओर ताकती हुई बोली, "तुम जरा मेरे कमरे मे जाकर बैठ जाओ। तुम मेरा कमरा पहचानते हो ?"

"नही, मैं कैसे पहचानूंगा ?"

"वाह, तुम जो उस दिन मेरे कमरे के अन्दर गए थे। चलो, मैं तुम्हें अपने कमरे में विठाकर आती हूं—चलो—"

दादी मां के कमरे के सामने के वरामदे से थोड़ा-सा आगे वढ़ते ही विशाखा का कमरा है।

संदीप को उस कमरे में बैठने के लिए कहकर विशाखा वाहर चली गई। जाने के दौरान कह गई, "तुम ज़रा यहां वैठ जाओ, मैं ददिया सास को दवा खिलाकर अभी-अभी आई—"

यह कहकर विशाखा चली गई।

संदीप इसके पहले भी इस कमरे में आ चुका है। सौम्य वावू का यही कमरा है। लेकिन उस वार इस कमरे को ध्यान से नहीं देखा था। यहीं सौम्यपद और उसकी मेमसाहव वीवी एक दिन एक ही विस्तर पर सोते थे। यहीं किसी दिन दोनों शराव पीकर वेहोशी की हालत में पड़े रहते थे। इसी कमरे में सौम्यपद ने अपनी विलायती पत्नी का गला दवाकर उसे मार डाला था और खिड़की से सड़क पर फेंक दिया था। यह वही अजूवा कमरा है।

और आश्चर्य की वात है, यही कमरा अव विशाखा का शयन कक्ष है। इसी कमरे में विशाखा अव रात गुज़ारती है। इस कमरे में विशाखा कैसे रहती है, कौन जाने ! इसी कमरे में वह कैसे तनहाई की ज़िन्दगी जिएगी ?

कमरे में एक ड्रेसिंग टेवुल है और दीवार पर एक किसी मेमसाहव की एक तस्वीर टंगी हुई। यह किसकी तस्वीर है ? मेमसाहव वहू की ? या मेमसाहव की मां की ? कमरे के अन्दर एक डवल वेड है। इसी पलंग पर कभी सौम्यपद और उसकी मेम-साहव वीवी शराव पीकर नशे में चूर होकर पड़े रहते थे और इसी पलंग पर अव विशाखा सोती है।

सहसा एक औरत अन्दर आई। उसके हाथ में चांदी की तश्तरी में चार सन्देश थे, जिसे उसने मेज़ पर रख दिया। इसके अलावा उसके हाथ में चांदी का पानी से भरा गिलास था जो चांदी के ढक्कन से ही ढंका हुआ था। वोली, "भाभीजी ने आपको यह खाने कहा है—"

यह कहकर वह वाहर चली गई। उसके वाद भी काफी वक्त गुज़र गया। कुर्सी पर वैठ संदीप इस घटना के वारे में सोचना लगा तो उसे हैरानी हुई। इस घर की वहू वनकर विशाखा सुखी तो होगी ही !

"यह क्या, तुमने अभी तक सन्देश नहीं खाया ? मैंने सुधा के हाथ भेज दिया था ?"

संदीप ने कहा, "वह सव औपचारिकता करने की जरूरत ही क्या थी ?"

"तुम दफ्तर से आए हो, तुम्हें जरूर ही भूख लगी होगी। खा लो—"

यह कहकर चांदी की तश्तरी संदीप के सामने रख दी।

हाथ से एक अदद सन्देश मुंह में रख संदीप वोला, "और नहीं खाऊंगा।"

यह कहकर पानी का गिलास उठाया। विशाखा वोली, "उन सन्देशों को भी खा लो।"

संदीप ने कहा, "क्यों ? यह सव झंझट तुम क्यों करने गई ?"

विशाखा ने कहा, "इसे तुम झंझट क्यों कह रहे हो ? इस घर में एक वस्तु के अलावा और सव कुछ है। रुपया-पैसा है, कामगार हैं, सव कुछ है—"

संदीप ने कहा, "और क्या नहीं है ?"

"सुख।"

संदीप ने तीक्ष्ण दृष्टि से विशाखा की ओर देखा। विशाखा सच वोल रही है या

झूठ? इन कई दिनो के दरमियान विशाखा ने कैसे समझ लिया कि इस घर में सुख नही है!

सदीप ने कहा, "इस घर में सुख नही है, इसका पता तुम्हें इन कई दिनो के दरमियान कैसे चल गया?"

विशाखा ने कहा, "मेरी ददिया सास ने ही मुझसे यह बात कही है—"

"तुम्हारी ददिया सास ने कही है?"

विशाखा ने कहा, "हा। उस समय ददिया सास की तबीयत ठीक नही थी। उन्होने ही मुझसे कहा था, इस घर में सब कुछ है। रुपया-पैसा, सोना-चादी, खानदान की ख्याति—किसी भी चीज की कमी नही। लेकिन सुख नही था। लिहाजा सुख के वास्ते ही मुझे इस घर की बहू बनाकर ले आई हैं।"

सदीप ने कहा, "यह सुनकर तुमने क्या कहा?"

"मैं क्या कहती, सिर्फ सुनती रही।"

"उसके बाद?"

विशाखा ने कहा, "उसके बाद अलमारी खोलकर दिखाया कि उनके पास कितने रुपए हैं।"

"रुपए? कितने रुपए देखे?"

विशाखा बोली, "अनगिनत रुपए। तह-दर-तह नोट की गड्डिया सजी हुई हैं। इतने सारे रुपए मैं ही क्या, शायद किसी ने नही देखे होंगे। कितने लाख हैं, यह मैंने नही पूछा।"

"उसके बाद?"

विशाखा बोली, "इसके बाद और क्या! उन रुपयो को दिखाकर बोली कि सारी रकम की मालकिन मैं हूं।"

"उसके बाद?"

विशाखा ने कहा, "उसके बाद मेरी ददिया सास ने आलमारी का एक और चेम्बर खोला, वह गहनो से ही भरा हुआ है। कितनी तरह की गहने थे, यह मैं बता नही पाऊंगी। उनकी कीमत कितनी होगी, यह भी नही बता सकती।"

"उसके बाद?"

विशाखा ने कहा, "उसके बाद अपने आचल से चाबियों के दो गुच्छे मेरी साड़ी के आंचल में बांध दिए और कहा, चाबियो के इन गुच्छो को अपने पास रख लो। तुम्हें जिन-जिन चीज़ो की जरूरत पडे तुम अपनी मर्जी से खर्च कर सकती हो। तुम्हे जो भी गहना पहनने की इच्छा हो, पहन सकती हो—"

संदीप ने पूछा, "उसके बाद क्या हुआ?"

विशाखा बोली, "उसके बाद से चाबियो के दोनो गुच्छे मेरे आचल मे ही बधे हुए हैं, यह देखो—"

यह कहकर आचल मे बधे चाबियो के दोनों गुच्छे दिखाए। बोली, "देख रहे हो?"

सदीप ने कहा, "तो फिर तुम शुरुआती दिनो मे इतना रो-धो क्यों रही थी? तुमने जो चाहा था, वह तो तुम्हे मिल चुका है?"

विशाखा बोली, "मैंने क्या चाहा था?"

"तुम बेशुमार रुपया-पैसा, जायदाद, कीमती गहने, यही सब तो चाहती थी?"

विशाखा के चेहरे का भाव एक ही लमहे मे बदल गया। बोली, "क्या कहा? मैं बेशुमार रुपया-पैसा, जायदाद, कीमती गहने—यही सब चाहती थी?"

संदीप ने कहा, "नहीं-नहीं चाहती थीं तुम ?"

"तुम कैसे समझे कि मैं यही सब चाहती थी ?"

"यही सब पाने के खयाल से तुमने मुझे बगैर बताए नौकरी के लिए आवेदन पत्र भेजा था। नौकरी के लिए इण्टरव्यू देने गई थीं।"

विशाखा गुस्सा गई। बोली, "किसने कहा कि बेशुमार रुपया-पैसा कमाने के लिए ही मैं नौकरी करने गई थी ?"

"तुमने खुद ही कहा था। वरना और कौन कहता ?"

विशाखा बोली, "झूठी बात है। मैंने तुमसे उस दिन कहा था कि मैं पराधीन नहीं रहना चाहती और इसीलिए मैं नौकरी करने गई थी। बेशुमार रुपया-पैसा पाने के खयाल से मैं नौकरी का इण्टरव्यू देने नहीं गई थी। तुमने इतना झूठ बोलना कब से सीख लिया है ?"

संदीप ने कहा, "मैंने झूठ नहीं कहा है, इसका सबूत तुम्हारा चेहरा है।"

"इसका मतलब ?"

"मतलब यह कि तुम्हारा चेहरा ही बता रहा है कि तुम रुपया-पैसा, गहने-जेवरात पाकर सुख का अहसास कर रही हो। तुम्हारे चेहरे का भाव ही यह प्रकट कर रहा है।"

विशाखा ने कहा, "चेहरे का भाव देखकर जो आदमी के मनोभाव का विवेचन करता है, उसे भले ही कुछ कह लो, मगर अक्लमन्द नहीं कह सकते।"

संदीप ने कहा, "जो पूरी ज़िन्दगी अभाव में गुज़ारता है उसे अगर सहसा बेशुमार रुपया-पैसा, कीमती गहने-जेवरात मिल जाएं तो उसे सुखी नहीं कहूंगा तो और किसको कहूंगा ?"

विशाखा ने कहा, "तुम्हें शायद याद नहीं है लेकिन एक दिन तुम्हीं ने कहा था, 'सुख' शब्द केवल डिक्शनरी में ही मिलता है—"

संदीप ने कहा, "लेकिन सुख की व्याख्या सबके लिए एक जैसी ही नहीं होती।" बातचीत के दरमियान ही कमरे के अन्दर किसी ने प्रवेश किया। शायद घर की महरी है। बोली, "भाभीजी, दादी मां ने आंखें खोली हैं, शायद आपको खोज रही हैं—"

विशाखा ने कहा, "तुम जाओ बिन्दु, मैं अभी आई—"

यह कहकर संदीप की ओर देखा और बोली, "तुम ज़रा बैठो, मैं ददिया सास को देखकर अभी तुरन्त आती हूं। चले मत जाना—"

यह कहकर विशाखा कमरे से चली गई। संदीप अवाक् होकर सोचने लगा—विशाखा किस किस्म की औरत है ! इसके पहले जब संदीप विशाखा से मिलने आया था तो वह दूसरी ही किस्म की थी। यही विशाखा रोते-रोते परेशान हो गई थी। उसे गाली-गलौज कर आखिर में एक तरह से ज़बरन ही घर से निकाल दिया था।

यह क्या वही विशाखा है ? यह विशाखा यदि वही विशाखा है तो फिर ऐसा क्यों हो गई ? ऐसा क्यों होता है ?

फिर क्या बेशुमार रुपए-पैसे और गहने या फिर ददिया सास की अस्वस्थता के कारण विशाखा की मानसिकता में आमूल-चूल परिवर्तन आ गया है ? उसने बेड़ापोता के बारे में एकबार भी पूछताछ नहीं की। मौसीजी या मां कैसी है, विशाखा ने इस सम्बन्ध में भी कोई जिक्र नहीं किया।

संदीप का मन विषाक्त हो गया।

फिर क्या शादी के बाद हर स्त्री के साथ ऐसा ही होता है ? मायके की बात वह इसी तरह भूल जाती है ?

इन्तज़ार करते-करते जब काफी देर हो गई तो संदीप का धीरज जवाब दे बैठा। वह कमरे से बाहर निकल आया। बरामदे से तीन-मंजिले के नीचे रास्ते की ओर नज़र दौड़ाते ही वह समझ गया कि यहीं से मेमसाहब बहू को सौम्यपद बाबू ने नीचे फेंक दिया होगा। जाहिर है, यह दृश्य अवश्य ही हर दिन विशाखा की नज़रों से गुज़रता होगा। तो क्या रुपया और गहने की चकाचौंध से विशाखा बिलकुल निष्प्राण हो गई है?

अब भी विशाखा पर नज़र नहीं पड रही है। संदीप अब वहां खड़ा नहीं रहा। सीढ़ियां उतर दो-मंजिले को पाकर सीधे एक-मंजिले पर चला आया। वहां आकर मल्लिक चाचा के दफ्तर में देखा, वे रोकड़ी बही में हिसाब-किताब लिखने में मशगूल हैं। संदीप पर नज़र पड़ी तो बोले, "बैठो। बहूरानी से मुलाकात हुई?"

"हां।"

मल्लिकजी ने पूछा, "कोई बातचीत हुई?"

संदीप ने कहा, "हा, थोड़ी-सी बातचीत हुई।"

"तुम्हें वह कैसी लगी? पहली दफा की तरह ही तुम्हें भगा दिया?"

सदीप ने कहा, "नहीं, अब बहुत-कुछ प्रैक्टिकल हो गई है।"

"मां के बारे में कुछ पूछा?"

संदीप ने कहा, "बिलकुल नहीं। शायद लडकियां इसी किस्म की हो जाती हैं। बेशुमार रुपया-पैसा और गहने-जेवरात होने से सबके साथ जो कुछ होता है, वही हुआ है। बाद मे मुझे नाश्ता भी खिलाया।"

यह सुनकर मल्लिक चाचा खुश हुए, ऐसा महसूस हुआ। बोले, "खैर, दादी मा की एक चिन्ता दूर हो गई। उन्हे बराबर डर बना रहता था कि उन्हे कहीं कोई बीमारी हो जाए तो घर-गृहस्थी बिखर जाएगी। देखभाल करने के लिए कोई नहीं रह जाएगा··· इसके अलावा अब मैं भी निश्चिन्त हो गया।"

"क्यो?"

मल्लिक चाचा बोले, "बहूरानी न होती तो मेरा दायित्व और बढ़ गया होता।"

"किस चीज़ का दायित्व?"

"यही लाखों रुपए का दायित्व। रुपए का दायित्व ही तो सबसे बड़ा दायित्व है। बहूरानी न होती तो मैं किसे रुपए का हिसाब देने जाता? कौन मेरा हिसाब-किताब देखता? बहरहाल, मेरी चिन्ता खत्म हो गई।"

उसके बाद बोले, "ठहरो, ज़रा यह हिसाब खत्म कर लूं—"

इसके बाद दुबारा हिसाब-किताब के खाते मे मशगूल हो गए।

सदीप के जेहन मे तब तरह-तरह की चिन्ताएं चक्कर काट रही थीं। ऑफिस के काम की चिन्ता तो है ही। उस पर विशाखा के लिए भी चिन्ता थी। वह आज मिट गई। विशाखा के सुखी होने में ही सदीप का सुख छिपा हुआ है। अब सिर्फ मौसीजी के इलाज की चिन्ता रह गई। उसके साथ इलाज के खर्च की चिन्ता। बीमारी की तकलीफ मरीज की अपनी तकलीफ हुआ करती है। लेकिन उसके इलाज के खर्च की चिन्ता जिसे करनी पड़ती है, उसी की यातना अधिक तकलीफदेह होती है। वास्तव मे तमाम लोगों की असली चिन्ता देह के कारण ही हुआ करती है। आदमी जानवर की तरह ही होता है। सवेरे नीद टूटते ही उसे भोजन के बारे में सोचना पड़ता है। भोजन की सामग्री का जुगाड करने के लिए रुपए-पैसे की आवश्यकता पड़ती है। रुपए-पैसे न हों तो वह उन सामग्रियों को खरीदेगा कैसे? चाहे वह किसान हो या शहरी आदमी। इसीलिए तमाम लोगों की चिन्ता के मूल मे अर्थ रहता है। और उस अर्थ की आवश्यकता क्यों महसूस होती है? देह के लिए ही। हम लोगों की देह के लिए ही। इस नरदेह के लिए ही—

जो कुछ करते हैं, जो कुछ सोचते हैं, जो कुछ भोग करते हैं उसका मूल कारण है यह देह—यह नरदेह।

शायद इतनी देर के बाद मल्लिक चाचा का काम खत्म हुआ। उन्होंने सिर उठाया। संदीप की ओर देखते हुए बोले, "अब हाथ खाली हुआ है। अब तो बताओ तुम्हारा क्या हालचाल है?"

संदीप बोला, "आपको इतना कौन-सा काम रहता है? अब तो आपको हर रोज़ दादी मां के पास जाकर हिसाब देने की जिम्मेदारी नहीं है—"

"किसने कहा जिम्मेदारी नहीं है? दादी मां यदि पड़ी रहें तो हिसाब भी पड़ा हुआ रह जाएगा? पाई-पाई का हिसाब करना ही होगा—"

"आप किसको जाकर हिसाब दीजिएगा?"

मल्लिक चाचा बोले, "हिसाब दूंगा घर की मालकिन को।"

"मालकिन? घर की मालकिन अब कौन हैं? वे तो बीमार पड़ी हुई हैं।"

मल्लिक चाचा बोले, "दादी मां के बीमार रहने के कारण फिलहाल बहूरानी मालकिन हैं। उन्हीं को हिसाब-किताब जाकर समझाना है।"

उसके बाद बोले, "बीमार होने के पहले ही दादी मां ने मुझसे कहा था, अब सारा हिसाब-किताब उनकी बहूरानी को जाकर ही देना है—"

"ऐसी बात है?"

मल्लिक चाचा बोले, "हां, बहूरानी को अपनी पौत्रवधू बनाने की दादी मां की बहुत दिनों की साध थी, यह तो तुम्हें मालूम ही है। बहूरानी को बी० ए० तक पढ़ाया भी था। इसीलिए बहूरानी के आने के दूसरे दिन ही मुझ पर इस काम की जिम्मेदारी सौंपी थीं—"

उसके बाद ज़रा रुककर बोले, "हां, एक बात। तुम्हारी मौसीजी यानी बहूरानी की मां कैसी हैं…?"

संदीप ने कहा, "वे तो उसी नर्सिंग होम में पड़ी हुई हैं। बेशुमार पैसा खर्च हो रहा है। शायद अब ज्यादा दिनों तक इलाज चलाना मेरे द्वारा सम्भव नहीं हो सकेगा—"

"क्यों? तुम्हें क्या और रुपये की ज़रूरत है? दादी मां ने तुम्हें जितनी रकम दी थी वह क्या खत्म हो गई?"

संदीप ने कहा, "लगभग खत्म ही हो चुकी है…"

"फिर तो तुम्हें और भी रुपयों की ज़रूरत है। अभी तो दादी मां सोई हुई हैं, जो कुछ करने को होगा, बहूरानी ही करेंगी। रुपये के बारे में बहूरानी से कहूं? तुम कहो तो उनसे जाकर कहूं—"

संदीप ने कहा, "नहीं चाचाजी, आप रुपये के सम्बन्ध में विशाखा से कुछ भी नहीं कहिए।…मैं चलता हूं—मुझे अभी तुरन्त मौसीजी को देखने नर्सिंग होम जाना है।"

और वह उठकर खड़ा हो गया। उसके बाद फाटक पारकर सड़क पर चला आया।

एकाएक ऊपर से बिन्दु ने आकर मल्लिक चाचा के कमरे में प्रवेश किया। आते ही बोली, "मैनेजर बाबू, बहूरानी संदीप बाबू को ऊपर बुला रही हैं—"

"संदीप बाबू को? वे तो अभी तुरन्त चले गए। क्यों, कोई ज़रूरत थी क्या?"

बिन्दु बोली, "हां, भाभीजी उन्हें अपने कमरे में बिठाकर दादी मां को देखने गई थीं और इधर संदीप बाबू भाभीजी को बगैर कुछ बताए चले गए—"

मल्लिकजी बोले, "लेकिन वह तो अभी तुरन्त गया है, उसके गए पांच मिनट से ज्यादा नहीं हुआ होगा—"

उसके बाद गिरिधारी को पुकारा। गिरिधारी के आते ही बोले, "गिरिधारी, अभी-अभी संदीप बाबू इस घर से बाहर निकले हैं। अब तक शायद बस-रास्ते पर नही पहुचे होंगे। तुम दौडते हुए जाओ। देखो, उससे मुलकात होती है या नही। अगर मुलाकात हो जाए तो बुलाकर ले आना। कहना, भाभीजी उन्हें बुला रही हैं।"

गिरिधारी बस-रास्ते की ओर दौड पडा। लेकिन वह कही नही मिला। शाम के अंधेरे में आदमी साफ-साफ नही दिख रहा है। तो भी गिरिधारी हर आदमी के पास जाकर उसके चेहरे को गौर से देखने लगा। नही, सदीप बाबू नही हैं, सबके सब दूसरे ही आदमी हैं। बहुत देर तक कोशिश करने पर भी जब संदीप बाबू पर नजर नही पड़ी तो हताश होकर घर वापस आ गया।

मल्लिक चाचा कमरे से बाहर निकल फाटक के पास खड़े होकर संदीप का इन्तजार कर रहे थे। तभी गिरिधारी आया। बोला, "नही मैनेजर बाबू, संदीप बाबू पर नजर नही पडी—"

"नजर नही पडी ? अच्छी तरह खोजा था न ?"

"हां मैनेजर बाबू, तमाम लोगों के चेहरे को बारीकी से देखा। सदीप बाबू कही भी नही दिखे—"

उस समय दफ्तरो में छुट्टी होने के कारण बसो और ट्रामो मे आदमी की ठसाठस भीड थी। फिर भी संदीप ने एक बस में अपने लिए जगह बना ली थी। बस की छत मे लगी सलाख को पकड वह किसी तरह खडा हो गया। लेकिन उसे तकलीफ का अहसास नहीं हो रहा था। दरअसल तकलीफ के बारे में सोचने पर ही तकलीफ का अहसास होता है। नही, उसे कोई तकलीफ नही है। वह एक अच्छी नौकरी कर रहा है और उसे खासा अच्छा वेतन मिलता है। जबकि इसी शहर मे लाखो लोग बेरोजगार मारे-मारे फिर रहे हैं। सैनसबी मुखर्जी कम्पनी जैसी कितनी ही फैक्टरियां बन्द हो गई हैं। कितने ही मिलो मे तालाबन्दी चल रही है। इन लाखो बेरोजगारो के बीच कम-से-कम वह नौकरी तो कर रहा है, माहवारी तनख्वाह पा रहा है। लिहाजा वह सुखी ही है।

और विशाखा ? विशाखा अब विशाखा गागुली नही, विशाखा मुखर्जी हो गई है। कितने रुपयों की मालकिन हो गई है ! कितने गहनो की मालकिन हो गई है ! अत उसे सुखी कहना ही होगा।

लेकिन यही तो कुछ देर पहले विशाखा ने कहा था—उसकी ससुराल में सुख के अलावा सारा कुछ है।

दरअसल रुपया ही सुख के केन्द्र मे है, यह बात सभी कहते हैं। तो फिर विशाखा ने क्यो कहा, उसकी ससुराल मे सुख का नामोनिशान नही है। जबकि उसी का चाचा तपेश गागुली रुपये के पीछे चक्कर काटता रहता है।

अचानक पीछे से किसी की आवाज सुनाई पड़ी, "क्या हालचाल है भाई ? ओ भाई—"

जिस ओर से यह आवाज आ रही थी, सदीप ने उस ओर गौर से देखा। आश्चर्य ! जिसके बारे मे वह सोच रहा था वही तपेश गागुली दिख गया। बोला, "अरे, आप हैं !"

तपेश गागुली ने कहा, "तुम कहा से आ रहे हो ? दफ्तर मे ?"

सदीप ने कहा, "ऑफिस से घर जा रहा हू। आप कहां से आ रहे हैं ?"

तपेश गागुली ने कहा, "मैं और कहा जाऊगा भाई, लडकी की शादी के सिलसिले मे एक जगह गया था। वही से आ रहा हू। कितने ही ज्योतिषियो, साधु-सन्यासियों को लडकी का हाथ दिखाया, लेकिन काम नही बन रहा है—"

संदीप इसका क्या उत्तर दे या वह इस सम्बन्ध में कर ही क्या सकता है ! उस समय भी विशाखा की बातें उसके मन में गूंज रही थीं।

तपेश गांगुली ने पूछा, "भाभी का क्या हालचाल है ?"

संदीप ने कहा, "उनकी बीमारी के बारे में आपने सुना है ?"

"नहीं तो।"

"वे बहुत दिनों से बीमार हैं, अब भी स्वस्थ नहीं हुई हैं। नर्सिंग होम में इलाज चल रहा है।"

किसी की बीमारी के बारे में सुनना तपेश गांगुली को गवारा नहीं। इसके अलावा बस की भीड़ में यह सब कहने का मौका भी नहीं है। अगर कोई आदमी बेशुमार रुपये-पैसे का मालिक है तो उसके बारे में कहो, मैं सुनूंगा। ऐसे आदमी के बारे में कहो जिसके पास अनगिनत रुपये हैं।

"हां, यह तो बताओ, विशाखा फिलहाल कहां है ? उसकी शादी हो चुकी है ?"

संदीप ने कहा, "यह क्या, आपको कुछ सुनने को नहीं मिला ?"

"क्या सुनने को मिलेगा ?"

"विशाखा के बारे में। उसकी तो बहुत पहले ही शादी हो चुकी है।"

तपेश गांगुली जैसे आसमान से नीचे गिर पड़ा। बोला, "शादी हो चुकी है ? मुझे तो किसी ने निमंत्रण तक नहीं भेजा। कब शादी हुई ? बोलो-बोलो, सुनूं, कब शादी हुई ?"

संदीप ने कहा, "शादी तो बहुत पहले ही हो चुकी है। आपको सुनने को नहीं मिला ? आप तो विशाखा के सगे चाचा हैं।"

तपेश गांगुली ने कहा, "हां, मैं विशाखा के पति का अपना चचेरा ससुर हूं। उसकी शादी हो गई और मुझे पूछा तक नहीं ? तुम शादी के मौके पर गए थे ? क्या-क्या खिलाया ? मांस पकाया गया था ? कितनी तरह की मिठाइयां थीं ? रबड़ी थी ?"

संदीप ने उन बातों का जवाब न देकर कहा, "मैं अभी विशाखा के पास से ही आ रहा हूं।"

"विशाखा के पास से ? मतलब ? विशाखा की ससुराल से ?"

संदीप ने कहा, "हां—"

"उसकी ससुराल कहां है ? वे लोग अमीर हैं या गरीब ? विशाखा का पति किस तरह की नौकरी करता है ? कितना वेतन मिलता है ?"

तपेश गांगुली के मुंह से प्रश्नों की झड़ी लग गई है। सारे प्रश्न एक ही विषय पर केन्द्रित हैं और वह है रुपया।

"क्या हुआ ? बताओ न, विशाखा की ससुराल कहां है ? उसके पति को कितना वेतन मिलता है ?"

संदीप ने कहा, "उसकी ससुराल बिडन स्ट्रीट में है—"

"यह क्या ! वही मुखर्जी-भवन ? शादी हो चुकी है ? मैं लड़की का चाचा हूं, फिर भी मुझे निमंत्रण नहीं भेजा गया !"

"हो सकता है, गलती हो गई हो।"

"अभी जाने से मुलाकात होगी ? या फिर कल सवेरे जाऊं ? सवेरे जाना अच्छा रहेगा। क्यों, ठीक कह रहा हूं न ? बिजली को अपने साथ लेकर जाऊंगा। यही अच्छा रहेगा, समझे ?"

यह कहकर रुका नहीं। उसे यहीं उतरना है। बोला, "मैं यहीं उतर रहा हूं। अब भी चारों तरफ भीड़-भाड़ है। कलकत्ता के लोगों की भीड़ मानो कीड़े-मकोड़ों की

भीड़ है। कीड़े-मकोड़ों की तरह ही चारों तरफ भीड़ लगी है और सिर्फ कीड़े-मकोड़ों की ही भीड़ नहीं है, उनके साथ पसीने की बू भी है। कीड़े-मकोड़े सब पसीने से तर-बतर हो गए हैं और चारों तरफ पसीने की बदबू फैल रही है। ऐसे मनहूस माहौल और आश्चर्य की बात है कि उसे निमंत्रित तक नहीं किया गया!"

तपेश गांगुली को लगा, उसके जैसा बदकिस्मत आदमी इस दुनिया में और कोई नहीं है।

उसके बाद घर आते ही चिल्लाकर पुकारने लगा, "अजी, कहां हो? ओ रानी, ओ बिजली, सुनो, सुनती जाओ, कहां गई तुम लोग? सुन जाओ—"

रानी आगे बढ़कर सामने आई और बोली, "सांड़ की तरह चिल्ला क्यों रहे हो? क्या हुआ, क्या?"

तपेश गांगुली बोला, "क्या कहूं, सर्वनाश हो गया—"

"क्या सर्वनाश? किसका सर्वनाश?"

"सुनने को मिला, तुम्हारी जेठानी की लड़की की शादी हो गई—"

"शादी? किसकी शादी? विशाखा की शादी?"

"हां जी, फिर कह क्या रहा हूं! तुम्हारी जेठानी इतनी नमकहराम और धूर्त है कि मुझे निमंत्रण तक नहीं भेजा।"

रानी ने पूछा, "कहां शादी हुई?"

तपेश गांगुली ने कहा, "उसी करोड़पति के पोते से।"

"वह तो फांसी का मुजरिम है, उसी से शादी हो गई?"

तपेश गांगुली ने कहा, "चाहे फांसी का मुजरिम क्यों न हो, लेकिन उसके पास बेशुमार दौलत तो है। फांसी के मुजरिम को फांसी हो सकती है लेकिन दौलत को फांसी नहीं होगी। विशाखा तो करोड़पति हो गई।"

यह खबर सुनकर रानी चन्द लमहों तक भौंचक-सी रह गई। बिजली भी वहीं खड़ी होकर सब कुछ सुन रही थी। वह बोली, "मैं विशाखा की ससुराल जाऊंगी बाबूजी।"

तपेश गांगुली बोला, "हां-हां, जाना। हम भी चलेंगे। हम तीनों जने एक साथ जाएंगे। आज रात हो चुकी है। अभी जाने की जरूरत नहीं। कल सवेरे ही निकल जायेंगे। पूरा दिन विशाखा के घर पर ही बिताएंगे। देखना, हम लोगों को कितना खिलाएगी—"

उसके बाद रानी की तरफ मुखातिब होकर बोला, "तुम्हारे पास अच्छी साड़ी है? बड़े आदमी के घर जा रही हो। कोई अच्छी-सी साड़ी पहनकर जाओगी तो खूब खातिरदारी होगी।"

रानी ने कहा, "तुमने क्या मुझे अच्छी साड़ी खरीद दी है कि उसे ही पहनकर जाऊं?"

"फिर क्या किया जाए?"

बिजली ने कहा, "मेरे पास भी कोई अच्छी साड़ी नहीं है बाबूजी—"

सच, यह एक चिन्ता की बात है। ऐसे-वैसे आदमी का घर नहीं करोड़पति का घर। सज-संवरकर न जाने से निन्दा होगी। तो फिर क्या किया जाए? नई साड़ी खरीदी जाए तो रुपये की जरूरत पड़ेगी। अभी महीने का आखिरी सप्ताह चल रहा है, हाथ में एक रुपया भी नहीं है। दफ्तर खुला रहता तो वहां कर्ज लिया जा सकता था। ऐसी हालत में सवेरे साड़ी खरीदना संभव नहीं है। दुकान साढ़े दस बजे के बाद ही खुलेगी।

अचानक दिमाग में एक सूझ खेल गई। बोला, "तुम्हारे पास सोने का गहना है?"

रानी ने कहा, "हां, है। क्यों? वेचना है क्या?"

तपेश वोला, "वेचना नहीं है, उसे वंधक रखकर तुम दोनों के लिए साड़ियां खरीदी जा सकती हैं। अगले महीने तनख्वाह मिलते ही तुम्हारा गहना छुड़ाकर ले आऊंगा। दोगी?"

आज के ज़माने में दुनिया में पैसे का लोभ सबसे वड़ा लोभ होता है। विशाखा की शादी वड़े आदमी के पोते से हुई है। पति चाहे रहे या न रहे, दौलत तो है। मर्जी हो तो विशाखा रुपया-पैसा देकर भी उन लोगों का उपकार कर सकती है। उससे मुलाकात करने का यह मौका छोड़ना उचित नहीं है।

रानी राजी हो गई वोली, "तो फिर आज एक जोड़ा वाला दे रही हूं। उन्हें ले जाकर वन्धक रख आओ।"

रानी ने अन्दर जाकर एक जोड़ा वाला लाकर तपेश को दिया। तपेश उन्हें लेकर वाहर दौड़ा। वोला, "देखूं, सुनार की दुकान खुली हुई है या नहीं—"

लेकिन तव काफी रात हो चुकी थी। ज्यादातर दुकानें वन्द हो चुकी थीं। घर लौटकर चला आया। रानी वोलीं, "क्या हुआ?"

तपेश गांगुली वोला, "अव सारी दुकानें वन्द हो चुकी हैं। कल सवेरे फिर निकलूंगा, उस वक्त कोशिश करूंगा—उसके वाद दस-ग्यारह वजे के वाद निकलूंगा।"

उस रात तीनों जल्दी-जल्दी खाकर सो गए। लेकिन मन में वेचैनी हो तो कहीं नींद आती है। इसलिए विस्तर पर लेटने के वाद भी दुश्चिन्ताएं उसके दिमाग को कुरेदने लगीं।

रफ्ता-रफ्ता रानी और विजली नींद में मशगूल हो गईं। उनके श्वास और निश्वास के उठने-गिरने का अहसास तपेश को साफ तौर पर होने लगा। कभी उसकी भाभी और वह विशाखा उसी के सिर का वोझ वनकर इस घर में रहती थीं। उस समय रानी ने उन पर वहुत जुलम किया था। घर-गृहस्थी का सारा काम रानी भाभी के मत्थे ही थोप देती थी। भाभी मुंह सीकर सारा कुछ वरदाश्त कर लेती। ज़रा भी प्रतिवाद या प्रतिरोध नहीं करतीं। लेकिन अव उसी विशाखा के पास दया की भीख मांगने को जाना पड़ रहा है।

रानी हमेशा तपेश को खरी-खोटी सुनाती रही है। हमेशा यही कहती, "हर आदमी की तनखवाह वढ़ती है मगर तुम्हारी क्यों नहीं वढ़ती है?"

इस वात का कोई जवाव है?

किसी दफ्तर में वहुत सारे आदमी काम करते हैं। सभी एक ही किस्म के काम करते हैं। लेकिन उनके वीच किसी की तनखवाह एकाएक वढ़ जाती है। सभी को लांघकर एक व्यक्ति क्यों ऊंचे ओहदे पर पहुंच जाता है?

इसका जवाव औरतों की समझ में नहीं आता। इसलिए रानी की वात के उत्तर में तपेश कहता, "यह सव वात तुम्हारी समझ में नहीं आएगी। जो लोग दफ्तर में काम करते हैं, वही समझते हैं।"

काम से प्रोन्नति का कोई ताल्लुक नहीं है, यह पत्नी को समझाया नहीं जा सकता है।

मिसाल के तौर पर विजली को ही लिया जा सकता है। विजली विशाखा से देखने में ज्यादा खूबसूरत है। लेकिन मुखर्जी-भवन की मालकिन ने विशाखा को ही क्यों पसन्द किया?

तपेश गांगुली कहता, "सव भाग्य की वात है जी, भाग्य की वात। समझीं? वरना विजली लड़की होने के वजाय लड़का होकर पैदा हो सकती थी।"

सभी नींद में मशगूल हैं लेकिन तपेश गांगुली के दिमाग में रात-भर यही सब चिन्ताएं चक्कर काटती रहीं। कुल मिलाकर हल्की-सी झपकी आई ही होगी कि वह विस्तर से उठकर खड़ा हो गया। सबको पुकारने लगा, "उठो-उठो, बिजली, उठ-उठ, काफी वक्त हो चुका है।"

यह कहकर खुद तैयार हो गया। रानी तपेश की पुकार से झुंझला उठी, "इतना शोर-शराबा क्यों मचा रहे हो?"

तपेश बोला, "शोर-शराबा क्या यों ही मचा रहा हूं? याद नहीं है कि आज विशाखा की ससुराल जाना है।"

रानी की नींद असमय टूट जाने से वह शुरू से ही खफा थी। बोली, "यही वजह है कि नौकरी में तुम्हारा प्रमोशन नहीं होता। तुम अपना काम करो। सवेरे से मेरे पीछे लगे रहते हो। तुम जाकर अपना काम करो। मैं अपना काम समझती हूं—"

तपेश को भी गुस्सा आ गया। बोला, "तुम्हारे इसी स्वभाव के चलते मुझे लड़का नहीं होता, तुम केवल लड़की पैदा करती हो।"

आखिर में रानी उठी और बोली, "जाओ-जाओ, सवेरे-सवेरे तुम्हारा मुंह देखना भी पाप है। काम के नाम पर तो हेकड़ी गुम हो जाती है और बात बनाने में उस्ताद—"

अक्सर झगड़े से ही दोनों के दिन की शुरुआत होती है। जब तक विशाखा और उसकी मां थी, झगड़ा-टण्टा कुछ कम होता था। लेकिन उनके चले जाने के बाद से झगड़ा-टण्टा इस घर की रोज़मर्रा की घटना हो गई है।

लेकिन आज के झगड़े ने और-और दिनों के झगड़े को पीछे छोड़ दिया। तपेश और कुछ बोले बिना सीधे एक सुनार की दुकान में चला गया। उस समय दुकान नहीं खुली थी। दुकान का शटर बन्द था। ५

बहुत देर के बाद जब दुकान खुली तो काफी वक्त हो चुका था। दुकानदार पर नज़र पड़ने पर बोला, "इतनी देर से कहां गई जनाब? सवेरे से आपकी दुकान के सामने खड़े रहने की वजह से पैर दुखने लगे।" दुकानदार को उसकी बात सुनकर हैरानी हुई। बोला, "आप कौन हैं?"

"मैं? मेरा नाम है तपेश गांगुली, मनसातल्ला लेन में रहता हूं।"

दुकानदार ने पूछा, "आपको क्या खरीदना है?"

इस बीच दुकानदार ने दरवाज़े का ताला खोल, दुकान में धूना जलाकर और गंगाजल छींटकर गणेश की मूर्ति की पूजा शुरू कर दी है। प्रणाम करने के बाद पूछा, "आपको क्या चाहिए?"

तपेश बोला, "मुझे कुछ नहीं चाहिए।"

दुकानदार को आश्चर्य हुआ।

बोला, "नहीं चाहिए तो फिर आए क्यों हैं?"

"मैं सोने का एक जोड़ा बाला बंधक रखने आया हूं।"

"सोने का बाला? दिखाइए—"

तपेश ने पॉकेट से सोने के बाले का जोड़ा निकालकर कहा, "देखिए, गौर से देखिए। गिलट नहीं, निखालिस सोने का गहना है।"

दुकानदार ने कहा, "देखता हूं—"

यह कहकर दुकानदार अन्दर चला गया। तपेश बाहर से चिल्लाने लगा, "ऐ साहब, कहां गए?"

अन्दर से सुनार बोला, "आ रहा हूं—"

तपेश बोला, "और कितनी देर तक खड़ा रहूं जनाब? आज मुझे अपनी भतीजी

की ससुराल निमंत्रण पर जाना है—नहीं जाने से काम नहीं चलेगा—"

दुकान खोलते ही कोई दुकानदार अपनी दुकान के माल की खरीद-विक्री का काम नहीं करता। उसके पहले कोई मांगलिक कार्य करना अनिवार्य हो जाता है। गणेश ही नहीं बल्कि सभी तरह के देवी-देवता की पूजा कर दिन की शुरुआत करना उसका रोज़मर्रा का काम है। दुकानदार उस समय यही सब कर रहा था। एकमात्र उद्देश्य यही होता है कि वह दिन शुभ रहे, व्यापार में खासी अच्छी आमदनी हो।

तपेश के दवाव पर दुकानदार अब अन्दर से बाहर आकर बैठा। उसके बाद कैश-बॉक्स को प्रणाम किया। उसके बाद तपेश गांगुली की तरफ मुखातिव होकर बोला, "अब वताइए, आपको क्या चाहिए?"

तपेश पहले से ही झुंझलाया हुआ था। बोला, "आपने इतनी देर कर दी! अब तक आप क्या कर रहे थे?"

दुकानदार ने कहा, "वगैर पूजा-पाठ किए कहीं कारोबार की शुरुआत की जाती है?"

तपेश बोला, "पहले ग्राहक संभालिएगा या पूजा-पाठ कीजिएगा? ग्राहक ही तो लक्ष्मी है।"

दुकानदार ने कहा, "नहीं भाई मेरे, नहीं। यह जो आप इतनी दुकानें रहने के बावजूद मेरी दुकान में आए हैं यह तो मां लक्ष्मी की ही दया है।"

वात खत्म होने के पहले ही तपेश बोला, "यह सब वाहियात बात है। लक्ष्मी-वक्ष्मी कुछ नहीं। दुनिया में दौलत ही सब कुछ है। दौलत रहेगी तो वह सब अपने आप हाथ में चला आएगा। बहरहाल, मैं अपने काम के बारे में बताऊं—"

यह कहकर सोने के दोनों वाले आगे बढ़ा दिए। बोला, "इन दोनों को आपके पास बंधक रखने आया हूं।"

दुकानदार ज़रा निराश हो गया। बोला, "बंधक रखकर रुपया लेने आए हैं?"

सुनार गहने-गुड़िया बेचने के बजाय बंधक रखने में ही ज़्यादा उत्सुकता का अनुभव करते हैं। बोला, "ठहरिए, पहले इनका वज़न करने दीजिए—" यह कहकर वज़न कर कसौटी पर घिसकर उन्हें देखा और कहा, "इन्हें आप कब छुड़ाइएगा? छह महीने के अन्दर ही छुड़ा लेंगे न?"

तपेश बोल उठा, "छह महीने! यह क्या कह रहे हैं आप? परसों ही छुड़ा लूंगा!"

"परसों?"

तपेश ने कहा, 'हां, परसों ही छुड़ा लूंगा। महीने का आखिरी समय रहने के कारण ही पैसे की तंगी हो गई है। जानते हैं, यह रुपया क्यों ले रहा हूं? आपने 'सैक्सबी मुखर्जी' कंपनी का नाम सुना है?"

"हां-हां, सुना है।"

तपेश गांगुली ने कहा, "उसी सैक्सबी मुखर्जी कंपनी के मकान की बहू है मेरी सगी भतीजी—"

दुकनदार ने कहा, "अखबार में पढ़ा था, उसी सैक्सबी मुखर्जी कंपनी के एक पोते को फांसी की सजा मिली है।"

"फांसी की सजा मिली है तो क्या हुआ?"

दुकनदार ने कहा, "उस नाती ने क्या अपनी पत्नी की हत्या की थी?"

तपेश गांगुली ने कहा, "हां-हां, आप सही बात बता रहे हैं। उसी खून के मुजरिम से मेरी भतीजी की शादी हुई है।

"यह दूसरी शादी है ?"

"हां-हां, मेरी भतीजी उसकी दूसरी पत्नी है।"

"लेकिन उस मुजरिम को फांसी पर चढ़ा दिया जाएगा तो आपकी भतीजी विधवा हो जाएगी। जान-सुनकर भी आप लोगों ने उस आदमी से अपनी भतीजी की शादी की ?"

तपेश हो-हो कर हंस दिया। बोला, "आपने जनाब, मुझे हंसने को मजबूर कर दिया। माना, उस आदमी को फांसी पर चढ़ा दिया जाएगा, लेकिन रुपया ? उनके रुपयों को तो फांसी पर नहीं चढ़ाया जाएगा। एक दिन उन रुपयों की मालकिन हो जाएगी मेरी विधवा भतीजी ! तब ?"

दुकानदार ग्राहक की बात सुनकर निर्वाक् हो गया। तपेश बोला, "तब मर्जी होगी तो किसी दूसरे से भी शादी कर सकती है।"

दुकानदार बोला, "आप तो अजीब ही आदमी हैं। रुपयों के प्रति आप लोगों को इतना लोभ है ?"

तपेश बोला, "आप सुनार का व्यापार क्यों कर रहे हैं ? रुपए के लिए ही न ?"

दुकानदार ने सोचा, इससे बात करना भी पाप है। बोला, "आपके गहने के एवज में सात सौ रुपया दूंगा।"

"सिर्फ सात सौ रुपए !"

कितने तोले सोने का दाम कितने रुपए होते हैं, इसका हिसाब करने का तब उसके पास समय नहीं था। उस समय वह अपनी पत्नी और लड़की के लिए साड़ी खरीदने के बारे में ही सोच रहा था, बोला, "जानते हैं, उस भतीजी के घर आज पत्नी और लड़की के साथ दावत में शरीक होने के लिए जाना है, इसलिए अभी मेरे पास ज्यादा वक्त नहीं है। अभी आप रुपया दीजिएगा तो उन लोगों के लिए साड़ी खरीदने जाऊंगा। एक हजार रुपया दे दीजिए—"

दुकानदार ने कहा, "नहीं, मैंने हिसाब करके देखा है, सात सौ से एक भी पैसा ज्यादा नहीं दिया जा सकता है।"

अन्ततः सात सौ रुपया ही दिया गया। सात सौ रुपया पाकर ही तपेश को खुश होना पड़ा। बोला, "तो फिर सात सौ ही दीजिए। मुसीबत में फंसे बगैर कोई आप लोगों के पास गहना बंधक रखने को आ सकता है ? अब दर-दाम करने लगूं तो भतीजी के घर जाने में देर हो जाएगी। अभी साड़ी की दुकान में भी जाना है—"

दुकानदार ने चुन-चुनकर चार-पांच साड़ियां निकालीं। साड़ी के मामले में तपेश गांगुली अनाड़ी है। फिर भी उन्हीं में से दो साड़ियां चुनकर पूछा, "इन दोनों की कीमत कितनी है ?"

दुकानदार ने कहा, "हमारी दुकान में सारी चीजों का दाम फिक्सड है। दोनों साड़ियों की कीमत छह सौ तीस रुपए है—"

तपेश ने पूछा, "इन साड़ियों को पहन बड़े आदमी के घर दावत पर जाया जा सकता है ?"

ग्राहक का सवाल सुनकर दुकानदार को आश्चर्य हुआ। बोला, "बेशक जाया जा सकता है।"

"निंदा नहीं होगी तो ?"

"मेरी दुकान की साड़ी पहनने से कोई निंदा नहीं करेगा। आप निश्चिन्तता के साथ खरीदकर ले जा सकते हैं।"

तपेश गांगुली ने कहा, "अगर निंदा हुई तो आकर आपकी निंदा करूंगा, यह कहे

जाता हूं—"

कीमत चुकाकर साड़ी का बंडल लिए जब तपेश गांगुली घर लौटकर आया तो घड़ी साढ़े दस बजा रही थी। एक तो यों ही देर हो गई, उस पर घर में आकर देखा, चूल्हे पर रसोई पक रही है। तपेश चिल्ला उठा, "यह क्या, तुम खाना पका रही हो?"

रानी बोली, "खाना नहीं पकाऊंगी तो तुम दफ्तर कैसे जाओगे?"

तपेश बोला, "तुमसे किसने कहा कि आज मैं दफ्तर जाऊंगा?"

"क्यों, तुम्हें आज दफ्तर नहीं जाना है?"

तपेश बोला, "इतने कांड के बाद तुम कह रही हो कि सीता किसका बाप है? कल तुम्हें बताया था न, कि विशाखा ने हम तीनों को खाने पर बुलाया है?"

"कहां खाने पर बुलाया है?"

"अरे, तुम्हें बताया था न कि विशाखा ने हमें ससुराल में खाने पर बुलाया है। इसीलिए तो आज सवेरे तुम्हारे सोने के बाले को बंधक रखकर तुम दोनों के लिए साड़ी खरीदकर ले आया। लगता है, नींद के खुमार के कारण तुम कुछ समझ नहीं सकीं। यह देखो, दोनों साड़ियों को एकबार देख लो।"

यह कहकर पैकेट खोल रानी को दोनों साड़ियां दिखाईं। रानी ने देखा, साथ-साथ बिजली ने भी। नई साड़ियां! देखकर बिजली बोल उठी, "वाह, बहुत ही सुन्दर!" लगा, रानी को भी पसन्द आईं। बोली, "तो फिर मैं भात चूल्हे से उतारकर रख देती हूं।"

तपेश बोला, "ज़रूर! विशाखा ने मुझसे बार-बार कहा था कि सबको लेकर उसके घर पर आऊं।"

इसके बाद विशाखा के घर जाने के लिए सबको तैयार होने की बारी है। इतनी जल्दी तैयार होना क्या सम्भव है? खासकर औरतों के लिए। औरतों को साड़ी पहनने में ही आधा घंटा लग जाता है। उसके बाद चेहरे पर पाउडर-स्नो-क्रीम लगाना पड़ता है, इस काम में कोई कम वक्त नहीं लगता।

बाहर से तपेश चिल्लाता है, "हुआ जी?"

रानी बोली, "अब हो चला, ज़रा सा बाकी है···"

ज़रा-सा बाकी कहने से वह 'बाकी' कभी खत्म नहीं होता। उधर घड़ी की सुई की तरफ देखकर तपेश गांगुली चौंक पड़ा।

"क्यों जी, हुआ?"

अब कोई उत्तर नहीं मिलता है। तपेश दुबारा चिल्लाता है, "क्यों री बिजली, तुम लोग तैयार हो गईं?"

बिजली छोटा-सा जवाब देती है, "थोड़ी-सी और देर है बाबूजी—"

तपेश बोल उठा, "आश्चर्य! तुम लोग इतना क्या साज-सिंगार कर रही हो, बताओ? वह खाना तैयार कर बाट जोहती हुई क्या सोच रही होगी। ज़रा जल्दबाज़ी करो बिटिया। उधर काफी फासला भी तय करना है। जाते-जाते एक बज जाएगा।"

आखिर में बिजली सज-संवरकर नई साड़ी पहने बाहर आई। बोली, "मैं अच्छी दिख रही हूं बाबूजी?"

तपेश गांगुली बोला, "बहुत ही अच्छी दिख रही हो। अब तुम्हारी मां निकले तो अच्छा रहे।"

बिजली बोली, "मां अभी पैरों में महावर लगा रही है।"

तपेश गांगुली ने कहा, "तूने पैरों में महावर नहीं लगाया? तेरी मां लगा रही है तो तू भी लगा सकती थी।"

"मैं महावर लगा लूं ?"

"हां-हां, महावर लगा ले। यों भी देर हो ही चुकी है। मैंने सोचा था, बस से चलेंगे। अब लगता है हमें टैक्सी से ही जाना पड़ेगा। कुछेक रुपए व्यर्थ ही खर्च हो जाएंगे।"

सो चाहे जो हो, अन्ततः रानी जब कमरे से बाहर निकली तो साढ़े ग्यारह बजने-बजने को था। तपेश बोला, "चलो-चलो, अब देर करने से काम नहीं चलेगा।"

रानी बोली, "दरवाज़े पर ताला लगाना है न—"

तपेश बोला, "सो तो लगाना ही है। जल्दबाज़ी करो, तुम मां बेटी को सजने-संवरने में इतना वक्त बीत गया। विशाखा शायद अभी बहुत ही खफा हो गई होगी।"

रानी ने कहा, "तुम्हें आज दफ्तर नहीं जाना है, यह पहले क्यों नहीं बताया था ?"

तपेश बोला, "आफिस न जाने से भी काम चल जाएगा। सरकारी आफिस में कौन आया और कौन नहीं आया, इसका क्या कोई हिसाब रखता है ? तुम इतने दिनों से मुझे देख रही हो, फिर भी यह बात कहती हो ?"

यह कहकर मकान के सदर दरवाज़े पर ताला जड़ दिया और वे लोग सड़क पर निकल आए।

मुहल्ले के एक आदमी से रूबरू मुलाकात हो गई। वह आदमी बाजार से लौट रहा था। तपेश गांगुली को सपरिवार बाहर निकलते देखकर बोला, "क्या बात है, इतना वक्त गुज़र जाने के बाद कहां जा रहे हैं ?"

तपेश गांगुली ने कहा, "मेरी भतीजी ने अपने घर पर खाने को बुलाया है। आप तो विशाखा को पहचानते थे ?"

विशाखा ? आपकी वही भतीजी विशाखा ? उसकी शादी कहां हुई है ?"

तपेश गांगुली ने कहा, "यह क्या, आपको मालूम नहीं ? ब्रिडन स्ट्रीट के मुखर्जी भवन में। वह एक बहुत बड़े आदमी की इमारत है। उस घर का विलायत से लौटा हुआ पोता मेरी भतीजी का पति है ? जानते हैं, उन लोगों के पास बेशुमार पैसा है। उसी भतीजी ने हमें दावत दी है। वहीं जा रहे हैं। हमें ले जाने के लिए उसने गाड़ी भेजने की बात कही थी, लेकिन मैंने कहा, नहीं टैक्सी से ही जाऊंगा।"

"इसीलिए लगता है, आज आफिस नहीं गए।"

"हां।"

यह कहकर सड़क पर चलती एक खाली टैक्सी पर नज़र जाते ही तपेश गांगुली ने पुकारा, "ऐ टैक्सी, टैक्सी—"

आदमी जब घर-गृहस्थी से जुड़ा रहता है तो उसका लक्ष्य केवल चलने की ओर रहता है। केवल दूर की ओर। वह पीछे की बात भूल जाता है पीछे की बात सोचना भी नहीं चाहता है वह। मैं और दूर जाऊंगा, मैं और आगे बढ़ूंगा। सबको पीछे छोड़कर, सबको पराजित कर मेरे चलने का क्रम निरन्तर जारी रहेगा। यही बात उसमें साहस का संचार करता है, यही सोच उसे सामने की ओर खींचकर ले जाता है। कहता है—चलो-चलो, आगे बढ़ते जाओ। तुम्हें और बहुत दूर तक जाना है, तुम यहीं ठिठककर खड़े मत हो जाना, क्योंकि एक दिन तुम्हें दसियों से ऊंचे स्तर पर पहुंचना है, विश्वविजयी बनना है।

कहा जाता है, विश्वविजेता सिकन्दर ने भी यही सोचा था। कम उम्र में ही

उसकी मौत हो गई थी। मौत के पहले उसने एक बार कहा था, एक ही दुनिया को जीत कर उम्मीद मुकम्मल नहीं हुई। एक और दुनिया होती तो वह उसे भी जीत लेता और तब उसकी जीत मुकम्मल होती। इसी का नाम जवानी है।

लेकिन बुढ़ापा ? बुढ़ापा शुरू होते ही आदमी दूसरी ही तरह का हो जाता है। उस समय वह कहता है—और नहीं, अब मुझे ठिठककर खड़ा होना है और संचय करना है। जो कुछ कमाया है, अब उसकी रक्षा की तरफ ध्यान लगाऊं। मेरी ज़िन्दगी का आखिरी दौर जिससे कि शांति के साथ गुज़रे, उसी तरफ ध्यान दूं।

ज़िन्दगी के आखिरी दौर की बातों का ज़िन्दगी के शुरूआती दौर में किसी को भी स्मरण नहीं रहता। उसे इस बात का खयाल नहीं रहता कि संसार बड़ा ही निष्ठुर है। वह किसी की भी परवाह नहीं करता। वह लगातार बेरोक-टोक कहे चलता है—तुम हमेशा के लिए संसार में रहने नहीं आए हो, मेरे राज्य में किसी के लिए चिरन्तन काल तक स्थान नहीं है। एक दिन तुम्हें हटना ही है, एक दिन मैं तुम्हें हटाकर छोड़ूंगा। इसलिए तुम अभी से प्रस्तुत हो जाओ—

लेकिन जवानी के दौरान यह बात सुनने वाला आदमी कहां मिलेगा ? जो लोग सुनते हैं, जिन्हें सुनाई पड़ती है, आगे चलकर वे ही महापुरुष होते हैं। वे प्रातः स्मरणीय होते हैं, उनकी कभी मृत्यु नहीं होती।

यही वजह है कि दादी मां ने बाजाब्ता एक दिन संचय करना शुरू किया था। उन्होंने भी सवेरे गंगा-स्नान करने के दौरान विशाखा को देखकर तय किया था कि इसी लड़की से अपने पोते को ब्याहेंगी। विशाखा से अपने पोते की शादी करके अपने वंश की धारा को अक्षत रखेंगी—अपने वंश, अपनी सपदा और अपने संचय को अक्षुण्ण रख जाएंगी।

इसीलिए उन्होंने गिरिधारी को रात नौ बजे मकान का सदर फाटक बन्द करने का पुख्ता हुक्म दे रखा था। इसी वजह से वह बारीकी से इस बात पर ध्यान रखतीं कि कहां नल का पानी बर्बाद हो रहा है, कौन कहां काम में ढिलाई बरत रहा है।

लेकिन इतनी पाबन्दियों के बावजूद क्या वे अपने घर की गृहलक्ष्मी को अचल बनाकर रख सकीं ? वे अपने घर की देवी सिंहवाहिनी को सांकल में बांधकर रख सकीं ? क्यों नहीं रख सकीं ?

इसलिए नहीं रख सकीं कि संसार किसी को मौरूसी पट्टा देकर चिरस्थायी बंदोबस्त का अधिकार नहीं देता। संसार केवल यही कहता है—तुम हट जाओ वरना मैं कोतवाल से तुम्हें हटवा दूंगा।

वे जब बेहोशी की हालत में अपने बिस्तर पर पड़ी रहतीं, उस समय यह सब बात उन्हें याद आती या नहीं, कौन जाने ! लेकिन विशाखा को याद आती। वह केवल यही सोचती, इतने रुपये-पैसे, गहने-जेवरात रहने के बावजूद यह औरत इतनी निःसहाय क्यों है ? क्यों इतनी निःसंबल है ?

वह ददिया सास के बिस्तर के पास बैठ चुपचाप यही सब बात सोचती और सोच-सोचकर हैरान हो जाती कि उसकी ददिया सास जैसी दबंग, दौलतमंद औरत किस तरह आहिस्ता-आहिस्ता मौत की ओर कदम बढ़ा रही है। जिस औरत के भय से पूरा मकान किसी दिन सिकुड़ा-सिमटा रहता था, उसकी अस्वस्थ्यता से नाजायज फायदा उठाकर कौन पानी बर्बाद कर रहा है, कौन बेवजह रोशनी जलाए हुए है और कौन रात नौ बजे सदर गेट बन्द करता है—इसकी देखरेख करने वाला कोई है या नहीं, इसका ध्यान रखने लायक उनकी हालत नहीं है।

अचानक बीच-बीच में जरा-सा होश आते ही ददिया सास विशाखा को पहचान-

कर उनके हाथों को कसकर दबा लेतीं। विशाखा ने धीमे स्वर में कहती, "बहूरानी—"

विशाखा ददिया सास के मुंह के पास अपना मुंह ले जाकर कहती, "मैं हूं दादी मां। आप मुझसे कुछ कहना चाहती हैं?"

मुंह से कुछ बोलने की कोशिश करने के बावजूद हमेशा बोल नहीं पातीं—

विशाखा कहती, "कहिए दादी मां, कहिए।"

ददिया सास फिर से बोलने की कोशिश करतीं पर बोल नहीं पातीं।

विशाखा झुककर कहती, "बोलिए-बोलिए, मैं विशाखा हूं—"

"तू···बू···तुम···"

"कहिए दादी मां, कहिए, मैं सुन रही हूं, कहिए।"

उस समय जैसे थोड़ी चेतना आ जाती; कहतीं, "बहूरानी···"

"कहिए दादी मां, कहिए।"

ददिया सास फिर कुछ कहने की कोशिश करतीं। लेकिन बात न कर पाने की वजह से आंखों से आंसू की धारा बहने लगती।

विशाखा कहती, "कहिए दादी मां, कहिए।"

ददिया सास दुबारा कुछ क्षणों तक बेहोशी की हालत में पड़ी रहतीं। सेवा-सुश्रूषा के लिए जिस नर्स को रखा गया था, वह भी उस समय समझ नहीं पाती कि क्या किया जाए। दिन और रात के लिए बारी-बारी से अलग-अलग नर्स निगरानी के लिए आती। ददिया सास बीच-बीच में जब आंख खोलतीं तो दोनों नर्स को देखकर उन्हें खुशी नहीं होती, इसका पता चल जाता था। लेकिन जब विशाखा आती तो उनका मनोभाव और ही तरह का हो जाता। पता चल जाता कि वे खुश हैं और बातें करना चाहती हैं।

"कहिए दादी मां, आप मुझसे कुछ कहना चाहती हैं?"

ददिया सास अपने हाथ में विशाखा का एक हाथ कसकर पकड़ लेतीं। बात करने की कोशिश करतीं। लगता, वे विशाखा से कोई खास बात कहना चाहती हैं।

"बहूरानी···तुम···कभी···मत···जाना···"

विशाखा इस बात का मतलब समझ पाती थी। कहती, "नहीं दादी मां आप चिन्ता न करें, मैं कभी आपका घर छोड़ कहीं नहीं जाऊंगी। मैं इस घर की बहू हूं, मैं कहीं नहीं जाऊंगी—आप चिन्ता न करें। आपको वचन दे रही हूं"

विशाखा की बातें संभवत: ददिया सास को बहुत अच्छी लगतीं। वे भले ही बोल नहीं पातीं, लेकिन सुनने में उन्हें कोई दिक्कत नहीं होती। इसीलिए वह हमेशा ददिया सास के कान के पास अपना मुंह ले जाकर कहती, 'नहीं मांजी, आप खामख्वाह डर रही हैं। मैं आपको वचन देती हूं, मैं जीवन में कभी इस घर को छोड़कर नहीं जाऊंगी—"

उसकी बातें सुनकर ददिया सास को संभवत: तृप्ति का अहसास होता। चेहरे का भाव देखकर ही यह समझ में आ जाता। विशाखा भी यह सब बात अपनी ददिया सास से कहकर तृप्ति का अनुभव करती। उस हालत के दौरान भी मल्लिक जी आकर पुकारते, "भाभीजी—"

विशाखा समझ जाती कि मल्लिकजी उसे गेस्टहाउस के खर्च का हिसाब समझाने आए हैं। खाता लेकर मल्लिकजी पढ़ते जाते। बिजली का बिल कितना दिया गया है, नौकरों और महरियों को तनख्वाह की बाबत कितने रुपये दिए गए हैं, बाजार खर्च के मद में कितने रुपये दिए गए हैं। मल्लिकजी समूचे खर्च का हिसाब बोलते जाते और विशाखा ददिया सास की रोकड़ बही में उन्हें दर्ज कर लेती। ददिया सास के जमाने से यह सिलसिला चला आ रहा था। उनके बीमार हो जाने के बाद से यह काम बिल्कुल

सौंप दिया गया है।

काम खत्म होने के बाद मल्लिकजी बोले, "दादी मां आज कैसी है ?"

विशाखा ने कहा, "आज दादी मां ने बातें की हैं—"

"यह बात ! तो फिर डाक्टर साहब की दवा ने अपना असर दिखाया है। बातें की हैं ?"

विशाखा ने कहा, "आज उन्होंने मुझसे कहा, तुम इस घर को छोड़कर कहीं मत जाना।"

"इसका मतलब ?"

विशाखा ने कहा, "उन्हें इस बात का भय है कि मैं कहीं इस घर को छोड़कर चली नहीं जाऊं।"

"यह सुनकर तुमने क्या कहा ?"

विशाखा बोली, "मैंने कहा, मैं वचन देती हूं, मैं इस घर को छोड़कर कभी कहीं नहीं जाऊंगी। मेरी बात सुनकर वे बेहद खुश हुईं, ऐसा लगा—"

बातचीत के बीच एकाएक बिन्दु ने कमरे के अन्दर प्रवेश किया। बोली, "भाभीजी गिरिधारी खबर पहुंचा गया है कि मंझले बाबू आए हैं।"

"मंझले बाबू ?"

दादी मां की बीमारी के बारे में अवश्य ही ट्रंककॉल से मंझले बाबू को सूचना भेजी गई थी। लेकिन वे कब किस वक्त आएंगे, इसकी जानकारी नहीं थी।

यह खबर सुनते ही मल्लिकजी तेज कदमों से नीचे की ओर भागे। सदर फाटक के पास जाने पर देखा, मंझले बाबू गाड़ी से उतर रहे हैं। उनके साथ हाथ में सूटकेस थामे गिरिधारी भी आ रहा है। मल्लिकजी ने उसके हाथ से सूटकेस लेकर कहा, "तुम जाओ, इसे मैं ले चलता हूं—"

मंझले बाबू मल्लिकजी के पहले ही तेज़ कदमों से सीढ़ियां तय करते हुए ऊपर पहुंच गए। मल्लिकजी आहिस्ता-आहिस्ता जा रहे थे। अचानक पीछे से गिरिधारी ने पुकारा, "मैनेजर बाबू, मैनेजर बाबू, कौन बाबू आए हैं देखिए—"

मल्लिकजी दुबारा सदर गेट की तरफ गए। वहां जाने पर देखा, तपेश गांगुली खड़ा है। लगा, उसके पीछे उसकी पत्नी और लड़की खड़ी हैं।

मल्लिकजी ने उन्हें देखकर कहा, "आप लोग किस काम से आए हैं ? हम लोगों के घर में फिलहाल भारी मुसीबत का दौर चल रहा है—दादी मां बीमार हैं—बीमारी की खबर पाकर मंझले बाबू अभी तुरन्त आए हैं—अभी आप लोगों से बात करने की किसी को फुर्सत नहीं है। अभी आप लोग जाइए, बाद में किसी दिन आइएगा।"

तपेश गांगुली का चेहरा उतर गया।

बोला, "मैं अपनी भतीजी से मिलने आया हूं—"

"आपकी भतीजी कौन है ?"

तपेश गांगुली ने कहा, "मेरी भतीजी का नाम है विशाखा ! वह इस घर की बहू है। उसने हम सबों को खाने पर बुलाया है, इसीलिए आया हूं। आप एक बार उसके पास खबर पहुंचा दें कि हम लोग आए हैं।"

मल्लिकजी ने कहा, "अभी आप लोगों से बातचीत करने की फुर्सत नहीं है आपकी भतीजी को। अभी वे व्यस्त हैं। घर की मालकिन फिलहाल मरने-मरने जैसी हालत में हैं। आप लोग बाद में आइएगा—"

तपेश गांगुली ने कहा, "हम बहुत खर्च करके आए हैं —"

मल्लिकजी ने इस बात पर ध्यान न देकर गिरिधारी से कहा, "गिरिधारी, इन

लोगों को घर के अन्दर घुसने मत देना—"

यह कहकर वे अन्दर चले गए। उसके बाद सीढ़ियां चढ़ ऊपर जाने लगे।

आज इतने दिनों के बाद मुक्तिपद मुखर्जी का स्मरण आ रहा है। उनका नाम जिन्होंने रखा था, उन्हें क्या पहले से पता था कि उस मुक्तिपद को जीवन में कभी मुक्ति नहीं मिलेगी। सब कुछ से जुड़े रहने के बावजूद मुक्त रहने की जिस शक्ति की आवश्यकता है, उसे अपने वश में नहीं कर पाएंगे, शायद इसी खयाल से उस तरह का नाम रखा गया था। मसलन उनके बड़े भाई का नाम। उनके बड़े भाई का नाम रखा गया था शक्तिपद। वे क्या सचमुच ही शक्तिशाली थे? अगर वे शक्तिशाली होते तो फिर सैंतीस साल की उम्र में उनकी मृत्यु क्यों हुई होती?

यही वजह है कि जब मुक्तिपद संसार के तरह-तरह की अशान्ति में फंसकर छटपटाते रहते उस समय बीच-बीच में किसी अदृश्य शक्ति को सम्बोधित कर निःशब्द उससे सवाल करते। "तुम अगर मुझे मुक्ति नहीं दोगे तो फिर मेरा नाम मुक्तिपद क्यों रखा था? क्यों मुझे विपत्ति से मुक्ति पाने का कौशल नहीं सिखाया?"

लेकिन उसके कर्मचारीगण कितने सुखी हैं! वे महीने के आरम्भ में मासिक वेतन पाकर निश्चिन्त हो जाते हैं। उन्होंने देखा है, वे लोग आपस में कितनी हंसी-ठिठोली करते हैं, दोस्त-मित्रों के साथ क्लब में टेनिस खेलते हैं। बीच-बीच में भोज का आयोजन करते हैं। साल में एक महीने की छुट्टी लेकर कितनी ही जगहों से घूम-फिर आते हैं।

और मुक्तिपद? वे लोग कल्पना भी नहीं कर सकते कि जो आदमी इन सबों का मालिक है, उसे रात में नींद आती है या नहीं, इनकम-टैक्स के कारण उसका मन स्थिर रहता है या नहीं।

कहीं किसी किताब में उन्होंने पढ़ा था—"जो सिर्फ हरदम अपने आपको ही देखता रहता है वह दूसरे को नहीं देख पाता। और जो हर वक्त बाकी सभी लोगों को देखता है वह अपने आपको भी देख पाता है।"

लेकिन यह बात क्या सच है? मुक्तिपद तो हमेशा अपने स्टाफ की सुख-सुविधा का ही खयाल रखते हैं—कौन काम करता है, कौन काम में ढिलाई बरत रहा है, कौन कम्पनी का भला चाहता है, कौन केवल अपने रुपए-आने-पाई के बारे में ही सोचता रहता है। लेकिन फिर भी क्यों वे खुद को उनके बीच खोज नहीं पाते? क्यों वे महसूस करते हैं कि उनके अतिरिक्त सभी लोग सुखी हैं? यहां तक कि अपने नौकर-चाकर, ड्राइवर वगैरह को खुद से अधिक सुखी क्यों समझते हैं?

जिस दिन कलकत्ता से मल्लिकजी ने उन्हें टेलीफोन में मां की बीमारी की सूचना दी, उसी दिन उन्हें लगा कि उनके सिर पर जैसे गाज गिर पड़ी है। उसके बाद जब थोड़ी-सी चेतना आई तो उन्हें लगा कि वे मातृहीन हो गए हैं।

एक तरफ उनकी फैक्टरी है और दूसरी तरफ परिवार। इन दोनों के दबाव में पड़कर वे अस्तित्वहीन हो गए। टेलीफोन से मल्लिकजी को कहा, "मैं आज ही आ रहा हूं।"

कह तो दिया लेकिन काम छोड़कर कलकत्ता जाना क्या इतना सहज है? छोड़ने की इच्छा तो होती है लेकिन पीछे से पीछे के खिंचाव कहते हैं—"मां की मृत्यु से इतना कातर होने से काम नहीं चलेगा। मृत्यु तो अन्त है लेकिन हम प्रारम्भ हैं। हम रहेंगे इसलिए हमारे बारे में सोचना तुम्हारे लिए सबसे पहले उचित है। तुम हमारे संचालक हो, अतः तुम्हारे चले जाने से हमारे बारे में कौन सोचेगा?

फैक्टरी के तमाम लोगों को पता चल गया कि मैनेजिंग डाइरेक्टर चन्द दिनों के लिए कलकत्ता जा रहे हैं।

नंदिता ने पूछा, "तुम कितने दिनों के लिए जा रहे हो?"

मुक्तिपद बोले, "अभी मैं इस सम्बन्ध में कैसे बता सकता हूं ? मां की बीमारी की हालत देखने के बाद ही बता सकूंगा। मैं टेलीफोन से तुम्हें सब कुछ जनाऊंगा।"

उसके बाद घर से निकलने जा रहे थे, एकाएक पिकनिक की याद आ गई। पूछा, "पिकनिक कहां है ?"

"वह तो सोई हुई है।"

"सो रही है ? वह इतनी देर से उठती है ? कल देर से सोई थी ?"

नंदिता बोली, "यह कैसे बता सकती हूं ?"

मुक्तिपद ने कहा, "तुम उसके बारे में जानकारी नहीं रखोगी तो फिर कौन रखेगा ? उसे कहीं अकेले मत छोड़ो। तुम्हें ऐसा तो सारा कुछ बता चुका हूं।"

"इसलिए तो तुमसे कह रही थी कि उसकी शादी करा दो।"

मुक्तिपद ने कहा, "आजकल लड़की-लड़के की शादी करना क्या इतना आसान काम है ? तुम तो देख ही रही हो कि मैं कितनी कोशिश कर रहा हूं। शादी करने के पहले पात्र की 'पेडिग्री' देखनी नहीं है ?"

नन्दिता ने कहा, "पेडिग्री देखते-देखते नंदिता बूढ़ी हो जाएगी। सो हो, वरना पिकनिक की भी तुम लोगों के सौम्य की जैसी हालत हो जाएगी।"

बातचीत का सिलसिला आगे बढ़ाने से वह लम्बा खिंचता जाता है। इसीलिए इस बात का कोई जवाब दिए बगैर मुक्तिपद सीधे बाहर की सड़क पर खड़ी गाड़ी में जाकर बैठ गए। बोले, "चलो एयरपोर्ट—"

रास्ते भर मुक्तिपद सिर्फ अपनी जिन्दगी के बारे में ही सोचते रहे। कहां थी उस समय वह फैक्टरी, कहां थी वह नंदिता और कहां थी वह पिकनिक ! उस समय एकमात्र मां ही उसके सोच की एकमात्र संगिनी थी। मां उसे कितना लाड़ करती थी, उसका कोई ठिकाना नहीं। हमेशा अपने पास बिठाकर खाना खिलातीं। कभी उन्हें नौकर-दाई के भरोसे नहीं छोड़तीं। मां बड़े लड़के का उतना ध्यान नहीं रखतीं। शक्तिपद की अपेक्षा मुक्तिपद को ही मां ज्यादा प्यार करती थीं। रात में मां के पास सोए बगैर मुक्तिपद को नींद नहीं आती।

मां जब पिताजी के साथ कॉन्टिनेन्ट चली जातीं तो मुक्तिपद की आंखों से टप-टप आंसू की बूंदें टपकने लगतीं। कहते, "मां, मैं तुम्हारे साथ जाऊंगा, तुम्हारे साथ जाऊंगा—"

मां जाने के पहले शक्तिपद और मुक्तिपद के लिए चॉकलेट के दो-तीन बक्से खरीद देतीं। कहतीं, "तुम लोग फिक्र मत करना, मैं पांच-छह दिन में ही वापस चली आऊंगी।"

आखिर में मां की बात पर किसी को यकीन नहीं होता। पांच-छह दिन की बात कहकर मां विदेश में एक महीना बिताकर आतीं। उस समय तकरीबन हर रोज मां टेलीफोन से उन लोगों से बातचीत करतीं। कहतीं, "अब मैं देर नहीं करूंगी, जल्दी ही आ रही हूं। लौटने का टिकट मिलते ही कलकत्ता वापस आ जाऊंगी, अब देर नहीं होगी। वादा करती हूं—"

लेकिन मां कभी उस वायदे को निभा नहीं पातीं। वादा न निभा पाने की क्षतिपूर्ति अपने साथ ले आतीं। कभी घड़ी, कभी कैमरा, कभी टेनिस रैकेट। तरह-तरह की वस्तुएं लाकर मां उन्हें घूस देतीं।

मां से सम्बन्धित बहुत दिन पहले की बातें मुक्तिपद को याद आने लगी। जब बड़े भाई की मृत्यु हुई थी, उस समय उसकी शादी हो चुकी थी। कुल मिलाकर तब सौम्य का जन्म हुआ था। याद है, उस समय मां शोक से बेहोश हो गई थी। मां के लिए उस दिन नए सिरे से फिर डाक्टर बुलवाया गया था।

आज इतने दिनों के बाद वही मा अस्वस्थ होकर पड़ी हुई हैं।

एयरपोर्ट से बिडन स्ट्रीट तक आते-आते मुक्तिपद को बहुत देर हो गई। घड़ी तब लगभग बारह बजा रही थी। घर के सामने जाकर पहुंचते ही मुक्तिपद ने देखा, एक आदमी खड़े-खड़े गिरिधारी से कुछ बतिया रहा है। उसके साथ सम्भवतः उसकी पत्नी और अविवाहित लड़की भी है।

गिरिधारी उन लोगों से बातचीत करने में इतना मशगूल था कि मुक्तिपद पर उसकी नजर ही नहीं पड़ी। वह आदमी घर के अन्दर घुसना चाहता था मगर गिरिधारी उसे घुसने नहीं दे रहा था। और जैसे ही गिरिधारी की नजर मुक्तिपद पर गई तो उसने फौरन सैल्यूट किया और दौड़कर बिन्दु को इसकी सूचना दे आया।

वह आदमी उस समय कह रहा था, "अरे दरबानजी, मेरी भतीजी इस घर की नई बहू है। उसी ने हमें खाने पर बुलाया है। तुम बहूरानी को जाकर खबर पहुंचा आओ।"

इसके बाद मल्लिकजी के आ जाने से कोई बात सुनाई नहीं पड़ी।

ऊपर पहुंचते ही बिन्दु ने आकर घुटने टेककर प्रणाम किया। मझले बाबू ने पूछा, "मां का क्या हालचाल है?"

इसके कुछ बाद ही एक बहू ने सामने आकर जब अपने दोनों हाथों से उनके चरणों का स्पर्श कर प्रणाम किया तो वे ठिठककर खड़े हो गए।

पूछा, "यह कौन है बिन्दु?"

बिन्दु बोली, "हमलोगों की भाभी रानी—"

"ओ।"

यह कहकर सीधे मा के कमरे की ओर कदम बढ़ाए। तब तक मल्लिकजी भी मंझले बाबू का सूटकेस ले हांफते हुए वहां पहुंच चुके थे।

मल्लिकजी पर नजर पड़ने पर मझले बाबू ने पूछा, "मा अभी कैसी है?"

यह कहते हुए मा के कमरे में जाते ही देखा, एक नर्स मा का सिर दबा रही है।

मा की हालत देखकर मंझले बाबू वहीं चुपचाप खड़े हो गए। सम्भवत. बहुत पहले की बातें उन्हें याद आने लगीं। आश्चर्य! यही नरदेह, यही नारी देह है।

एक दिन जिस मा से कितना हठ किया है, कितनी डांट-फटकार सुनी है, उसी मां की यह हालत! अपनी जिन्दगी में मां को कभी शान्ति नहीं मिली। पति की मृत्यु देखी है इसी मा ने, लड़के की मृत्यु देखी है, बड़ी पुत्रवधू की भी मृत्यु देखी है। आखिर में एकमात्र पोते के कारादण्ड को भी देखना पड़ा है।

मा की ओर ताकते-ताकते मुक्तिपद को अपनी बात भी याद आने लगी। कुछेक क्षणों के लिए वे स्थान-काल-पात्र सारा कुछ भूल गए। वे उस समय जैसे मा को नहीं, अपने आपको देख रहे थे।

बहुत देर के बाद उनके मुंह से बोल फूटे। मल्लिकजी बगल में ही खड़े थे। मुक्तिपद ने पूछा, "इसके पहले कब मा को होश आया था?"

मल्लिकजी ने कहा, "कल एक या दो मिनट के लिए भाभी रानी से बातें की थीं। उसके बाद फिर बातें नहीं कर सकीं।"

"बहूरानी से क्या कहा था ?"

विशाखा पीछे ही खड़ी थी। मल्लिकजी ने कहा, "बताइए न भाभी रानी, दादी ापसे क्या कहा था।"

विशाखा ने कहा, "कल मैं बगल में बैठी हुई थी। अचानक उनकी आंखें खुलीं। खकर मैंने पूछा—कुछ कहना है दादी मां ? दादी मां की आंखों से टपटप आंसू की गिरने लगीं..."

मंझले बाबू ने पूछा, "उसके बाद ?"

"उसके बाद मैंने अपने पल्लू से दादी मां की आंखें पोंछ दीं। उस समय लगा, होंने मुझे पहचान लिया है, इसलिए रो रही हैं—"

"उसके बाद ?"

विशाखा कहने लगी, "उसके बाद मुझे लगा, उनके होंठ जरा थरथरा उठे— गा, वे कुछ कहना चाहती हैं। मैंने पूछा—मुझसे कुछ कहना चाहती हैं दादी मां ? मेरी ात शायद उनके कान में पहुंची।"

मुक्तिपद ने पूछा, "उससे बाद ?"

"उसके बाद उन्होंने मेरा एक हाथ कसकर पकड़ लिया और कहने लगीं—बहू-रानी तुम इस घर को छोड़कर कभी कहीं मत जाना—मुझे वचन दो। मैंने इसके उत्तर में कहा—मैं वचन देती हूं कि इस घर को छोड़कर कभी कहीं नहीं जाऊंगी।"

"उसके बाद ?"

विशाखा ने कहा, "यही उनकी अन्तिम बात थी। उसके बाद से वे कुछ बोली नहीं हैं।"

मुक्तिपद दुबारा मां की ओर अपलक निहारने लगे।

विशाखा की आवाज सुनकर मुक्तिपद का ध्यान एकाएक टूटा। उन्होंने विशाखा की ओर देखा। विशाखा एक तश्तरी उनकी ओर बढ़ाकर खड़ी है। तश्तरी में नाश्ता है।

विशाखा ने कहा, "इसे खा लीजिए—"

मुक्तिपद ने कहा, 'तुम यह सब करने क्यों गईं बहूरानी ?"

विशाखा के बदले बिन्दु ने कहा, "आप कितने सवेरे निकले होंगे, इतनी देर के बाद पहुंचे हैं। इसे खा लीजिए—"

मुक्तिपद ने कहा, "मैं तो प्लेन में ब्रेकफास्ट खाकर ही आया हूं, क्यों तुम यह सब करने गईं।"

दादी मां के गले से उस समय कराहने जैसी एक आवाज निकलने लगी।

विशाखा ने कहा, "दादी मां को आपकी आवाज सुनाई पड़ी है, उन्होंने आपको पहचान लिया है—"

उस समय मुक्तिपद का खाना खत्म हो चुका था। वे झुककर मां का एक हाथ थामकर कहने लगे, "मां, मैं मुक्तिपद हूं। मैं आ गया हूं। अब तुम अच्छी हो जाओगी मैं आ गया हूं..."

आश्चर्य, शायद हर आदमी की यही परिणति होती है। हालांकि जब मां हो में थीं तो यही औरत मुक्तिपद को कितनी खरी-खोटी सुनाती थीं। टेलीफोन से भी लड़ को खरी-खोटी सुनाती थी। सिर्फ मुक्तिपद ही नहीं बल्कि पूरा मकान तब मां के भय सिकुड़ा-सिमटा-सा रहता था। जो आदमी किसी काम में लापरवाही बरतता उसे तरह-तरह से अपने काबू में रखतीं। कहा जा सकता है कि उन दिनों पूरा म उनके भय से सन्त्रस्त रहता था। लेकिन वही औरत अब बिलकुल असहाय है, वे अचल होकर पड़ी हुई हैं। अब दूसरे की करुणा की पात्री बनकर उन्हें दिन बिताने

है। तो भी आदमी की इस दुनिया में प्रतिदिन अहंकार का कितना आडम्बर चलता रहता है! कितने अत्याचारों के हुंकार से धरती के कितने आदमी कितनी बार कांप उठे हैं!

मुक्तिपद ने विशाखा की ओर गौर से देखा।

बोले, "देखूं, डाक्टर का प्रेसक्रिप्शन कहां है।"

नर्स ने प्रेसक्रिप्शन लेकर विशाखा ने मुक्तिपद के हाथ में दिया उसे लेकर मुक्तिपद ने देखा। उसके बाद पुन: उसे विशाखा के हाथ में थमा दिया।

बोले, "मैं एक बार इस डाक्टर के पास जा रहा हूं—"

यह कहकर मल्लिकजी से कहा, "ड्राइवर से गाड़ी निकालने कहिए। मुझे फौरन बाहर निकलना है—"

मुक्तिपद के पीछे-पीछे मल्लिकजी जा रहे थे।

विशाखा ने कहा, "मल्लिकजी, हिसाब नहीं लिया है, मैं आपके इन्तजार में बैठी रहूंगी।"

थोड़ी देर बाद ही मल्लिकजी खाता-बही लेकर हाजिर हो गए। विशाखा को हर रोज के खर्च का हिसाब रखना पड़ता है। यह बाजाब्ता सवेरे ही का काम है। मगर दादी मां की बीमारी के कारण वह काम हर रोज निश्चित समय पर करना सम्भव नहीं हो पाता है।

विशाखा भी ददिया सास के हिसाब का खाता लेकर सामने बैठी। मल्लिकजी खड़े-खड़े कहने लगे, "बाजार खर्च सत्रह रुपया पचहत्तर पैसा—"

बाजार का मतलब फुटकर खर्च। उसके बाद तेल, मसाला, टेलीफोन का बिल, दादी मां की दवा, डाक्टर-खर्च, बिन्दु के लिए अंगोछा, कालीदासी के लिए बिना किनारी की एक जोड़ा साड़ियां और इसी किस्म के छोटे-मोटे खर्च—

सारा हिसाब दर्ज हो जाने के बाद मल्लिकजी बोले, "मेरे पास नकद रुपये की जो रकम है वह दर्ज कर लीजिए भाभी रानी—"

विशाखा ने कहा, "कहिए—"

"जमा था सत्रह हजार रुपया, उनमें से अब बाकी बचा है दो हजार तेईस रुपये। आज मुझे और बीस हजार रुपया दिया। कुल जमा हुआ बाईस हजार तेईस रुपये। यह रकम मेरे नाम जमा कर लें—"

विशाखा उठी। उसके बाद दादी मां के कमरे में जाकर आंचल से चाबी का गुच्छा निकाल आलमारी के पल्ले खोल गिन-गिनकर बीस हजार रुपया निकाला। बहुत सारे रुपयों की गिनती एक बार करने से गलती हो सकती है। इसलिए दो-तीन बार गिना। उसके बाद आलमारी का ताला बन्द कर रुपये लाकर मल्लिकजी को दिए। बोली, "अच्छी तरह गिन लीजिए—"

मल्लिकजी ने दो बार गिनकर कहा, "ठीक है।"

उसके बाद नोटों को फतूही के पॉकेट में डालकर बोले, "इस रकम को मेरे नाम जमा कर लिया है न?"

विशाखा ने कहा, "यह देखिए—"

यह कहकर दादी मां के खाते को विशाखा ने आगे बढ़ा दिया। [illegible]

"तारीख कहां दर्ज की भाभी रानी? आज की तारीख वहां दर्ज कर दें"

विशाखा ने जमा रुपये के नीचे तारीख दर्ज कर दी [illegible]

अचानक कुछ याद आ जाने के कारण दुबारा लौट आए।

"हां, और एक बात कहना भूल गया था

"क्या? कहिए।"

मल्लिकजी बोले, "बैंक की वही में दादी मां का हस्ताक्षर रहने पर ही रुपया निकाला जाता था, लेकिन अभी तो वे पशु होकर पड़ी हैं। हस्ताक्षर करने की ताकत भी नहीं है उन्हें। इसके बाद क्या होगा?"

विशाखा ने कहा, "आप ही बताइए कि क्या होगा।"

मल्लिकजी ने कहा, "आप यदि बैंक से रुपया निकालना चाहती हैं तो आपको चेक काटना होगा।"

विशाखा बोली, "आप मुझे बता दीजिएगा कि किस तरह चेक काटा जाता है।"

मल्लिकजी बोले, "ऐसी हालत में आपको बैंक जाकर जताना होगा कि आप रुपया निकालने की अधिकारी हैं।"

"मुझे बैंक जाकर जताना पड़ेगा?"

मल्लिकजी बोले, "जाना तो पड़ेगा ही। नहीं तो वे लोग आपके चेक का भुगतान नहीं करेंगे। इसीलिए कह रहा हूं कि आपको बैंक ले जाकर आपका हस्ताक्षर उन लोगों के सामने कराना होगा। आपके चेक के हस्ताक्षर से उस हस्ताक्षर के मिलने पर ही आपके चेक का भुगतान किया जाएगा।"

विशाखा बोली, "तो फिर बताइए कि मुझे कब बैंक ले जाइएगा?"

"ज़रा जल्द ही जाना होगा। क्योंकि दादी मां कब स्वस्थ होंगी, उसका कोई ठीक तो है नहीं।"

विशाखा ने कहा, "आप जिस दिन कहिएगा, मैं जाने को तैयार हूं।"

मल्लिकजी ने कहा, "ठीक है। जल्द-से-जल्द मैं आपको ले चलूंगा।" यह कहकर वे फिर नीचे चले गए।

आदमी की धरती में जहां जीवन की सृष्टि होती है वहीं मृत्यु शुरू से ही उसका पीछा करती रहती है। यह नियम सभी प्राणियों के लिए सच है। पशु-पक्षियों और पेड़-पौधों की तरह मनुष्य के जीवन में भी इसका अपवाद नहीं है। आंखों के सामने प्रतिदिन इस सत्य को प्रत्यक्ष देखने के बावजूद कोई कल्पना नहीं करता कि एक ऐसा दिन आनेवाला है जब उसे भी इस नियम के अधीन होकर दुनिया से हमेशा के लिए विदा हो जाना पड़ेगा। जब विदा होने की बारी आती है उस समय काफी देर हो जाती है। उस समय ध्यान में आता है, अभी बहुत सारे काम करने को बाकी पड़े हैं। उस समय महसूस होता है, जीवन व्यर्थ के काम में बीत गया। उस समय लगता है, जो कुछ करने को वह पैदा हुआ था, उसकी शुरुआत ही नहीं की, जो कुछ करने को बाकी रख छोड़ा था, वह बाकी ही पड़ा रह गया। पाथेय के नाम पर हाथ में केवल शून्य रह गया।

आज इतने दिनों के बाद संदीप को सिर्फ यही सब बात याद आने लगी। उसका भी तो जाने का समय आ गया है। जो कुछ करने के निमित्त वह आया था, जिन कामों को करने का उसने संकल्प किया था, वह भी अधूरा ही रह गया। मां ने भी कहा था, "इतने दिनों तक तूने जो नौकरी की उससे तेरा या मेरा कौन-सा लाभ हुआ?"

मां की इस बात का उस दिन संदीप कुछ उत्तर नहीं दे सका था, और मां ज़िन्दा होती तो भी नहीं दे पाता।

सच, सभी आदमी जो कुछ चाहते हैं, उसके अलावा उसने भी और किसी चीज़ की चाह नहीं की थी। छुटपन में सब लोग जो कुछ चाहते हैं उसने भी वही सब चाहा था। एक छोटी-मोटी स्थायी नौकरी। एक ऐसी नौकरी जिसे पाकर वह मां का दुख दूर कर सके। उन दिनों उसने इससे अधिक और कुछ नहीं चाहा था। जब वह दूसरे की

जूठन पर पल रहा था उस समय इससे अधिक की चाह करना उसके लिए अपराध था। नौकरी पाने की शुरुआत के दौरान ही उसे सॅक्सबी मुखर्जी कम्पनी के भवन के भीतर का वैभव देखने का मौका मिला था। और उसी वैभव के इर्द-गिर्द ही उसने देखा था उस भवन के जीवन-युद्ध का पंकिल आवर्त्त।

और उसके साथ देखा था एक और जीवन। वह जीवन है विशाखा। विशाखा को देखते ही संदीप में एक कुतूहल जग उठा था। वह कुतूहल किस कारणवश? विशाखा के रूप के कारण या उसके स्वभाव चरित्र की मिठास के कारण?

नहीं, यह बात नहीं है। न उसके रूप के कारण और न ही उसके स्वभाव-चरित्र की मिठास के कारण।

बहुत दिन पहले संदीप कालीघाट मन्दिर में एक बार चढ़ावा चढ़ाने गया था। उसे नौकरी मिल जाए इसी उद्देश्य से। मन्दिर से बाहर निकलते ही उसने बाहर संगमरमर के बने आंगन में बहुत सारे औरतों-मरदों की भीड़ देखी थी। उस भीड़ को देखकर संदीप भीड़ के पास गया था। इतनी भीड़ किसलिए है? वहां इतनी भीड़ क्यों है?

अन्दर झांककर संदीप ने देखा था, वहां एक बकरे की बलि दी जा रही है। एक रस्सी से बकरे के चारों पैरों को बांधकर बलिवेदी के अन्दर घुसा दिया गया है और उसके गले को इस तरह अटका दिया गया है कि वह चिल्ला न सके। एक लोहार अपने हाथ का लोहे का खांडा ऊपर उठाए हुए है। थोड़ी देर बाद ही वह खांडा कब बकरे की गरदन पर गिरेगा, इसी की प्रतीक्षा कर रहे हैं तमाम दर्शक।

और जब सचमुच ही खांडा बकरे की गरदन पर गिरा तो बकरे का सिर धड़ से अलग होकर बहुत दूर छिटककर जा गिरा।

उस सिर की ओर संदीप ने देखा तो उसे लगा कि बकरे की आंखें उस समय भी मिचमिचा रही हैं और उसका धड़ छटपटाते हुए स्थिर हो गया है।

उसके बाद बहुत दिनों तक वह दृश्य उसका पीछा करता रहा था—सोते-जागते उसका अनुसरण करता रहा था। क्यों उसका पीछा और अनुसरण करता था, यह बात वह समझ नहीं सका था। उसके बाद एक ऐसा वक्त आया जब वह उसे भूल गया था। लेकिन जब किसी समय वह मांस खाता तो उसे तत्क्षण उस दृश्य की याद आ जाती और उसकी खाने की इच्छा समाप्त हो जाती। उसे उल्टी महसूस होने लगती और वह खाना छोड़ उठकर चला जाता।

मां कहती, "क्यों रे, आज खाना नहीं खाएगा?"

संदीप कहता, "नहीं मां, अब नहीं खाऊंगा—"

"क्यों? तुझे क्या हुआ? तू तो मांस खाना कितना पसन्द करता था?"

संदीप कहता, "आज मुझे भूख नहीं है मां—"

मां कहती, "तेरे कारण ही तो मैंने मांस पकाया था और तूने नहीं खाया?"

संदीप ने मां से कहा था, "तुम कभी मांस मत पकाना मां। तुम जो खाओगी मैं वही खाऊंगा। आजकल मुझे निरामिष खाना ही अच्छा लगता है।"

लड़के की बात सुनकर मां को अचरज होता। जो लड़का मांस-मछली खाना इतना पसन्द करता था, वही एकाएक मांस-मछली खाने के प्रति इतना अनिच्छुक क्यों हो गया, यह बात मां की समझ में नहीं आती।

हर रोज दफ्तर से घर वापस आते ही मां अपने लड़के से पूछती, "आज मौसीजी को देखने गया था?"

संदीप कहता, "हां, गया था।"

"अब कैसी है ?"

संदीप संक्षेप में जवाब देता, "पहले की ही तरह।"

मां कहती, "पहले की ही तरह का मतलब ? अब और कितने दिनों तक अस्पताल में रहना पड़ेगा ?"

संदीप कहता, "यह बात कोई भी नहीं बता रहा है।"

"इधर रुपये भी तो खत्म होते जा रहे हैं। अगर और कुछ दिनों तक अस्पताल में रहना पड़े तो कैसे काम चलेगा ?"

संदीप इस बात का जवाब नहीं देता। इसके बाद मां कहती, "मल्लिकजी देवरजी के पास तू एक बार जा। जाकर कहना, आपने और रुपया देने की बात कही थी, उसका क्या हुआ ?"

संदीप कहता, "रुपया मांगने में मुझे शर्म लगती है मां—"

"अरे, शर्म करने से हम लोगों का काम कैसे चलेगा ?"

संदीप इस बात का जवाब नहीं देता।

मां कहती, "इतना मुंहचोर होने से काम चल सकता है भला ? इसके अलावा मुखर्जी परिवार के लोगों के पास रुपये की कोई कमी तो है नहीं। उन लोगों के पास रुपयों का अंबार हैं। मुंह खोलकर मांगने में दोष ही क्या है ?"

संदीप कहता, "अच्छा, सोचकर देखता हूं···"

मां अपने बेटे की बात सुन हताश हो जाती। कहती, "देखते-देखते और सोचते-सोचते ही तुम्हारी मौसीजी चल बसेंगी। जानता है, देवरजी ने मुझे खुद ही कहा था, विशाखा की मां के लिए रुपयों की ज़रूरत होगी तो मुखर्जी परिवार के लोग दो-तीन लाख रुपए तक देंगे।"

उसके बाद ज़रा रुककर फिर कहती, "खैर, आदमी की पहचान हो गई। यही फायदा हुआ। रुपये की लेन-देन से ही आदमी का असली रूप पहचान में आता है—"

संदीप इस बात का जवाब नहीं देता।

उस दिन टिफिन के वक्त संदीप हर रोज की तरह बाहर निकला था। उसी वक्त वह नर्सिंग-होम जाकर मौसीजी को देख आता था। नर्सिंग-होम जाने पर ही उसे अहसास होता कि किसे संसार कहा जाता है। पहले संसार का स्वरूप यही समझा जाता था कि जो एक बार अस्पताल जाता है, वह लौटकर नहीं आता। उस ज़माने के लोगों का अनुभव भी इसी किस्म का था। अस्पताल के इसी वेधक अनुभव के कारण एक दिन लोगों की नर्सिंग-होम के प्रति श्रद्धा बढ़ने लगी। लोगों की धारणा बन गई कि अस्पताल जाने से ज़िन्दा नहीं रहेंगे लेकिन नर्सिंग-होम जाने से अवश्य ही ज़िन्दा बच जाएंगे। कुछ अधिक रुपये खर्च होंगे, बस, इतना ही अन्तर है। इसी विश्वास के कारण कलकत्ता में कुकुरमुत्ते की तरह एक-एक कर नर्सिंग-होमों की शृंखला खड़ी हो गई। जन्म और मृत्यु का समारोह देखने के लिए पहले जैसे अस्पताल जाना पड़ता था, अब वह समारोह नर्सिंग-होम में भी दिखने लगा। इसका हश्र यह हुआ कि नर्सिंग-होम 'स्टेट्स-सिम्बल' हो गया। सन्तान-प्रसव के उपलक्ष्य में यदि कोई महिला अस्पताल जाती तो उसकी इज्जत में बट्टा लगने लगा और यदि कोई इस उपलक्ष्य में नर्सिंग-होम जाती तो उसकी इज्जत बढ़ने लगी।

लेकिन संदीप ने मौसीजी को इलाज के लिए नर्सिंग-होम दूसरे कारण से भेजा था और वह यह कि नर्सिंग-होम उसके बैंक के करीब था। ऑफिस से जाने-आने और देख-भाल करने में सहूलियत होगी।

नर्सिंग-होम में दाखिल होने के दौरान डाक्टर लाहिड़ी ने बीस हज़ार का एक प्राथमिक हिसाब बताया। संदीप उस पर राजी हो गया था और मौसीजी को एक दिन

नर्सिंग-होम ले जाकर भर्ती करा आया था। उस समय रुपये की भी उतनी कमी नहीं थी। क्योंकि मल्लिकजी ने भरोसा दिया था कि तीन लाख या चार लाख रुपया जो भी लगे, दादी मां क्षतिपूर्ति के रूप में दे देंगी। शुरू की किस्त के तौर पर ही शादी की उस रात पचास हज़ार रुपया दिया था।

लेकिन उसके बाद चटर्जी बाबुओं को मकान गिरवी रखने की बाबत लिया गया बीस हज़ार रुपया लौटा देने पर हाथ में मात्र तीस हज़ार रुपया रह गया। उस तीस हज़ार रुपये की रकम में से तकरीबन सारी रकम खर्च हो चुकी है। इसके बाद डाक्टर लाहिड़ी यदि और रुपयों की मांग कर बैठे हैं तो ऐसी हालत में क्या होगा? दुबारा क्या मकान को गिरवी रखना पड़ेगा?

उस पर है बैंक से कर्ज़ लेने के कारण हर महीने उसकी तनख्वाह से मोटी रकम काट लेने का दबाव। यदि और कर्ज लेने की जरूरत पड़ी तो फिर उसके घर-संसार के दोनों प्राणियों का गुजर-बसर कैसे होगा? सिर्फ दाल-भात खाने में ही आजकल कोई कम खर्च नहीं होता। हर-चीज की कीमत तेज रफ्तार से बढ़ती जा रही है।

कभी-कभी संदीप सोचता है कि वह इस सन्दर्भ में फिक्र नहीं करेगा। फिक्र करने से फायदा ही क्या? उसके लिए बैंक का रुपया बर्बाद करना सम्भव नहीं है। फिर?

सड़क से जाने के दौरान चारों तरफ के यान-वाहन, आदमी-शोर-शराबा, प्रकाश-अन्धकार सारा कुछ एकाकार हो जाता है। उसे लगता है, उसके आसपास कहीं कोई नहीं है, कहीं कुछ भी नहीं है। एकमात्र वह है और उसके साथ है उसकी तनहाई।

और कभी-कभी उसे बिलकुल दूसरी ही तरह का अहसास होता है। उस समय वह मां की गोद के शिशु जैसा स्वयं को अत्यन्त सुखी आदमी समझता है। उस समय वह सोचता कि उसे किस बात का भय है? उसकी मां है तो उसके लिए चिन्ता की कौन-सी बात है? मां के होने का मतलब है सब कुछ का होना।

मां का चेहरा गम्भीर देखते ही संदीप उसके हाथों को ज़ोर से पकड़कर झकझोरता। कहता, "तुम फिर चेहरा गम्भीर बनाए हुए हो? हंसो, हंस दो तुम। ज़रा हंस दो।"

मां लड़के की हरकत देखकर रो देती। कहती, "अरे छोड़-छोड़, छोड़ दे—"

"तभी छोड़ूंगा जब तुम हंसोगी—मैं कह रहा हूं, हंस दो। तुम न हंसोगी तो मैं तुम्हें नहीं छोड़ूंगा। पहले तुम हंसो। मेरे सामने तुम कभी गम्भीर चेहरा बनाए नहीं रह सकती—"

ऐसे में हंसने की कोशिश करती तो मां और भी रोने लगती।

कहती, "अरे पागल, मैं क्या जान-बूझकर रो रही हूं? मुझे भी हंसने की इच्छा होती है, मगर तेरी तकलीफ देखकर बगैर रोए रह नहीं पाती। तू और कितनी तकलीफ झेलेगा? दूसरे का बोझ और कितना ढोएगा?"

संदीप कहता, "अरे, तुम यह बात सोच रही हो मां? लेकिन मैं तो उन्हें गैर नहीं समझता। वे भी तो हमारे अपने ही हैं। मैं किसी को पराया समझ ही नहीं पाता हूं।"

ऐसे में मां अपने लड़के के हाथ पकड़ उसे जबरन बिस्तर पर लिटा देती। कहती, "तू अब भी बच्चा का बच्चा ही रह गया, तेरा बचपना गया नहीं। दिन-भर खटकर आया है, अब तू सो रह—कल तुझे फिर सवेरे जगकर दफ्तर जाना है।"

सड़क पर चलने के दौरान संदीप को यही सब बात याद आती। और मां की याद आते ही वह बाकी सारी बातें भूल जाता। नर्सिंग-होम जाने पर सौमीश्री से बातचीत करने के दौरान उसे लगता कि वह अपनी मां से ही बातचीत कर रहा है।

"संदीप—संदीप—"

अपना नाम सुनकर संदीप ने पीछे की तरफ मुड़कर देखा। यहां उसे कौन पुकारेगा ? तो उसने गलत सुना है क्या ? किसने उसे पुकारा ?

लेकिन कहीं कोई दिख नहीं पड़ा। हो सकता है उसने गलत सुना हो। यह सोचकर वह अपने गन्तव्य की ओर बढ़ने लगा···

"संदीप—ओ संदीप—"

संदीप ने दुबारा मुड़कर देखा और देखते ही उसके अचरज का कोई ठिकाना न रहा। "अरे, मल्लिक चाचा आप ! कहां से आ रहे हैं आप ?"

मल्लिकजी बोले, "तुम तो सुन ही नहीं रहे थे। बात क्या है ? इतनी तेज़ी से कहां जा रहे थे ?"

संदीप ने कहा, "अपने टिफिन के वक्त ज़रा···"

अचानक दिख पड़ा, दूर फुटपाथ पर विशाखा खड़ी है। विशाखा उसी की ओर निहार रही है। संदीप ने कहा, "विशाखा को आप ले आए हैं क्या ? विशाखा को कोई काम है ?"

मल्लिक चाचा बोले, "हां, विशाखा की ही नज़र पहले तुम पर पड़ी थी। उसी ने मुझे बताया। तुम्हें कितना पुकारा पर तुम सुन ही नहीं रहे थे। इसीलिए सड़क पार कर दौड़ता हुआ आया और तुम्हें पुकार रहा हूं—तुम क्या बहरे हो गए हो ?"

संदीप ने कहा, "मैं ज़रा अन्यमनस्क-सा था—"

मल्लिक चाचा बोले, "चलो, विशाखा तुमसे बातें करना चाहती है।"

"चलिए।"

सड़क पर उस समय ट्रामों और बसों की भीड़ थी। सड़क पार करने में थोड़ी देर लग गई। जब करीब पहुंचा तो संदीप ने कहा, "क्या बात है ? तुम यहां !"

मल्लिकजी बोले, "भाभी रानी को मैं बैंक ले आया था।"

संदीप ने पूछा, "बैंक क्यों ले आए थे ?"

मल्लिकजी बोले, "भाभी रानी को उनका हस्ताक्षर दर्ज कराने के लिए बैंक ले आया था। क्योंकि दादी मां अपने हाथ से हस्ताक्षर नहीं कर पाएंगी—इसलिए बैंक के मैनेजर के सामने भाभी रानी ने अपना हस्ताक्षर कर दिया।"

"दादी मां कैसी हैं ?"

मल्लिकजी बोले, "पहले जैसी ही हालत है। बीच-बीच में बातचीत करती हैं और फिर एकाएक खामोश हो जाती हैं ?"

"डाक्टरों का क्या कहना है ?"

मल्लिकजी बोले, "वे लोग और क्या कहेंगे ! वे कुछ भरोसा नहीं दे पा रहे हैं।"

अचानक विशाखा ने कहा, "तुम उस दिन बिना बताए चले क्यों आए थे ? मैंने वापस आने पर देखा, तुम कमरे में नहीं हो।"

संदीप ने कहा, "तुम उस वक्त अपनी ददिया सास के कारण व्यस्तता में डूब गई थीं। इसलिए सोचा, ऐसी हालत में मेरा बैठे रहना उचित नहीं है।"

विशाखा ने कहा, "उसके बाद मैंने जाकर बिन्दु से तुम्हें बुला लाने को कहा, लेकिन पता चला कि तुम पहले ही जा चुके हो।"

मल्लिकजी बोले, "समय मिले तो किसी दिन आओ न।"

संदीप कहे ही क्या ! भद्रता की खातिर कहा, "आऊंगा।"

विशाखा बोली, "हां, अब तुम आओगे भला ! मैं तुम्हें अच्छी तरह पहचानती

हूं। गुस्सा आने पर तुम्हें होश-हवास ही नहीं रहता।"

अचानक मल्लिकजी बोल पड़े, "अरे लो, मैं अपना बैग मैनेजर के कमरे में छोड़कर चला आया—तुम रुके रहो, मैं अभी आया।"

यह कहकर वे बैंक के अन्दर चले गए।

संदीप ने एकाएक पूछा, "तुम कैसी हो?"

विशाखा ने कहा, "मैं कैसी दिख रही हूं?"

संदीप ने कहा, "मैं तो देख रहा हूं, तुम और ज्यादा खूबसूरत हो गई हो!"

विशाखा ने कहा, "मैं कब बदसूरत थी?"

संदीप ने कहा, "नहीं-नहीं, मैं यह नहीं कह रहा हूं। खूबसूरत तुम हमेशा थीं लेकिन अब शादी के बाद उस खूबसूरती में और अधिक निखार आ गया है।"

विशाखा ने कहा, "परायी स्त्री को घूरना क्या अच्छा है?"

संदीप ने कहा, "तुम दूसरे की पत्नी हो, यह मैं मानता हूं, लेकिन यही क्या तुम्हारा एकमात्र परिचय है? और कोई परिचय नहीं?"

"मेरा और क्या परिचय है, बताओ।"

संदीप ने कहा, "मैं गरीब हूं और तुम अमीर। आज यह भी तो तुम्हारा एक बहुत बड़ा परिचय है।"

विशाखा ने कहा, "आज जो मेरे पास इतने रुपए हैं, इसका श्रेय तो तुम्हीं को है।"

"श्रेय मुझे है? यह तुम क्या कह रही हो?"

संदीप अवाक् हो गया। दुबारा पूछा, "मेरे कारण तुम्हें रुपया मिला? यह तुम क्या कह रही?"

विशाखा ने कहा, "हां, और मेरे कारण तुम्हें भी ढेर सारे रुपए मिले। मिले नहीं हैं?"

"कैसे?"

विशाखा ने कहा, "मेरे बदले में मेरी ददिया सास से बिना परिश्रम किए तुम्हें पचास हजार रुपया मिल गया। क्षतिपूर्ति के तौर पर मोटी रकम मिल गई।"

"इसका मतलब?"

लेकिन विशाखा ने इसका जवाब नहीं दिया। क्योंकि तभी उधर से मल्लिकजी अपना बैग लिए बाहर निकल आए थे। मल्लिकजी हिसाब का कागज-पत्तर बैंक का पासबुक वगैरह अपने बैग में रख, उसे अपने हाथ में थामे हमेशा बाहर निकलते हैं। उस दिन भी उसी तरह निकले थे। लेकिन गलती से उसे मैनेजर के कमरे में छोड़कर चले आए थे।

"बैग मिल गया?"

मल्लिकजी ने कहा, "हां; न मिलता तो परेशानी में पड़ जाता।"

विशाखा गाड़ी में बैठने को आगे बढ़ी। बैठने के पहले बोली, "किसी दिन समय निकालकर आना—"

मल्लिकजी ने पूछा, "तुम्हारे घर का क्या हालचाल है?"

"पहले की तरह ही चल रहा है।"

विशाखा ने अचानक गरदन घुमाकर पूछा, "ताईजी कैसी हैं?"

संदीप ने कहा, "ठीक ही हैं···"

शायद एकाएक अपनी मां की याद आई। बोली, "और मेरी मां?"

संदीप ने कहा, "मौसीजी भी अच्छी ही हैं।"

"मेरे बारे में भी कहना।"

"क्या कहूंगा ?"

विशाखा ने कपा, "कहना कि मैं भी अच्छी ही हूं।"

मल्लिकजी बोले, "हां; वे शायद सोचती होंगी। कह देना, भाभी रानी ससुराल में मज़े में हैं। किसी दिन वक्त निकालकर तुम आना, समझे ?"

विशाखा ने जाने के पहले कहा, "हां, तुम किसी दिन आना—"

यह कहते ही उन लोगों की गाड़ी गर्द-गुबार उड़ाती हुई आंखों से ओझल हो गई।

संदीप चन्द लमहों तक सड़क पर विमूढ़ जैसा अकेले खड़ा रहा। लगा, दुनिया का सबसे बड़ा शिक्षक सचमुच अतीत ही है। वह अतीत न होता तो हमें कहां और किससे सांत्वना मिलती ?

यह तकरीबन ढाई हज़ार साल पहले की बात है।

ढाई हज़ार साल पहले ग्रीस देश में एक ऐसा आदमी रहता था जिसका चेहरा सबसे बदसूरत था। ऐसा बदसूरत आदमी दुनिया में कभी किसी ने नहीं देखा था।

लेकिन उसका हृदय ?

उसके हृदय जैसा सुन्दर हृदय भी शायद कहीं किसी के पास नहीं था। देश के तमाम लोग उसे दिल से प्यार करते थे। उसका कहना था, मनुष्य के मन में ही भगवान वास करते हैं। खुद को जो पहचान लेगा वही भगवान को पहचान पाएगा। इसलिए पहले अपने आपको पहचानो।

यह बात संदीप पहले से ही जानता था। लेकिन वह खुद को कैसे पहचानेगा, यह बात वह नहीं जानता था। कितना पढ़कर पहचानेगा ? गीत गाकर ? घर संसार बसाकर ?

बहुत सोचने पर भी वह उस रास्ते को नहीं जानता था। वह अपने आपको कैसे पहचानेगा ? कौन उसे अपने आपको पहचानने का गुर बता देगा ?

यह बात उसने अपनी जान-पहचान के बहुत सारे बहुदर्शी व्यक्तियों से पूछी थी। लेकिन कोई भी उसके सवाल का ठीक-ठीक जवाब नहीं दे सका था।

लेकिन इतने दिन के बाद विशाखा के जीवन को देखकर उसे अपना जवाब थोड़ा-बहुत समझ में आया।

सुकरात ने कभी घर-संसार की ओर ध्यान नहीं दिया था। केवल खुद को जानने की चेष्टा में ही पूरे देश की परिक्रमा करता रहता था। घर वापस आते ही पत्नी से उसे फटकार सुननी पड़ती थी।

एक दिन वह अपने शिष्यों को अपने साथ ले घर वापस आया। एकाएक सबने देखा, मकान की छत से कोई गन्दा पानी फेंक रहा है।

किसी की समझ में यह बात नहीं आई। शिष्यों ने पूछा, "आपकी छत से कौन इस तरह गन्दा पानी फेंक रहा है ?"

सुकरात ने कहा, "मेरी पत्नी।"

सभी को आश्चर्य हुआ। बोला, "यह क्या ? आपकी पत्नी आप पर गन्दा पानी फेंक रही है ?"

"हां—"

शिष्यों ने फिर कहा, "आपकी पत्नी आप पर गन्दा पानी फेंक रही हैं ?"

"हां।"

शिष्यों ने कहा, "आप अपनी पत्नी को मना नहीं कर सकते ?"

सुकरात ने कहा, "नहीं, भाई नहीं, मैला पानी फेंककर मेरी पत्नी मेरा बड़ा ही उपकार कर रही है।"

"उपकार कर रही हैं ? सो कैसे ?"

सुकरात ने कहा, "मुझमें सहन-शक्ति का अभाव है। मेरी पत्नी मेरी सहन-शक्ति में बढ़ोत्तरी ला रही है।"

सुकरात में सहन-शक्ति का अभाव था। उसकी पत्नी शत्रुता के नाते उसे कष्टसहिष्णु बना रही थी, वह यही बात कहना चाहता था।

एकांत में रहने पर संदीप को यह सब बात याद आती। जीवन उसे जितना भी कष्ट देता, वह इन बातों को सोचकर उतना ही सांत्वना का अनुभव करता।

उसे महाभारत की कुंती की याद आती। कुंती की पुकार पर श्रीकृष्ण कुंती के पास आए। पूछा, "बताओ कुंती, तुम मुझे क्यों पुकार रही थी ?"

कुंती ने कहा, "तुम्हारे दर्शन के लिए।"

कृष्ण ने कहा, "तुम्हें क्या वरदान चाहिए, बताओ। तुम जो भी वरदान मांगोगी, मैं दूंगा।"

कुंती ने कहा, "मैं यही वरदान चाहती हूं कि मुझे हमेशा दुख मिलता रहे। तुम मुझे दुख का आशीर्वाद दो।"

श्रीकृष्ण ने कहा, "यह क्या कह रही हो तुम ! सभी सुख पाने के खयाल से मुझे पुकारते हैं। तुम मुझसे दुख क्यों माग रही हो ?"

कुंती ने कहा, "मैं इसलिए सुख नहीं चाहती कि सुख मिलने पर तुम्हारा स्मरण नहीं करूंगी और दुख इसलिए चाहती हूं कि बराबर तुम्हारा स्मरण करती रहूंगी।"

यह भी एक अजीब किस्म की सच्चाई है। यह बात सही है कि संदीप इतना दुख जी रहा था इसी वजह से वह इतना कष्ट बरदाश्त कर पा रहा था। वह सुखी होता तो इतनी पीड़ा बरदाश्त नहीं कर पाता।

नर्सिंग-होम जाने पर वह मौसीजी से दूसरी ही तरह की बातें करता। बहुधा मौसीजी बोल ही नहीं पाती। बेहोशी की हालत में चुपचाप पड़ी रहती।

लेकिन जिस दिन बोल पाती उस दिन शुरू में ही पूछती, "मेरी विशाखा कैसी है बेटा ? उससे तुम्हारी मुलाकात हुई थी ?"

संदीप कहता, "हां, मैं हर रोज विशाखा से मिलने जाता हूं—"

मौसीजी पूछती, "वह कैसी है ?"

संदीप कहता, "वह बहुत ही सुखी है ?"

"और मेरा दामाद ?"

"वह भी बड़ा ही सुखी है। दोनों की शादी से राज-योटक हुआ है।"

मौसी जी पूछती, "मेरे बारे में वे लोग कुछ पूछताछ करते हैं ?"

संदीप कहता, "हर रोज आपके बारे में पूछते हैं। आपको क्या लड़की-दामाद को देखने की इच्छा होती है ?"

मौसीजी कहती, "नहीं-नहीं, वे सुख-शांति से हैं, यह जानकर ही मैं खुश हूं। मैं जिन्दगी में काफी कष्ट झेल चुकी हूं। इसलिए यह जानकर ही मुझे सुख का अहसास हो रहा है कि वे लोग सुख से हैं। मां होने के नाते मैं अपनी लड़की को अब कष्ट देना नहीं चाहती। बेटा। वे सुख से रहें, इसी में मेरा सुख है।"

यह कहते-कहते मौसीजी रो देती और संदीप उनके सिर पर उंगलियां फेर सांत्वना देता। उसके बाद घंटी बजते ही संदीप डाक्टर साहिब से मिलने उनके पास

में घुस जाता।

लेकिन उनसे किसी भी दिन मुलाकात नहीं होती। अगर किसी दिन दिख भी जाते तो बहुत सारे लोगों के हुजूम में वातचीत करने का मौका ही नहीं मिलता। संदीप उस हुजूम में घुसकर पूछता, डाक्टर साहब, मेरी मौसीजी को देखा है? उनकी हालत अब कैसी है?"

किसकी मौसी को कौन-सी बीमारी है, किस कमरे में कौन-सा मरीज़ है, इसकी जानकारी नहीं रहता डाक्टर लाहिड़ी को। जानकारी रखना संभव भी नहीं था। क्योंकि वे साधारण डाक्टर नहीं, बल्कि विशेषज्ञ डाक्टर थे। जो स्पेशलिस्ट डाक्टर होते हैं उन्हीं के पीछे मरीज़ों की भीड़ लगी रहती है। मरीज़ों के प्रति आग्रह रहने की अपेक्षा रुपये की रकम के प्रति उनमें अधिक आग्रह रहना उनका स्वभाव है। उन्हीं रुपयों के कारण वे अधिक व्यस्त रहते हैं। इसीलिए डाक्टर लाहिड़ी कहते, "बाद में आइएगा—"

या फिर कहते, "जाकर मेरे जूनियर से मिलिए—"

डाक्टर की अपेक्षा उसके जूनियरों के सामने अधिक भीड़ लगी रहती थी। लेकिन जिस चीज़ पर नर्सिंग-होम के डाक्टरों की सबसे अधिक नज़र टिकी रहती है वह है रुपये का भुगतान। रुपये की रकम के बिल मामले में स्टाफ बड़े होशियार होते हैं।

संदीप ज्यों ही काउन्टर पर पहुंचता कि वे लोग दबोच लेते।

वे कहते, "पेमेन्ट करना है?"

पेमेन्ट की खाता-बही सामने ही पड़ी रहती। उसे सरकाकर, हाथ में कलम लिए कहते, "दीजिए, रुपया दीजिए—"

संदीप कहता, "रुपया तो लाया नहीं हूं—"

"क्यों, रुपया क्यों नहीं लाए हैं?"

संदीप कहता, "किस चीज़ का रुपया चाहिए, यह मैं समझ नहीं सका—"

काउन्टर-क्लर्क कहता, "आपके पेशेन्ट के पास तो सब कुछ जना दिया था।"

"क्या जना दिया था?"

"तीस दिन के बुखार देखने का चार्ज, फूड या इंजेक्शन में जो कुछ खर्चा हुआ है। हमारी फेहरिस्त में सारा कुछ लिखा हुआ था।"

संदीप कहता, "लेकिन यही तो उस दिन एक चेक दे गया था। सात सौ तीस रुपये का चेक। अब फिर किस चीज़ का पेमेन्ट करना होगा?"

काउन्टर-क्लर्क कहता, "वह तो साहब पिछले महीने का एकाउन्ट था। अब करेन्ट बिल का पेमेन्ट मांग रहा हूं।"

संदीप कहता, "लेकिन अब भी महीने का अंत नहीं हुआ है। आप लोग क्या एडवांस पेमेन्ट मांग रहे हैं?"

"नहीं, अब पेशेन्ट के 'यूरिन-टेस्ट' और यूरिन-कल्चर की रकम की मांग कर रहा हूं।"

संदीप यह सब हिसाब-किताब कतई समझ नहीं पाता। उसके पॉकेट में जितने भी रुपये होते उन्हें देकर बकाया राशि का भुगतान कर देता। वह सोचता, उसे चाहे जितने ही दुख और अभाव का सामना क्यों न करना पड़े लेकिन वह एक अच्छे काम में ही रुपये खर्च कर रहा है। वह नशे में तो रुपये नहीं उड़ा रहा है। अगर उसे अभाव का सामना करना पड़े तो खुद को कैफियत देने की उसके पास एक युक्ति रहेगी। उस समय वह कह सकेगा कि बेवजह उसने कोई अपव्यय नहीं किया है। मां और उसकी मौसीजी में क्या कोई अलगाव है? यह बीमारी उसकी मौसीजी को न होकर उसकी मां को भी हो सकती थी। वैसे उसके खिलाफ रुपया अपव्यय करने का दोष तो गढ़ा नहीं जा सकता

था। फिर?

उसके मन की जब ऐसी हालत थी तो विशाखा से मुलाकात हो गई।

विशाखा को देखकर लगा वह सचमुच ही और भी ज्यादा खूबसूरत हो गई है। आदमी के जीवन में जब सुख आता है तो उसके चेहरे पर भी उस सुख का उभार आ जाता है। विशाखा के साथ भी शायद यही हुआ था। उसने शायद हमेशा रुपये-पैसे की चाह की थी। पति की चाह नहीं की थी, गृहस्थी, स्वास्थ्य और प्यार की चाह नहीं की थी, सिर्फ रुपये-पैसे की ही चाह की थी। इसीलिए जैसे ही रुपया-पैसा मिल गया, तत्काल उसके चेहरे पर मन की प्रतिच्छवि उजागर हो गई। यही वजह है कि जब तक बातचीत का दौर चलता रहा, उसने एक बार भी अपनी मां के बारे में नहीं पूछा। रुपया मिलते ही ऐसी अहम-फरोज हो गई!

सड़क पार कर विपरीत दिशा के फुटपाथ पर जाते ही एक गाड़ी से किसी ने उसे पुकारा, "ऐ संदीप! संदीप—"

संदीप ने उस तरफ देखा तो गोपाल हाजरा पर नजर पड़ी।

पूछा, "कहां जा रहा है?"

संदीप ने पूछा, "तू किस तरफ जा रहा है?"

गोपाल ने कहा, "अंदर आ जा।"

"मुझे अपना बैंक जाना है। नेशनल यूनियन बैंक के हावड़ा ब्रांच। तू तो एक बार हम लोगों के ब्रांच गया था।"

संदीप जैसे ही सवार हुआ, जीप रवाना हो गई। बोला, "कहां गया था?"

"डाक्टर लाहिड़ी के नर्सिंग होम। वहां मौसीजी को भर्ती कर दिया है।"

गोपाल बोला, "तेरी यह मौसीजी कहां से आ टपकी? एकमात्र विधवा मां के अलावा तेरा तो कोई सगा-सम्बन्धी नहीं था। कहां की मौसी है?"

संदीप ने कहा, "वही विशाखा, जिसके बारे में तुझे बताया था, उसी की मां को मैं मौसीजी कहा करता हूं। वे ही बीमार हैं।"

"किस तरह की बीमारी है?"

संदीप ने कहा, "डाक्टरों ने तो बताया है कैंसर।"

"कैंसर? यह क्या कह रहा है तू? यह तो ढेर सारे पैसे का गच्चा है। वह खर्च तू अकेले कैसे संभालेगा?"

संदीप ने कहा, "मैंने अपने दफ्तर से कर्ज लिया है।"

गोपाल ने कहा, "वह कितना रुपया हो ही सकता है? सारा खर्च क्या तुझे अकेले ही ढोना पड़ेगा? तेरी मौसीजी का और कोई नहीं है?"

"मौसीजी विधवा औरत हैं। एक देवर था लेकिन उसने विधवा भाभी का बोझ अपने कंधे से उतार फेंका है। तब से मौसीजी और उनकी लड़की की देखरेख मैं ही कर रहा हूं। उस विशाखा की खबर तुझे पहले ही बता चुका हूं।"

"हां, यह सब तो मैं सुन चुका हूं।"

संदीप ने कहा, "विशाखा अब काफी पैसे वाली हो गई है। अब वह करोड़ों रुपये की मालकिन है।"

"किस तरह इतने रुपये हो गए?"

संदीप ने कहा, "वह एक लंबी दास्तान है। तू विडन स्ट्रीट के मुखर्जियों को पहचानता है न? रॉलिन्सी-मुखर्जी कंपनी के मालिक। उनके लड़के सौम्यपद को भी तो तू पहचानता है।"

"वही फांसी का मुजरिम? जिसने अपनी पत्नी की हत्या कर उसे सड़क पर फेंक

दिया था ?"

"हां। बाद में फिर हाई कोर्ट में आजीवन कारावास की सजा मिली थी। लाइफ इंप्रिजमेंट···"

"हां, यह भी अखबार में पढ़ चुका हूं। उसके बाद ?"

संदीप ने कहा, "उसके बाद और क्या ! उसके बाद सौम्यपद से विशाखा की शादी हो गई थी।"

"यह क्या कह रहा है तू ! फांसी के मुजरिम से विशाखा की शादी हो गई ? क्यों ?"

संदीप ने कहा, "रुपए के लिए।"

यह सब सुनकर गोपाल हाजरा के मुंह से एक क्षण कोई भी शब्द नहीं निकला। उसके बाद बोला, "बहरहाल, अच्छा ही हुआ। उस लड़की को एक ठौर तो मिल गया। पूरी जिन्दगी सुख से बीत जाएगी।"

गोपाल हाजरा की बात सुनकर संदीप को आश्चर्य हुआ। बोला, "पूरी जिंदगी विशाखा सुख से बिता पाएगी ? यह क्या कह रहा है तू ! रुपया रहने से ही सुख हासिल हो जाता है ?"

गोपाल ने कहा, "हां रे हां, मेरी बात गांठ में बांध ले, मोटी रकम रहने पर ही आदमी सुख जीता है। मेरी ही बात लो। मैं तो तेरी तरह शिक्षित नहीं हूं। लेकिन मेरे जैसा सुखी कौन है ? मेरे पास जितने रुपए हैं उतने रुपए तेरे मुखर्जियों के पास हैं ? आज मैं पांच-छह करोड़ रुपए का मालिक हूं, यह बात तू जानता है ? आज मैं सुखी नहीं तो और कौन सुखी है, बताओ ?"

संदीप ने कहा, "तेरे पास इतने रुपए हैं तो तुझे इनकम टैक्स के मद में मोटी रकम चुकानी पड़ती होगी ?"

संदीप की बात सुनकर गोपाल हाजरा को गुस्सा आ गया। बोला, "इनकम टैक्स ? इनकम टैक्स क्यों दूंगा ? तू यह क्या कह रहा है ? साले शराब पिएंगे, रंडीबाजी करेंगे, हर रोज़ सैर-सपाटे करने अमरीका जाएंगे, मौज़ मनाएंगे और मैं मेहनत से कमाई अपनी रकम उनके पीछे खर्च करूं ? मैं उतना नादान नहीं हूं—"

सच, इनकम टैक्स का नाम सुनते ही गोपाल हाजरा आग-बबूला हो गया।

संदीप ने अब इस संबंध में आगे चर्चा नहीं बढ़ाई। अचानक उसके मुंह से एक सवाल निकल गया, "इतना रुपया लेकर तू क्या करेगा ?"

गोपाल हाजरा ने कहा, "लोग-बाग रुपये लेकर जो कुछ करते हैं, वही करूंगा।"

"लोग-बाग रुपये से क्या करते हैं ?"

"और क्या करेंगे, रुपये लेकर मौज-मस्ती करते हैं। रुपया जीने की ताकत है। रुपया रहने पर जीने में सुख मिलता है।"

संदीप ने कहा, "लेकिन हमारे देश में तो बहुत सारे लोग खाना न मिलने पर भूखों मर जाते हैं। उन्हें तू दे सकता।"

"धत्त, मैं खून पसीना एक कर रुपया कमाऊं और उन रुपयों से अनाज खरीदकर उनका पेट भरूं ? मेरा बाप भूखों मर गया था। उसे किसी ने खाने को दिया था ?"

गोपाल हाजरा की युक्ति अजीब किस्म की थी।

संदीप ने पूछा, "तूने इतना रुपया कैसे पैदा किया ?"

गोपाल ने कहा, "मैंने तो तुझे भी कहा था लिखाई-पढ़ाई छोड़कर कलकत्ता चला आ, यहां लाखों रुपये हवा में उड़ते हैं। तू मेरी बात अनसुनी कर बी० ए० पास करने चला गया। इससे तुझे कौन सा फायदा हुआ ? बस एक बंधी-बंधाई नौकरी मिली।

नौकरी करके कोई क्या कभी बड़ा आदमी बन पाया है ? श्रीपति मिश्र की ही मिसाल लो दो बार मैट्रिक फेल कर चुके हैं लेकिन आज मिनिस्टर हैं। दिन-भर में कितना कमाते हैं, जानता है ?"

संदीप अब सुनना नहीं चाहता था। गोपाल हाजरा की बातें सुनने में उसे खराब लग रहा था। वह सोच रहा था, नाहक ही वह गोपाल हाजरा की गाड़ी पर सवार हुआ। सवार न होता ही अच्छा रहता।

गोपाल हाजरा ने फिर कहना शुरू किया, "यह जो तेरी विशाखा है, उसकी तकदीर कितनी अच्छी है, बता तो सही ! एक करोड़पति के घर में शादी हो गई।"

संदीप ने कहा, "विशाखा से मेरी शादी होने जा रही थी'''एकाएक अड़चन खड़ी हो गई।"

गोपाल हाजरा ने कहा, "तुझसे ? तुझसे शादी हुई होती तो उस लड़की का जीवन नरक हो जाता। नहीं हुई, यह अच्छा ही हुआ—"

"क्यों ?"

गोपाल हाजरा ने कहा, "तुझसे शादी हुई होती तो तू विशाखा को कार पर सैर करा सकता था ? तू विशाखा को जड़ाऊ गहने दे सकता था ? कलकत्ता शहर में एक मकान खरीदकर दे सकता था ? पत्नी की मनपसंद साड़ी खरीदकर उसे दे सकता था। सभी औरतें साड़ी, मकान, गाड़ी और गहने ही चाहती हैं। यह सब तू अपनी पत्नी को दे सकता था।"

'लेकिन जिस औरत का पति जेल की सजा भुगत रहा है, उसके बारे में एकबार सोचकर तो देख।"

गोपाल हाजरा बोल उठा, "भाड़ में जाए पति। उस पति को चाहे जेल की सजा खटनी पड़े या फांसी ही क्यों न हो जाए, उससे विशाखा का क्या बिगड़ता है ? वह तो हमेशा रुपयों के पहाड़ पर ही सोकर जिन्दगी गुजार दे सकती है। उसके उन रुपयों को तो फांसी नहीं पड रही है। वे रुपये तो उसके संदूक में ही रह जाएंगे। उन्हें तो कोई छीन नहीं सकेगा।"

संदीप को अब बरदाश्त नहीं हुआ। बोला, "मैं यहीं उतरूंगा जी।"

"यह क्या ? यहां क्यों उतरेगा ? तेरा बैंक तो यहां से काफी दूर है।"

संदीप ने कहा, "सो रहे यहां मुझे एक जरूरी काम है—"

यह कहकर संदीप वहीं उतर गया। गोपाल हाजरा की जीप में और ज्यादा देर तक बैठे रहना उसके लिए असंभव हो गया था।

उसके बाद दफ्तर से संदीप जब बेड़ापोता के अपने मकान में पहुंचा तो और-और दिनों की अपेक्षा काफी रात हो चुकी थी। मां लड़के के इंतजार में रास्ते की ओर ताक रही थी। लड़के के लिए मां हमेशा उसके रास्ते की ओर आंखें बिछाकर प्रतीक्षा करती रहती है। उस दिन भी मां ने बाकायदा पूछा, "क्यों रे, कोई खबर है ?"

संदीप ने बाकायदा कहा, "नहीं—"

"अस्पताल गया था ? तेरी मौसीजी कैसी है ?"

संदीप बोला, "ठीक ही हैं—"

लेकिन खाने के दौरान संदीप ने अचानक पूछा, "अच्छा मां, तुम्हारे पास सोने का एक जोड़ा बाला था न ?"

मां ने कहा, "हां, लेकिन क्यों ?"

"उन्हें मुझे दे सकोगी ?"

"क्यों रे ? फिर क्या हुआ ?"

संदीप ने कहा, "नर्सिंग होम में फिर दो हजार रुपये के बिल का भुगतान करना है।"

"क्यों ? क्या हुआ ? किस मद में फिर दो हजार रुपया देना होगा ?"

संदीप ने कहा, "यह सब मालूम नहीं। चूंकि मांगा है तो देना ही है। मेरा भी बैंक में अब रुपया नहीं है।"

मां ने कहा, "मैं बाले का जोड़ा दे सकती हूं। लेकिन तेरे मल्लिक चाचा तो कह गए थे कि तेरी मौसीजी के डाक्टरी खर्च में जितनी रकम लगेगी, वे देंगे। एक लाख, दो लाख जो भी लगे, देंगे। सो तू एक बार अपने मल्लिक चाचा के पास जा न—"

संदीप ने कहा, "मैं रुपया नहीं मांग सकूंगा—"

मां ने कहा, "अरे, डेढ़-दो हजार रुपया उन लोगों के लिए कोई बड़ी रकम नहीं है। मांगने में दोष ही क्या है ? उस समय रुपया देने की बात कही थी, एक बार यह बात याद दिला देने में दोष ही क्या है ?"

संदीप ने कहा, "नहीं मां, किसी से रुपया मांगने में मुझे शर्म लगती है। मैं रुपया मांग नहीं सकूंगा—तुम अगर सोने के बाले का जोड़ा दे सको तो अच्छा वरना···"

"वरना क्या ?"

"वरना क्या करूंगा, यह सोचना पड़ेगा···"

यह कहकर खाने की जगह से उठकर हाथ-मुंह धोने आंगन की ओर चला गया।

सुमित मुखर्जी कलकत्ता आते ही व्यस्तता में डूब गए थे। मकसद था, मां की देखरेख करना, इलाज का बढ़िया से बढ़िया इन्तजाम करना। लेकिन तमाम कामों के बीच इंदौर की फैक्टरी की बात नहीं भूल सके थे। अपने घर, अपनी नंदिता और पिकनिक की बात भी नहीं।

यही वजह है कि मां को देखने के लिए आने पर वे हर रोज इंदौर फोन करते थे। टेलीफोन रात के समय करते। वे जानते थे कि दुनिया में रात के वक्त ही ज्यादा पाप होता है। रात के वक्त ही लोग ज्यादातर अन्याय करते हैं। रात का समय ही पाप के लिए सबसे उत्तम समय हुआ करता है। दिन की वेला में सूरज की रोशनी रहने के कारण स्वयं को छिपाकर रखना अनिवार्य होता है। क्योंकि उस समय लोगों की निगाह से खुद को बचाकर रखने का सुयोग या अवसर नहीं रहता।

लेकिन जैसे ही रात का अंधेरा उतर जाता है, मन के गह्वर से दमित इच्छाएं सांप की तरह बाहर निकल फन काढ़ने लगती हैं। उसी समय आदमी अकेले में होता है। दिन के वक्त जो आदमी, हो सकता है साधु मालूम हो; रात में हो सकता है, वही चोर बन जाए। आदमी की पहचान करनी हो तो उसकी रात की शक्ल देखनी चाहिए।

"कौन ? ओह तू है ? विश्वनाथ ? मेम साहब कहां हैं ?"

"हुजूर, घर में नहीं हैं ?"

"कहां गई हैं ?"

"यह बताकर नहीं गई हैं।"

"और पिकनिक ? मिसि बाबा ?"

"अभी सोई हुई है।"

लड़की सो रही है और मेम साहब, हो सकता है, अभी क्लब में हों या सिनेमा

का नाइट शो देख रही हों। आश्चर्य है ! सिर्फ मुक्तिपद ही नहीं, मुक्तिपद मुखर्जी जैसे तमाम लोग उन चीजों का शिकार हो गए हैं जो अंग्रेज बहुत पहले छोड़कर चले गए हैं। अन्तर बस इतना ही है कि पहले सूट बगैर पहने क्लब जाने पर अंदर घुसने नहीं दिया जाता था और अब वहां धोती-पंजाबी पहनकर जाने पर भी घुसने दिया जाता है।

आदमी जिंदगी भर सिर्फ एक ही काम करते हैं। जो काम शेर और भालू करते हैं। वह काम है जीविका-उपार्जन। कैसे और अधिक पैसा कमाएगा, कैसे और मजे में जिन्दगी जिएगा, उसी की खोज में आदमी जिन्दगी बर्बाद कर देता है। लेकिन एकमात्र मौत के रूबरू होने पर वह सहसा सचेत हो जाता है। उस समय वह सोचता है—सच, इतने दिन तक रुपया कमाने के धंधे में ही जीवन बीत गया। इसके अतिरिक्त और कुछ नहीं कर सका। लेकिन तब बहुत देर हो चुकती है और उसके विदा होने का लग्न चला आता है।

मां की हालत देखकर मुक्तिपद को ऐसा ही अहसास हुआ। सच, बहुत देर हो चुकी है। इतने बरसों तक उन्होंने क्या किया, क्या लेकर मगन रहे, किसकी कितनी भलाई की, देश का ही कौन-सा उपकार किया ! सिर्फ अपने बारे में सोचते रहे। अपने परिवार की सुख-समृद्धि के बारे में सोचा है, इसके सिवा और किसी चीज के बारे में नहीं सोचा है। और हां, इनकम टैक्स, हिसाब-किताब और लाभ-हानि के बारे में भी सोचा है !

लेकिन पूरी जिन्दगी क्या वे इसी काम में बिता देंगे। यही सब काम करने के लिए ही वे दुनिया में पैदा हुए हैं ? तो फिर वे इतना बोझ क्यों ढो रहे हैं ? उनका अपने के नाम पर कौन है ? फिर वे किसके लिए यह सब कर रहे हैं ? अपनी पत्नी और लड़की के लिए ? देखते-देखते उनकी आयु का एक लंबा अरसा गुजर गया। उन लोगों को उन्होंने पहचान लिया है। वे लोग सभी केवल अपने आराम और सुविधा के उपयोग के ही अभ्यस्त हैं। इन सुविधाओं में ज़रा-सी भी कमी आएगी तो वे इसका विरोध करने लगेंगे। कहना शुरू कर देंगे : "तुम्हारी फैक्टरी चाहे बंद हो या चाहे उठ क्यों न जाए, यह देखना हमारी जिम्मेदारी नहीं है, हमारी मांगों की तुम्हें पूर्ति करनी होगी, हम तुम्हारी कोई आपत्ति सुनने को तैयार नहीं।"

यह सब बात उन्होंने इसके पहले कभी गहराई से नहीं सोची थी और न सोचने का कारण था कि उन्हें सोचने का समय ही नहीं मिला था। लेकिन आज ?

आज इन्दौर से कलकत्ता आने और मां को देखने के बाद मुक्तिपद को फिर से इन्हीं बातों की याद आने लगी। जिस मां ने उसे पाला पोसा है, डाटा-फटकारा है, वही इस हालत में असहाय बेहोश पड़ी हुई है। घर-गृहस्थी में कहां बर्बादी होती है, कहां अपव्यय हो रहा है, यह देखनेवाला कोई नहीं है। इसके लिए डाटने-फटकारने या सजा देनेवाला अब कोई नहीं है। फिर भी धरती घूम रही है, फिर भी सूर्योदय और सूर्यास्त होता है। दुनिया में इसका कहीं कोई व्यतिक्रम नहीं हो रहा है। फिर क्या मुक्तिपद की मृत्यु के बाद भी यही होगा ?

निश्चय यही होगा। सारा कुछ ऐसा ही चलता रहेगा, सिर्फ मुक्तिपद ही चला जाएगा। दुनिया रह जाती है, सिर्फ मनुष्य ही चले जाते हैं। यदि यही सच है तो फिर क्यों यह मोह-माया, क्यों इतनी ममता, क्यों इतना आकर्षण !

मुक्तिपद ने डाक्टर साहब से पूछा, "ऐसा क्यों हुआ ? इसका क्या कोई प्रतिकार नहीं है ?"

डाक्टर साहब के लिए यह सब पुराने सवाल हैं। उन्होंने बहुत सारे जन्म देखे हैं, साथ ही बहुत सारी मृत्युएं भी देखी हैं। दिन-रात वे इसी में व्यस्त रहते हैं। और

यदि नहीं रहेंगे तो खाएंगे क्या ? कहां से उनका खाना-पहरावा जुटेगा ?

डाक्टर साहब की एक बात याद आई। उन्होंने कहा था, "हम तो जीवन नहीं दे सकते, सिर्फ इस तरह की दवा दे सकते हैं जिससे मरने के वक्त आदमी को कष्ट न हो। इससे ज्यादा हम कुछ भी नहीं कर सकते—"

इसके बाद मुक्तिपद के लिए कुछ कहने को नहीं रह जाता है। वे उठकर बाहर चले आते हैं। उसके बाद सीधे अपने घर। यह घर भी जैसे एक नया चेहरा पहनकर उनके सामने प्रकट हुआ। उन्हें लगा, ऐसा एक दिन आएगा जब यह मकान भी इस तरह खड़ा नहीं रहेगा। हालांकि उनके पिता ने कितना खर्च कर इस मकान को बनवाया था ! उस समय शायद उन्होंने भी सोचा होगा कि यह मकान हमेशा खड़ा रहेगा।

गिरिधारी ने मंझले बाबू को बदस्तूर सलाम किया। मुक्तिपद ने अब गौर से उसकी ओर देखा। बोले, "गिरिधारी—"

"हुजूर !"

"तुम्हारी नौकरी के कितने दिन हो गए ?"

"सो मालूम नहीं हुजूर।"

दुनिया में ये ही लोग सुखी हैं—गिरिधारी जैसे लोग ही। चूंकि ये लोग हैं इसीलिए 'सुख' नामक शब्द डिक्शनरी में अब भी है। जिस दिन ये लोग नहीं रहेंगे उस दिन यह शब्द डिक्शनरी से लुप्त हो जाएगा। यह आदमी लिखा-पढ़ा हुआ नहीं है, नहीं अधिक रुपये-पैसे का मालिक है। फिर भी इसे देखकर मुक्तिपद को रश्क होने लगा।

हेनरी फोर्ड की याद आ गई। अगाध पैसे के मालिक थे वे। हर घण्टे उनकी फैक्टरी में एक गाड़ी बनकर तैयार हो जाती थी। उस ज़माने में उनकी हर रोज की आमदनी थी सोलह लाख रुपये।

एक दिन वही हेनरी फोर्ड अपने कारखाने के अन्दर गए। उस समय टिफिन-टाइम था। उसके कर्मचारी डटकर नाश्ता कर रहे थे। उन्हें देखकर हेनरी फोर्ड को बेहद ईर्ष्या हुई। उन्होंने सोचा, उनके कर्मचारी कितने सुखी हैं। हालांकि उन्हें बहुत ही कम तनख्वाह मिलती है।

वही हेनरी फोर्ड अपनी डायरी में लिख गए हैं—मैंने कल एक अंडा खाया था और वह हजम हो गया है।

गिरिधारी को देखकर मुक्तिपद को वैसी ही ईर्ष्या हुई। वे बिना कुछ बोले ऊपर की तरफ जाने लगे। आखिर में वे जैसे ही अपने कमरे के अन्दर जाकर बैठे कि मल्लिक-जी वहां आ धमके। मुक्तिपद ने कहा, "मैं डाक्टर साहब के पास से आ रहा हूं—"

मल्लिकजी ने यह बात सुनी पर कुछ बोले नहीं। मंझले बाबू के आदेश की प्रतीक्षा में खड़े रहे। मंझले बाबू ने कहा, "अभी जबकि यह हालत है तो हमें शोक करने के बजाय ज़रूरी काम करने हैं। मां को चूंकि हम ज़िन्दा नहीं रख पाएंगे इसलिए भविष्य में हमें और क्या-क्या काम करने हैं, इस पर सोचना-विचारना है। सौम्य जेल की सजा भुगत रहा है, इसलिए अब वह हम लोगों की कम्पनी का डाइरेक्टर नहीं है। इसी वजह से उसका नाम अब डाइरेक्टरों की सूची से काट देना पड़ा है—"

यह बात मल्लिकजी के दिमाग में नहीं आई थी। पूछा, "ऐसी बात है ?"

मंझले बाबू ने कहा, "हां, यही बात है। कानून का चूंकि यही कहना है इसलिए मैंने डाइरेक्टर बोर्ड की मीटिंग में इस बात का जिक्र किया था। हम लोगों के एटर्नी ने यही सलाह दी थी।"

मल्लिकजी तब भी खड़े ही थे। पूछा, "उसके बाद ?"

मंझले बाबू ने कहा, "अब अगर बदकिस्मती का सामना करना पड़ा तो हमारी

मां का भी डाइरेक्टरशिप कट जाएगा।"

"फिर क्या होगा?"

मंझले बाबू ने इस बात का जवाब देने के बजाय पूछा, "बहूरानी कहां है?"

मल्लिकजी ने कहा, "दादी मां के कमरे में।"

"क्यों? दादी मां के कमरे में क्यों है?"

मल्लिकजी ने कहा, "वे दादी मां की सेवा-सुश्रूषा कर रही हैं—"

"क्यों? नर्स नहीं है क्या?"

"दिन-रात के लिए नर्स तो है ही। दो नर्सें बारी-बारी से रात-दिन ड्यूटी पर तैनात रहती हैं। उन लोगों के साथ बहूरानी भी पूरे दिन और पूरी रात दादी मां की सेवा-सुश्रूषा करती रहती हैं।"

मंझले बाबू को मानो घोर आश्चर्य हुआ। बोले, "रात में भी बहूरानी रहती है?"

"हां।"

"क्यों? उस तरह रतजगा करने से तो बहूरानी की तबीयत खराब हो जाएगी। आप मना क्यों नहीं करते?"

मल्लिकजी बोले, "मैंने मना किया था, लेकिन उन्होंने मेरी बात पर ध्यान नहीं दिया।" उसके बाद एक क्षण रुककर फिर बोले, "और सिर्फ इतना ही नहीं, वे रोजाना जमा-खर्च का हिसाब अपने खाते में लिख लेती हैं।"

"ऐसी बात!"

"हां। दादी मां जो-जो करती थीं, बहूरानी भी अब उसी तरह गृहस्थी चला रही हैं। सारे नियम-कानूनों को मानकर चल रही हैं..."

"मानकर चल रही है?"

मल्लिकजी ने कहा, "ठीक उसी प्रकार नियम से सिंहवाहिनी की पूजा-अर्चना जारी रखने को कहा है। ठीक रात नौ बजे गेट बन्द करने को कह दिया है, सिंहवाहिनी के सीढ़ी और आंगन की बत्तियां रात दस बजे बुझा देने का हुक्म दिया है। दादी मां के समय जो-जो किया जाता था, ठीक उसी तरह करने का हुक्म दिया है। उस पर है रात में जगकर दादी मां की सेवा-सुश्रूषा करना। दादी मां के सन्दूक और आलमारी की तमाम चाबियों का गुच्छा अब बहूरानी की हिफाजत में है।"

यह सब सुन मंझले बाबू चंद लमहे तक गुमसुम पड़े रहे। उसके बाद कुछ देर तक चुप्पी साधे रहने के बाद बोले, "लेकिन बहूरानी यदि सब पैसा मायके के लोगों को दे दे तो!"

मल्लिकजी बोले, "बहूरानी के मायके में एकमात्र बूढ़ी विधवा मां के अलावा और कोई नहीं है और बीमार हैं। ज्यादा दिनों तक जिन्दा भी नहीं रहेंगी। फिर किसको देंगी?"

बात तो सही है। यह सुनकर मंझले बाबू आश्वस्त हुए। बोले, "बहूरानी को अभी मेरे पास बुला लाइए तो।"

विशाखा उस समय दादी मां को गरम पानी से नहला रही थी। डाक्टर ने [illegible] ही करने का निर्देश दिया है। नहलाने का मतलब 'स्पंज' करना। [illegible]। अचानक बाहर से मल्लिकजी की पुकार सुन, काम छोड़कर विशाखा बाहर आई। पूछा, "मुझे पुकार रहे हैं?"

मल्लिकजी बोले, "मंझले बाबू आए हैं, आपको बुला रहे हैं—"

"मुझे? क्यों?"

मल्लिकजी बोले, "मंझले बाबू आपसे कुछ बातचीत करना चाहते हैं—"

"मंझले बाबू ?"

मंझले बाबू का नाम सुनते ही विशाखा के चेहरे की शक्ल बदलकर कैसी-कैसी तो हो गई। उसके बाद ज़रा सोचने के बाद बोली, "मैं कपड़ा बदलकर अभी आई—"

दुबारा कमरे के अन्दर चली गई। उसके बाद पहने हुए कपड़े को उतार, एक साफ कपड़ा पहना और आईने में एक बार अपना चेहरा देख बाहर चली गई।

उसके बाद मंझले बाबू जिस कमरे में थे, उसके अन्दर गई। विशाखा पर नज़र पड़ते ही मंझले बाबू बोले, "आओ बहूरानी, तुम्हें बुला भेजा था। तुमसे कुछ बातें करनी हैं, बैठ जाओ—"

विशाखा ने कमरे के अन्दर जाते ही मंझले बाबू के चरणों का स्पर्श किया। मंझले बाबू बोले, "यही थोड़ी देर पहले मैनेजर साहब से सारा कुछ कह रहा था। मैं डाक्टर साहब से मिल आया। डाक्टर साहब ने मुझे साफ तौर पर बता दिया है कि मां अब ज्यादा दिनों तक ज़िन्दा नहीं रहेगी। इसलिए हमें काम-धाम का सारा इंतज़ाम पहले से ही करके रखना होगा।"

यह कहकर उन्होंने पॉकेट से कुछेक कागज़-पत्तर निकाले। उन्हें सिलसिलेवार सजाकर बोले, "यह देखो, वापस आने के दौरान मैं अपने एटर्नी के ऑफिस भी गया था। तुम्हें सौम्य के स्थान पर डाइरेक्टर नियुक्त किया जाएगा। उन्होंने यही सलाह दी। उसके बाद मां के विदा हो जाने के बाद क्या करना होगा, वे बाद में बता देंगे—अभी तुम इन चार स्थानों पर हस्ताक्षर कर दो—"

विशाखा दूसरे कमरे से कलम लाने जा रही थी। लेकिन मंझले बाबू ने कहा, "यह लो, मेरी इस कलम से तुम हस्ताक्षर कर दो—"

विशाखा को चार कागज़ों पर हस्ताक्षर करना पड़ा। मंझले बाबू बोले, "अब तुम्हें साल में कम से कम चार लाख रुपये मिला करेंगे। और यदि कुछ रुपये, यानी हिसाब के बाहर कुछ रुपये देने को होंगे तो मैं वह रकम खुद आकर दे जाऊंगा। समझीं ?"

यह घटना इस तरह आकस्मिक तौर पर घटी कि विशाखा के मुंह से इस संबंध में कोई उत्तर नहीं निकला। उसकी आंखों के सामने सब कुछ जैसे अंधेरे में बदल गया। सिर चकराने लगा। ऐसा महसूस हुआ जैसे वह वहीं गिर पड़ेगी। उस समय भी उसके कानों में वे बातें गूंज रही थीं—"चार लाख रुपये···चार लाख रुपये···"

"क्या हुआ ? मेरी बात तुम्हारी समझ में आई ? कुछ बोल क्यों नहीं रही हो ?"

सहसा चुपके से उसकी शादी हो जाना, सहसा गहनों और रुपयों से भरी आलमारी की चाबियों का गुच्छा पा जाना, सहसा दादी मां का अस्वस्थ हो जाना, सहसा ससुराल की कंपनी की डाइरेक्टर बन साल में चार लाख रुपये की मालकिन हो जाना—यह सब उसके जीवन में क्या हो रहा है, इस पर गहराई से सोचने पर वह बिलकुल निर्वाक् हो गई। वास्तव में वह सपना देख रही है या उसने गलत सुना है ! वह क्या दंत कथा की नायिका है या सिनेमा की अभिनेत्री ! यह सब बात तो सिनेमा में ही देखने को मिलती है, दंतकथा की कहानी ही में लिखी रहती है। मां, तुम्हें जीवन में कितना दुख उठाना पड़ा है, मैं यह देख चुकी हूं। मुझे सीने से चिपकाकर तुम कितने दिनों तक रोई हो, मुझे यह याद है। तुम्हें एक दिन इस मकान में लाकर दिखाऊंगी कि मेरी आलमारी में कितने गहने हैं मां, मेरे संदूक में कितने रुपये हैं। साल में मेरी आमदनी चार लाख रुपये की है।

और मेरा पति ? तुम्हारा दामाद ? वह खून का मुजरिम बन जेलखाने की सजा भुगत रहा है। लेकिन इससे क्या आता-जाता है ? तुम्हारा दामाद तो हमेशा के लिए जेल का बंदी बनकर नहीं रहेगा। किसी दिन उसे जेल से रिहा कर दिया जाएगा। सात साल

या आठ साल के बीच या आठ साल के बाद वह दुबारा घर लौटकर चला आएगा। तब? तब तो तुम कितने सुख से जीवन जियोगी, उस पर एक बार सोचकर देखो तो सही। उस समय तुम्हें दूसरे के घर में महरी का काम कर दिन नहीं बिताने होंगे, दूसरे की डांट-फटकार नहीं सुननी होगी। उस समय तुम हाथ पर हाथ धरे सिर्फ हुक्म करती रहोगी। तुम सिर्फ बिस्तर पर लेटी-लेटी बिंदु, गुड्डा और कालीदासी को हुक्म करती रहोगी। वे सब तुम्हारे हुक्म की तामील करेंगी। वे लोग तुम्हारे मुंह के पास भात की थाली लाकर पहुंचा जाएंगी। तुम्हें अब कभी रसोई नहीं पकानी होगी और न ही राख से मांज-मांजकर जूठे बरतन साफ करने को विवश होना पड़ेगा···

"यह क्या बहूरानी, तुम रो रही हो?"

अचानक विशाखा को जैसे होश आ गया। उसने सामने की ओर देखा—वहां उसके चचेरे ससुर बैठे हुए हैं। मल्लिकजी खड़े हैं। उसकी मां कहां है? फिर वह किससे बातें कर रही थी? उनकी मां तो···

"बहूरानी, तुम अभी चली जाओ। ऐसा लग रहा है जैसे तुम्हें अभी बहुत तकलीफ हो रही है। जाओ—"

विशाखा के चले जाने के बाद मंझले बाबू ने मल्लिकजी की ओर देखा। बोले, "सौम्य की पत्नी का भाग्य अच्छा है—"

शायद उन्होंने अपनी पत्नी से सौम्य की पत्नी की तुलना करके ही यह बात कही।

मल्लिकजी ने कहा, "बहूरानी दादी मां की कितनी सेवा-सुश्रुषा कर रही है, अपनी आंखों से देखे बगैर कोई इस बात पर विश्वास नहीं करेगा। लोग इतने जतन से मां-बाप की भी सेवा नहीं करते।"

मंझले बाबू बोले, "इसीलिए तो कह रहा हूं कि सौम्य खुद नंबरी हरामी है, लेकिन पत्नी के रूप में उसे भली औरत मिली है। बहरहाल, हर तरह का सुख सभी को नसीब नहीं होता—"

यह बात स्वगतोक्ति जैसी सुनाई पड़ने के बावजूद हो सकता है, उनके हृदय की बात उनके मुख से निकल गई हो। बोले, "मैं आज ही जा रहा हूं, आप हैं ही, सारा कुछ संभाले रहिएगा। मैं इससे ज्यादा आपसे कहूं ही क्या! उधर मेरी देखरेख करने वाला कोई नहीं है। मुझे अकेले ही घर-द्वार सारा कुछ संभालना पड़ता है। अब इंदौर भी पहले जैसा इंदौर नहीं रहा। अब वहां भी यहीं की तरह पार्टीबाजी शुरू हो गई है। वहां भी अब राजनीति का माहौल गर्म है। इसके अलावा है स्पोर्ट्स। जिस दिन खेल चलता है, ऑफिस में कोई भी काम नहीं करता। मिनिस्टर लोग भी काम-धाम छोड़कर दिन-भर खेल देखते रहते हैं। पहले कलकत्ता में इस प्रकार होता था, अब पूरे भारत में इसी तरह का दौर चल रहा है—"

उसके बाद एकाएक बोले, "हां, एक बात। इंदौर के लिए एक ट्रंक कॉल बुक करके रख दें—"

ऐसा ही है यह कलकत्ता, ऐसी ही है यह दुनिया। सिर्फ आज की ही दुनिया नहीं, हमेशा की दुनिया इसी तरह की है। खासकर जब से दुनिया में शहरी सभ्यता का उदय हुआ है। इसका मतलब पांच हजार साल पहले से। एक तरफ हैं सदीप जैसे लोग और दूसरी तरफ मुक्तिपद मुखर्जी जैसे लोग। इन्हीं दो दलों के लोग शहरी सभ्यता को चालू हालत में रखे हुए हैं।

और उन लोगों के परे जो गांव के निवासी हैं वे लोग ?

उनके बारे में सोचने का वक्त नहीं है हमारे पास। हम लोग शहर के निवासी गांव के लोगों को खटाकर अपना पेट भर रहे हैं। जो लोग हमारे भोजन के लिए धान-गेहूं, आलू-बैंगन, केला-मूली की खेती करते हैं, उनके बारे में हम वोट के पहले सोचेंगे। उस समय उन लोगों को लाकर मैदान में एकत्र करेंगे। हरेक व्यक्ति को कुछेक रुपये देंगे, उनके हाथ-खर्च के वास्ते। वे बेटिकट ट्रेन पर सवार होकर कलकत्ता आएंगे, उसके बाद दिन-भर म्यूजियम देखेंगे, कालीघाट के मंदिर जाएंगे, विक्टोरिया मेमोरियल देखेंगे और उनमें से कुछ लोग मैदान की मीटिंग को गुलज़ार करेंगे। और जब हम आदेश देंगे तो वे भाषण सुनने के दौरान ज़ोर-ज़ोर से तालियां बजाएंगे। हम जब कहेंगे—

"बोलो, वंदे मातरम्—"

तो वे लोग भी स्वर से स्वर मिलाते हुए कहेंगे—"वंदे मातरम्—"

उसके बाद जब हम कहेंगे—"बोलो, इनक्लाब ज़िन्दाबाद—"

तो उस वक्त भी वे स्वर से स्वर मिलाकर कहेंगे—"इनक्लाब ज़िन्दाबाद—"

चाहे वह सामन्तवाद का युग हो या जनतंत्र का—आज से पांच हज़ार साल पहले से यह चलता आ रहा है। हमने जब जिसकी जरूरत महसूस की है, उसे फांसी पर लटकाया है या उसे पकड़कर जेल में ठूंस दिया है। और जब ज़रूरत महसूस की है उन्हें 'राय साहब', 'राय बहादुर' का खिताब दिया है। इसके बाद जब तख्त बदल गया है तो उन्हीं लोगों के वंशधरों को 'पद्मश्री', 'पद्मभूषण', या 'भारत रत्न' की उपाधि से विभूषित कर उन्हें अपने हाथ में रखा है। और गांव और कस्बों से बुलाकर जिन्हें मीटिंग में सम्मिलित किया है, वे लोग ?

वे जहन्नुम में जाएं, वोट देने के बाद हमने उनकी ओर मुड़कर भी नहीं देखा है। क्योंकि वे लोग बड़े ही गन्दे हैं, वे बिलकुल अशिक्षित हैं, वे बड़े ही नमक हराम हैं! वे लोग थोड़ा-बहुत लिख-पढ़ लेते हैं तो सिर ऊंचा कर खड़ा होना चाहते हैं। कहते हैं—"हम लोग भी मन्त्री बनेंगे या एम० पी०, एम० एल० ए० बनेंगे। हम भी राय साहब बनेंगे, राय बहादुर बनेंगे। या 'पद्मश्री', 'पद्मभूषण' बनेंगे—"

और एक बार यदि मंत्री बन जाएंगे तो फिर हमारा मुकाबला कौन कर सकेगा ? तब हम किसी की परवाह नहीं करेंगे। एक बार मंत्री बन जाएंगे तो हमारी आने वाली चौदह पीढ़ियां उसी परम्परा का उपभोग करती रहेंगी। ज़रूरत पड़ने पर हम बात-बात पर रूस जा सकते हैं, विलायत जा सकते हैं। बीमार पड़ने पर वाशिंगटन या मास्को जाकर ऑपरेशन करा आएंगे।

इसी तरह किसी दिन वरदा घोपाल गांव से आया था। वह एक घोर देहात में रहता था। श्रीपति मिश्र भी दो बार मैट्रिक फेलकर इसी तरह गांव से आया था। और उसके बाद आया था गोपाल हाजरा। वे लोग कलकत्ता की पार्टी-मीटिंग में बेटिकट रेलगाड़ी से सफर करते हुए आए थे। आने के बाद कोई हावड़ा स्टेशन पर उतरा था और कोई सियालदह स्टेशन पर। उसके बाद दल में शामिल हो, जुलूस निकालकर, पैदल चलते हुए मैदान पहुंचे थे। लीडरों का भाषण सुनने के खयाल से। पार्टी के सदस्यों ने सबके हाथ में दो-दो अदद रोटियां और थोड़ा-सा गुड़ थमा दिया था। वही खाकर दिन-भर भाषण सुनते रहे।

एक लीडर ने कहा था, "अब तुम लोग तालियां पीटो—"

और तत्काल सभी ने तालियां बजाई थीं। बेड़ापोता, मालदह या और-और जगहों से जो लोग बेटिकट रेल में सफर करते हुए आए थे, वे शाम के वक्त गाड़ी पर सवार हो अपने-अपने गांव लौट गए थे। उनमें से कुछ लोग उस मीटिंग में भी नहीं गए

थे। सीधे चले गए थे चिड़ियाखाना। कुछ लोग काली घाट के काली मंदिर में चले गए थे।

लेकिन अंत में जब सब लोग अपने-अपने गांव चले गए तो वे तीनों अपने घर लौटकर नहीं गए थे। उनमें से एक था गोपाल हाजरा, दूसरा वरदा घोषाल और तीसरा दो बार मैट्रिक फेल श्रीपति मिश्र।

हालांकि उन तीनों में से कोई किसी को नहीं पहचानता था।

गोपाल हाजरा को जो उस बार कलकत्ता का स्वाद मिल गया तो वह फिर बेड़ापोता लौटकर नहीं गया। तब से यहीं रह गया। और एक बार कलकत्ता का पानी पेट के अन्दर जाने से जो होता है, वही हुआ। गोपाल हाजरा बेड़ापोता की बात बिलकुल भूल गया।

गोपाल हाजरा के साथ जो वाकया हुआ वही वाकया हुआ वरदा घोषाल और श्रीपति मिश्र के साथ। वे लोग हमेशा-हमेशा के लिए गांव छोड़कर स्थायी तौर पर कलकत्ता के नागरिक बन गए। और उनका स्थायी मुकाम हो गया कलकत्ता।

शुरू में वे बस्ती में रहने लगे। बस्ती के लोगों से हिल-मिलकर वे बिलकुल बस्ती के बाशिन्दे हो गए। लेकिन पेशा?

कोई न कोई धंधा करना ही है, नहीं तो खाएंगे क्या? पेट कैसे भरेंगे। पहनने के कपड़े-लत्ते की आपूर्ति कौन करेगा?

कई साल के दौरान इसका भी बन्दोबस्त हो गया। संतोषी मां की पूजा से ही शुरुआत की। शहर में 'दुर्गा पूजा', 'सरस्वती पूजा', 'काली पूजा' पहले से ही चालू थी। उनमें नाक घुसेड़ने से कोई फायदा नहीं। क्योंकि उन क्लबों में प्रेसिडेण्ट, वाइस प्रेसिडेंट और सेक्रेटरी पहले से ही दखल जमाए हुए हैं। उनके अन्दर बाहरी लोगों के लिए प्रवेश करना मुश्किल है, वहां किसी तरह की सुविधा की कोई गुंजाइश नहीं है।

उस समय बाजार में एक नए प्रकार की पूजा की शुरुआत हो गई थी। उस पूजा का नाम है—'संतोषी मां' की पूजा। पहले की पूजाओं की तरह यह पूजा दो-तीन दिन में समाप्त नहीं होती। एक बार संतोषी मां की पूजा शुरू हो जाए तो उसे लम्बे अरसे तक, तकरीबन पन्द्रह दिनों तक खींचकर ले जाया जा सकता है। जब तक पूजा चलती रहेगी तब तक रुपये-पैसे मिलते रहेंगे। पूजा समाप्त होने के बाद फिर निराहार रहने का सिलसिला!

इसीलिए गोपाल हाजरा ने सोचा, वह 'संतोषी मां' की पूजा से ही अपने जीवन और जीविका शुरू करेगा। अंततः यही हुआ। और अपनी पूजा-कमिटी का प्रेसिडेण्ट वह खुद ही बन बैठा। उसके फलस्वरूप मुहल्ले में चंदे से जो भी रकम मिली, सब उसके हाथ में ही आकर जमा हुई। तब से वह पॉलिटिकल पार्टी के तौर-तरीके से चलने लगा।

तभी से बेरोजगार युवक उसे 'गोपाल-दा' कहकर उसका सम्मान करने लगे। एक छोटे से प्रेस से बिल की बही छपाई गई। पूजा का चन्दा वसूल होने पर प्रेस की उधार राशि चुकाई जाएगी—प्रेस के मालिक से यही तय हुआ।

उसके बाद उन बिल-बहियों को लेकर मुहल्ले के बेरोजगार युवकों का वह दल सड़क-सड़क पर चक्कर लगाने लगा। घर-घर जाकर बिल को पहुंचाने लगा। मुहल्ले के लोग पूजा का नाम सुन हैरत में आ गए। बोले, "इस समय कौन-सी पूजा है रे?"

युवकों ने कहा, "यह नई किस्म की पूजा है मौसीजी। इसका नाम है संतोषी मां की पूजा।"

मुहल्ले के लोगों ने कहा, "इस पूजा का नाम कभी नहीं सुना था भाई।"

युवकों ने कहा, "नाम कैसे सुनिएगा मौसीजी? यह देवी तो पहले थी नहीं। इस

देवी का आगमन पहले-पहल हुआ है हमारे देश में ।"

मुहल्ले के लोग करें ही क्या ! किसकी जैसी औकात थी, युवकों को दिया । वे उन रुपयों-पैसों को पूजा-कमिटी के प्रेसिडेण्ट गोपाल हाजरा के पास जाकर जमा कर पाए । प्रेसिडेण्ट गोपाल हाजरा ने देखा, खासी अच्छी रकम जमा हो रही है । ऐसे में उसने एक नया नियम चालू कर दिया । युवकों से कहा, जो जितने भी रुपए चंदा करके लाएगा, उसे चंदे की उस रकम का दस प्रतिशत बतौर कमीशन मिलेगा ।

गोपाल हाजरा की बात सुनकर युवकों को आश्चर्य हुआ । पूछा, "कितना कमीशन मिलेगा ?"

गोपाल हाजरा ने कहा, "दस प्रतिशत । इसका मतलब हर रुपये में दस पैसा । दस-दस रुपया तुम लोग चन्दा ले आओगे तो हरेक को एक रुपया मिलेगा । तुम लोग जो इतना खट रहे हो, इसके लिए दलाली नहीं मिलेगी ?"

उस समय युवकों के उत्साह और उत्तेजना की कोई सीमा नहीं रही । वे लोग दूने उत्साह से चन्दा वसूल करने में जुट गए । सड़क के बीच माल से लदी लॉरी, टेम्पो या ट्रक देखकर उन पर टूट पड़ते हैं । उसके बाद उनके सामने जाकर अवरोध खड़े कर देते हैं । रसीद में रुपये की रकम लिखकर ड्राइवर की ओर बढ़ा देते हैं ।

उसके बाद झमेले से बचने और उनसे छुटकारा पाने के खयाल से उनके हाथ में दो-चार रुपये थमाकर वे आगे की तरफ बढ़ जाते । उसके बाद कई दिनों तक वे उस रास्ते पर कदम नहीं रखते ।

इस बीच गोपाल हाजरा के हाथ में बहुत सारे रुपए जमा हो गए हैं । तकरीबन पांच हजार की मोटी रकम । गोपाल हाजरा तभी से कलकत्ता में डेरा-डंडी जमाकर बैठ गया ।

इसी तरह बाद वाले साल में और भी अधिक चहल-पहल के साथ पूजा हुई । दस प्रतिशत कमीशन के लोभ में सदस्यों की संख्या और अधिक बढ़ गई । सभी सदस्य बनने के लिए दबाव डालने लगे । गोपाल हाजरा ने एक नए इतिहास की नींव डाल दी । कहा जा सकता है कि उसी समय से गोपाल हाजरा के जीवन में एक नए परिच्छेद का आरम्भ हो गया ।

और तभी से गोपाल हाजरा के दिमाग में रुपया कमाने के नए-नए तौर-तरीकों ने जड़ जमाना शुरू कर दिया—पैसा कमाने के तरह-तरह की चालाकियों ने···।

संतोषी मां की पूजा तो बरकरार रही, उसके साथ ही सुधी स्वागत समारोह का सूत्रपात हुआ ।

यह नई पूजा गोपाल हाजरा की एक मौलिक खोज थी । गोपाल हाजरा के पहले इस पूजा की बात और किसी के जेहन में नहीं आई थी । शुरू में यह बात उसके शागिर्दों की समझ में नहीं आई ।

पूछा, "सुधी स्वागत समारोह' का अर्थ क्या है गोपाल-दा ?"

गोपाल हाजरा ने अपनी योजना विस्तार से युवकों को समझा दी । कलकत्ता में महान ज्ञानी और महान प्रतिभाशाली व्यक्तियों का कोई अभाव नहीं है । वे लोग इसी शहर में उपेक्षित, अज्ञात और अवांछित होकर पड़े हुए हैं । ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, राजा राम मोहन के परवर्ती बहुत सारे महान पुरुष इस कलकत्ता में है । वे लोग हमारे ही बीच वास करते हैं, लेकिन हम उन्हें पहचानते नहीं, उन्हें सम्मान नहीं देते । इसके लिए कौन लोग जिम्मेदार हैं ? जिम्मेदार हैं हमलोग । अगर हम उन्हें सम्मानित नहीं करते तो यह हमारी ही क्षति है । हम लोगों के आजाद देश की सरकार ने कभी उनकी ओर ध्यान नहीं दिया । हम चाहते हैं कि उनके जीवन का आदर्श हमारे जैसे साधारण आदमी के जीवन

का भी आदर्श हो। जिससे कि उनके आदर्श का अनुसरण कर हम सचमुच ही इन्सान बन सकें। इसलिए हमारा काम होगा उनका सम्मान करना, उनके महत्व को आम लोगों के बीच प्रचारित करना।

युवकों ने कहा, "वैसे व्यक्ति हमें कहां मिलेंगे ?"

गोपाल-दा ने कहा, "तुम लोग उन्हें पहचानते नहीं लेकिन मैं पहचानता हूं—मैं उन्हें बुलाकर ले आऊंगा। मैं उन्हें निमन्त्रित करने का भार ले रहा हूं। हम उनका सम्मान करेंगे—"

सो दूसरे साल जब संतोषी मां की पूजा हुई तो 'सुधी स्वागत समारोह' का भी आयोजन किया गया। उस बार पूजा का पंडाल और बड़ा बनाया गया। और भी ज़ोर-ज़ोर से हिन्दी फिल्मी गीत माइक्रोफोन से बजाए जाने लगे। मुहल्ले के लोगों के कान उस शोर-शराबे से फटने लगे। उस शोर-शराबे के कारण उन लोगों ने पुलिस के पास जाकर शिकायत की।

लेकिन जिन लोगों का सम्मान किया गया वे और अधिक प्रभावशाली व्यक्ति थे। उनमें से कोई समाचार पत्र का सहसंपादक था, कोई सरकारी ठेकेदार, कोई उदीयमान कवि, कोई सन्यासी।

इसलिए पुलिस ने किसी की शिकायत पर कोई कार्रवाई नहीं की।

जो युवक किसी दिन बेडापोता से ट्रेन में बेटिकट सफर करते कलकत्ता के मैदान में आया था, वही एक दिन कलकत्ता का स्थायी बाशिन्दा हो गया। मुहल्ले के युवकों का सिरमौर होकर उनका सरगना बन गया।

उसके बाद वोट का हंगामा शुरू हुआ। उस वोट के हंगामे मे समझ मे आया कि गोपाल हाजरा कोई अदना आदमी नहीं, बल्कि जन्मजात लीडर है। लीडरी करने के लिए ही उसका जन्म हुआ है इस धरती पर।

'सुधी स्वागत समारोह' के दौरान गोपाल हाजरा की जेब में मोटी रकम आ गई थी। सरकारी ठेकेदार से लेकर तेल के व्यापारी तक 'सुधी स्वागत समारोह' में सम्मान पाने पर देशवासियों की निगाह मे सम्मानित व्यक्ति बन गए और इसके फलस्वरूप वे लोग गोपाल हाजरा की मुट्ठियां गरम करने लगे। ऐसे में बेडापोता को कौन याद रखे, जहन्नुम में जाए बेड़ापोता, यह कलकत्ता सही-सलामत रहे। तभी से कलकत्ता ही हो गया गोपाल हाजरा का पीठ स्थान।

और इसी सुयोग से और दो गोपाल हाजराओं से उसकी जान-पहचान हो गई। उनमें से एक का नाम है वरदा घोषाल और दूसरे का श्रीपति मिश्र। उन लोगों ने जब सुना कि गोपाल हाजरा भी उन्हीं लोगों की तरह बेटिकट आया हुआ एक व्यक्ति है तो एकजुट होने मे विलम्ब नहीं हुआ। आपस में हिलमिलकर वे कलकत्ता का उद्धार करने को कमर कसकर तैयार हो गए। उन्होंने तय किया, इस मृत कलकत्ता को पुनर्जीवित करना होगा।

शुरू मे उनकी निगाह कलकत्ता के श्रमिकों पर पड़ी। कलकत्ता के तमाम श्रमिक बिहार से आए हैं। उनका उद्धार करने के लिए रुपए-पैसे की जरूरत पड़ेगी। लेकिन उन रुपयों का जुगाड़ कौन करेगा।

जुगाड़ करेंगे श्रमिकगण ही। उन्हें संगठित कर यूनियन बनाने से रुपए दनादन पॉकेट में घुसने लगेंगे। इसलिए इसका भार लिया वरदा घोषाल ने। उसने कहा, "कोई परवाह नहीं। मैं लेबर-फ्रण्ट की देखरेख करूंगा।"

कलकत्ता के कल-कारखाने की मल्कियत मारवाड़ियों के हाथ में रहने के बावजूद लगभग तमाम कुली-मजदूर बगल के प्रदेश बिहार से आए हैं। और बंगाली बाबू लोग ?

वे न तो व्यापार करना जानते हैं और न ही कुली-मजदूरों की तरह खट सकते हैं। वे सिर्फ किरानीगीरी करना जानते हैं। किरानीगीरी ही उनका जातीय पेशा है। इसके अलावा वे लिखना जानते हैं।

ऐसी हालत में हमें क्या करना चाहिए—हमें यानी जो लोग बेटिकट सफर कर अजनबी के रूप में कलकत्ता आए हैं?

हमारे लिए उचित है कि हम एक सूत्र में बंध जाएं। हम वरदा घोषाल, श्रीपति मिश्र और गोपाल हाजरा एक साथ मिलकर काम करेंगे। तभी हम अपने पैरों पर खड़े होकर सिर ऊंचा करके चल सकते हैं। अपने पैरों पर खड़े होने के लिए हमें कहां से काम की शुरुआत करनी होगी?

इन तीनों के बीच गोपाल हाजरा को ही ज़्यादा तजुर्बा था। क्योंकि वह अब भी अपनी बस्ती में सन्तोषी मां की पूजा कर अपने अनुभव के दायरे का दिन-दिन विस्तार कर रहा है। इसके अलावा वह कुछ रुपयों का मालिक भी बन बैठा है। वह समझ गया है कि लोगों को बेवकूफ बनाने के लिए लिखने-पढ़ने की तालीम लेना ज़रूरी नहीं है। लिखाई-पढ़ाई किए बगैर यदि बेशुमार रुपए का मालिक बना जा सकता है तो स्कूल-कॉलेज जाकर और फीस की रकम चुकाकर व्यर्थ ही वक्त जाया करने से फायदा ही क्या?

तभी से वह देखता आ रहा है कि लिखाई-पढ़ाई सीख, आइ. ए. एस. परीक्षा पास करने पर महीने में सिर्फ आठ-दस हज़ार रुपए की नौकरी मिलती है। उससे ज़्यादा कुछ नहीं मिलता। यहां तक कि उसे कोई सामर्थ्य ही नहीं होती।

लेकिन उन आठ-दस हज़ार मासिक वेतन पाने वाले शिक्षित व्यक्तियों के अधीन जो लोग काम करते हैं उनकी क्या हालत है?

वे जनता के प्रतिनिधि हैं। उन्हें शिक्षा-दीक्षा की, डिग्री की कोई ज़रूरत नहीं, कोई जिम्मेदारी भी नहीं। उनका एकमात्र गुण है कि वे जनता के प्रतिनिधि हैं।

जनता का अर्थ क्या है?

जनतन्त्र का अर्थ है किसी भी तरह अठारह साल के बाद के तमाम लोगों से वोट पाना। जनतन्त्र देश में सभी को एक-एक वोट रहता है। चाहे तुम करोड़पति रहो या उस करोड़पति के घर की एक निरक्षर महरी ही क्यों न रहो।

और उसके साथ यदि तुम स्वतन्त्रता-सेनानी हो तो वह हुनर अमरीका के हावर्ड युनिवर्सिटी से मिली पी-एच. डी. डिग्री से कहीं अधिक मूल्यवान है। सबको पता चल जाएगा कि तुमने देश और मनुष्य के लिए आत्मत्याग किया है, आत्म-बलिदान किया है। इसलिए इससे बढ़कर त्याग क्या हो सकता है?

जबकि यह हालत है तो तुम्हें वोट दूं या उस स्वार्थी आइ. ए. एस. या आइ. पी. एस. को वोट दूं?

गोपाल हाजरा ने देखा, कि जो लोग बड़े-बड़े सरकारी अफसर हैं। उन्हें यदि महीने में आठ-दस हज़ार रुपया वेतन मिलता है तो उनके ऊपर वाले लोगों की माहवारी आमदनी आठ-दस लाख रुपया है। उन मन्त्रियों का हुक्म मानने के लिए शिक्षित अफसरान हाथ जोड़कर भय से कांपते रहते हैं। एकबार मन्त्री के हुक्म की तामील कर लेते हैं तो अपने आपको धन्य समझते हैं।

कई साल बस्ती में गुजारकर और 'संतोषी मां' व गुधीजन स्वागत समारोह की पूजा करने के बाद गोपाल हाजरा को ज्ञान प्राप्त हुआ कि लिखाई-पढ़ाई न करने पर भी जनतंत्र में रुपये कमाने के बहुत सारे रास्ते खुले हुए हैं।

लिहाजा जिस रास्ते पर चलकर अधिक रुपये कमाए जा सकते हैं, उसी रास्ते पर

चलना श्रेयस्कर है। हम भी उसी रास्ते पर चलेंगे। नतीजन हम भी एक दिन आदमी की दृष्टि में प्रातःस्मरणीय हो जाएंगे। एक ओर ढेर सारे रुपयों के मालिक हो जाएंगे और दूसरी ओर जनता की दृष्टि में प्रातःस्मरणीय बन जाएंगे।

यही वजह है कि गोपाल हाजरा ने एक दिन बेड़ापोता जाकर संदीप से कहा था, "तू लिख-पढ़कर वक्त जाया करके क्या करेगा, इससे तो बेहतर है कि कलकत्ता चल। देखेगा कि कलकत्ता की रह-बाट में रुपये उड़ रहे हैं। केवल बटोरने की कला जाननी चाहिए, बस।"

लिहाजा जब गोपाल हाजरा के बहुत से शिष्य-प्रशिष्य हो गए तो अपने शिष्यों को लेकर उसने एक पार्टी का गठन किया। जो सब पार्टियां उन दिनों बाजार में चालू हालत में थी, उनमें से किसी में वह शामिल नहीं हुआ। क्योंकि उन पार्टियों में शामिल होने से वह प्रेसिडेण्ट नहीं बन पाएगा। ज्यादा-से-ज्यादा उसे जिन्दगी-भर एक सिपाही बनकर ही रहना होगा। लेकिन नई पार्टी बनाने से वह खुद प्रेसीडेण्ट बन पाएगा।

लेकिन नहीं, वह प्रेसिडेण्ट नहीं बना। भले ही प्रेसिडेण्ट नहीं बना लेकिन कलकत्ता में जितने भी गुंडे, चोर, बदमाश, दंगा करनेवाले और समाज-विरोधी तत्त्व हैं, उनके बीच वह फिल्ड-वर्कर बना रहा। कलकत्ता में जितने भी गुंडे, बदमाश, दंगा करने वाले और ड्रग के कारोबारों करनेवाले हैं वे लोग उसकी बात पर उठने-बैठने लगे। उनका वह सरगना बन गया। उसे बगैर पूछे किसी गुंडे को गिरफ्तार करना पुलिस के लिए भी असम्भव हो गया। इसका कारण था अलिखित समझौता।

और वरदा घोषाल ?

वह पार्टी के लेबर-फ्रण्ट की तरफ मुखातिब हुआ। उसका कारोबार सिर्फ कलकत्ता या पश्चिम बंगाल के कारखानों के कुली-मजदूरों तक सीमित रहा। वह चाहे तो फैक्टरी बन्द करा सकता है या स्ट्राइक करा सकता है।

और श्रीपति मिश्र ?

श्रीपति मिश्र भले ही दो बार मैट्रिक फेल हो लेकिन इससे क्या आता-जाता है! उसने एडुकेशन का निर्वाचन किया। शिक्षा-कार्यालय।

शिक्षा-कार्यालय हाथ में रहे तो राजा होने की इच्छा पूरी होती है। करोड़ों रुपये का ग्राण्ट दिलाने का मालिक हुआ शिक्षा मंत्री। शिक्षा मंत्री यानी एडुकेशन मिनिस्टर।

और सिर्फ रुपये ही नहीं, साथ में रहते हैं छात्रों के वोट। पश्चिम बंगाल में उनकी संख्या कोई कम नहीं है। उन्हें मैं यदि किसी तरह डिग्री दिला दूं तो वे लोग मेरा गुण गाएंगे, मुझे वोट देंगे। उनकी लिखाई-पढ़ाई हुई या न हुई, यह देखने की मुझे जरूरत नहीं है। वे मुझे वोट देंगे तो उसी में मुझे खुशी हासिल होगी।

एक बात और। और पार्टी का नाम क्या रखा जाए ?

तीनों ने मिलकर पार्टी का नाम रखा डेमोक्रेटिक एक्शन पार्टी। संक्षेप में डी० ए० पी०।

वरदा घोषाल ने कहा, "डेमोक्रेटिक एक्शन पार्टी के बदले डेमोक्रेटिक सोशलिस्ट पार्टी यानी डी० एस० पी०।"

नहीं, गोपाल हाजरा और श्रीपति मिश्र इस पर सहमत नहीं हुए। उन्होंने यह कहकर आपत्ति की कि ऐसा करने से हम दुर्गापूजा, कालीपूजा वगैरह जारी नहीं रख सकेंगे। हमारा देश भक्तिमार्ग का देश है। भक्तिमार्ग के देश में 'सोशलिज्म' शब्द को लोग-बाग अच्छी नजर से नहीं देखेंगे। क्योंकि सोशलिस्ट ईश्वर को नहीं मानते। यह नाम देने से हमारे देश के निवासी हमारे दल में नाम नहीं दर्ज कराएंगे।

अन्ततः नाम रखा गया डी० ए० पी०। यानी डेमोक्रेटिक एक्शन पार्टी। तब से साल-दर-साल डी० ए० पी० का सम्मेलन होने लगा। जो लोग एक दिन मुहल्ले-मुहल्ले में तरह-तरह की पूजाओं का आयोजन करते थे, विभिन्न स्थानों में 'सुधीजन स्वागत समारोह' का आयोजन करते थे, वे अब डी० ए० पी० के नाम से हर राह-घाट में जुलूस निकालने लगे। बड़े-बड़े पोस्टर लेकर नुक्कड़-सभा करने लगे। ज़ोर-ज़ोर से नारे लगाने लगे, "डेमोक्रेटिक एक्शन कमिटी ज़िन्दाबाद !"

उस नारे के साथ स्वर मिलाकर वोलन्टियर चिल्लाने लगे, "ज़िन्दाबाद, ज़िन्दाबाद !"

और गोपाल हाजरा ? गोपाल हाजरा तब पार्टी के संगठन के लिए ज़ोर-शोर से जुट गया। पार्टी के रुपये से उसने जीप खरीद ली थी। जो एक बस्ती में सीमाबद्ध था वह अब महीरुह में परिणित हो गया। जहां जितने भी गुंडे, फेरी वाले, दंगेबाज, जेबकतरे थे, सभी को उसने अपने कब्जे में कर लिया।

पार्टी के संगठन की पैठ गांवों और कस्बों में हो गई। उस समय गोपाल हाजरा की गिद्ध-दृष्टि सैक्सबी मुखर्जी एण्ड कम्पनी पर पड़ी। उन लोगों की कम्पनी में तब तक कोई गोलमाल नहीं हुआ था। फैक्टरी के श्रमिकों को बोनस के तौर पर मोटी रकम मिलती है, बेहतर क्वार्टर मिलते हैं। मालिक मुक्तिपद मुखर्जी से सभी खुश हैं। मालिक तमाम पार्टियों को बदस्तूर दान-दक्षिणा देते हैं। उनके पास हाथ फैलाने पर किसी को खाली हाथ लौटना नहीं पड़ता।

उसी समय एक दिन सहसा सड़क पर गोपाल हाजरा से संदीप की मुलाकात हो गई।

मुलाकात होने पर गोपाल अवाक् हो गया। पूछा, "तू कहां से आ रहा है ?"

संदीप ने कहा, "मैं आजकल कलकत्ता में रहता हूं।"

"यह क्या ? कलकत्ता में ? क्यों ? किसलिए ? पता क्या है ? कहां रहता है ?"

संदीप ने कहा, "बिडन स्ट्रीट में। मुखर्जी बाबुओं के घर में।"

गोपाल हाजरा ने पूछा, "किस मुखर्जी के घर में ?"

"मुक्तिपद मुखर्जी। सैक्सबी मुखर्जी एण्ड कम्पनी के मालिक।"

गोपाल ने पूछा, "उस घर से तेरा कौन-सा रिश्ता है ?"

संदीप ने कहा, "बेडापोता के मल्लिक चाचा को तू पहचानता है न ? मल्लिक चाचा ही उन मुखर्जी बाबुओं के मैनेजर हैं। मेरे लिए उस घर में खाने-पीने और रहने का इन्तजाम कर दिया है। वहां रहता हूं और कॉलेज में बी० ए० की पढ़ाई कर रहा हूं—"

"तुझे कौन-सा काम करना पड़ता है ?"

संदीप ने कहा, "काम बस इतना ही है कि रसेल स्ट्रीट में मुखर्जी बाबुओं का एक मकान है। वहां एक मां और उसकी लड़की रहती है, मुझे उनकी देखरेख करनी पड़ती है। उसके बदले में मुझे पन्द्रह रुपया वेतन मिलता है—"

"वे लोग कौन हैं ?"

संदीप ने कहा, "वे लोग मुखर्जी बाबुओं के कोई नहीं हैं। उस घर की लड़की से मुक्तिपद बाबू के भतीजे की शादी होने वाली है।"

"उस भतीजे का नाम क्या सौम्यपद है ?"

"हां, तुझे कैसे पता चला ?"

गोपाल हाजरा बोला, "अरे, वह तो चौरंगी के एक नाइट क्लब का मेम्बर है। वह तो हर रात औरत और शराब की बोतल ले वहां मौज-मस्ती मनाने जाता है।"

"तूने उसे कैसे पहचाना ?"

गोपाल हाजरा ने कहा, "उसे पहचानूंगा नहीं ? मैं तो उसी क्लब का मेम्बर हूं रे।"

संदीप को गोपाल की बात सुनकर हैरानी हुई। बेड़ापोता के हाजरा बुड्ढे का लड़का गोपाल हाजरा कलकत्ता आकर इतना सयाना हो गया है ?

बोला, "तू क्लब का मेम्बर क्यों बना है ?"

गोपाल ने कहा, "देख रहा हूं, तू कलकत्ता आने के बावजूद अब भी देहाती गंवार का गंवार रह गया। क्लब का मेम्बर बने बिना हज़ार साल कलकत्ता में गुज़ारने के बाद भी तू आदमी नहीं बन सकेगा।"

"क्यों ?"

गोपाल बोला, "अरे, तू तो अनाड़ी की तरह बातें कर रहा है। कलकत्ता में वास कर रहा है पर किसी क्लब का मेम्बर नहीं बना है, यह बात तू किसी से मत कहना। लोग सुनेंगे तो हंसेंगे।"

संदीप ने कहा, "क्यों ?"

गोपाल हाजरा ने कहा, "हंसेंगे नहीं ? कलकत्ता में जितने भी बड़े-बड़े आदमी हैं वे लोग इन सब क्लबों के मेम्बर हैं।"

"तू कितने क्लबों का मेम्बर है ?"

गोपाल ने कहा, "मैं सभी क्लबों का मेम्बर हूं। कैलकाटा क्लब, साउथ क्लब, वेस्टर्न क्लब, हेस्टिंग्स क्लब, कैलकाटा स्विमिंग क्लब, ऐंडर्सन क्लब···कितने क्लबों का नाम बताऊं ?"

"इसके लिए तो तुझे मोटी रकम का चंदा देना पड़ता है। उसके लिए तुझे रुपया कहां से मिलता है ?"

गोपाल हाजरा ने कहा, "सारी रकम हम लोगों की पार्टी देती है।"

"कौन-सी पार्टी ?"

गोपाल हाजरा ने कहा, "डी० ए० पी० यानी डेमोक्रेटिक एक्शन पार्टी।"

संदीप उसकी बातें सुन रहा था और सोच-सोचकर आश्चर्य में खोए जा रहा था। संदीप को कलकत्ता आए इतने दिन हो गए पर उसने इन क्लबों का नाम नहीं सुना था।"

"हम लोगों के सौम्य बाबू क्या इन क्लबों के मेम्बर हैं ?"

गोपाल हाजरा ने कहा, "सिर्फ तुम्हारे सौम्यपद बाबू ही क्या, कलकत्ता में जितने भी रईस हैं, जितने भी बड़े-बड़े आदमी हैं, वे लोग तमाम क्लबों के मेम्बर हैं। [illegible] कलकत्ता छोड़कर चले गए हैं जरूर, लेकिन क्लबों को यहीं छोड़ गए हैं। [illegible] हमने दखल जमा लिया है, अब हमीलोग इन क्लबों को चला रहे [illegible]

उसके बाद जरा रुककर पूछा, "तुम लोगों के मुक्तिपद बाबू [illegible] आदमी हैं रे ?"

संदीप ने कहा, "मैंने उन्हें ज्यादा नहीं देखा है, लेकिन [illegible] तो लगा है, इस तरह के बहुत ही कम आदमी हुआ करते हैं [illegible] किसी क्लब के मेम्बर नहीं रहे हैं। शायद कभी शराब नहीं [illegible] क्लब में देखा है ? कभी उन्हें शराब पीते हुए देखा है ?"

गोपाल हाजरा ने सहमति प्रकट करते हुए कहा [illegible] कभी किसी क्लब में नहीं देखा है भाई। हो सकता [illegible] बहुत अधिक काम रहने की वजह से क्लब आने [illegible]

करूंगा और किसी क्लब का मेम्बर नहीं बनूंगा, यह तो कभी हो ही नहीं सकता।"

उस समय संदीप के पास अधिक वक्त नहीं था। गाड़ी उन लोगों के घर के करीब आ गई थी।

बोला, "मैं यहीं उतरूंगा भाई, गाड़ी ज़रा रोक दे।"

उसी समय गोपाल हाजरा को सेक्सबी मुखर्जी कम्पनी का नाम सुनने को मिला था। इतने दिनों तक उसने उस कम्पनी का नाम क्यों नहीं सुना था, यही आश्चर्य की बात है।

उस समय एक दिन डी० ए० पी० की गोपनीय बैठक में इस बात की पहले-पहल चर्चा छिड़ी थी। गोपाल हाजरा ने कहा था, "अच्छा, सैक्सबी मुखर्जी कम्पनी इस कलकत्ता के सीने पर बैठकर फैक्टरी चला रही है और हम खामोश बैठे हुए हैं। हम लोग इसे कैसे बरदाश्त कर रहे हैं श्रीपतिदा? डी० ए० पी० की तरफ से कुछ करना चाहिए। ज्यादा देर करने से तो सर्वनाश हो जाएगा—"

श्रीपति दा बोले, "सैक्सबी मुखर्जी कम्पनी? वह कहां है?"

गोपाल ने कहा, "बेलुड़।"

बरदा घोपाल भी वहीं था। बरदा ने कहा, "मैंने नाम सुना है। लेकिन उन लोगों के यहां कम्पनी का अपना यूनियन है। अब तक कोई दूसरा यूनियन पैदा नहीं हुआ है।"

श्रीपति-दा बोले, "तुम एक बार पता लगाओ बरदा। उन लोगों के यहां इतने सारे लोगों के वोट भी हैं। उन लोगों के वोट हमें मिल सकते हैं।"

गोपाल ने कहा, "बेशक पा सकते हैं। इसीलिए तो मैं आपसे कह रहा हूं।"

श्रीपति-दा बोले, "स्टाफ कितने होंगे?"

बदरा घोपाल ने कहा, "ब्रिटिश फर्म है। इंडिया का बंटवारा होने के बाद अंग्रेज उसे मुखर्जियों के हाथ में बेचकर चले गए हैं।"

श्रीपति-दा ने गोपाल से पूछा, "तुम्हें यह खबर कहां मिली?"

गोपाल हाजरा ने कहा, "एक दोस्त से।"

"वह दोस्त कौन है?"

"हम लोगों के बेड़ापोता का एक युवक। उसके साथ मैं बहुत दिन पहले एक ही स्कूल और एक ही क्लास में पढ़ा करता था। अचानक कलकत्ता में उस पर नज़र पड़ गई। सुना, वह उन मुखर्जियों के घर में ही रहता है। घर का काम काज करता है और खाना खाता है। उसी से उस मकान का हालचाल सुनने को मिला। उसी ने बताया कि उन लोगों के पास बेशुमार दौलत हैं और मुक्तिपद बहुत ही भला आदमी है।"

बरदा बोला, "ठीक है, मैं पता लगाकर सब कुछ बताऊंगा।"

उसके बाद ही बरदा घोपाल सैक्सबी मुखर्जी कंपनी के बारे में सारी जानकारी प्राप्त करने के लिए जी जान से लग गया। कलकत्ता में कारखाने के श्रमिकों की दुख-दुर्दशा और अभाव-अभियोग दूर करने के लिए आदमी की कोई कमी नहीं है। उन लोगों के आंसू पोंछने के लिए वैसे लोगों की रात में ठीक से नींद भी नहीं आती। और उसी उद्देश्य की पूर्ति के निमित्त वे लोग अपने स्वार्थ को तिलांजलि देकर दिन-रात बस्ती-बस्ती का चक्कर काटते रहते हैं। और मैदान में भाषण देते-देते उनके मुख दुखने लगते हैं।

उन लीडरों के साथ उस समय एक और लीडर ने योगदान किया। वह है डी० ए० पी० का बरदा घोपाल। बरदा घोपाल का लेक्चर सुनते-सुनते कारखानों के कुली-मजदूरों का खून गरम हो जाता है। वे लोग मुट्ठियां बांध अपने हाथ आसमान की तरफ उठाकर चिल्लाते हैं। कहते हैं: "कॉमरेड बरदा घोपाल जिन्दाबाद, जिन्दाबाद।"

इसी तरह एक दिन मुक्तिपद की गैंगवी मुखर्जी कंपनी में टी० ए० सी० का यूनियन आसन जमाकर बैठ गया। उन्होंने यह जानना नहीं चाहा कि वरदा घोषाल की गृहस्थी का खर्च किन रुपयों से चलता है, कहां से उसके पास रुपये आते हैं, कौन उसके लिए रुपयों का जुगाड़ करता है। किन रुपयों से उसका मकान तैयार होता है, उसकी गाड़ी के पेट्रोल का खर्च कहां से आता है।

और अगर कोई जानना चाहे तो उसके लिए वरदा घोषाल के पास कैफियत मौजूद रहती है। वह पार्टी का हवाला प्रस्तुत कर देता है। उसकी पार्टी ही उसकी गृहस्थी चला रही है, उसकी पार्टी ही उसकी गाड़ी के लिए पेट्रोल की आपूर्ति कर रही है, उसकी पार्टी ने ही उसके अतीत, वर्तमान और भविष्य को चिरस्थायी बन्दोबस्त की गारंटी दी है। उसकी पार्टी ने ही उससे कहा है कि तुम देशवासियों की सेवा करने जाओ, मेहनतकशों की दुख-दुर्दशा दूर करने के लिए आत्म-बलिदान करो। हम तुम्हारे साथ हैं।

इसके बाद का इतिहास सबको मालूम है। वह इतिहास है रुपए का मूल्य कम जाने का इतिहास, वह इतिहास है एक प्रांत से कल-कारखानों का दूसरे प्रांत में चले जाने का इतिहास, वह इतिहास है मसजिद और मंदिर के कारण साम्प्रदायिक दंगों का इतिहास, वह है हरिणघाटा से दूध के बदले पिसे हुए चावल से पानी मिलाकर पिलाने का इतिहास, वह है लोगों की चॉकलेट, गोलगप्पे, पान मसाले में हेरोइन और ब्राउन शुगर मिलाने का इतिहास, वह इतिहास ''

कहा जा सकता है कि वह इतिहास हजारों पृष्ठ के उपन्यास में रूपान्तरित हो सकता है। और अगर सारा इतिहास कहा जाए तो वह हजार पृष्ठों के उपन्यास में भी नहीं समाएगा। हजारों उपन्यास लिखने से भी सब कुछ कहना समाप्त नहीं हो पाएगा।

लिहाजा गैंगवी मुखर्जी कंपनी के कारखाने का कलकत्ता से इंदौर चले जाने का इतिहास कहकर यहीं इस कथन को समाप्त करता हूं। अब विशाखा के बारे में कहता हूं।

हर आदमी के जीवन में अन्ततः एक ऐसी उम्र आती है जब वह स्वयं को लेकर बड़ी ही उलझन महसूस करने लगता है। उस समय उसे न तो किसी की याद आती है और न ही वह किसी के बारे में सोचता है।

विशाखा के साथ भी उस समय यही हालत थी। दिन-भर तो वह स्वयं को लेकर ही उलझी रहती थी। इस घर में आने के बाद से ही विशाखा ने महसूस किया था कि दिन-दिन उसकी जिम्मेदारी बढ़ती जा रही है। सभी केवल उसके हुक्म के इन्तजार में रहते हैं।

मैनेजर साहब आकर पूछते हैं, "बहूरानी अभी हिसाब लीजिएगा ?"

बिन्दु आकर पूछती है, "भाभी रानी, अभी आप खाना खाइएगा ?"

सभी केवल उसके हुक्म की तामील करने में ही व्यस्त है। मगर विशाखा को मालूम ही क्या है ? विशाखा कितना जानती ही है ? और दादी मां ?

एक नर्स आकर कहती है, "भाभी रानी, मैं जरा नीचे जा रही हूं, आप जरा पेशेन्ट पर निगरानी रखिएगा ?"

इस घर में आने के बाद से ही वह जैसे एक मशीन हो गई है। उस मशीन में चाबी देने भर की देर है।

और उस मशीन में दिन भर चाबी दी हुई होती है। लिहाजा उसका निजी

अस्तित्व नामक कोई चीज नहीं थी।

तो भी लाख चेष्टा करने के बावजूद उसे मुक्ति नहीं मिलती थी।

हरेक दिन सवेरे से घर-गृहस्थी के बीच उसका जीवन शुरू होता और उसका अंत घूम-फिरकर सवेरे ही होता। धरती सूर्य को केन्द्र बनाकर अनवरत घूमती रहती है। लेकिन धरती के मनुष्य उस घूमती धरती को अपनी आंखों से न देखने के बावजूद अपने धंधे के लिए सुकर्म-कुकर्म के मार्ग पर चक्कर काटते रहते हैं। वे किस लिए इस तरह चक्कर काट रहे हैं, यह बात खुद भी नहीं जानते। विशाखा के साथ भी यही बात थी।

सवेरे ही बिन्दु सामने आकर पूछती, "चाय ले आऊं भाभी जी?"

विशाखा कहती, "अभी तक पूजा भी नहीं की है और चाय पियूं? पहले पूजा कर लूं।"

जब तक स्वास्थ्य अच्छा था, पूजा करना दादी मां का नित्य नैमत्तिक कर्म था। जब दादी मां को सामर्थ्य थी उस समय वे भोर पांच बजे बिन्दु को अपने साथ ले बालूघाट गंगा-स्नान करने जाती थीं। उसके बाद जब सामर्थ नहीं रहा तो घर में ही बैठ गंगा-स्त्रोत का पाठ करती थीं। विशाखा को भी यही करने को कह दिया था। इसलिए व्यतीत में दादी मां जो-जो काम करती थीं, उन सबों का भार पड़ गया था अकेली विशाखा पर। सभी ने यह मान लिया था कि विशाखा ही इस मुखर्जी भवन की मालकिन है, उसी के आदेश पर इस घर का काम-काज परिचालित होगा, उसी के निर्देश पर इस घर की, घड़ी की सुई घूमेगी—चाहे वह बिन्दु हो, सुधा हो, कालीदासी हो, रसोइया हो या फुल्लरा हो। सभी सवेरे भाभी रानी के सामने आकर उपस्थिति होते हैं।

"आज क्या-क्या खाना पकेगा भाभी रानी?"

"आज धोबी को कौन-कौन से कपड़े-लत्ते देने हैं भाभी रानी?"

"बाजार से आज क्या-क्या लाना है भाभी रानी?"

"आज और कुछ रुपये देने पड़ेंगे भाभी रानी?"

"मुझे बैंक में रुपया जमा करने के लिए जाना है। जाऊं भाभी रानी?"

"आज जमा खर्च का हिसाब अभी लीजिएगा भाभी रानी?"

इतने बड़े मकान में मालिक के नाम पर तीन ही व्यक्ति हैं। उनमें से एक जेल में है। और दूसरी बीमारी के कारण मौत की घड़ियां गिन रही है। किसी भी समय उनकी मृत्यु हो सकती है। बाकी बचा एक व्यक्ति। वह है विशाखा। उस विशाखा से ही घर के हरेक काम की अनुमति लेनी पड़ती है। जिस तरह कि दादी मां के जमाने में अनुमति लेने का नियम था। अब भी उसी नियम का पालन करते हुए चलना है।

"अरी सुधा, कालीदासी को एक बार कहो कि गिरिधारी ने सदर गेट बंद किया है कि नहीं, देख आए।"

"आंगन की बड़ी बत्ती अब भी क्यों नहीं बुझाई है फुल्लरा ने? जिस ओर नजर नहीं रखती हूं वहीं लापरवाही बरती जाती है। फुल्लरा से कहना, इस तरह की लापरवाही बरतेगी तो अब वेतन से पैसा काट लिया जाएगा। यह बात याद रखे।"

काम का कोई अंत नहीं है इस घर में! एक ही प्राणी के लिए जैसे इस घर में हजारों आदमी प्राणों का निछावर करने को तनख्वाह पर रखे गए हैं।

उस दिन मैनेजर साहब ने आकर पुकारा। विशाखा कमरे के अन्दर दादी मां को तिमारदारी कर रही थी। आते ही पूछा, "बैंक गए थे? रुपया जमा कर आए हैं?"

"हां, लीजिए यह पासबुक।"

यह कहकर पासबुक विशाखा की ओर बढ़ा दिया। पास बुक लेकर विशाखा फिर कमरे के अन्दर जा रही थी। लेकिन मैनेजर साहब ने कहा, "एक बात कहनी है

"क्या ? सुनाने ? [illegible]"

मल्लिक जी बोले, "[illegible] था।"

"गए थे ? अच्छा ही किया। [illegible]"

मल्लिकजी बोले, "संदीप से मुलाकात नहीं हुई।"

"मुलाकात नहीं हुई ? क्यों ? क्या हुआ है ? [illegible]"

मल्लिकजी ने कहा, "नहीं।"

"क्यों ?"

मल्लिकजी ने कहा, "पता नहीं सच है या झूठ, लेकिन सुनने को मिला कि वह बहुत ही बीमार है। अपनी बीमारी के कारण वह एक महीने से ऑफिस [illegible] नहीं आ रहा है।"

विशाखा ने अत्यन्त चिन्तित होकर कहा, "कौन-सी बीमारी है, यह कोई बता नहीं सका ?"

मल्लिकजी ने कहा, "नहीं। सुना कि वह मरने-मरने की हालत में है --"

फिर क्या होगा ?

विशाखा ने कहा, "वह खुद बीमार है या और कोई दूसरा ?"

"सुनने को मिला है कि वह खुद ही बीमार है।"

कुछ देर तक सोचने के बाद विशाखा बोली, "फिर एक काम कीजिए। आप आज खुद ही एकबार बेड़ापोता जाइए। आज तीसरे पहर ही चले जाइए। लौटने के बाद मुझे हालचाल बताइएगा।"

मल्लिक जी नीचे अपने कमरे में चले गए। उसके बाद अपना कामकाज खत्म करने में उन्हें थोड़ा वक्त लगा। उसके बाद और-और दिनों की अपेक्षा कुछ जल्द ही खाना खा लिया। उसके बाद तैयार होते-होते [illegible] हो गई। जाने से पहले एकबार ऊपर जाकर पुकारा, बिन्दु, ओ बिन्दु "

बिन्दु के बदले विशाखा खुद ही बाहर आई।

मल्लिकजी बोले, "फिर मैं चलता हूँ भाभी रानी।"

विशाखा बोली, "ठीक है, आने के बाद मुझे हालचाल बताइएगा।"

"ठीक है। वे सूचित करेंगे।" मल्लिकजी धीरे-धीरे नीचे आ रहे थे। इस बीच वे पहली मंजिल पर चले आए हैं, तभी ऊपर से भाभी रानी ने पुकारा, "मैनेजर बाबू, मैनेजर बाबू—"

अब फिर किसलिए भाभी रानी पुकार रही हैं, कौन जाने!

मल्लिकजी पुनः दो-मंजिला तय कर तीन-मंजिले पर पहुँचे।

उन पर नजर पड़ते ही भाभी रानी बोलीं, "मैनेजर बाबू, आप [illegible] जाइए। मैं भी आपके साथ चलूँगी। आज दादी माँ की हालत कुछ अच्छी है। आप निताई को गाड़ी निकालने को कहिए। मैं अभी आई- "

मल्लिकजी फिर एक मंजिल पर [illegible]। निताई को हुक्म देते ही वह गाड़ी निकालकर ले आया। थोड़ी देर बाद बहूरानी भी नीचे उतर आईं।

शादी के बाद यह पहली बार विशाखा घर के बाहर जा रही। बीच में [illegible] घण्टों के लिए मुकदमे के कारण एक दिन कोर्ट में [illegible] दिन [illegible] हस्ताक्षर करने के लिए घर से बाहर निकली थी। उसके बाद [illegible] रही है।

भाभी रानी पर दृष्टि जाते ही गिरिधारी ने भक्ति के साथ सलाम किया। निताई गाड़ी लेकर उपस्थित ही था। भाभी रानी गाड़ी के अन्दर जाकर बैठ गईं।

मल्लिकजी भी गाड़ी के अन्दर जाकर निताई के बगल में बैठ गए। बोले, "चलो बेड़ापोता—"

निताई ने इंजिन चालू की।

अचानक एक कांड घटित हो गया। संकट से पूर्ण एक कांड। चार राइफलधारी पुलिसकर्मियों को लेकर एक जालीदार काले रंग की गाड़ी मकान के सामने आकर खड़ी हुई और उससे जेल का वर्दीधारी मुजरिम सौम्यपद नीचे उतरा। बात क्या है?

मल्लिकजी की निगाह सौम्यपद पर जाते ही वे गाड़ी से उतर उस तरफ चले गए। बोले, "क्या बात है? आप?"

सौम्यपद बोले, "सुनने को मिला, दादी मां बहुत बीमार हैं। अब कैसी हैं?"

मल्लिकजी बोले, "लगभग छह महीने से बिस्तर पर लेटी हुई हैं। होश-हवास नहीं है। आदमी को भी पहचान नहीं पातीं, कुछ बोल भी नहीं पाती हैं।"

सौम्यपद ने कहा, "उन्हें देखने के लिए मैंने आवेदन पत्र दिया था। लिहाजा मुझे चार घण्टे के लिए पैरोल पर रिहा किया गया है। यही वजह है कि ये पुलिसकर्मी मेरे साथ आए हैं। इन लोगों के खाने-पीने का इन्तजाम कर दीजिए। इन लोगों ने मेरे साथ बहुत ही अच्छा बर्ताव किया है। मैं चार घण्टे के बाद फिर चला जाऊंगा।"

गाड़ी के अन्दर बैठी हुई विशाखा अपलक सौम्यपद की ओर निहार रही थी। यह आदमी उसका पति है! जिससे उसकी केवल अनुष्ठान-पूर्वक शादी हुई है, लेकिन न मण्डप बना था, न सुहाग रात मनाई गई थी और न ही प्रीतिभोज का जश्न मनाया गया था। तो भी विशाखा उस आदमी की ओर अपलक निहार रही थी।

और दूसरी ओर मल्लिकजी की बातें कानों में गूंज रही थीं—सुनने को मिला, संदीप एक महीने से बैंक नहीं आ रहा है। बीमारी के कारण वह मरने-मरने की हालत में है···

अपने जीवन में संदीप की जितने लोगों से जान-पहचान हुई थी, उनमें से जिसने उसे सबसे अधिक प्रभावित किया था—वे हैं बेड़ापोता के काशीनाथ चट्टोपाध्याय। यही वजह है कि उनकी बातें संदीप को अब भी याद हैं। वह हमेशा उनकी बातें याद रखेगा। संदीप उन्हें कभी भूल नहीं सकेगा। वे बहुत दिनों तक हाईकोर्ट में प्रैक्टिस करते रहे लेकिन एकाएक एक दिन प्रैक्टिस करना बन्द कर दिया। संदीप ने पूछा था, "आपने वकालत क्यों छोड़ दी?"

काशीनाथ बाबू ने कहा था, "इसलिए कि मैं ताल-मेल नहीं बिठा सका।"

"मतलब?"

काशीनाथ बाबू ने कहा था, "तुम तो तारक घोष को पहचानते थे। तुम्हीं लोगों के साथ एक ही स्कूल में एक ही क्लास में पढ़ता था। गोपाल हाजरा ने उसके घर में आग लगा दी थी। यह तो तुम्हें मालूम ही है। मैंने उसके पक्ष में खड़े होकर हाकिम से न्याय की प्रार्थना की थी। इसके लिए मैंने उससे एक भी पैसे की मांग नहीं की थी। लेकिन बहुत कोशिश करने पर भी जब न्याय नहीं मिला तो सोचा, मैं सिर्फ अपना समय बर्बाद कर रहा हूं, मैं सिर्फ लोगों को छलने के अलावा और कुछ नहीं कर रहा हूं। इसी प्रकार के दो-चार और मुकदमे करने के बाद जब हताश हो गया तो प्रैक्टिस छोड़ने के अतिरिक्त मेरे लिए और कोई विकल्प नहीं रह गया।"

इसके बाद के वेदाशीना के इतिहास से सभी परिचित हैं। काशीनाथ बाबू ने और एक दूसरे दिन कहा था, "तुम अभी ज़िन्दगी की शुरुआत कर रहे हो। और मेरे जीवन का अन्तिम परिच्छेद चल रहा है। जीवन की राह पर चलने के दौरान तुम कैसे समझोगे कि तुम सही रास्ते पर चल रहे हो या गलत रास्ते पर?"

सदीप इस सवाल का जवाब नहीं दे सका था। काशीनाथ बाबू ने खुद ही अपने सवाल का जवाब दिया था। बोले थे, "तुम लोगों ने सुभाष बोस का नाम सुना है? जिन्हें तुम लोग नेताजी कहते हो? हमें याद है, एक दिन जवाहर लाल नेहरू से लेकर महात्मा गांधी तक ने उनसे शत्रुता की थी। लेकिन सुभाष बोस समझ गए थे कि वे सही रास्ते पर कदम बढ़ा रहे हैं। यह जो 'स्टेट्समैन' अखबार है, उसके मालिक उन दिनों अंग्रेज थे। सुभाष बोस की एक बात मुझे अब भी याद है। उन्होंने एक दिन कहा था कि जब तक यह 'स्टेट्समैन' अखबार उनकी निन्दा करेगा तब तक वे समझेंगे कि वे सही रास्ते पर हैं। तुम निंदा-प्रशंसा आदि की अनदेखी कर सामने की तरफ बढ़ते जाओ। कौन क्या कह रहा है या क्या कहेगा, उसके लिए माथा-पच्ची मत करो। तुम भला काम कर रहे हो या बुरा, उसका विवेचन तुम्हारी मृत्यु के बाद किया जाएगा। वही विवेचन असली विवेचन होगा, वही श्रेष्ठ विवेचन होगा।"

उसी काशीनाथ बाबू ने कन्यादान का सारा भार अपने हाथ में ले लिया था। मगर जब उस शादी में उस तरह की दुर्घटना घटित हो गई तो शुरू में उनके दिल में भी चोट पहुँची थी। दूसरे दिन खुद ही सदीप के पास आए थे।

पूछा था, "क्या बात थी सदीप? अपने जीवन में इस तरह की घटना मैंने इसके पहले घटते नहीं देखी थी। कभी इस तरह की घटना के बारे में सुना भी नहीं है। बात क्या है?"

सदीप ने उस दिन अपने जीवन की प्रारम्भ से अन्त तक की सारी बातें बताई थीं।

सब कुछ सुनने के बाद काशीनाथ बाबू कुछ देर तक गुमसुम बैठे रहे। उसके बाद पूछा था, "तो फिर यही पचास हज़ार रुपया ही तुम्हारा सम्बल है?"

सदीप ने कहा था, "हाँ। और यह भी बता गए हैं कि मौसीजी के इलाज के लिए जितने रुपये की ज़रूरत पड़ेगी, वे लोग देंगे। कहा कि ज़रूरत पड़ने पर दो-तीन लाख रुपये तक देंगे।"

"तुमने क्या कहा?"

"मैं कहता ही क्या! मेरे लिए कहने को कुछ नहीं था। मैं जो विशाखा से शादी करने जा रहा था उसका उद्देश्य था मौसीजी को चिन्ता से मुक्त करना। विशाखा से शादी करने के लिए मौसीजी रात-दिन दबाव डाल रही थीं। यही करने के दौरान ही तो यह कांड हुआ।"

काशीनाथ बाबू ने कहा था, "पचास हज़ार रुपये में से बीस हज़ार रुपया तो तुमने मुझे वापस ही कर दिया। अभी तुम्हारे हाथ रहा मात्र तीस हज़ार। उससे अगर तुम्हारी मौसीजी के इलाज का खर्च पूरा नहीं हो सका तो? उस समय तुम उन लोगों के घर में जाकर हाथ फैलाओगे?"

सदीप ने कहा, "नहीं, शायद मांग नहीं सकूँगा—"

काशीनाथ बाबू ने कहा था, "फिर? फिर कैसे इलाज का खर्च चलेगा?"

उस दिन सदीप इस बात का जवाब नहीं दे सका था। ऐसे में काशीनाथ बाबू ने एक कहानी सुनाई थी। दुनिया के सबसे बड़े धन कुबेर एंड्रू कार्नेगी के जीवन की कहानी। दुनिया के आदमी जितने रुपयों की कल्पना कर सकते हैं, एंड्रू कार्नेगी उससे रुपये के

मालिक थे। करोड़ रुपया कहा जाए तो कम ही होगा। कितने हजार करोड़ रुपये के मालिक थे, यह कहना मुश्किल है। कितने करोड़ लाख अरब रुपये के मालिक थे, यह कहना ही शायद ठीक रहेगा।

जब उनकी आयु साठ की सरहद पर पहुंची तो वे इस तरह की एक बीमारी के चंगुल में फंस गये कि लगा, अब वे शायद जिन्दा नहीं बचेंगे। उस समय से उन्होंने दान करना शुरू कर दिया उसका मतलब दातव्य। सारी दुनिया में उनके दातव्य प्रतिष्ठान मनुष्य की शिक्षा, स्वास्थ्य से सम्बन्धित कार्य जाति-धर्म से ऊपर उठकर करने लगा।

उसके बाद ही उनकी सेहत में सुधार होने लगा। साठ वर्ष की उम्र में जिसकी मौत निकट खिसककर चली आई थी वही आदमी नब्बे वर्ष तक जीवित रहा। उनका नाम दुनिया-भर में फैल गया। तुम्हें यदि कोई बीमारी हो जाती है तो तुम चाहे किसी भी देश के बाशिन्दे क्यों न हो, कार्नेगी फाउण्डेशन के अस्पताल में चले जाओ। इलाज के लिए एक भी पैसा खर्च नहीं करना होगा। या अगर तुम्हें अधिक लिखाई-पढ़ाई करने की इच्छा हो और तुम्हारे पास पैसे की कमी हो तो कार्नेगी फाउण्डेशन के दफ्तर में दरख्वास्त भेजो, तुम्हारी लिखाई-पढ़ाई के पूरे खर्च का भार वही वहन करेगा।"

संदीप काशीनाथ बाबू की बात सुन रहा था।

काशीनाथ बाबू ने अपना कथन जारी रखा, "एनड्रू कार्नेगी की जीवनी तो तुमने सुनी। अब एक और आदमी के बारे में तुम्हें बताता हूं। वह आदमी ईसामसीह के चार सौ निन्यानबे वर्ष पहले पैदा हुआ था। वह ग्रीक देश का निवासी था। उसके पास रुपया-पैसा नहीं था। एक तरह से कानी कौड़ी भी नहीं थी उसके पास। एक दिन उस देश के राजा के हुक्म पर उसे गिरफ्तार किया गया। उसका अपराध क्या था?

"उसका अपराध यही था कि वह लोगों से कहता था—राजा या मंत्री कुछ भी नहीं। तुम स्वयं को पहचानो। स्वयं को पहचान लोगे तो तुमसे जो बड़ा है उसे पहचान सकोगे।"

"सच, यह बहुत बड़ा अपराध था। राजा को इस तरह छोटा बनाने का मतलब है राजा के खिलाफ विद्रोह करना। अतः उसे बड़ी-से-बड़ी सजा दी जाएगी। बड़ी-से-बड़ी सजा का अर्थ है तत्कालीन मृत्यु दण्ड। एक दिन मृत्यु दण्ड का समय निकट आ गया।

"उन दिनों जहर खिलाकर मुजरिम को मृत्यु दण्ड दिया जाता था। उसे भी जहर ही खिलाया गया। उसके बहुत सारे शिष्य उसकी मृत्यु के समय वहां खड़े थे। आसन्न मृत्यु के पहले वह अपनी बात एक शिष्य से कह गया था।"

"वह क्या कह गया था?

"कहा था सुनो तुम्हें एक काम करना है—

"शिष्य उस समय वह दृश्य देखकर फूट-फूटकर रो रहा था। पूछा, 'कहिए प्रभु, वह कौन-सा काम है?"

"गुरु बोला, मैंने एक व्यक्ति से एक मुर्गी खरीदी थी। उस मुर्गी की कीमत नहीं चुकाई है। मेरे पास उसका कर्ज रह गया है। तुम उस कर्ज को चुका देना—"

"उस आदमी का नाम क्या था?"

"उसका नाम था सुकरात।"

कहानी खत्म करने के बाद काशी बाबू बोले थे, "तुम्हें इन दो व्यक्तियों की कहानी सुनाई। एक आदमी था धनकुबेर और दूसरा निर्धन। अब बताओ तो इन दोनों में से किस व्यक्ति को तुम पसन्द करते हो? अपनी जीवन-चर्या में किसका आदर्श मनुष्य के रूप में निर्वाचन करोगे?"

यह सब बहुत दिन पहले की बात है। इस प्रश्न का उत्तर उस दिन, उस क्षण

संदीप नहीं दे सका था। काशी बाबू ने भी उस प्रश्न का उत्तर जानने के लिए उस पर दबाव नहीं डाला था। जाने के दौरान सिर्फ इतना ही वह गए थे, "इसका उत्तर तुम्हें अभी तुरन्त देना है, ऐसी बात नहीं, बाद में सोच-विचार कर उत्तर देना। तुम सोचो-विचारो, मैं अब चलता हूं—"

एक तरफ है एक धनकुबेर और दूसरी तरफ एक नितान्त गरीब आदमी। इनमें से वह किसका आदर्श मनुष्य के रूप में निर्वाचन करेगा, इसका उत्तर देना क्या उतना आसान था? खास तौर से उस 13 फागुन में, जब विशाखा से उसकी शादी होते-होते रुक गई थी। उस समय वह क्या मानसिक तौर पर स्वाभाविक स्थिति में था?

इसके अलावा एक बात और। विशाखा ने अपने जीवन में सिर्फ रुपयों की ही चाह की थी। और सिर्फ विशाखा ही क्यों, दुनिया में कौन ऐसा है जो रुपया-पैसा नहीं चाहता? दुनिया में जितने भी युवकों से वह मिला है, वे सिर्फ रुपये ही पहचानते थे, इसके अतिरिक्त और कुछ भी नहीं।

फिर? फिर क्या वह सबसे अलहदा है?

अलहदा इसलिए है कि विशाखा से शादी न होने पर भी उसे कोई तकलीफ महसूस नहीं हुई। उसकी वजह से उसकी नींद में कोई व्याघात नहीं पहुंचा। लेकिन हां, मौसीजी की बीमारी के कारण उसे बहुत कष्ट का अहसास हुआ है। जब भी वह डाक्टर लाहिड़ी के नर्सिंग होम गया है, मौसीजी की रुलाई देखकर उसे कष्ट का अहसास हुआ है। मन-ही-मन प्रार्थना की है: "क्यों मौसीजी को कष्ट दे रहे हो भगवन! या तो तुम उसे भली-चंगी कर दो या फिर उसे मौत दे दो। मौसीजी की तकलीफ मुझसे देखी नहीं जा रही है।"

लेकिन मनुष्य का ईश्वर इतना सहज और सरल नहीं है। उसे डिगा सके ऐसी शक्ति इस दुनिया में किसी के पास नहीं है। वह बड़ा ही निष्ठुर, साथ-ही-साथ बड़ा ही कोमल है। वह बड़ा ही निर्भीक, लेकिन साथ-ही-साथ बड़ा ही निरपेक्ष है। जो उससे प्रेम करता है, जो उसकी पूजा करता है, वह उसी को अधिक कष्ट देता है। और कष्ट देता है उसकी परीक्षा करने के लिए।

मैं तुम्हारी परीक्षा करूंगा, इसका तुम मुझे अवकाश नहीं दोगे? तुम्हारी परीक्षा किए बिना मैं तुम्हें प्रेम कैसे दूंगा? मेरा प्रेम पाने के लिए तुम्हें अन्तहीन मूल्य चुकाना होगा। यह मूल्य चुकाने के लिए तुम प्रस्तुत हो?

यह सब प्रश्न संदीप को रात-दिन परेशान करता रहता। लगता, कोई जैसे लगातार उसका पीछा कर रहा है। हरेक दिन डाक्टर या नर्स, जो भी सामने दिख जाता, उसी से पूछता, "आज मौसीजी कैसी हैं?" जवाब एक ही मिलता, "मोटे तौर पर पहले जैसी हालत में ही है—"

"कोई सुधार नहीं हुआ है?"

"नहीं।"

बस, एक ही प्रश्न और एक ही उत्तर। यह एक ही तरह का प्रश्न करते-करते और एक ही तरह का उत्तर सुनते-सुनते संदीप क्रमशः चूर-चूर जैसा हो गया था। साथ ही नर्सिंग होम की तरफ से रुपए के लिए तकाजे किए जाते। रुपए की चिन्ता से वह बेचैन हो उठा था।

मां को अपने लड़के के शरीर की हालत देखकर डर लगता। बीच-बीच में कहती, "तू कुछ दिनों के लिए छुट्टी ले ले। तेरे ऑफिस में क्या छुट्टी नहीं मिलती? दो दिन की छुट्टी लेकर आराम कर।"

आम तौर पर संदीप मां की इन बातों का उत्तर नहीं देता। लेकिन बार-बार

यह सब सुनने पर कहता, "तुम क्या कहती हो, मेरी समझ में नहीं आता। मेरी तबीयत खराब नहीं है।"

मां कहती, "आईने में अपना चेहरा एकबार देख तो सही। तड़के उठकर जल्दी-जल्दी तू ऑफिस के लिए रवाना हो जाता है और वापस आता है रात दस बजे। ऐसा करने से किसी का स्वास्थ्य ठीक रह सकता है भला! जरा पौष्टिक खाना खाना पड़ेगा न।"

इस तरह की बात पर ध्यान देने से कहीं गृहस्थी चल सकती है? उन दिनों रुपए की चिन्ता के कारण संदीप जर्जर जैसा हो गया था। नर्सिंग-होम का बिल चुकाते-चुकाते उसका हाल खस्ता हो गया है। उस समय वह अमरीका के धनकुबेर एनड्रू कार्नेगी और ग्रीस के सुकरात के बारे में सोचता। सोचते-सोचते इस निष्कर्ष पर पहुंचता कि अधिक पैसा रहने से जो हालत होती है वही हालत होती है पैसा न रहने पर। वे लोग तो यही करते हुए मर गए। तो फिर इतने दिनों के बाद वह उन लोगों के बारे में क्यों सोच रहा है?

उस दिन मां गुमसुम होकर अपने बेटे का इन्तजार कर रही थी। आखिरी ट्रेन सीटी की तेज आवाज करती हुई बेड़ापोता पहुंची। आमतौर पर संदीप इसी ट्रेन से बेड़ापोता आता है।

मां बदस्तूर घर के सामने आकर खड़ी हुई। रास्ते की ओर ताकते हुए रहने पर लड़का आता हुआ दिख पड़ता है। लेकिन उस दिन वैसा दिखाई नहीं पड़ा। मां ने सदर दरवाजे से आगे बढ़कर और भी दूर सामने की ओर देखा। लेकिन मुन्ना पर नजर कहां पड़ रही है! इस बीच ट्रेन एक और तेज सीटी बजाती हुई बेड़ापोता से आगे बढ़ गई। अब हो सकता है मुन्ना आए।

रास्ता धीरे-धीरे सूना हो गया। जिन लोगों के पास रुपए-पैसे हैं वे रिक्शे पर सवार हो घर लौटते हैं। मां ने मुन्ना से कितनी ही बार कहा है कि वह रिक्शे पर चढ़कर लौटा करे। हो सकता है कुछ पैसे खर्च होंगे, लेकिन पहले स्वास्थ्य या पैसा!

मुन्ना कहता, "नहीं मां, इतनी बाबूगीरी ठीक नहीं। इतना छोटा-सा रास्ता है, पैदल चलकर नहीं आ सकता क्या? मैं क्या बूढ़ा हो गया हूं?"

लेकिन मुन्ना समझ नहीं पाएगा कि मां को बेटे के लिए कितनी चिन्ता रहती है।

मां तब भी अंधेरे में बेटे की राह ताक रही थी। मुन्ना कहां है! उस पर नजर नहीं पड़ रही है। फिर क्या उस बार की तरह ही मुन्ना बीमार पड़ गया है!

कमला की मां काम-काज खत्म कर भात-दाल-सब्जी लिए अपना घर चली जाएगी। मां ने कहा, "तुम कब तक खड़ी रहोगी, घर चली जाओ—कल बल्कि जरा जल्दी चली आना। मां ने उसे भात-दाल-सब्जी परोस कर दिया और कमला की मां अपने घर की ओर चली गई।

बोली, "तुम्हें मुन्ना अगर आता हुआ दिख जाए तो उसे कहना कि जरा तेज कदमों से चला आए।"

उसके बाद···

उसके बाद रात और गहरा गई। बेड़ापोता स्टेशन के पास की विनोद चाचा की मिठाई की दुकान की रोशनी कुछ देर बाद बुझ गई। उसके बाद सारा कुछ अंधेरे में डूब गया। हाट के सामने तालाब की जमीन पर जो तीन-मंजिला मकान बना है, उसकी बत्तियां भी कुछ देर बाद बुझ गई। मुन्ना तब भी नहीं आया। घर में कोई आदमी नहीं है जिससे सलाह-मशविरा करे। फिर क्या मुन्ना मौसीजी को देखने अस्पताल गया है?

मौसीजी की बीमारी ने क्या गम्भीर रूप ले लिया है?

इसके बाद अब कोई ट्रेन नहीं है। यदि कुछ ट्रेनें हैं तो वे बेहालोता में रुकती नहीं हैं। वे बिना रुके पश्चिम की तरफ चली जाती हैं। लिहाजा इसके बाद मुन्ना के लिए इन्तजार करना बेमानी है।

अब क्या होगा? किसके पास जाकर मुन्ना की तलाश करेगी? काशी बाबू के घर जाकर इस बात की चर्चा की जा सकती है। लेकिन अभी शायद सब लोग काशी बाबू के घर में सो गए होंगे।

उस रात की बात संदीप ने बाद में मां से सुनी थी। बहुतों की जिन्दगी में इस तरह की घटना बहुत बार घटी है। संदीप के जीवन में भी इस तरह की कोई कम घटनाएं नहीं घटी हैं। उस समय उसे लगा है कि यह दिन या वह रात शायद काटे नहीं कटेगी। या वह हफ्ता या महीना भी। फिर भी वह आज भी जिन्दा है और इसीलिए आज भी उन दिनों की बात साफ-साफ सोच पाता है। स्मृति ने अब भी उसके साथ विश्वासघात नहीं किया है।

वह रात अन्ततः गुजर गई थी। रात-भर निराहार रहकर बगैर सोए रोते-रोते समय बिताने पर जब कुल मिलाकर भोर हुई तो कोई दरवाजे की कुण्डी खटखटाने लगा। बाहर से किसी की आवाज सुनाई पड़ी—"मां हैं?"

मां हड़बड़ाकर उठी और बाहर आने पर देखा, एक अजनबी खड़ा है।

"मां, आप मुझे पहचान नहीं सकिएगा। मैं हाशिम हूं। मैं संदीप-दा के दफ्तर में काम करता हूं। संदीप-दा ने मुझे भेजा है।"

मां ने चटपट दरवाजा खोल दिया। बोली, "मेरे मुन्ना ने भेजा है? मुन्ना कहां है? मुन्ना का क्या हालचाल है?"

हाशिम ने कहा, "वे अच्छी तरह हैं, लेकिन नर्सिंग-होम में उनकी मौसीजी की हालत बहुत खराब है। टेलीफोन से मुझे सूचित किया था कि बेहालोता जाकर आपको यह खबर पहुंचा आऊं। लेकिन मुझे जब यह खबर मिली तो काफी देर हो चुकी थी। इसलिए आज सुबह की ट्रेन पकड़कर आ रहा हूं—"

यह खबर सुनने के बाद मां क्या कहे, शुरू में समझ नहीं सकी। इसलिए कुछ देर तक भौंचक-सी खड़ी रही। उसके बाद बोली, "मुन्ना ठीक है न?"

हाशिम ने कहा, "ठीक हैं, यह कहना मुश्किल है। क्योंकि बातचीत टेलीफोन से हुई थी। आपको फिक्र करने नहीं कहा है। उसके बाद की बात मालूम नहीं है। मैं अब चलता हूं—"

"नहीं बेटा, तुम उतनी दूर से आए हो और बगैर खाना खाए चले जाओगे? तुम अन्दर जाकर जरा बैठो। घर में जो कुछ है, तुम्हें खाने को देती हूं। तुम इतनी तकलीफ उठाकर आए। फरकी खाओगे बेटा?"

हाशिम ने कहा, "मेरे पास खाने का वक्त नहीं है मां, आप अन्यथा न लें। आप संदीप-दा की मां हैं, मेरी भी मां हैं। संदीप-दा जैसा आदमी विरला ही होता है। उन्हीं के कारण मुझे नौकरी में प्रमोशन मिला है। आपको शायद मालूम नहीं है, इसलिए कह रहा हूं—जो प्रमोशन उन्हें मिलनेवाला था, उन्होंने वह मुझे दिला दिया है। मेरे लिए वे मेरे सगे भाई से भी बड़े हैं। उनकी कृपा मैं जिन्दगी-भर नहीं भूल पाऊंगा। मैं चलता हूं [illegible] ऑफिस जाना [illegible]"

मां वहां खड़ी होकर बहुत देर तक उस युवक के बारे में सोचने लगी। मैं

विलकुल नहीं आई थी। खाना भी नहीं खाया था। यह क्या हुआ? इस तरह तो कभी होता नहीं है। नौकरी में दाखिल होने के वाद मुन्ना ने कभी घर के वाहर रात नहीं विताई है। दीदी जरूर ही सख्त वीमार है।

थोड़ी देर वाद कमला की मां आई। वरतन मांजने गई तो एक भी थाली-गिलास पर नजर न पड़ने के कारण उसे आश्चर्य हुआ। वोली, "यह क्या मां? तुमने खाना नहीं खाया? भैया ने भी लगता है खाना नहीं खाया है। क्या हुआ मां? खाना क्यों नहीं खाया?"

मां तव विस्तर पर जाकर लेट गई थी। उसे वात करना अच्छा नहीं लग रहा था। एक तो रात-भर नींद नहीं आई, उस पर उपवास। उसके वाद यह बुरी खवर।

"क्या हुआ मां? खाना क्यों नहीं खाया?"

मां वोली, "तुम यह सव खा लो, मैं नहीं खाऊंगी। और अगर नहीं खा सको तो रास्ते पर फेंक दो। कौए खा लेंगे।"

सचमुच तव मां को कुछ वोलने की इच्छा नहीं हो रही थी। पूरी धरती उस समय मां के लिए जैसे वेस्वाद हो गई थी। उसके वाद जव हल्की-सी झपकी आने लगी तो कमला की मां की वात से वह झपकी दूर हो गई। कमला की मां ने पूछा, "आज क्या खाना पकेगा मां?"

मां वोली, "तुम जो खाओगी, वही पका लो। मैं नहीं खाऊंगी—"

"यह क्या कह रही हो मां? रसोई नहीं पकेगी?"

मां वोली, "कौन खाएगा जो खाना पकेगा?"

"क्यों, भैया खाना नहीं खाएंगे?"

"भैया घर में रहेगा तव न खाना खाएगा? मैं नहीं खाऊंगी, भूख नहीं है।"

कमला की मां अचंभित होकर वोली, "भैया घर पर नहीं है? क्यों मां?"

मां वोली, "भैया कल घर आया ही नहीं तो मैं कैसे खाना खा लूं? वेटा निराहार रहे और मैं राक्षसिन की तरह भरपेट खाना खा लूं? तुम्हारी लड़की कमला विना खाए रहे तो तुम मां होकर खाना खा सकती हो? वताओ?"

इसके जवाव में कमला की मां क्या कहे!

मां वोली, "तुम अपने लिए खाना पका लो कमला की मां। चावल-दाल-नमक कहां है, तुम्हें मालूम ही है। मैं नहीं खाऊंगी। मेरे लिए तुम चावल मत निकालना।"

फिर भी कमला की मां ने पूछा, "तुम विलकुल नहीं खाओगी?"

"नहीं री नहीं, एक ही वात कितनी वार कहूं?"

आज भी संदीप को उन दिनों की वात याद आती है। जीवन में उसने मां को कितना कष्ट दिया है! पिताजी अपनी मृत्यु के वाद जायदाद के नाम पर वस वही एक छोटा-सा मकान छोड़ गए थे। उसे मकान कहना भी गलत ही होगा। उसे सिर टिकाने के लिए एक पनाहगाह ही कहा जा सकता है। उससे क्या लड़के को लिखा-पढ़ाकर योग्य वनाया जा सकता है?

इसीलिए अन्ततः वेटे के भविष्य को मद्देनजर रखकर मां को वगल के चटर्जी वावुओं के मकान में रसोई पकाने का काम स्वीकार करना पड़ा था। उसके वाद उसी लड़के को कलकत्ता जाने पर एक वड़े आदमी के यहां रहने और खाने की सुविधा प्राप्त हुई थी। और उसके साथ पंद्रह रुपया माहवारी तनख्वाह मिली थी, जिसकी वदौलत उसने अपनी पढ़ाई-लिखाई जारी रखी थी। उसी के फलस्वरूप वह अपने पैरों पर खड़ा हो सका था। उस समय मुहल्ले के लोग मां से कहते, "अव लड़के की शादी करा दो दीदी। अव कितने दिनों तक दूसरे के घर में रसोई पकाने का काम करती रहोगी?"

मां कहती, "मेरे भाग्य में यह क्या बदा है ?"

वे कहते, "हे दीदी । तुम कहो तो हम एक पात्री की तलाश करें।"

मां कहती, "करो न । मैंने करने से मना किया है ? फिर तो मुझे राहत की सांस लेने का मौका मिले। पोते का मुख देखकर मरूं, इससे बढ़कर मेरे लिए कौन-सी खुशी की बात हो सकती है ?"

यह सब मा की बहुत दिनों की साध थी। उसके बाद उसी लड़के को कलकत्ता में एक दिन नौकरी मिल गई। यह समाचार सुनकर मा ने मा चण्डीतला के मंदिर में जाकर चढ़ावा चढ़ाया। तब से मा को जीवन जीने की इच्छा हुई। तभी से मा बहुत सारी अधूरी आशाओं के पूर्ण होने का सपना देखने लगी।

उसके बाद मुन्ना कहीं से एक मौसीजी और उसकी बेटी को अपने घर पर टिकाने को ले आया। चटर्जी की पत्नी विशाखा को देखकर कहती; इसी लड़की से अपने मुन्ना की शादी कर दो न बहन। ये लोग भी तुम्हारी ही जात की हैं। इस तरह की खूबसूरत पात्री के रहते और कहां पात्री की तलाश करने जाओगी ?"

मा भी सोचती, बात झूठी नहीं है। जितने भी दिन बीतते जाते, विशाखा और उसके व्यवहार को देखकर मा मन ही मन आकाश-कुसुम का सपना देखती। उसके बाद ही विशाखा की मा बीमार हुई। और कहा जा सकता है कि मौसीजी की बीमारी के बाद ही मुन्ना से विशाखा की शादी पक्की हो गई।

उसके बाद ही सब कुछ उलटा-पलटा हो गया। कहां रही वह विवाह की पात्री और कहां रही उस पात्री की मा ! सारे सपने, सारी साधें एक ही पल में समाप्त हो गईं। और मुन्ना ?

मुन्ना कहां पड़ा रहा, उसका भी कोई ठीक नहीं। मुन्ना भी कई दिनों तक घर नहीं आया। कमला की मा हर रोज आती है। घर-गृहस्थी के जो मामूली काम रहते हैं, करती है और भात-तरकारी लेकर घर चली जाती है। कमला की मां कहती है, "तुम तो बीमार पड़ जाओगी दीदी, कुछ खा लो—"

बहुत दबाव डालने पर मा अवश्य कुछ मुंह में डालती है, लेकिन वह खाना चिड़िया के दाने चुगने जैसा खाना रहता। उससे आदमी जिन्दा नहीं रह सकता।

और उसके दो दिन बाद मुन्ना का एक खत आया मा के नाम। मां ने जिन्दगी में कभी लिखाई-पढ़ाई नहीं की है। खत पाकर मा अवाक् हो गई। डाकघर से जो डाकिया खत ले आया था, उसीसे मा ने पूछा, "यह किस चीज का खत है बेटा ? किसने लिखा है ?"

डाकिया समझ गया कि यह महिला लिखना-पढ़ना नहीं जानती। इस तरह का वाकया उसके लिए कोई नया नहीं है। हर जगह उसने सिर्फ पत्रों का वितरण ही नहीं किया है, बल्कि उसे पत्र पढ़ भी देना पड़ा है।

यह खत हाकिम ने ही भेजा है। लिखा है कि सदीप-दा कई दिनों तक अपने स्वास्थ्य के प्रति लापरवाह रहने के कारण नर्सिंग होम में पड़े हुए हैं। बैंक के सहकर्मियों ने आपस में चंदा कर रुपये इकट्ठे किए हैं और उनका इलाज करा रहे हैं। आप चिन्ता नहीं कीजिएगा। हम लोग सदीप-दा की देखभाल कर रहे हैं। जरा-सा स्वस्थ हो जाए तो फिर उन्हें घर पहुंचा आएंगे।

खत का पूरा मजमून सुनने के बाद मा की जान में जान आई।

डाकिए को तब और भी बहुत सारे काम थे। उसे चक्कर लगाते हुए और भी बहुत सारे घरों में चिट्ठियां बांटनी हैं। और उसका असली काम चिट्ठियां बांटनी है—कि चिट्ठी पढ़ना।

छोड़कर चले भी जाएं तो कंपनी उठकर नहीं जाएगी। यह हमेशा रहेगी।"

उसके बाद दादी मां के जीवन-काल में ही शक्ति का देहान्त हो गया। उस समय उनकी उम्र मात्र सैंतालीस साल थी। तभी दादी मां का एक हाथ कट गया। उसके बाद शक्ति की पत्नी चल बसी।

और उसके बाद मुक्तिपद की शादी होने के बाद वे अपना पैतृक मकान छोड़, बेलुड़ में मकान बनवाकर अलग ही रहने लगे। उस समय रह गई शक्ति की एकमात्र संतान सौम्य। उसी सौम्य को लेकर तब दादी मां का घर-संसार रह गया। उसे छाती से चिपकाए दादी मां जीवन-मृत्यु की लड़ाई लड़ती रहीं।

उसके बाद कितने ही आंधी-तूफानों ने आकर दादी मां को उखाड़कर फेंकने की कोशिश की। कितनी ही बार अनगिनत विपत्तियों ने दादी मां को जमीन पर पटकने की कोशिश की। लेकिन वे तमाम आपदाओं और विपत्तियों का मुकाबला कर सिर ऊंचा करके चल रही थीं। उसी सौम्य को जिन्दा रखने के लिए दादी मां ने क्या कोई कम परिश्रम किया था? भारत में जितने भी तीर्थस्थल हैं वहां जाकर उन्होंने सौम्य के लिए मनौती मानी थी, चढ़ावा चढ़ाया था और मंगल-कामना की थी। खुले हाथ रुपया खर्च करने में उन्होंने कोई कंजूसी नहीं की थी। उसकी शादी के लिए कितने दिन पहले उन्होंने लड़की पसन्द कर ली थी।

लेकिन उसके बाद? उसके बाद क्या अंजाम हुआ?

आज उनका वही पोता खून का मुजरिम है। खून का मुजरिम होने के बाद किसी तरह उसे बचाने की कोशिश की थी—विशाखा से उसकी शादी कराकर लिहाजा वही विशाखा अब उनकी पौत्रवधू है।

अभी अगर दादी मां होश में होतीं तो वे अपने पोते को देखकर उसका स्वागत-सत्कार करतीं या फूट-फूटकर रोतीं?

उस समय दादी मां की ओर अपलक निहारता हुआ सौम्यपद खड़ा था।

दादी मां की नर्स सौम्यपद की तरफ अपलक निहार रही थी। उसके लिए सौम्यपद था एक साकार विस्मय। उसने पहले ही सुना था कि मरीज की बीमारी का एकमात्र कारण है उसका यह पोता। उस पोते के बारे में ही सोचते रहने के कारण वे आज इस तरह अचेत पड़ी हुई हैं। यही नहीं, इसी पोते से शादी कराने के ख्याल से वे अठारह-बीस सालों से उस पौत्रवधू को पसंद कर घर में पाल-पोस रही थीं।

दोनों नर्सों को मालूम था कि किस तरह विशाखा से अपने पोते की शादी का [illegible] ने उनके सारा कुछ उप्प पड़ गया था। सिर्फ [illegible] को पता चल गया था। और सिर्फ मुहल्ले [illegible] रों के कारण कलकत्ता के बहुत सारे लोगों के लिए यह जानना बाकी नहीं रह गया था।

आज वही खून का मुजरिम, वही उम्रकैद व्यक्ति चार घंटे की छुट्टी लेकर इस मकान में आया है, बीमार दादी मां को देखने के ख्याल से—यह नर्सों के लिए एक समाचार है। जिसके बारे में वे लोग अब तक कान में ही सुनती आ रही थीं, वही व्यक्ति आज उनकी आंखों के सामने सशरीर उपस्थित है। यह सबको कहने लायक बात है, सबको सुनाने और सबके लिए सुनने लायक खबर है।

नर्स सौम्य की तरफ जितना ही देख रही थी, उसे उतनी ही हैरानी हो रही थी। यह तो देखने में और-और लोगों जैसा ही है, इसका चेहरा और-और लोगों जैसा ही है। उसी तरह के दो हाथ, दो पैर, दो आंखें, दो कान। इसने कैसे अपनी पत्नी की हत्या की!

दादी मां सामने के बिस्तर पर अज्ञान-अचैतन्य अवस्था में पड़ी हुई थीं और सौम्यपद अपलक उस ओर ताक रहा था। मल्लिकजी बगल में खड़े थे।

बोले, "एक बार भाभी रानी से नहीं मिलिएगा सौम्य बाबू ?"

यह सुनकर सौम्य बाबू चौंक पड़े। जैसे एकाएक इतनी देर के बाद याद आया कि उसकी पत्नी के रूप में कोई इस घर में है। बोला, "वह कहां है ?"

मल्लिकजी बोले, "आपके कमरे में।"

"अच्छा, चलिए।"

एक-मंज़िले से गाड़ी पर चढ़ने के दौरान उसकी नज़र सौम्यपद पर पड़ी थी। उस समय वह उसे पहचान ही नहीं सकी थी। उसकी शादी की रात में इस तरह का उलट-फेर हो गया था कि वह स्थिरता के साथ कुछ सोच भी नहीं सकी थी। किससे उसकी शादी होने वाली थी और अकस्मात् किससे शादी हो गई ! उसके बाद कोर्ट जाने पर वह जब तक वहां रही, अपना चेहरा घूंघट से ही ढंके रही। बगल में दादी मां बैठी हुई थीं। उन्होंने बार-बार तकाज़े किए थे कि वह घूंघट खोलकर अपना चेहरा हाकिम को दिखाए जिससे कि हाकिम साहब का मन दया से पसीज उठे। उनके मन में दया का उद्रेक होगा तभी तो वे उसके पति को फांसी की सजा के बदले कोई हल्की-सी सजा देंगे।

उसके बाद पति से उसकी मुलाकात नहीं हुई थी।

सौम्यपद ने जैसे ही दादी मां के कमरे में प्रवेश किया, विशाखा ने अपने कमरे में जाकर खुद को छिपा लिया था।

अन्ततः मल्लिकजी सौम्य को विशाखा के कमरे में ही ले आए। बाहर से मल्लिक जी ने पुकारा, "भाभी रानी, यह देखिए, आपके कमरे में किसे ले आया हूं।"

कमरे का दरवाज़ा खुला हुआ ही था। पहले मल्लिकजी ने प्रवेश किया, उसके बाद सौम्य बाबू ने। विशाखा कमरे के एक कोने में सिर पर घूंघट लिए सिकुड़ी-सिमटी सी खड़ी थी।

"ओ भाभी रानी, इस ओर गौर से देखिए—"

उसके बाद सौम्य बाबू से मल्लिकजी ने पूछा, "आपको कितनी देर के लिए छुट्टी मिली है ?"

सौम्य बाबू बोला, "चार घंटे के लिए। चार घंटे के अन्दर ही मुझे पुनः जेल लौट जाना है।"

यह कहकर एक क्षण चुप रहा, उसके बाद बोला, "आप एक काम कर सकिएगा मैनेजर बाबू ?"

"कहिए, कौन-सा काम ?"

सौम्यपद ने कहा, "मेरे लिए एक बोतल ह्विस्की मंगा दे सकिएगा ? बहुत दिनों से उम्दा ह्विस्की पीने को नहीं मिली है।"

मल्लिकजी बोले, "कहिए, कौन-सी ह्विस्की मंगाऊं—देशी या विलायती ? नाम क्या है ?"

"विलायती ह्विस्की ही मंगाइए। किंग ऑफ किंग्स।"

यह नाम सुनकर मल्लिकजी ने विशाखा की ओर ताकते हुए कहा, "भाभीरानी, मेरे पास के रुपये खत्म हो गए हैं। और कुछ रुपये दीजिए तो—"

विशाखा ने कहा, "कहिए, कितने रुपये दूं ?"

मल्लिकजी बोले, "ज्यादा नहीं, अभी पांचेक सौ देने से ही काम चल जाएगा।"

विशाखा बोली, "मैं उस कमरे से रुपये लाकर देती हूं, जरा रुक जाइए—"

यह कहकर वह चली गई।

सौम्यपद ने मल्लिकजी की ओर ताकते हुए कहा, "मैनेजर बाबू, बाहर जो चार आदमी मेरे साथ आए हैं, उन्हें कुछ दीजिएगा न ! खाना मिलने पर वे खुश हो जाएंगे।"

मल्लिकजी बोले, "मैं दुकान से व्हिस्की खरीदकर लाने के दौरान उन लोगों के लिए खाना मंगाकर ले आऊंगा।"

ऐसे में विशाखा ने कमरे के अन्दर प्रवेश किया। मल्लिकजी के हाथ में एक सौ रुपये के पांच नोट थमाते ही वे उन्हें लेकर चले गए। सौम्यपद ने कहा, "तुम्हारे पास और रुपये हैं ?"

विशाखा यह सवाल सुनकर अवाक् हो गई। बोली, "रुपया ?"

सौम्यपद बोला, "हां, रुपया। तुम्हारे पास कितने रुपये हैं ?"

विशाखा ने कहा, "आपको रुपये की कौन-सी ज़रूरत है ?"

"हां, रुपया रहने से जेलखाने में मुझे काफी सुविधा होगी। वहां सभी मुझसे रुपये की मांग करते हैं।"

विशाखा ने कहा, "कहिए, आपको कितने रुपये की ज़रूरत है ?"

"तुम जितना भी दे सको, उतना ही दो अभी।"

विशाखा ने कहा, "यह तो मेरा व्यक्तिगत रुपया नहीं है। सब दादी मां के रुपये हैं।"

सौम्यपद ने कहा, "दादी मां तो अभी मरने-मरने की हालत में हैं। अब शायद ज्यादा दिनों तक जिन्दा भी नहीं रहेंगी। दादी मां के मरने पर सारे रुपये तो तुम्हारे ही हो जाएंगे।"

विशाखा ने कहा, "मेरे क्यों हो जाएंगे ? वह सब रुपया-पैसा तो आपका ही है। आप ही तो इस घर के एकमात्र पोता हैं।"

सौम्यपद ने कहा, "मेरी बात छोड़ो, मैं तो जेलखाने में ही सड़कर मर जाऊंगा। वह रुपया किसी दिन मेरे उपयोग में नहीं आएगा।"

"आपने ऐसी बात क्यों कही ? एक दिन आपको जेलखाने से रिहा कर दिया जाएगा। आप हमेशा-हमेशा के लिए जेलखाने में नहीं रहिएगा। उस समय ?"

सौम्यपद ने कहा, "तब की बात तब सोचूंगा। अभी जवानी यदि जेल में ही बीत जाती है तो बुढ़ापे में रुपया पाना या न पाना एक जैसा है—उस समय उपभोग करने की सामर्थ्य नहीं रहेगी मेरे अन्दर।"

बात करते-करते सौम्यपद का स्वर हताशा से दयनीय जैसा हो गया।

उसके बाद ख़ुदा को ज़रा सम्भल कर बोला, "अच्छा, एक बात कहूं ?"

विशाखा बोली, "कहिए।"

सौम्यपद ने कहा, "तुम तो जानती थी कि मैं फांसी का मुजरिम हूं। मैंने अपनी पत्नी की हत्या की है। तो फिर तुमने इस फालतू आदमी से शादी क्यों की ? सारा कुछ जानने के बावजूद तुम क्यों यह काम करने को राजी हुई, बता सकती हो ?"

विशाखा इस प्रश्न का क्या उत्तर दे समझ नहीं सकी। सौम्यपद उससे ऐसे वक्त में ऐसा एक पेचीदा सवाल कर बैठेगा, उसकी उसने कल्पना नहीं की थी।

सौम्यपद ने कहा, "तुम मेरी बात का जवाब क्यों नहीं दे रही हो ?"

"क्या जवाब दूं, बताइए ?"

"तुमने क्या कभी इस पर सोचा नहीं है ?"

विशाखा ने कहा, "सोचा नहीं है, ऐसी बात नहीं। लेकिन सोचने पर भी कोई उत्तर नहीं मिला है।"

सौम्यपद ने कहा, "जेल के अन्दर अकेले बैठे या लेटे रहने पर जब वक्त गुज़रने

का नाम नहीं लेता है तो मैंने इस सम्बन्ध में बहुत बार सोचा है। सोचने के दौरान तुम्हारा चेहरा मेरी आंखों के सामने तिर आता। और तभी मुझे लगता कि क्यों विशाखा मेरे जैसे खून के मुजरिम, गए-गुजरे आदमी से शादी करने को राजी हुई?"

विशाखा ने कहा, "उसके बाद? सोचने पर कोई उत्तर मिला है?"

सौम्यपद ने कहा, "नहीं, उत्तर चूंकि नहीं मिला था इसीलिए वह बात अभी तुमसे पूछ रहा हूं। तुम्हीं बताओ न, कारण क्या है?"

विशाखा ने कहा, "आपसे मेरी शादी होने का रिश्ता बचपन में ही तय कर लिया गया था। इसीलिए मेरी मां और उसकी लड़की के भरण-पोषण और लिखाई-पढ़ाई के लिए आपकी दादी मां ने हज़ारों रुपये खर्च किए थे। यह सब बात तो बहुत सारे लोग अब भी जानते हैं। जो लोग नहीं जानते थे, वे भी दूसरों से सुन चुके हैं—"

"सिर्फ यही, और कुछ भी नहीं?"

विशाखा ने इस बात का कोई उत्तर नहीं दिया।

सौम्यपद ने फिर कहा, "क्यों, उत्तर क्यों नहीं दे रही हो?"

विशाखा बोली, "क्या उत्तर दूं, समझ में नहीं आ रहा है।"

सौम्यपद कुछ कहने जा रहा था लेकिन अड़चन पड़ गई। बाहर से मल्लिकजी के गले की आवाज़ आई। विशाखा कुर्सी से उठकर गई और दरवाज़ा खोलकर बोली, "आइए।"

मल्लिकजी एक बोतल व्हिस्की लेकर कमरे के अन्दर आए। बोतल को मेज़ पर रख दिया। उसके बाद बोले, "और कुछ चाहिए?"

सौम्यपद ने कहा, "सोडा नहीं ले आए? सोडे की बोतल? बगैर सोडा मिलाए व्हिस्की कैसे पियूंगा?"

मल्लिकजी ने अपने जीवन में इन सब वस्तुओं का स्पर्श नहीं किया है। बोले, "मैं अभी सोडा ले आया। बगल में ही सोडे की दुकान है, ज्यादा देर नहीं होगी।"

यह कहकर चले जा रहे थे, लेकिन सौम्यपद ने कहा, "साथ में कुछ स्नैक्स ले आइएगा—"

"स्नैक्स?"

"हां, चाप या कटलेट या फिंगर चिप्स···जो भी मिल जाए···"

मल्लिकजी अब वहां रुके नहीं। बुढ़ापे के उस शरीर को लेकर दसियों बार तीन-मंज़िले की सीढ़ियां चढ़ने-उतरने के कारण वे हांफ रहे थे। लेकिन नौकरी बरकरार रखने के लिए शरीर का ख्याल करने से काम नहीं चलेगा।

सौम्यपद बोला, "मुझे एक गिलास दे सकती हो?"

विशाखा ने गिलास लाकर दिया तो सौम्यपद ने 'किंग ऑफ किंग्स' का थोड़ा-सा तरल पदार्थ गिलास में ढाला। बोला, "सोडा लाने में मैनेजर बाबू ने इतनी देर क्यों कर दी।"

उसके बाद कुछ याद आते ही बोला, "हां, एक बात। तुमने मुझे रुपया नहीं दिया।"

विशाखा ने पूछा, "कितना रुपया चाहिए?"

सौम्यपद बोला, "जितना भी हो सके, दस हज़ार, बारह हज़ार···रुपया न मिलने पर जेल का कोई आदमी बात ही नहीं मानता। यदि और अधिक रुपये दे सको तो बहुत ही अच्छा रहे—जेल के अन्दर सभी को रुपयों का बड़ा ही लालच रहता है—"

"अच्छा, मैं ला देती हूं—"

यह कहकर वह दादी मां के कमरे में चली गई। नर्स दादी मां के बिस्तर के पास

बैठी थी। दादी माँ उस समय भी हमेशा की तरह बेहोशी की हालत में लेटी हुई थीं। आलमारी उनके बिस्तर के पास है। विशाखा ने नर्स से पूछा, "दादी माँ को अभी कितना बुखार है?"

नर्स बोली, "पहले के जितना ही—एक सौ तीन डिग्री—"

"और पल्स-बीट?"

"उतना ही। नाइण्टी फाइव—"

विशाखा बोली, "फिगर लिखकर रख लीजिएगा। डाक्टर बनर्जी के आने पर उन्हें बताना होगा। वह निविड़ दवा पिला दी है न?"

"हां।"

यह सुनकर विशाखा कुछ नहीं बोली। पल्लू से चाबियों के गुच्छे को निकाल आलमारी खोली और रुपया निकाला। वह कितना रुपया देगी? दस हजार या बारह हजार? जबकि बारह हजार मांगा है तो उतना ही देना उचित है। रुपये तो उन्हीं के हैं। उनका ही रुपया है, जैसी भी उनकी मर्जी होगी, खर्च करेंगे। इस सम्बन्ध में वह कह ही क्या सकती है!

विशाखा रुपया लिए जब कमरे के अन्दर आई, उस समय सौम्यपद के सामने व्हिस्की की बोतल आधी खाली पड़ी हुई थी। सामने तश्तरी पर सोडा की बोतल भी थी और साथ ही भिंगा मछली का कटलेट। मल्लिकजी इस बीच दुकान से सारा कुछ खरीद-कर ले आए हैं और देकर शायद चले गए हैं। बोली, "यह लीजिए रुपया।"

सौम्यपद ने अपना दाहिना हाथ विशाखा की तरफ बढ़ा दिया। विशाखा बोली, "जितना मांगा था, उतना ही दिया है। बारह हजार रुपया है, गिन लीजिए।"

सौम्यपद गिलास से घूंट लेकर रुपये पॉकेट में रखते हुए बोला, "गिनने क्यों जाऊं? तुम क्या मुझे कम दोगी?"

यह कहकर गिलास से एकबार और घूंट लेकर बोला, "इससे ज्यादा रुपया साथ में रहना ठीक नहीं है। कोई छीन ले सकता है।"

विशाखा तब भी खड़ी थी। सौम्यपद ने कहा, "खड़ी क्यों हो? बैठो—"

कुर्सी पर बैठकर विशाखा बोली, "जेल के अन्दर कौन रुपया छीन लेगा?"

सौम्यपद ने एक और घूंट लेकर कहा, "तुम्हें मालूम नहीं है। वहां सबके सब चोर हैं।"

विशाखा ने कहा, "जेल के अन्दर भी चोर हैं?"

"जेलखाना तो चोर-डाकुओं का ही अड्डा है, यह तुम नहीं जानतीं? जेलखाने में जितने चोर-डाकुओं का अड्डा है उतने चोर-डाकू जेलखाने के बाहर भी नहीं हैं।"

"फिर इन रुपयों को कहां रखिएगा?"

सौम्यपद ने कहा, "जेलर के पास रखूंगा।"

"जेलर? जेलर का मानी?"

"जेलर का मानी जेल का अधिकारी। उन्हीं के पास रुपये रखूंगा। यदि मुझे व्हिस्की आदि की जरूरत पड़ेगी तो इन रुपयों से वे खरीद देंगे।"

सौम्यपद की बोतल तब तक लगभग खाली हो चुकी थी। थोड़ी-सी बाकी बची थी।

सौम्यपद ने उसे खत्म करके कहा, "और एक बोतल लाने के लिए कहने से अच्छा रहता। मैनेजर बाबू को जरा बुला दोगी?"

विशाखा बोली, "अब और न लिए तो अच्छा रहे—"

सौम्यपद ने कहा, "बहुत दिनों से नहीं पी है, इसलिए···"

का नाम नहीं लेता है तो मैंने इस सम्बन्ध में बहुत वार सोचा है। सोचने के दौरान तुम्हारा चेहरा मेरी आंखों के सामने तिर आता। और तभी मुझे लगता कि क्यों विशाखा मेरे जैसे खून के मुजरिम, गए-गुज़रे आदमी से शादी करने को राजी हुई ?"

विशाखा ने कहा, "उसके वाद ? सोचने पर कोई उत्तर मिला है ?"

सौम्यपद ने कहा, "नहीं, उत्तर चूंकि नहीं मिला था इसीलिए वह वात अभी तुमसे पूछ रहा हूं। तुम्हीं वताओ न, कारण क्या है ?"

विशाखा ने कहा, "आपसे मेरी शादी होने का रिश्ता वचपन में ही तय कर लिया गया था। इसीलिए मेरी मां और उसकी लड़की के भरण-पोषण और लिखाई-पढ़ाई के लिए आपकी दादी मां ने हज़ारों रुपये खर्च किए थे। यह सव वात तो वहुत सारे लोग अव भी जानते हैं। जो लोग नहीं जानते थे, वे भी दूसरों से सुन चुके हैं—"

"सिर्फ यही, और कुछ भी नहीं ?"

विशाखा ने इस वात का कोई उत्तर नहीं दिया।

सौम्यपद ने फिर कहा, "क्यों, उत्तर क्यों नहीं दे रही हो ?"

विशाखा वोली, "क्या उत्तर दूं, समझ में नहीं आ रहा है।"

सौम्यपद कुछ कहने जा रहा था लेकिन अड़चन पड़ गई। वाहर से मल्लिकजी के गले की आवाज़ आई। विशाखा कुर्सी से उठकर गई और दरवाज़ा खोलकर वोली, "आइए।"

मल्लिकजी एक वोतल व्हिस्की लेकर कमरे के अन्दर आए। वोतल को मेज़ पर रख दिया। उसके वाद वोले, "और कुछ चाहिए ?"

सौम्यपद ने कहा, "सोडा नहीं ले आए ? सोडे की वोतल ? वगैर सोडा मिलाए व्हिस्की कैसे पियूंगा ?"

मल्लिकजी ने अपने जीवन में इन सव वस्तुओं का स्पर्श नहीं किया है। वोले, "मैं अभी सोड़ा ले आया। वगल में ही सोडे की दुकान है, ज्यादा देर नहीं होगी।"

यह कहकर चले जा रहे थे, लेकिन सौम्यपद ने कहा, "साथ में कुछ स्नैक्स ले आइएगा—"

"स्नैक्स ?"

"हां, चाय या कटलेट या फिंगर चिप्स···जो भी मिल जाए···"

मल्लिकजी अव वहां रुके नहीं। वुढ़ापे के उस शरीर को लेकर दसियों वार तीन-मंज़िले की सीढ़ियां चढ़ने-उतरने के कारण वे हांफ रहे थे। लेकिन नौकरी वरकरार रखने के लिए शरीर का खयाल करने से काम नहीं चलेगा।

सौम्यपद वोला, "मुझे एक गिलास दे सकती हो ?"

विशाखा ने गिलास लाकर दिया तो सौम्यपद ने 'किंग ऑफ किंग्स' का थोड़ा-सा तरल पदार्थ गिलास में ढाला। वोला, "सोडा लाने में मैनेजर वावू ने इतनी देर क्यों कर दी।"

उसके वाद कुछ याद आते ही वोला, "हां, एक वात। तुमने मुझे रुपया नहीं दिया।"

विशाखा ने पूछा, "कितना रुपया चाहिए ?"

सौम्यपद वोला, "जितना भी हो सके, दस हज़ार, वारह हज़ार···रुपया न मिलने पर जेल का कोई आदमी वात ही नहीं मानता। यदि और अधिक रुपये दे सको तो वहुत ही अच्छा रहे—जेल के अन्दर सभी को रुपयों का वड़ा ही लालच रहता है—"

"अच्छा, मैं ला देती हूं—"

यह कहकर वह दादी मां के कमरे में चली गई। नर्स दादी मां के विस्तर के पास

बैठी थी। दादी मां उस समय भी हमेशा की तरह बेहोशी की हालत में लेटी हुई थीं। आलमारी उनके बिस्तर के पास है। विशाखा ने नर्स से पूछा, "दादी मां को अभी कितना बुखार है?"

नर्स बोली, "पहले के जितना ही—एक सौ तीन डिग्री—"

"और प्लस-बीट?"

"उतना ही। नाइन्टी फाइव—"

विशाखा बोली, "फिगर लिखकर रख लीजिएगा। डाक्टर बनर्जी के आने पर उन्हें बताना होगा। वह लिक्विड दवा पिला दी है न?"

"हां।"

यह सुनकर विशाखा कुछ नहीं बोली। पल्लू से चाबियों के गुच्छे को निकाल आलमारी खोली और रुपया निकाला। वह कितना रुपया देगी? दस हजार या बारह हजार? जबकि बारह हजार मांगा है तो उतना ही देना उचित है। रुपये तो उन्हीं के हैं। उनका ही रुपया है, जैसी भी उनकी मर्जी होगी, खर्च करेंगे। इस सम्बन्ध में वह कह ही क्या सकती है!

विशाखा रुपया लिए जब कमरे के अन्दर आई, उस समय सौम्यपद के सामने व्हिस्की की बोतल आधी खाली पड़ी हुई थी। सामने तश्तरी पर सोडा की बोतल भी थी और साथ ही तिंगा मछली का कटलेट। मल्लिकजी इस बीच दुकान से सारा कुछ खरीदकर ले आए हैं और देकर शायद चले गए हैं। बोली, "यह लीजिए रुपया।"

सौम्यपद ने अपना दाहिना हाथ विशाखा की तरफ बढ़ा दिया। विशाखा बोली, "जितना मांगा था, उतना ही दिया है। बारह हजार रुपया है; गिन लीजिए।"

सौम्यपद गिलास से घूंट लेकर रुपये पॉकेट में रखते हुए बोला, "गिनने क्यों जाऊं? तुम क्या मुझे कम दोगी?"

यह कहकर गिलास से एकबार और घूंट लेकर बोला, "इससे ज्यादा रुपया साथ में रहना ठीक नहीं है। कोई छीन ले सकता है।"

विशाखा तब भी खड़ी थी। सौम्यपद ने कहा, "खड़ी क्यों हो? बैठो—"

कुर्सी पर बैठकर विशाखा बोली, "जेल के अन्दर कौन रुपया छीन लेगा?"

सौम्यपद ने एक और घूंट लेकर कहा, "तुम्हें मालूम नहीं है। वहां सबके सब चोर हैं।"

विशाखा ने कहा, "जेल के अन्दर भी चोर हैं?"

"जेलखाना तो चोर-डाकुओं का ही अड्डा है, यह तुम नहीं जानती? जेलखाने में जितने चोर-डाकुओं का अड्डा है उतने चोर-डाकू जेलखाने के बाहर भी नहीं हैं।"

"फिर इन रुपयों को कहां रखिएगा?"

सौम्यपद ने कहा, "जेलर के पास रखूंगा।"

"जेलर? जेलर का मानी?"

"जेलर का मानी जेल का अधिकारी। उन्हीं के पास रुपये रखूंगा। यदि मुझे व्हिस्की आदि की जरूरत पड़ेगी तो इन रुपयों से वे खरीद देंगे।"

सौम्यपद की बोतल तब तक लगभग खाली हो चुकी थी। थोड़ी-सी बाकी बची थी।

सौम्यपद ने उसे खत्म करके कहा, "और एक बोतल लाने के लिए कहने से अच्छा रहता। मैनेजर बाबू को जरा बुला दोगी?"

विशाखा बोली, "अब और न पिएं तो अच्छा रहे॰॰"

सौम्यपद ने कहा, "बहुत दिनों से नहीं पी है, इसलिए॰॰॰"

विशाखा ने कहा, "सुना है, शराब पीना सेहत के लिए ठीक नहीं होता।"

सौम्यपद ने पूछा, "तुमसे किसने कहा है ?"

विशाखा बोली, "लोग-बाग कहते हैं, इसीलिए कह रही हूं। मैं भला कैसे जान सकती हूं ?"

सौम्यपद पर अब नशे ने खासा अच्छा रंग जमा लिया है। मुंह के शब्द लड़खड़ा रहे हैं। आंखें झपकती-सी दिख रही हैं। उसे देखकर विशाखा को डर लगने लगा। यदि इस तरह बैठे-बैठे गिर जाए तो ?

झिंगा मछली की कटलेट अब खत्म हो चुका है। तश्तरी पर कच्चे प्याज के जो टुकड़े पड़े हुए थे उन्हें भी खाकर खत्म कर डाला है।

विशाखा ने पूछा, "आपको क्या भूख लगी है ? और कुछ मंगवाऊं ? सन्देश या रसगुल्ला ?"

सौम्यपद बोला, "धत्त, तुम कुछ समझतीं नहीं ? वह सब क्या भले आदमी खाते हैं ?"

उसके बाद जरा सुस्ताकर सौम्यपद बोला, "अगर और एक बोतल 'किंग ऑफ किंग्स' मंगा सको तो मंगा दो। प्लीज···"

विशाखा बोली, "अब मत पीजिए।"

"कैसी फालतू बात कर रही हो ? कितने दिनों से नहीं पी है।"

विशाखा बोली, "नहीं-नहीं, अब नहीं पीजिए, मेरी बात मानिए। अभी आप बैठे-बैठे लड़खड़ा रहे हैं। इसके बाद और पीजिएगा तो जेलखाना वापस नहीं जा सकिएगा।"

सौम्यपद बोल उठा, "हैंग योर जेलखाना! अब मैं जेलखाना लौटकर नहीं जाऊंगा।"

विशाखा समझ गई कि इस आदमी ने अब प्रलाप करना शुरू कर दिया है। क्या करे, समझ में नहीं आया। बाहर सदर दरवाज़े पर चार पुलिसकर्मी पहरा दे रहे हैं और चार घण्टे के दरमियान इस आदमी को वे लोग जेल वापस ले जाएंगे, उसका जैसे उसे खयाल ही न हो।

विशाखा ने सावधान करने के मकसद से कहा, "आपके साथ आए पुलिसकर्मी आपके लिए नीचे अब भी इन्तज़ार कर रहे हैं।"

सौम्यपद उस समय अपनी आंखें बन्द किए हुए था। अचानक विशाखा की आवाज़ सुनकर उसकी नींद जैसे टूट गई। बोला, "उन पट्ठों की बात छोड़ो। वे लोग तो मेरे वेतनभोगी नौकर हैं। मैं रुपया देकर पट्ठों का मुंह बन्द कर सकता हूं। यह जानती हो ?"

विशाखा ने इस बात का कोई जवाब नहीं दिया।

सौम्यपद बोल उठा, "क्यों, जवाब क्यों नहीं दे रही हो। जानती हो, तुम क्या कह रही हो ?"

विशाखा ने अब कहा, "जानती हूं।"

सौम्यपद ने कहा, "बताओ तो मैं कौन हूं ? बताओ, मैं कौन हूं ?"

विशाखा ने इस सवाल का कोई जवाब नहीं दिया।

"और बताओ कि मैं कौन हूं ? जवाब क्यों नहीं दे रही हो ?"

विशाखा खामोश है। सौम्यपद बोला, "तुम नहीं जानतीं कि मैं कौन हूं अब मैं बता देता हूं कि मैं कौन हूं। मैं हूं सैक्सबी मुखर्जी कम्पनी का डाइरेक्टर एस० पी० मुखर्जी—"

"आपको नशा आ गया है। आप ज़रा चुप रहिए।"

अब सौम्यपद गुस्सा गया। बोला, "मुझे चुप रहने का हुक्म देनेवाली कौन हो तुम ? हू आर यू ?"

विशाखा ने चुप्पी साध ली।

"जवाब दो। तुम्हें जवाब देना ही है।"

विशाखा बोली, "मैं विशाखा हूं।"

"पूरा नाम बताओ। तुम्हारा पूरा नाम क्या है, बताओ ?"

"विशाखा मुखर्जी।"

सौम्यपद ने कहा, "हां, ठीक है। लेकिन पहले तुम्हारा नाम क्या था ? बोलो। मुझसे शादी होने के पहले तुम्हारा नाम क्या था, बताओ ?"

विशाखा के मन के अन्दर तब थोड़ा-बहुत गुस्सा जमा हो रहा था। उफ्, इसी आदमी से उसकी शादी हुई है ? यह सोचते ही उसका मन तिक्त हो उठा।

सौम्यपद को कमरे के अन्दर अकेले छोड़ विशाखा बाहर निकली। सामने सुधा पर निगाह जाते ही बोली, "सुधा, मल्लिकजी को अभी फौरन बुलाकर ले आओ। कहना, मैं बुला रही हूं। अभी तुरन्त चले आएं। बहुत ही ज़रूरी काम है—"

यह कहकर रेलिंग से घिरे बरामदे पर खड़ी हो गई। मल्लिकजी खबर पाकर पांच मिनट के अन्दर ही चले आए। बोले, "आपने बुलाया है भाभीरानी ?"

विशाखा बोली, "हां, मेरे कमरे में चलकर देखिए कि हमारी दादी मां का पोता कैसी हरकत कर रहा है—"

"कैसी हरकत कर रहे हैं ?"

विशाखा ने कहा, "मैं क्या कहूं, चलकर अपनी ही आंखों से देख लें।"

यह कहकर मल्लिकजी को अपने साथ ले विशाखा ने अपने कमरे में प्रवेश किया। कमरे के अन्दर घुसने पर जो कुछ देखा वह और भी घिनौना दृश्य था। मल्लिकजी का जो अनुमान था, सौम्यपद उससे भी बढ़कर बीभत्स काण्ड कर बैठेगा, उसकी उन्होंने कल्पना भी नहीं की थी।

कमरे के अन्दर जाते ही दोनों ठगे से रह गए। कमरे के फर्श पर सौम्यपद मुंह के बल पड़ा हुआ है और कै करके पूरे कमरे को भर दिया है। उस कै की बदबू से मुकम्मल कमरे की हवा जहरीली हो गई है। विशाखा और मल्लिकजी को उस बदबू से परेशान होकर नाक पर कपड़ा रखना पड़ा। लेकिन जिस आदमी ने कै की है, उसके अन्दर जैसे कोई विकार न हो। वह अभी अपनी उसी कीचड़ जैसी कै को आत्मसमर्पण कर निश्चिन्तता के साथ लेटा हुआ है।

यह किस तरह का पति है, यह किस तरह की पत्नी है, यह किस तरह की शादी है ? दुनिया के किसी भी धर्मशास्त्र में इस प्रकार की शादी का विधान नहीं है। न तो वेद में, न ही पुराण में।

तो क्या यह विशाखा और यह सौम्यपद क्या इस सृष्टि के परे के प्राणी हैं ? एक व्यक्ति फांसी से छुटकारा पाकर आजीवन कारावास का मुजरिम है और दूसरी उसकी पत्नी है। उसके पास अशेष स्पर्धाएं हैं, तो भी वह पत्नी होने के बावजूद पत्नी नहीं है, पति के रहने पर भी उसका पति नहीं है।

इस तरह के पति-पत्नी के बारे में कभी किसी ने सुना है ? इस तरह के पति-पत्नी की कहानी कभी किसी ने किसी किताब में पढ़ी है ? इस तरह के पति-पत्नी की कभी

किसी ने देखा है ?

इतने दिनों के बाद, इतने साल गुज़रने के बाद संदीप आज उन दिनों की बात ही सोच रहा था। यही है कलकत्ता ! जो कलकत्ता गोपाल हाजरा के लिए इतना प्रिय है, जिस कलकत्ता में आने के लिए गोपाल हाजरा ने उस पर दबाव डाला था, जिस कलकत्ता में रहने-खाने और पढ़ने के लिए मल्लिकजी ने इन्तज़ाम कर दिया था—वह कलकत्ता तो अब भी मौजूद है। लेकिन कलकत्ता के वे सब लोग कहां चले गए ? वह निवारण कहां चला गया ?

संदीप को निवारण की भी याद आई। वही निवारण जो पांच रुपये कीमत की एक किताब बेचता था। उसे विश्वास था कि सूर्य धरती के चारों तरफ घूमता है। उन दिनों पांच रुपया देने में किसी को अखरता नहीं था, इसीलिए पुस्तकें धड़ल्ले से बिक जाती थीं।

लेकिन आज इतने दिनों के बाद संदीप को लगा कि निवारण की बात निहायत असत्य नहीं थी। वरना पूरा कलकत्ता इतने साल के बाद बदल ही क्यों जाता ? यहां पहले भी जुलूस निकलता था, आज भी जुलूस निकलते हैं, लेकिन पहले जुलूस में इतने आदमी नहीं रहते थे। पहले सड़क पर इतनी गाड़ियां नहीं चलती थीं। अब जैसे हर सड़क पर गाड़ियों के जुलूस चलते रहते हैं। एक दूसरी तरह की बसें भी चलती हैं। लोग-बाग उन्हें मिनि बसें कहा करते हैं। पहले यह सब नहीं था। अब निश्चय ही शहर में लोगों की संख्या बढ़ गई है। लोगों की संख्या क्यों बढ़ गई ? अचानक क्या लोगों की जनसंख्या बढ़ गई या फिर मृत्यु-संख्या में कमी आ गई है ?

दूर से लोगों का एक काफिला शोर-शराबा करता हुआ आ रहा था। वे लोग ज़रूर ही जुलूस निकालने को बाहर आए हैं। अचानक उनमें से एक आदमी संदीप के सामने आ ठिठककर खड़ा हो गया।

संदीप को देखकर कहा, "यह क्या ? आप संदीप लाहिड़ी हैं न ?"

संदीप उस आदमी को पहचान नहीं सका।

आदमी ने दुबारा पूछा, "आप ही संदीप लाहिड़ी हैं न ? मुझे पहचान रहे हैं ?

संदीप उसे पहचान नहीं सका। फटी-फटी आंखों से उसकी ओर ताकता रहा। जुलूस तब आगे बढ़ चुका था। आदमी ने फिर पूछा, "आपको जेल से कब छुटकारा मिला ?"

संदीप ने अचकचाकर कहा, "आप कौन हैं ? मैं आपको ठीक से पहचान नहीं सका।"

"मैं सुशील सरकार हूं। अब याद आ रही है ? आप तो नेशनल यूनियन बैंक के हावड़ा ब्रांच के मैनेजर थे। इतनी बड़ी नौकरी पाने के बावजूद आपने नब्बे लाख रुपये की चोरी क्यों की ?"

इस बीच एक गाड़ी किसी तरह जुलूस के करीब से उन दोनों के बीच घुस पड़ी और एक को दूसरे से अलग हटा दिया। उसके बाद ऐसी हालत हुई कि भीड़-भाड़ के बीच वह आदमी कहीं दिख नहीं पड़ा। सुशील सरकार उस भीड़ में कहीं खो गया। इस बीच जुलूस नारे लगाकर कलकत्ता को कंपाते हुए बहुत दूर जा चुका है। संदीप वहां खड़े-खड़े बहुत देर तक सोचता रहा : ऐसा क्यों हुआ ? वह सुशील सरकार जो नौकरी पाने के खयाल से हमेशा पार्टी बदलता रहता था, अब वह किस पार्टी में है ?

इतने वर्ष जेल में बिताने पर संदीप ने सोचा था, पहले की तरह अब शायद कलकत्ता में मीटिंग नहीं होती होगी। जुलूस नहीं निकलता होगा। पहले की तरह पार्टी-

बाजी भी संभवतः नहीं चलती होगी।

उसके बाद संदीप वहां खड़ा नहीं रहा। जेल से निकल वह निरुद्देश्य पैदल चल रहा था। कहां जाकर रात बिताएगा, इसका कोई ठिकाना नहीं था। लेकिन सुधीर सरकार से मुलाकात होते ही वह समझ गया कि संदीप के जेल की सजा भुगतने की खबर उसकी जान-पहचान के तमाम लोगों को मालूम हो चुकी है। अब उसके लिए स्वयं को छिपाने का कोई रास्ता नहीं है।

लेकिन कहीं-न-कहीं जाकर उसे पनाह लेनी है। उसका जो पनाहगाह था वह किराए का एक मकान था। जब वह किराएदार था उसी समय उस मकान को छोड़ जेल चला गया था। उसका वह मकान क्या अब भी है? इतने बरसों तक का किराया बाकी रहने के बावजूद मकानदार क्या उसे खाली रखे हुए होगा?

संदीप की निगाह में पूरा कलकत्ता और भी गंदा जैसा दिख रहा है। यों कलकत्ता शहर हमेशा गंदा ही रहा है। लेकिन उसे लगा कि यह और भी गंदा हो गया है। कलकत्ता का सिर्फ बाहरी चेहरा ही गंदा हो गया है? अंदर के आदमी के चेहरे क्या गंदे नहीं हुए हैं?

याद है, उन दिनों उसे पहले की विशाखा की याद आती थी। उसकी याद क्यों आती थी, कौन जाने! जबकि विशाखा उसके जीवन से चिरकाल के लिए खो गई थी। यों जेल की चहारदीवारी के बीच बंदी रहने पर विशाखा की याद आना कोई युक्तिसंगत बात नहीं थी।

उस समय वह क्या जानता था कि विशाखा से फिर एक बार मुलाकात होगी! शादी होने के बाद ही विशाखा पराई हो जाएगी, ऐसी ही बात थी। मगर ऐसा नहीं हुआ।

विशाखा जब अपनी ससुराल के मकान की शृंखला में और अधिक आबद्ध हो गई थी। सवेरे से ही उसके काम-काज की शुरुआत होने की बात थी। लेकिन दादी मां के बीमारी के चंगुल में फंस जाने के बाद उसे पूरे दिन और पूरी रात तक कार्य-व्यस्त रहना पड़ता। डाक्टर साहब से उसने कई बार पूछा था, "और कितने दिनों तक इस तरह चलता रहेगा डाक्टर साहब?"

डाक्टर बाबू ने जो कुछ पहले कहा था, वही बात कहते थे। वे कहते, "वे तो काफी उम्रदार हो चुकी हैं। लिहाज़ा जितने दिनों तक इस तरह चल सकता है, चलेगा। मगर जीवित बच जाएं तो मानना होगा कि यह ईश्वर की असीम करुणा है।"

विशाखा पूछती, "आज हालत कैसी मालूम हुई?"

डाक्टर साहब कहते, "पहले की ही तरह।"

हर रोज एक ही जैसी हालत! एक ही जैसा पैसा का खर्च, एक ही जैसा प्रश्न और एक ही जैसा उत्तर। उसके बाद आते मल्लिकजी। हर रोज वही हिसाब देने-लेने का काम चलता। शुरू से ही यह नियम चला आ रहा था इस मकान में—तभी से जब से देवीपद मुखर्जी ने कारोबार की नींव डाली थी। पाप-पुण्य का हिसाब नहीं, धर्म-अधर्म का हिसाब नहीं, अच्छे-बुरे का हिसाब नहीं, स्वजाति-अस्वजाति का हिसाब नहीं—सिर्फ रुपये की लेन-देन और आय-व्यय का हिसाब।

"भाभी रानी!"

उस गले की आवाज सुनते ही विशाखा समझ जाती कि घर-गृहस्थी के और भी दूसरे-दूसरे अपरिहार्य कामों की तरह यह भी एक जरूरी काम है।

उसके बाद ही शुरू होता बाजार का हिसाब, नौकरों, महरियों के वेतन का हिसाब, देन-लेन का हिसाब और महीने भर के चावल-दाल-नमक तेल का हिसाब [illegible] कन

उन सब हिसाबों के बीच उस दिन सहसा और एक नए आइटम का हिसाब खाते में आकर घुस गया।

"यह ढाई सौ रुपये की रकम किस चीज़ में खर्च हुई?"

मल्लिकजी बोले, "वही जो भाभी रानी, सौम्यपद बाबू के लिए आपने पांच सौ रुपया दिया। उन रुपयों से व्हिस्की की बोतल और झिंगा मछली का कटलेट ले आया था। और उनके साथ जो चार पुलिसकर्मी आए थे उनके लिए नाश्ता मंगवाया था।"

"ओ!"

विशाखा को वह बात याद आ गई। खर्च खाते में दर्ज हो गया। लेकिन साथ-साथ उस घटना की याद आ गई जिसका दृश्य बड़ा ही घिनौना था। पूरे कमरे में कै की धारा फैली थी और तीखी बदबू आ रही थी। यही क्या उसके पति का रूप है? उसी की वह पत्नी है?

मल्लिकजी यह देखकर भौंचक से हो गए थे। क्या करें, यह सोचने में एक मिनट लग गया था।

उसके बाद सुधा को पुकारा। बिंदु को पुकारा। जो जहां भी था उसे पुकारा। सभी ने इस दृश्य को देखा। जिस घर में इसके पहले खून-खराबा हो चुका है, शराबखोरी आखिरी सीमा तक पहुंच चुकी है, उस मकान में उन लोगों ने इस तरह का दृश्य नहीं देखा था।

लेकिन जो आदमी इस घर का मालिक है उसके खिलाफ कोई राय ज़ाहिर करना अन्याय है। ऐसे आदमी के तमाम गुनाहों के विरुद्ध कोई गिला करना गैर कानूनी है। लेकिन एक मजबूत काठी के बेहोश जवान आदमी को कौन उठाएगा? किसकी देह में इतनी ताकत है?

आदमी जब बेहोश हो जाता है तो शायद उसकी देह का वजन और बढ़ जाता है।

मल्लिकजी ने सुधा से कहा, "एक बाल्टी पानी ले आओ तो—"

एक बाल्टी पानी से कहीं उतने बड़े फर्श और उतने बड़े शरीर को धो-पोंछकर साफ किया जा सकता है? इसलिए तमाम लोग मिलकर कई बाल्टी पानी ले आए। पूरे घर में बाल्टी पर बाल्टी पानी ढाला गया। उससे सौम्यपद के कपड़े-लत्ते भी भींग गए। बदबू का असर कुछ दूर हुआ। विशाखा दूर खड़ी होकर सारा कुछ देख रही थी।

उसे लगा, यह आदमी अपनी बीमार दादी मां को देखने आया था और आकर खुद अस्वस्थ हो गया। और यही आदमी उसका पति है। उसका विवाहित पति। मंत्र पढ़कर उसने इसीसे शादी की है और इसी के हाथ से दिया हुआ सिंदूर उसकी मांग में चमक रहा है।

मल्लिकजी बोले, "आओ सुधा, मैं इस तरफ पकड़ता हूं, तू उस तरफ पकड़ और कालीदासी, तुम बगल में रहो।"

सभी ने मिलकर जब उस चेतनाहीन देह को पकड़ा तो सौम्यपद ज़रा होश में आया। चिल्लाकर बोला, "कौन? कौन है तू?"

पियक्कड़ की बात का जवाब कौन दे भला! लेकिन अब सौम्यपद ने हाथ-पैर नचाना शुरू कर दिया है। उसके द्वारा हाथ-पैर झटकने की चोट से मल्लिकजी खुद को संभाल नहीं सके और एकाएक गिर पड़े। साथ ही सौम्यपद बाबू फिर पानी से भींगे फर्श पर गिर पड़ा। वह दृश्य देखकर विशाखा नफरत, दहशत और उद्विग्नता के कारण प्रस्तर की मूर्ति की नाईं वहां खड़ी की खड़ी रही।

तपेश गांगुली उस किस्म का आदमी है जो निराशा को कभी अपने पास फटकने नहीं देता। या यों कह सकते हैं कि निराश होने पर भी कभी टूटता नहीं।

ऑफिस के आदमी की जबान से एक दिन सुना, "अरे तपेश-दा, आखिरकार आपने हमसे रिश्ता तोड़ लिया? हमें सूचना तक नहीं दी?"

यह सुनकर तपेश गांगुली अवाक् हो गया। बोला, "सो कैसे?"

"अरे, आपकी भतीजी की शादी हो गई और आपने हमें निमन्त्रित तक नहीं किया?"

तपेश गांगुली के आश्चर्य की कोई सीमा नहीं रही। रथीन घोषाल श्याम बाजार अंचल से ऑफिस आता है। लिहाजा उसकी बात बिलकुल अविश्वसनीय नहीं हो सकती। बोला, "सच? मेरी भतीजी की शादी हो गई है? यह क्या कह रहे हो तुम! मुझे तो खबर ही नहीं मिली।

रथीन घोषाल बोला, "दादा, आप हमसे बात छिपा रहे हैं।"

तपेश गांगुली हाथ का कागज-पत्तर हटाकर बोला, "सच कह रहा हूं, यकीन करो, मुझे कुछ मालूम नहीं है। तुम तो जानते ही हो कि मैं डेढ़ महीने तक बीमार रहा। ऑफिस भी नहीं आ सका। हां, तो शादी कब हुई।"

रथीन घोषाल बोला, "अरे, हमीं क्या यह बात जानते थे! अचानक सुनने को मिला कि तुम्हारी भतीजी की विडन स्ट्रीट के मुखर्जी-भवन के पोते से शादी हो गई है।"

तपेश गांगुली ने कहा, "यह क्या कह रहे हो तुम! मेरी सगी भतीजी की शादी हो गई और मुझे कुछ पता नहीं चला! ऐसा कहीं हो सकता है?"

रथीन घोषाल बोला, "हां-हां, सब कुछ हो सकता है। जिस तरह का समय आ गया है, सब कुछ हो सकता है। अब बात क्यों दबा रहे हैं भाई साहब? किसी दिन सुनने को मिलेगा कि आपकी लड़की की भी शादी हो गई है और हमें कोई सूचना नहीं मिली।"

.तपेश गांगुली बोला, "तुम यह सब बात रहने दो। यही बताओ कि मेरी भतीजी की शादी कब हुई।"

रथीन घोषाल ने कहा, "मुहल्ले के लोगों को इस बात की पहले से जानकारी थी कि जान पाता? सारा कुछ उन लोगों ने चुपके से कर लिया है"

"क्यों, चुपके से क्यों कर लिया?"

"अरे, तुम नहीं जानते? जिससे तुम्हारी भतीजी की शादी हुई है वह फांसी का मुजरिम है।"

तपेश गांगुली के लिए यह कोई नई खबर नहीं है। इसका पता उसे पहले से ही था। फांसी का मुजरिम होने से क्या होगा, पात्र के पास बेशुमार दौलत होनी चाहिए, यही अहम् है। यह बात लोगों को कौन समझाएगा?

यह खबर सुनकर तपेश गांगुली का मूड शुरू में बिगड़ गया था। उसके बाद जब पता चला कि इस खबर में सच्चाई है तो उसी समय वह रानी और बिजली को अपने साथ ले विडन स्ट्रीट स्थित विशाखा की ससुराल यानी मकान में पहुंचा था। उसे एक दुर्घटना ही कहा जाएगा। व्यर्थ ही टैक्सी के किराए में उसके कुछ रुपये खर्च हो गए थे।

वह जो बूढ़ा मैनेजर है, उसी ने उस दिन उन्हें घर के अन्दर घुसने नहीं दिया था। मैनेजर ने कहा था, "नहीं-नहीं, अभी भाभी रानी से आपकी मुलाकात नहीं होगी।"

तपेश गांगुली ने कहा था, "आप मुझे पहचान नहीं पा रहे हैं मैनेजर बाबू। आप की भाभी रानी मेरी सगी भतीजी है। विशाखा मेरी ही भतीजी है—"

"सो भतीजी ही क्यों न रहे, अभी मुलाकात नहीं होगी।"

उसके बाद ठीक उसी समय न जाने कौन एक व्यक्ति गाड़ी से घर के सामने उतरा और उसी को लेकर व्यस्तता में डूब गया वह मैनेजर। बोला, "आप चले जाइए, अभी भाभी रानी को मिलने का वक्त नहीं है—"

उस मकान के सामने जो दरवान खड़ा था, उसी से तपेश गांगुली ने पूछा, "यह बाबू साहब कौन है दरवानजी ?"

दरवान बोला, "मंझले बाबू।"

उस समय कुछ किया नहीं जा सकता था। मंझले बाबू का मतलब घर का मालिक। घर का मालिक मतलब विशाखा के ससुर होंगे। उस समय रानी तपेश गांगुली पर गुस्सा गई थी। बोली थी, "तुम्हारे ही कारण मेरा अपमान हुआ। तुम्हारे जैसे आदमी के हाथ में मेरा जीवन पड़कर बिलकुल खोखला हो गया। कैसे आदमी के हाथ सौंपी गई थी मैं ! कितना पाप करने से तुम्हारे जैसे आदमी से शादी हो सकती है इसका रग-रग में अहसास हो रहा है। पिताजी को ढूंढ़ने पर और कोई जमाई नहीं मिला ! इससे तो अच्छा होता कि गले में रस्सी बांधकर तालाब में डुबाकर मार देते।"

उसके बाद उस घटना के अवशेष का सिलसिला और कई दिनों तक चलता रहा था। उन कई दिनों के दौरान दोनों के बीच बोलना-चालना बंद हो गया था। उसके बाद कई बार विशाखा की ससुराल जाने की इच्छा हुई है उसे, पर जा नहीं सका है।

वह एक छुट्टी का दिन था। तीसरे पहर किसी को कुछ बताए बगैर तपेश गांगुली बस पर चढ़ गया। उसके बाद एकाध घंटे में ही विशाखा की ससुराल के मकान पर जा पहुंचा।

शुरू में थोड़े-बहुत संकोच का अनुभव हो रहा था। लेकिन जीवन में स्थापित होने के लिए संकोच करने से काम नहीं चल सकता। उसके लिए उद्यम, परिश्रम और साहस की जरूरत पड़ती है। विशाखा से एक बार मुलाकात हो जाए तो वह उसके किसी प्रस्ताव को ठुकराएगी नहीं। अभी वह बेशुमार दौलत की मालकिन है। एक हज़ार दो हज़ार अब उसके लिए कुछ नहीं, हाथ की मैल है। किसी दिन विशाखा का पालन-पोषण उसी के हाथ हो रहा था। बचपन में जब भैया की अकस्मात मृत्यु हो गई तो उस समय विधवा भाभी और विशाखा का उसी के घर में पालन-पोषण हो रहा था। वह बात विशाखा को अवश्य याद होगी।

और अगर याद नहीं होगी तो तपेश गांगुली विशाखा को उन बातों का स्मरण करा देगा। कहेगा : "उस वक्त तू कितनी छोटी थी ! तुझे याद न भी हो सकती है, मगर तेरी मां को वह बात याद है। उस समय मैं न होता तो तुम लोगों की क्या हालत होती ! एक बार तू उन दिनों की बातों पर गौर कर।"

बग बिडन स्ट्रीट के सामने जाकर जैसे ही रुकी तपेश गांगुली नीचे उतर पड़ा। अब कई मकान पार करने के बाद ही विशाखा की ससुराल मिलेगी। मकान के सामने खड़ा होते ही तपेश गांगुली अवाक हो उठा। देखा, चार पुलिसकर्मी घर के सामने बैठकर पहरा दे रहे हैं। इतने पुलिसकर्मी यहां क्यों आए ? क्या हुआ ?

पुलिसकर्मियों को देखकर तपेश गांगुली ठिठककर खड़ा हो गया। गिरिधारी कहां गया ? वह तो सामने बैठकर ही पहरा दिया करता था। वह आज यहां क्यों नहीं है।

तपेश गांगुली मकान के अन्दर घुसने जा रहा था पर ठिठककर खड़ा हो गया। अगर कोई कुछ आपत्ति करे ?

देखा, तभी गिरिधारी अंदर से बाहर आया। उसके हाथ में थाली है और उसमें खाने-पीने की बहुत सारी चीजें हैं।

गिरिधारी ने उस थाले की थाली से पत्तुए के पत्तों में ढेर सारी कचौरियां और समोसे निकालकर पुलिसकर्मियों को खाने के लिए दिया।

"लीजिए सिपाही जी, लीजिए—"

यह कहकर सपुए के पत्ते में कचौरियां, समोसे और रसगुल्ले देने लगा। तपेश गांगुली खड़ा-खड़ा यह देख रहा था।

"और लीजिएगा सिपाही जी?"

"दीजिए।"

अब तपेश गांगुली आगे बढ़कर गिरिधारी के पास गया। बोला, "दरबानजी, एक बार मैनेजर बाबू के पास खबर भेज सकते हैं?"

गिरिधारी ने मुड़कर देखा और तपेश गांगुली को पहचान लिया। बोला, "अभी मैनेजर साहब काम-काज में बहुत ही व्यस्त हैं बाबूजी। अभी मुलाकात नहीं हो पाएगी।"

यह कहकर फिर से सिपाहियों के खिलाने के काम में जुट गया। मैनेजर बाबू ने उससे सिपाहियों की खातिरदारी करने को कहा है। इसलिए गिरिधारी ने उसी तरफ ध्यान लगाया। कहां कौन है यह तपेश गांगुली। तब तक सिपाहियों का खाना-पीना खत्म हो चुका था उन लोगों के हाथ में पान मसाला देने लगा गिरिधारी।

तपेश गांगुली बहुत देर से खड़ा देख रहा था। पुलिसकर्मी क्यों आए हैं, गिरिधारी क्यों उनकी खातिरदारी कर रहा है, उसकी समझ में नहीं आया।

थोड़ी देर बाद किसी ने ऊपर से पुकारा, "गिरिधारी!"

पुकार सुनते ही वह बोल उठा—"अरे मैनेजर बाबू हैं! और वह सीधे अन्दर चला गया।

आस-पास और भी कई राहगीर वहां आकर मजमा लगाए खड़े थे। घर के सामने पुलिस का वैन देखकर उनकी कुतूहल भरी दृष्टि पुलिसकर्मियों पर टिकी हुई थी। अचानक घर के सामने इतने पुलिसकर्मी क्यों आकर खड़े हैं?

एक व्यक्ति ने तपेश गांगुली से पूछा, "इतने पुलिस यहां क्यों हैं जनाब? क्या हुआ है?"

हर आदमी एक-दूसरे से सवाल करता है। लेकिन असली घटना का किसी को पता हो तब न उत्तर दे। हालांकि जिन लोगों को असली घटना की जानकारी है उन पुलिसवालों से पूछने की किसी की भी हिम्मत नहीं हो रही है। उस समय वे खाना-पीना खत्म कर पान चबा रहे थे।

अचानक एक कांड घटित हो गया। अन्दर से एक ओर मैनेजर साहब और दूसरी ओर गिरिधारी एक आदमी को टांगकर ले आया और पुलिस के वैन के अन्दर उसे रख दिया। चारों पुलिसकर्मी भी तुरन्त तैयार हो गए। वे लोग भी वैन के अन्दर घुस गए। तपेश गांगुली भौचक्का-सा उस ओर ताकता रहा। वह आदमी कौन? किसको इस तरह पकड़कर गाड़ी पर रख दिया गया? किसी की मौत हो गई क्या? अगर मौत हुई तो किस वजह से हुई? उस आदमी को क्या हुआ था?

जो लोग वहां खड़े थे सभी के मन में यही प्रश्न जग रहा था। एक ही तरह का कुतूहल। लेकिन उन लोगों के इस प्रश्न का उत्तर कौन देगा? कौन उन लोगों का कुतूहल शांत करेगा।

इस बीच और भी बहुत सारे लोगों की भीड़ इकट्ठी हो गई है उस मकान के सामने। और भी बहुत सारे लोगों का मजमा। तमाम लोग भी यही जानना चाहते हैं कि वहां इतनी भीड़ क्यों है?

उस आदमी को उठाकर गाड़ी के अन्दर रखने के बाद मैनेजर बाबू और गिरिधारी ज़रा हटकर खड़े हो गए। मैनेजर साहब को एकांत में पाकर तपेश गांगुली ने पूछा, "क्या हुआ है मैनेजर बाबू? बात क्या है? किसको उठाकर गाड़ी के अन्दर रख आए हैं?"

मैनेजर बाबू अन्यमनस्क थे। तपेश गांगुली को देखकर पहचान लिया और बोल उठे, "आप?"

"हां, आप बहुत व्यस्त हैं, यह समझ रहा हूं—"

"हां, मैं अभी बहुत ही व्यस्त हूं। आप अभी क्यों आए हैं?"

"तो आप ही बताइए कब आऊं?"

मल्लिकजी ने कहा, "आपको क्या ज़रूरत है, पहले यही बताइए।"

तपेश गांगुली ने कहा, "मैं इसके पहले भी एक दिन आया था। लेकिन उस दिन आपने घुसने नहीं दिया। ठीक उसी समय विशाखा के चचेरे ससुर आ धमके थे···"

मल्लिकजी को यह बात याद आ गई।

बोले, "तो आपने आने के लिए ऐसे ही वक्त का चुनाव क्यों किया था?"

तपेश गांगुली ने कहा, "मैं कैसे जानता कि ठीक उसी समय अचानक आप लोगों के मंझले मालिक आ जाएंगे? आज विशाखा से मुलाकात हो सकती है?"

"आज भी मुलाकात नहीं होगी।" मैनेजर साहब ने कहा।

"मुलाकात नहीं होगी?"

"मुलाकात कैसे हो सकती है, बताइए? आज घर में भयंकर कांड हो गया है। आज भी मुलाकात नहीं हो सकेगी। भाभी रानी बहुत व्यस्त हैं।"

यह कहकर भीतर की तरफ जा रहे थे, लेकिन तपेश गांगुली ने पीछे से पुकारा, "ओ मैनेजर बाबू, ओ मैनेजर बाबू—"

लेकिन मैनेजर बाबू तपेश गांगुली की तरह ऐरे-गैरे नत्थू खैरे की बात पर ध्यान देने वाले व्यक्ति नहीं हैं। वे सदर का फाटक बंदकर भीतर चले गए। रफ्ता-रफ्ता घर के सामने की भीड़ भी छंट गई।

उस दिन मल्लिकजी को रोजमर्रा का काम खत्म करने में देर हो गई। सवेरे के समय ही उन्हें ज्यादा काम रहता है। घर के इतने सारे लोग खाना खाएंगे। क्या-क्या खाएंगे, इसका हिसाब रखना पड़ता है मल्लिकजी को। उसके बाद ही महीने भर का सामान मंगाना। इसका हिसाब पहले करना है। दादी मां की बीमारी के पहले से ही यह काम मल्लिकजी के जिम्मे पड़ गया था। कहा जा सकता है कि दादी मां की बीमारी के पहले से ही मल्लिक जी की कार्य-तालिका में जुड़ गया था। जिस दिन मेम साहब की हत्या हुई थी उसी दिन से। उस समय कोई काम करने की दादी मां की मानसिक स्थिति नहीं थी। कहां वकील बैरिस्टर के पास दौड़-धूप करना और कहां पोते की चिन्ता! उस समय दिमाग दुरुस्त रखने जैसी हालत नहीं थी।

उस दिन भी इसी वजह से मल्लिकजी खर्च का हिसाब देने के लिए ऊपर गए।

बाहर से पुकारा, "भाभी रानी!"

दादी मां के कमरे से निकल बिन्दु बाहर आई बोली, "भाभी रानी इस कमरे में नहीं है।"

"नहीं है?"

बिन्दु बोली, "कल से ही भाभी रानी इस कमरे में नहीं आ रही हैं।"

"क्यों ? ऐसा तो नहीं हुआ करता है। वे तो हर रात यहीं बिताती थीं।"

बिन्दु बोली, "उस दिन छोटे भैया के चले जाने के बाद से इस कमरे में नहीं आ रही हैं।"

"क्यों ? तबियत खराब है क्या ?"

बिन्दु बोली, "यह मैं बता नहीं पाऊंगी।"

मल्लिकजी ने पूछा, "रात में क्या खाना खाया था ?"

बिन्दु बोली, "खाना लेकर सुधा रात में गई थी, लेकिन भाभी रानी ने न कुछ खाया न ही कोई उत्तर दिया। तब से उन्होंने न खाया है और न ही दरवाजा खोला है।"

मल्लिकजी सोच में पड़ गए। क्या करें, समझ में नहीं आया। उसके बाद भाभी रानी की नौकरानी सुधा की खोज की। पूछा, "सुधा कहां है ? उस पर नजर नहीं पड़ रही।"

बिन्दु बोली, "सुधा तो अभी यहीं थी। देखती हूं, कहां गई।" यह कहकर नीचे दो-मंजिले पर गई। वहां से एक-मंजिले पर। एक-मंजिले के नौकर-नौकरानी के नल-घर में।

"सुधा, सुधा, तू यहां है ?"

सुधा नल-घर से बाहर निकल आई।

"तुझे मल्लिकजी बुला रहे हैं।"

सुधा बोली, "चलो, मैं आती हूं।"

उसके बाद दनादन सीढ़ियां चढ़ने लगी। बिन्दु पीछे-पीछे आ रही थी। पूछा, "भाभी रानी ने अब तक दरवाजा क्यों नहीं खोला है ?"

सुधा ने कहा, "मैंने तो भाभी रानी के दरवाजे पर धक्का दिया था। न खोलें तो मैं क्या करूं !"

यह कहते हुए दोनों ऊपर चली आईं। उस समय भी मल्लिकजी हिसाब का खाता हाथ में लिए तीन-मंजिले पर खड़े थे। उन पर नजर जाते ही सुधा बोली, "भाभी रानी ने अब भी दरवाजा नहीं खोला है। अन्दर से दरवाजे की सिटकनी बंद है।"

मल्लिकजी ने पूछा, "और कल रात ?"

सुधा ने कहा, "कल जब आप छोटे भैयाजी को उठाकर पुलिस की गाड़ी में चढ़ाने गए तो भाभी रानी ने कमरे के अन्दर घुसकर सिटकनी बन्द कर दी, उसके बाद से दरवाजा नहीं खोला है।"

"रात में खाना खाने के वक्त बाहर नहीं निकली थीं ?"

"नहीं, मैंने खाने के लिए दरवाजे पर धक्का दिया, लेकिन कोई जवाब नहीं मिला।"

मल्लिकजी समझ नहीं सके कि क्या करें। उन्हें याद आया कि कैसी हालत में उन्होंने कल सौम्यपद बाबू को पड़े हुए देखा था। सिर्फ कै की बदबू ही नहीं थी, उसके साथ ही था सिगरेट, मछली और शराब की बदबू। बाल्टी पर बाल्टी पानी डालकर कमरे का फर्श साफ किया गया था। उसके बाद गिरिधारी और वे उन्हें किसी तरह टांगकर एक-मंजिले पर ले आए थे।

मल्लिकजी ने सोचा, अभी उन्हें क्या करना चाहिए। लेकिन सोचकर नतीजे पर न पहुंच पाने के कारण अपने कमरे में चले आए थे। सवेरे का हिसाब न देने से उनका कोई भी काम पूरा नहीं होता। कितने ही सालों से वे यह काम करते आ रहे हैं। कितनी ही मुसीबतों के आंधी-तूफान उनके सर से गुजर चुके हैं। फिर भी काम नहीं रुका है।

आज पहली बार उसमें अड़चन आ खड़ी हुई है। उसके बाद काफी वक्त गुज़र गया। और भी बहुत सारे काम उन्होंने खत्म किए। लेकिन हिसाब तो सबसे ज़रूरी है।

भाभीरानी के कमरे के सामने जाकर सुधा पुकारने लगी, "भाभीरानी, भाभी-रानी—"

अन्दर से कोई जवाब नहीं। सुधा फिर पुकारने लगी, "भाभीरानी, भाभीरानी—ओ भाभीरानी, मैं सुधा बोल रही हूं, दरवाजा खोलिए। ओ भाभीरानी—"

मल्लिकजी ने कहा, "दरवाजे की कुंडी खटखटाओ सुधा। भाभीरानी शायद सो गई हैं।"

सुधा दरवाज़े की कुंडी खटखटाने लगी। कुंडी खटखटाते हुए पुकारने लगी, "भाभीरानी, मैं सुधा बोल रही हूं, ऐ भाभीरानी—"

फिर भी अन्दर से कोई आवाज नहीं। मल्लिकजी मुसीबत में फंस गए। कोई दुर्घटना घट गई क्या? ऐसा तो नहीं होता है भाभीरानी के साथ। इतने दिनों से भाभी-रानी इस मकान में हैं, लेकिन इस तरह दरवाज़ा बन्द कर कमरे में नहीं रही हैं। क्या हुआ?

आखिर में मन में क्या खयाल आया पता नहीं। सुधा से बोले, "सुधा, तुम हट जाओ। मैं देखता हूं—"

यह कह कुंडी खटखटाते हुए दरवाज़े पर धक्का देने लगे। साथ-ही-साथ पुकारने लगे, "ओ भाभीरानी, भाभीरानी—"

फिर भी पहली बार कोई उत्तर नहीं मिला। दूसरी बार दरवाज़े पर धक्का देने पर दरवाज़ा खुला। अब मल्लिकजी की जान में जान आई। भाभीरानी के चेहरे पर थकावट की निशानी थी। देखने पर लगा, वे उस समय भी सोई हुई थीं।

सुधा बोली, "आप इतनी देर तक सोई हुई थीं भाभीरानी! हम कब से पुकार रहे हैं—"

मल्लिकजी ने पूछा, "आपकी तबीयत ठीक है न? मैं तो भय से बेचैन हो उठा था—"

उसके बाद एक क्षण रुककर फिर बोले, "मैं हिसाब का खाता लेकर आया था। तो फिर हिसाब-किताब आज रहे, कल होगा।"

"नहीं-नहीं, अभी तुरन्त तैयार हो जाती हूं—आप थोड़ी देर बाद आने का कष्ट करें।"

"इसमें कष्ट की कौन-सी बात है! आप तब तक तैयार हो जाइए, मैं आ रहा हूं—"

यह कहकर दुबारा अपने कमरे में चले गए। कितने लम्बे अरसे से वे इस मकान में हैं! कितनी ही मुसीबतें उनके सामने से गुज़र चुकी हैं। जीवन देखा, मृत्यु भी देखी। मिलन देखा, विरह भी देखा। जीवन-मृत्यु मिलन-विच्छेद के समन्वय से जो महाजीवन बनता है, उसे भी देखा है उन्होंने। ज्यादा दिनों तक जीवित रहने का यही सौभाग्य या दुर्भाग्य है। जिसका प्रारम्भ देखने को मिलता है उसका अन्त भी देखने को मिलता है। हो सकता है इसी का नाम साक्षात्कार हो। वे छुटपन में यहां इस घर में न आए होते तो महाजीवन का साक्षात्कार नहीं कर पाते। अपनी गृहस्थी के नाम पर उनका कुछ भी नहीं है। लेकिन अपनी घर-गृहस्थी होती तो क्या इस घर में उन्होंने जो कुछ देखा, वह क्या देख पाते?

तीनेक घण्टे भी नहीं बीते होंगे कि तीन-मंजिले से उनकी बुलाहट आई।

खाता-बही लेकर वे पुनः भाभीरानी के कमरे में गए। इस बीच भाभीरानी

तैयार हो गई हैं। उन्हें देखकर भाभीरानी बोली, "आज आपको बहुत कष्ट दिया मैनेजर बाबू—"

"नहीं, इसमें कष्ट की कौन-सी बात है? आपको ही बल्कि कष्ट हुआ। एक दिन हिसाब-किताब न देने से कोई खास हानि होने वाली नहीं है। मैं तो हर रोज हिसाब तैयार करके रखता हू।"

भाभीरानी बोलीं, "मगर यह तो मेरा ही काम है। दादी मां ने मुझे ही यह भार सौंपा है।"

"लेकिन आदमी की तबियत क्या हमेशा ठीक रहती है? आप दादी मां की जितनी सेवा-सुश्रूषा कर रही हैं। उतनी सेवा-सुश्रूषा अपनी कोख से पैदा हुए बाल-बच्चे भी नहीं करते। मैं तो अपनी आंखों से सब-कुछ देख रहा हूं।"

विशाखा बोली, "क्या करूं, कहिए! जो महिला मुझे बचपन में पसन्द किए हुए थीं अपनी बहू बनाने के लिए, जिनकी दया और रुपये-पैसे से मैं इतने दिनों तक जिन्दा रही, लिखाई-पढाई की, उनकी बीमारी के दौरान अगर मैं उनकी सेवा न करूं तो मैं महापातकी बनूंगी मैनेजर बाबू—"

मल्लिकजी बोले, "आपने जो कुछ किया है वह तो मैं अपनी आंखों से ही देख रहा हूं भाभीरानी!"

विशाखा बोली, "मेरी सामर्थ्य ही क्या है मैनेजर बाबू—"

"आपकी सामर्थ्य का क्या कहना! लेकिन जरा अपनी सेहत का भी खयाल रखिए, मैं बस इतना ही कहना चाहता हू।"

विशाखा बोली, "लेकिन अब मुझसे हो नहीं पा रहा है।"

मल्लिकजी बोले, "आप जितना कुछ कर रही हैं, उतना कितने लोग कर पाते हैं!"

विशाखा बोली, "इसके बाद भी और कर पाने को कह रहे हैं? कल तो आपने अपनी आंखों से देखा कि इस घर में अचानक कैसा कांड हो गया!"

मल्लिकजी बोले, "हम लोगों के सिर के ऊपर जो हैं उन पर निर्भर करने के सिवा हम लोगों के लिए चारा ही क्या है भाभीरानी!"

"लेकिन अब मुझसे बरदाश्त नहीं हो रहा है।"

मल्लिकजी बोले, "आप जितना बरदाश्त कर रही हैं, उतना कोई भी बरदाश्त नहीं कर पाता—"

विशाखा बोली, "लेकिन कल की उस घटना के बाद मेरी सहन-शक्ति ने जवाब दे दिया है। आप न होते तो मैं क्या करती, कह नहीं सकती। मुझे हर क्षण लग रहा था कि यह मैं किस घर में आ गई हू, किससे मेरी शादी हुई है!" यह कहकर पल्लू से आंखें पोंछकर बोली, "दीजिए, अपना हिसाब दीजिए—"

उसके बाद बगल की मेज से अपना हिसाब का खाता ले हिसाब लिखने लगी। हिसाब का मतलब है चिरकाल से आता हुआ दैनिक जमा-खर्च की लम्बी तालिका। कहां से रुपये आ रहे हैं और उनका उपभोग कौन कर रहे हैं, उसका कोई हिसाब नहीं। सिर्फ है प्रत्येक दिन के जीवन-धारण के उपकरणों के आय-व्यय का उल्लेख, दादी मां शुरू से ही इसकी आदत डाले हुए थीं। अब इसका भार पड़ा है विशाखा पर। थोड़ी देर के बाद हिसाब की पारी खत्म हुई। मल्लिकजी बोले, "जरा सेहत का खयाल रखिएगा भाभीरानी—"

विशाखा बोली, "सेहत का खयाल किसके लिए रखूं मैनेजर बाबू—"

मल्लिकजी ने कहा, "ऐसी बात नहीं कहिए भाभीरानी, नहीं कहिए।"

विशाखा बोली, "कल तीसरे पहर इस घर में जैसा कांड हो गया और आप ऐसी बात कह रहे हैं ? जेल से छुट्टी ले बाहर आ अपनी पत्नी के सामने कोई इस तरह शराब पीता है ? इस तरह कोई कै कर कमरे को भर देता है ?"

मल्लिकजी की जबान से कोई शब्द नहीं निकला।

विशाखा बोली, "आप क्या सोच रहे हैं, मैं जानती नहीं ! लेकिन उस घटना को देखने के बाद मुझे लगा कि मेरे जीवित रहने से कोई लाभ नहीं है। उसके साथ ही मुझे संदीप और अपनी मां की याद आ गई···"

मल्लिकजी भाभीरानी की तरफ गौर से ताक रहे थे। उन्हें लगा, बातचीत करने के दौरान भाभीरानी के चेहरे में बदलाव आने लगा। उसके बाद और बातें कहना चाहीं पर बातें जबान में ही अटक गई।

विशाखा बोली, "उसके बाद लगा, यह मैं किसकी घर-गृहस्थी संभाल रही हूं। यह क्या मेरे पति की घर-गृहस्थी है ? उसके बाद एकाएक लगा, इसके बाद मेरे जिन्दा रहने की कोई जरूरत नहीं है। उस समय आप पर भी मुझे गुस्सा आया। आपने ही तो संदीप को विवाह के पीढ़े से उठाकर उस शराबी से मेरी शादी कराई थी—"

यह सुनकर मल्लिकजी ने कहा, "मुझसे गलती हो गई है भाभीरानी, सचमुच ही गलती हो गई है। आप मुझे क्षमा कर दें···मैं इस घर का नौकर हूं, इस घर के नौकर के अलावा मैं कुछ भी नहीं हूं।···"

विशाखा ने अपना कथन जारी रखा, "उसके बाद, इस बात की याद आते ही मैं अपनी दादिया सास के कमरे में चली गई। मुझे मालूम था कि वहां दादी मां के कमरे में मेज पर नींद की टिकिया है। उसकी दो-तीन टिकिया मैंने मुंह के अन्दर डाल लिया। सोचा, इसके बाद मेरे जिन्दा रहने से कोई लाभ नहीं है—मैं मर भी जाऊं तो कोई हानि नहीं होगी—"

मल्लिकजी सब कुछ सुन रहे थे। भाभीरानी ने इसके बाद कहा, "उसके बाद इस कमरे में आकर सिटकनी बन्द कर दी और लेट गई। इसके बाद और कुछ मालूम नहीं—"

जरा रुककर भाभीरानी फिर बोली, "उसके बाद आज सवेरे आपने दरवाजे पर धक्का दिया तो मेरी नींद टूट गई। मैंने महसूस किया, मैं मरी नहीं हूं, बल्कि अब भी जिन्दा हूं—"

यह कहकर विशाखा ने फिर पल्लू से अपनी आंखें पोंछीं। सारा कुछ सुनने के बाद मल्लिकजी गुमसुम हो गए। बोले, "मैं अब आपको विरक्त नहीं करूंगा। आप आराम कीजिए, लेटे रहिए। मैं चलता हूं। सुधा से कह जाता हूं कि आपको बेवजह तंग न करे। आप लेट जाइए, मैं चलता हूं—"

"नहीं, जरा रुक जाइए—"

मल्लिकजी जाते-जाते रुक गए। विशाखा बोली, "कल रात एकाएक मां को सपने में देखा था। तुरन्त ही इतने दिनों के बाद बेड़ापोता की याद आ गई। आपने बताया था, संदीप बीमार है। उस दिन जाने के दौरान अड़चन पड़ गई।"

मल्लिकजी बोले, "किसी दूसरे दिन आपको जाना है ?"

"हां, जा सकती हूं।"

"तो फिर पहले आप स्वस्थ हो लें। या फिर कल ही जाइएगा ?"

विशाखा ने कहा, "जितना ही जल्द जा सकूं, उतना ही अच्छा। मां को देखने की मुझे तीव्र इच्छा हो रही है।"

"फिर कल ही चलिए। मैं निताई से कहे देता हूं—काफी दूर जाना है।"

यह कहकर मल्लिकजी हिसाब का खाता लेकर नीचे चले गए।

कलकत्ता का कौन-सा रास्ता कब खाली रहेगा, कौन-सा रास्ता भीड़ से ठसाठस भरा रहेगा, आदमी के लिए तो दूर की बात, देवता भी नहीं जान पाते।

इसके अलावा कौन-सा जुलूस किस पार्टी का है, जुलूस के आदमी के चेहरे को देखकर यह समझना नामुमकिन है। किसी जुलूस के आदमी के लिबास भले लोगों जैसे होते हैं और कोई जुलूस गांव के गरीब लोगों की भीड़ से भरा हुआ रहता है। वे गरीब हैं, इसका पता उनके लिबास से ही चल जाता है। समझ में आ जाता है कि वे खेत-खलिहान का काम खत्म कर शहर घूमने आए हैं।

नई पार्टी रहने के बावजूद डी० ए० पी० का इस शहर की बस्तियों के लोगों पर अधिक प्रभाव और ख्याति है। इस पार्टी की नींव गोपाल हाजरा, वरदा घोषाल और श्रीपति मिश्र—इन तीन व्यक्तियों ने डाली है। इन्हीं लोगों के हाथ में इस पार्टी के कार्यकर्ताओं ने स्वयं को समर्पित कर कृतार्थता का अनुभव किया है। उन्होंने महसूस किया है कि इन्हीं लोगों की कृपा पर उनके जीवन का भूत-वर्तमान-भविष्य निर्भर करते हैं। अपनी मजदूरी बढ़वाने के लिए उन्हें अपने नेताओं की बात पर ही उठना-बैठना होगा। उनकी इच्छा के अनुसार चलना-फिरना पड़ेगा। उन्हीं की बात पर कभी कहना होगा 'वंदे मातरम' और कभी कहना होगा 'इन्कलाब जिन्दाबाद'। उनके आदेश पर ही कभी चिल्लाना होगा 'सैकवी मुखर्जी कर्मचारी संघ, जिन्दाबाद'।

इसी तरह नारे लगाते-लगाते कितनी फैक्टरियां बन्द हुईं, कितने जूट मिल बन्द हो गए, कितने आदमी बेरोजगार हो गए, इसका हिसाब किसी ने न रखा है और न ही किसी को रखना है। हम जो कुछ कह रहे हैं वही करो। हम जो हुक्म देते हैं, उसी का पालन करो। तभी तुम जिन्दा रहोगे, तभी तुम्हारी आनेवाली पीढ़ी-दर-पीढ़ी खुशहाल रहेगी। कौन जानता था कि ठीक इसी दिन और इसी समय यह जुलूस निकलेगा! और सड़क पर जुलूस निकलने का मतलब ही है कलकत्ता का अचल-निश्चल हो जाना। चन्द लमहों के लिए आदमी के आगे बढ़ने का रास्ता बन्द हो जाना।

अनगिनत गाड़ियां, लारियां, आदमी जुलूस के पीछे अवरुद्ध होकर खड़े हैं और परेशानियों का अनुभव कर रहे हैं। किसी को अस्पताल जाना है, किसी को हावड़ा स्टेशन जाकर रेलगाड़ी पकड़नी है, किसी को ऑफिस-कचहरी जाकर काम संभालना है। लेकिन सामने के रास्ते पर जुलूस धीमी गति से चल रहा है। आदमी की सुविधा-असुविधा का खयाल करना हमारी जिम्मेदारी नहीं है, हम सर्वहारावर्ग की दुख-विपदा दूर करने जा रहे हैं, अतः हम किसी की नहीं सुनेंगे। हम किसी की बाधा स्वीकार नहीं करेंगे। हम किसी की सुविधा-असुविधा का खयाल नहीं करेंगे।

"और कितनी देर तक यहां रुके रहेंगे मैनेजर बाबू?"

बहुत सारी गाड़ियों के बीच विशाखा की भी गाड़ी है। बहुत देर से एक ही जगह रुककर खड़ी थी। बहुत दिनों के बाद विशाखा अपनी मां को देखने जा रही है। कहा जा सकता है कि शादी के बाद मां से विशाखा का यह पहली बार मिलना होगा। उसकी शादी के लिए उसकी मां ने अनगिनत दिन और रातें जगकर बिता दी हैं। एक तरह से विशाखा ही मां के सिर का बोझ थी।

उसी विशाखा की शादी हुई है मुखर्जियों जैसे बड़े आदमी के घर में। लेकिन इतने दिन से तरह-तरह के झमेले रहने के कारण वह मां के पास जा नहीं सकी थी। अब भी गाड़ी हिलने-डुलने का नाम नहीं ले रही है।

मल्लिकजी कर ही क्या सकते हैं! बोले, "निताई किसी दूसरे रास्ते से जाया नहीं जा सकता? लग रहा है, बेड़ागोता पहुंचते-पहुंचते रात खत्म हो जाएगी।"

बात झूठी नहीं है। दिन के दो बजे वे लोग घर से निकले हैं और अब चार बजे रहे हैं लेकिन अब तक हावड़ा पहुंचना नहीं हो पाया। बेड़ापोता तो काफी दूर है। मल्लिकजी ने कहा, "तुम इस रास्ते से क्यों आए? बाली ब्रिज के रास्ते से जाने से सुगमता होती।"

निताई अल्पभाषी है। उसने कहा, "मुझे कैसे पता चलता कि इस दोपहर के समय भी इस तरह का जुलूस निकलेगा?"

"तो फिर दूसरा रास्ता पकड़ो। गाड़ी घुमा लो—"

निताई ने कहा, "घुमाऊं कैसे? आगे-पीछे अगल-बगल चारों तरफ गाड़ियों का हुजूम है।"

"तो फिर उपाय क्या है?"

इन्तजार करने के अलावा उस समय कोई उपाय नहीं था। जुलूस किस तरफ जा रहा है, उसके पहुंचने का कौन-सा स्थान है, किसी को इसकी जानकारी नहीं है। तुम्हारे काम-काज जहन्नुम में जाएं, मेरा उद्देश्य सार्थक हो जाए तो मुझे उसी में खुशी हासिल होगी। मल्लिकजी ने निताई से फिर कहा, "किसी दूसरे रास्ते से नहीं जाया जा सकता है निताई?"

निताई क्या कहे! उस समय छुटकारा पाने का कोई उपाय नहीं था। दूसरी-दूसरी हजारों गाड़ियों की जो हालत थी, निताई की गाड़ी की भी वही हालत थी।

विशाखा पिछली सीट पर बैठकर यही सोच रही थी। यह क्या हुआ? जिस दिन उसे सबसे जरूरी काम रहता है उसी दिन यह अनर्थ होता है! पहले भी विशाखा इस तरह की घटना देख चुकी है। तब वह बस-ट्राम पर चढ़कर सफर करती थी। कहीं जब गाड़ी, घोड़ा, बस, ट्राम आदि का चलना बन्द हो जाता तो वह पैदल चलती हुई अपने मुकाम पर पहुंचती थी।

लेकिन अब उसके लिए यह उपाय नहीं है। अब वह बड़े आदमी के घर की बहू है। अभी सड़क पर चहल-कदमी करेगी तो ससुराल की बदनामी होगी, खानदान की इज्जत में बट्टा लगेगा।

मगर जिस तरह हर चीज का एक अन्त है उसी तरह जुलूस की भीड़-भाड़ का भी एक अन्त है। लेकिन जितना समय नष्ट हो गया उसकी भरपाई कौन करेगा? उतने समय में वे बेड़ापोता के और करीब पहुंच गए होते। आहिस्ता-आहिस्ता जुलूस जब उस सड़क को छोड़ दूसरी सड़क की ओर मुड़ गया तो गाड़ियां फिर से आगे बढ़ने लगीं।

मल्लिकजी ने निताई को ताकीद करते हुए कहा, "जल्दी-जल्दी चलो निताई, वरना बेड़ापोता पहुंचते-पहुंचते रात बीत जाएगी।"

निताई को कर्मठ आदमी ही कहा जाएगा। शाम होने-होने को है। लेकिन निताई तमाम रुकावटों से बचते हुए, दूसरी तमाम गाड़ियों और भीड़-भाड़ को पार करते हुए सबके आगे गाड़ी निकालकर ले जाने लगा।

एक-एक कर गांव और जनपद पीछे छूटते जा रहे हैं लेकिन सभी को आशंका हो रही है कि बेड़ापोता पहुंचने में बहुत देर हो रही है। केवल यही लगता है कि अन्ततः वे बेड़ापोता नहीं पहुंच पाएंगे। कि सामने और भी विघ्न-बाधाएं उन्हें रोकने के लिए उत्सुकता के साथ प्रतीक्षा कर रही हैं।

रफ्ता-रफ्ता धरती को अपने आपमें समेटकर अंधेरा उतर आया। उस समय एक ही गाड़ी में रहने के बावजूद सभी अपने आपको तनहा महसूस करने लगे। कहां वह आदमी की भीड़-भाड़ से भरा-पूरा कलकत्ता शहर और कहां ये सूनसान गांव, कस्बे, अंधेरा और चुप्पी का आलम। समय जैसे अब बीतना नहीं चाहता। इस रास्ते को उसने

कई बार रेलगाड़ी से सफर करते हुए देखा है और आज वह इसी रास्ते से जा रही है गाड़ी पर। और वह उसकी निजी गाड़ी है। जो आदमी गाड़ी चला रहा है उसे वही वेतन देती है। जो आदमी निताई की बगल में बैठा हुआ है उसे भी वह हर महीने तनख्वाह देती है। इतनी सारी जायदाद की मालकिन होने के बावजूद विशाखा का मन मां के गिर्द भटक रहा है। उसकी शादी के बाद आज पहली बार मां से भेंट होगी। मां का सपना सार्थक हुआ है लेकिन विशाखा का?

विशाखा आज बड़े आदमी के घर की बहू है। बेशुमार दौलत की मालकिन। उस पर आंखें जाते ही मां सम्भवतः आनन्द के आवेग में उसे बाहों में भर लेगी।

कहेगी : "हां री, इतने दिनों के बाद तुझे मेरी याद आई?"

विशाखा क्या जवाब देगी? जवाब देने के पहले ही मां कहेगी : "तू सुखी हुई है, मेरे लिए यही काफी है। अब मरने से भी मुझे तकलीफ का अहसास नहीं होगा।"

उसके बाद? उसके बाद हो सकता है मां विशाखा को एक दिन के लिए रुक जाने कहे। कहेगी : "एक दिन ठहर ही जाएगी तो जमाई क्या नाराज हो जाएगा?"

इस बात के उत्तर में विशाखा क्या कहेगी? कहेगी भी तो मां कुछ समझ नहीं पाएगी।

"तेरी ददिया सास कैसी है री?"

विशाखा कहेगी, "बिलकुल ठीक।"

"उन्होंने तुझे खूब पसन्द किया है न?"

"हां मां। मुझे कोई काम करने नहीं देती हैं। कहती हैं. तुम मेरे घर की लक्ष्मी हो। तुम्हें कोई काम-काज नहीं करना है। तुम सिर्फ मेरे पोते का जतन करो।"

"जमाई कैसे है?"

"बिलकुल अच्छी तरह हैं।"

मां शायद कहेगी. "जमाई को देखने की मुझे बड़ी ही इच्छा होती है।"

विशाखा कहेगी : "तुम्हारे जमाई कह रहे थे कि एक दिन तुम्हें प्रणाम करने आएंगे।"

"इतनी तकलीफ उठाकर आने की जरूरत ही क्या? तुम लोगों के सुख में ही मेरा सुख है। यहां तकलीफ उठाकर आने की जरूरत नहीं। इतने बड़े आदमी का लड़का इस घर में आएगा तो उसे बहुत तकलीफ होगी। यहां आएगा तो उसे कहां बिठाऊंगी, क्या खाने दूंगी, बताओ तो। वह एक चिन्ता की बात हो जाएगी। बेहतर यही है कि तू मुझे बीच-बीच में चिट्ठी भेजना, इसीसे मैं निश्चिन्तता का अनुभव करूंगी।"

"संदीप दिख नहीं रहा है। सुना था, संदीप बहुत बीमार था।"

"बीमार था। लेकिन अब ठीक है। अभी तक ऑफिस से नहीं आया है। आखिरी ट्रेन से आएगा।"

कमला की मां से ही, हो सकता है, मौसीजी बाजार से मिठाई मंगाएं। कहेगी : "जरा-सा खा लो बिटिया। गरीब के घर आई हो, मैं कैसे तुम जैसी बड़े आदमी की बहू की खातिरदारी करूं! खाओ, खा लो—"

"मल्लिकजी, आप कहां से आ रहे हैं?"

विशाखा का ध्यान एकाएक टूट गया। देखा, वे लोग बेड़ापोता के रेल-लाइन लेवल-क्रॉसिंग के पास पहुंच गए हैं।

"विनोद, तुम लोग कैसे हो?"

विनोद चाचा की मिठाई की दुकान की बगल से गाड़ी जा रही थी।

विनोद चाचा ने कहा, "अच्छी तरह हैं। आप यहां कहां आए हैं?"

विशाखा तब मां की मृत्यु से बिलकुल टूट-सी गई थी।

मसान से संदीप का मकान काफी फासले पर है। संदीप ने विशाखा को अपने हाथों से पकड़कर गाड़ी पर बिठाया। मल्लिक चाचा भी सामने की सीट पर बैठ गए। उसके बाद संदीप भी विशाखा की बगल में जाकर बैठ गया। बैठने के बाद विशाखा को अपने हाथों से थामे रहा। वरना विशाखा शोक से लुढ़ककर गिर पड़ती। विशाखा की ज़बान से तब एक ही बात निकल रही थी, "मैं मां को आख़िरी घड़ी में एक बार देख नहीं सकी—संदीप, तुमने यह क्या किया···"

संदीप सांत्वना देने लगा।

लेकिन मामूली सांत्वना। मामूली सांत्वना देने के अलावा संदीप कर ही क्या सकता था! गाड़ी आकर संदीप के घर के पास पहुंची। वहां भी शोक का एक दौर चला। मां की छाती में अपना मुंह छिपाकर विशाखा सुबक-सुबककर रोने लगी। कहने लगी: "मुझे खबर तक नहीं भेजी मौसीजी! आखिरी घड़ी में एक बार मां का चेहरा भी नहीं देख सकी। आपका संदीप कष्ट उठाकर खबर तक नहीं भेज सका—"

मां बोली, "मेरा संदीप किन झंझटों से गुज़रा है, यह तुम लोगों में से कोई जान नहीं सका। तुम्हारी मां जो इतने दिनों तक ज़िन्दा थी, उसका श्रेय संदीप को ही है—फिर भी उसी के दौरान बेचारा नौकरी करता था, बाज़ार से सामान खरीद कर लाता था, मेरी सेवा करता था। देख नहीं रही कि उसका शरीर सूखकर आधा हो गया है—"

बगल में मल्लिक चाचा खड़े थे। वे सबकुछ सुन रहे थे। संदीप को अपने पास बुलाकर सबकी नज़रों को बचाकर पूछा, "तुम्हारा कितना रुपया खर्च हुआ संदीप?"

संदीप ने कहा, "यह बात अभी रहने दें चाचाजी—"

संदीप ने जब कोई जवाब नहीं दिया तो मल्लिक चाचा ने दुबारा पूछा, "सच-सच बताओ, भाभी रानी की मां की बीमारी में कितना रुपया खर्च हुआ?"

उस समय रात के लगभग तीन बज रहे थे। सभी जिस तरह शोक से मुरझाए हुए थे उसी तरह थकावट से चूर थे। मल्लिक चाचा बोले, "बताओ न संदीप, कितने रुपये खर्च हुए हैं, भाभी रानी सारा चुका देंगी। दादी मां ने तो शादी के समय यही वादा किया था।"

संदीप बोला, "अभी यह सब कहने की बात है चाचाजी? बाद में सारी बात बताऊंगा, मैं इतने जल्द नहीं जाऊंगा।"

"छि: छि:, ऐसा क्यों कह रहे हो? इस तरह की बात नहीं कहनी चाहिए। श्राद्ध-शान्ति में तुम्हें कुछ खर्च करना ही पड़ेगा—"

संदीप ने कहा, "श्राद्ध-शान्ति क्यों नहीं की जाएगी? लेकिन क्या करना होगा, चटर्जी बाबू से पूछकर जो भी बन पड़ेगा, कर लेने से काम चल जाएगा।"

मल्लिकजी ने भाभी रानी को पुकारा। बोले, "जो होने को था हो चुका है। श्राद्ध-शान्ति तो करनी ही है भाभी रानी। कौन करेगा?"

भाभी रानी बोली, "संदीप तो मां के लड़के जैसा ही था। संदीप ने ही तो आख़िर में मुखाग्नि दी है—"

"लेकिन खर्चा वगैरह—"

"जो भी खर्च होगा, हमीं देंगे।"

"मां के इतने दिनों के इलाज में भी तो खर्च हुआ है। वह भी तो देना है।"

"कितना दूं?"

"कैंसर के इलाज में मोटी रकम खर्च होती है। कम-से-कम दो-तीन लाख रुपये खर्च हुए होंगे।"

संदीप ने कहा, "उस खर्च का मैंने इन्तजाम कर लिया था।"

"किस तरह इन्तजाम किया था?"

"ऑफिस से मैंने लोन लिया था और अपना मकान पुन. चटर्जी बाबुओं के पास गिरवी रख दिया है—"

विशाखा ने कहा, "मैं घर जा रही हूं। वहां से तुम्हारा सारा रुपया भेज दूंगी।" कुल मिलाकर कितने रुपये भेज दूं।"

संदीप ने कहा, "नहीं, उसकी जरूरत नहीं पड़ेगी तुम्हारी मां थीं तो मेरी भी तो मौसीजी ही थीं। मौसीजी क्या किसी के लिए पराई होती हैं? किसी का बहन-बेटा क्या पराया होता है?"

मल्लिक चाचा वहीं खड़े थे। बोले, "लेकिन दादी मां के साथ-साथ मैंने भी वादा किया था कि भाभी रानी की मां की बीमारी का सारा खर्च हम्हीं देंगे—"

"क्यों दीजिएगा? उनकी विपदा के दिनों में आप लोगों को यह बात याद नहीं थी? उस समय मेरा वक्त किन तकलीफों में गुजरा है, उसकी खोज-खबर आप लोगों में से कोई नहीं लेता था। मेरी मां के पास सोने का एक जोड़ा बाला था, उन्हें भी मुझे डाक्टर के खर्च के लिए बेचना पड़ा है। उस समय तो आप लोगों ने खोज-खबर नहीं ली कि मौसीजी कैसी हैं।"

मल्लिकजी बोले, "हम लोगों के घर में उन दिनों दादी मां के कारण किन परेशानियों का दौर चल रहा था, इसका तुम्हें पता होता तो आज तुम यह बात नहीं कहते—"

संदीप बोला, "मुसीबत किसके घर में नहीं रहती! लेकिन ऐसा रहने पर भी मां की खोज-खबर लेना विशाखा के लिए उचित नहीं था?"

विशाखा बोली, "मेरे बारे में कह रहे हो? घर में एक ऐसी ददिया सास है जो मरने-मरने की हालत में है, उस पर उनका पोता जेल से पैरोल पर छुट्टी लेकर दादी मां को देखने आया था। कितनी झंझटों का ब्यौरा पेश करूं। उन बातों का तुमने तो पता लगाया नहीं। रुपया रहने से ही क्या तमाम मुसीबतों से छुटकारा मिल जाता है? तुम्हें रुपये-पैसे का अभाव है और मेरे पास रुपये-पैसों का प्राचुर्य। लेकिन वह प्राचुर्य कितना दुखदायक है, काश, तुम उसे जान पाते!"

संदीप ने कहा, "ज्यादा रुपया-पैसा रहने से वह सब बात शोभा देती है।"

विशाखा ने कहा, "इसलिए अपने पोजिशन से मेरे रुपये के प्राचुर्य का एक्सचेंज करना चाहते हो?"

संदीप ने कहा, "नहीं, यह सम्भव नहीं है और न ही यह दरकार है। मैं जिस स्थिति में हूं उसी स्थिति में रहना चाहता हूं। तुम्हारे रुपये के साथ तुम्हारे झमेले हमेशा बने रहें! मुझे आशीर्वाद दो कि मेरी स्थिति जैसी है वैसी ही रहे।"

विशाखा ने कहा, "मैं जो आज अमीर बनी हूं वह क्या अपनी इच्छा से?"

"अपनी इच्छा से नहीं तो और क्या?"

मल्लिकजी ने कहा, "जो कुछ हो चुका है उसके पीछे माथापच्ची क्यों कर रहे हो? चुप हो जाओ न संदीप।"

संदीप ने कहा, "आप मेरा ही दोष देख रहे हैं चाचाजी! विशाखा ने क्या सोचा है कि मैं गरीब हूं तो उसके सामने जाकर हाथ फैलाऊं। कहूंगा मुझे रुपये-पैसे की जरूरत है, रुपये दो। लेकिन मैं अपनी जिन्दगी में यह नहीं कर पाऊंगा। इसके चलते मुझे चाहे भूखों मरना पड़े या बीमारी से जर्जर ही क्यों न होना पड़े। मेरा ऐसा स्वभाव नहीं है।"

अचानक मल्लिकजी के ध्यान में आया कि बाहर सवेरे का उजास फैल गया है।

ी है। बोले, "लो भोर हो गई। अब उठिए भाभी रानी। बहुत ही देर हो ग हस का कोई ओर-अन्त नहीं होता। श्राद्ध के दिन फिर आएंगे।"

यह कहकर चले जा रहे थे। विशाखा उस समय भी संदीप की मां से लिपटकर थी। मां उसे सांत्वना दे रही थी। बोली, "अब रोकर क्या करोगी बेटी! वह सुख की शादी देखकर गई हैं।"

"मेरी क्या सुखद शादी है? मेरे पति जेल में हैं तो मुझे सुख है ही कहां!"

मां विशाखा की आंखें पल्लू से पोंछते हुए बोली, "तुम्हारा पति तो हमेशा जेल ीं रहेगा बेटी। किसी न किसी दिन छुटकारा मिलेगा ही—"

"बेहतर यही है उसके पहले मेरी मौत हो जाए मौसीजी।"

"ऐसी बात नहीं कहनी चाहिए बिटिया, उसने तुम्हारी मांग में सिंदूर भरी है। चाहे जैसा भी हो, है तो आखिर तुम्हारा पति ही।"

विशाखा ने कहा, "आपको सारी बात मालूम नहीं है मौसीजी। सबकुछ पता ता तो आप ऐसा आशीर्वाद नहीं देतीं।"

"ऐसी बात क्यों कह रही हो बिटिया, पति चाहे जैसा हो वह जन्म-जन्मांतर का पति होता है। वही तुम्हारा इहलोक-परलोक सबकुछ है। लिहाजा तुम्हारी मां भाग्यवती थीं। तुम्हें योग्य पात्र के हाथ में सौंपकर स्वर्ग सिधारी हैं। तुम्हारी मां की बस यही एक अभिलाषा थी। देख नहीं पाती थीं, लेकिन मुन्ना से सारा कुछ सुना है। मुन्ना ने तुम्हारी मां को सारा कुछ बताया था। कहा था, दोनों जने सुख से हैं। मां होने के नाते और क्या चाहिए! तुम्हारी मां ज़िन्दगी भर इसी की चाहना करती रहीं। जाने के वक्त भी मां यही जानकर गईं। सती-लक्ष्मी थीं तुम्हारी मां। इसीलिए विदा होने के वक्त उन्हें इतना सुख मिला। तुम इतना मत रोओ—"

विशाखा तब कलप-कलपकर रो रही थी। बोली, "लेकिन मां को यदि असली बात मालूम हो जाती तो मरने पर भी शायद उसे सुकून का अहसास नहीं होता—"

मां बोली, "पति तो मर्द होता है न बेटी, मर्द ज़रा नासमझ होता है। तुम लड़की होकर पैदा हुई हो, कुछ दिनों तक बरदाश्त करती रहो। बरदाश्त करने के अलावा औरतों के लिए कोई दूसरा उपाय नहीं है। मेरे बारे में ही सोचकर देखो। सारी ज़िन्दगी कितनी तकलीफ झेलती रही। कम ही उम्र में विधवा हो गई, उसके बाद लात-झाड़ू सह कर नौकरानी का काम करती रही। उसके बाद लड़के को नौकरी मिली तो थोड़ा-बहु सुख प्राप्त हो रहा है। तुम्हारे साथ ऐसी बात नहीं है बेटी, तुम तो भगवान की दया राजरानी बन गई हो। भले ही अभी पति पास में न हो, मगर किसी न किसी दिन हो ही जाएगा। उस समय की बात एकबार सोचकर देखो।"

विशाखा उस समय भी बिलख-बिलखकर रो रही थी। मां फिर से सांत्वन लगी। बोली, "बेटा-बेटी के पहले मां-बाप का मरना ही अच्छा रहता है। लड़का-ल के मरने के बाद यदि मां-बाप की मृत्यु होती है तो वह कितनी करुण स्थिति होती पर एक बार सोचो तो सही। कम से कम तुम्हारी मां जीवित अवस्था में यह तो दे कि बेटी की शादी बड़े आदमी के घर में हुई है, बेटी राजरानी बन गई है—"

उसके बाद पल्लू से पुनः विशाखा की आंखें पोंछकर बोली, "पूरी रात रोते बिता दी, अब मुंह में कुछ डालोगी बेटी?"

विशाखा ने कहा, "नहीं मौसी जी, अभी इस हालत में मैं मुंह में एक नहीं डालूंगी। हम चलते हैं। वहां ददिया सास घर में किस हालत में हैं, पता पर हो सकता है देखूं कि उनकी आंखें उलट गई हैं। मुझे क्या एक ही परेशानी मैं बगल में नहीं होती हूं तो वे छटपटाने लगती हैं—"

मल्लिक चाचा बगल में ही खड़े थे। सबकुछ सुनने के बाद बोले, "हां, चलना चाहिए। श्राद्ध के दिन फिर सभी को आना ही है। ज्यादा ठाट-बाट करने की जरूरत नहीं भाभीजी। मुख्तसर में निबटा लीजिएगा। यह तो गुप्त की विदाई नहीं है। जो चली गईं वे तो हंसती हुई चली गई।"

उसके बाद सदीप को अपने पास बुलाया।

बोले, "सदीप, तुम तो कुछ बोल नहीं रहे बेटा।"

संदीप शुरू से गंभीरता ओढ़े हुए था। बोला, "मैं क्या कहूं मल्लिक चाचा! मुझे इसी बात का दुख है कि इतनी कोशिश करने के बाद मैं मौसीजी को जिन्दा नहीं रख सका—"

मल्लिक चाचा बोले, "भगवान जिसे मारना चाहते हैं उसे तुम कैसे बचाओगे बेटा! कम से कम यह तो खुशी की बात है कि तुम्हारी मौसी जी असली खबर जानकर नही जा सकी। जान पाती तो उन्हें और अधिक कष्ट होता।"

सदीप ने कहा, "अस्पताल मे मौसीजी बीच-बीच मे बेटी-दामाद को देखना चाहती थी। लेकिन मैं झूठी बात कहकर उन्हें शात कर देता। कहता, वे दोनों अब जमकर सिनेमा-थियेटर देखते हैं।"

"मौसीजी यह सुनकर खुश होती। कहती : सो देखे बेटा, सिनेमा-थियेटर देखकर आनन्द मनाए। इसके बाद लड़के-बच्चे होंगे तो यह सब नही कर पाएँगे अभी उम्र है तो थोड़ा आराम कर ले—"

इस बीच बेडापोता मे वाकई चारो तरफ काफी धूप फैल गई है। मल्लिक चाचा ने ताकीद की, "अब देर नही होनी चाहिए भाभी रानी। घर पर एक मरीज को छोड़कर आया हूं। चलता हू, श्राद्ध के दिन आने की कोशिश करूगा।"

यह कहकर उठकर खड़े हो गए। जाने के पहले विशाखा एक बार और मौसीजी से लिपटकर रो दी। उसके बाद उन लोगो की गाडी कलकत्ता की तरफ रवाना हो गई। उसके जाने के बाद सदीप मा से बोला, "तो फिर मैं भी एक बार आफिस चलूं मा—"

मां बोली, "आज भी तू आफिस जाएगा?"

सदीप ने कहा, "बहुत दिनो से नही गया हू। एक बार कुछ देर के लिए घूम-फिर कर आता हूं। बहुत सारा काम बाकी पड़ा हुआ है—"

"तेरा शरीर इतना जुल्म बरदाश्त करेगा? कल रात भर सोया नही है। कम से कम एक दिन आराम कर ले। सभी तो ऐसा चाहते है—"

सदीप बोला, "नही मा, मैं चलता हूं, जल्द ही लौटकर चला आऊगा।"

क्रांति जब देश मे आती है तो बड़े ही चुपके से आती है। बाहर के आम लोग फुसफुसाहट सुनने पर भी सहसा उस पर यकीन नहीं करना चाहते। स्वाभाविक जीवन-यात्रा बाहर से स्वाभाविक रूप में ही चलती है। लोग-बाग निर्धारित समय पर ही दफ्तर-कचहरी जाते हैं। जिन्सो की कीमत मे भी कोई उतार-चढ़ाव नहीं आता। लोग सुबह के वक्त नियम से प्रात भ्रमण के लिए निकलते हैं, अनाज खरीदने के लिए बाजार जाते हैं। रोजमर्रा के काम-काज में कोई तब्दीली नही आती।

अचानक सबको अचम्भे मे डालकर खबर फैलती है कि राजा का सिर उतार लिया गया है। अचानक खबर फैल जाती है कि जेल का ताला तोड़कर सभी कैदियों को रिहा कर दिया गया है।

[illegible] थी। [illegible] भुला बैठे हैं। लेकिन जब
[illegible] की बात है। ज्यादातर लोग [illegible] कल्पना कर सकता है?
[illegible] की कोई कल्पना [illegible] नहीं। एका-
[illegible] ठीक इसी तरह की [illegible] मुखर्जी कंपनी में ताला-
[illegible] इन्दौर के [illegible] नाम आएगा ? घर में और
[illegible] मल्लिकजी के नाम के अलावा और किसके [illegible]
[illegible] पड़ेगा ? [illegible] मल्लिकजी ने गहराई से अनुभव किया।
[illegible] विपत्ति आकर गर्दन पर सवार हो गई है।
[illegible] कलकत्ता में जिन दिनों कंपनी पर तालाबंदी का प्रकोप हुआ था, मंझले बाबू
[illegible] थे। जो कुछ संभालना था, मझले बाबू ने अकेले ही संभाला था। यूनियनों
[illegible] कर्मचारियों को लाखों रुपये का दान देने पर उस समय राहत मिली थी।
उसी के फलस्वरूप कंपनी को इन्दौर ले आया गया था, इन्दौर में कलकत्ता की
यूनियनबाजी नहीं है। वहां फैक्टरी निर्विघ्न निश्चिन्तता के साथ चलती रहेगी।
तो फिर वहां भी यूनियन है! वहां भी गोपाल हाजरा का दल है! डी० ए० पी०
[illegible] कर आखिर हो गई है!

इन्दौर का पत्र मल्लिकजी ने बार-बार पढ़ा। लेकिन किसी नतीजे पर नहीं पहुंच सके। किससे सलाह-मशविरा करें इसका भी उपाय नहीं है। दादी मां बिस्तर पर पड़ी हुई हैं। वे अब ज्यादा दिनों तक ज़िन्दा नहीं रहेंगी। लिहाजा उनसे सलाह-मशविरा करना बेकार है। और हैं भाभी रानी।

भाभी रानी यह सब क्या समझेंगी! गरीबी में पली हैं। उस पर कई दिन पहले मातृ-वियोग का शोक बर्दाश्त करना पड़ा है। रोजमर्रा के कायदे के अनुसार दैनिक बाजार-खर्च का हिसाब भी नहीं ले रही हैं। उनके पास जाने पर कहती हैं, "आज रहने दीजिए, कल किया जाएगा—"

उसके बाद काम आने पर कहती हैं, "आज रहे, कल किया जाएगा—"

लेकिन संसार तो उसके लिए बैठा नहीं रहेगा। वह पाई-पाई वसूल कर अपना [illegible] कर ही लेगा। वहां हिसाब की गलती बर्दाश्त नहीं करेंगे मालिक।

दरअसल मल्लिक चाचा तो मालिक नहीं हैं। मल्लिक चाचा के भी मालिक हैं। दादी मां मालकिन हैं और साथ ही मुक्तिपद बाबू भी मालिक हैं। इस दुनिया में जितने आदमी हैं सभी के मालिक हैं। सभी को आप जिसे आय-व्यय का सारा हिसाब समझा देना पड़ता है वे ही सबके मालिक हैं। अब क्या होगा?

कई दिन बाद ही भाभी रानी की मां का श्राद्ध है बेहालाता में। वहां भाभी र[illegible] को ले जाना है। साथ में कुछ मिठाइयां और संदीप के लिए नई धोती ले जाना है। [illegible] लिए रुपया कौन देगा? इसके बाद इसके लिए रुपये कहां से आएंगे।

उस पर है संदीप का देना। भाभी रानी के कैंसर के इलाज का खर्च। वह तीन लाख रुपये से कम नहीं हो सकता है?

कंपनी में तालाबंदी होने के कारण यह सब खर्चा कैसे चलेगा।

मल्लिक चाचा को ही मानो यह सब सोचना-विचारना है। जब कि [illegible] चाचा इस घर के कौन होते हैं। वेतनभोगी कर्मचारी के अलावा कुछ भी नहीं [illegible]

यह बात भाभी रानी से कैसे कहेंगे, समस्या यही है।

एक बार सीढ़ियां चढ़ ऊपर गए। दादी मां के कमरे में उस समय भी [illegible]

चुपचाप बैठी थीं, मल्लिकजी पर निगाह पड़ने पर बाहर आईं। बोलीं, "मुझसे कुछ कहना है मल्लिकजी ? हिसाब तो मुखेरे ही समझ लिया है।"

मल्लिकजी क्या कहें, तय नहीं कर सके।

बोले, "दादी मां कैसी हैं, यही देखने एक बार आया।"

विशाखा ने कहा, "और कैसी रहेंगी, हालत पहले की तरह ही है। मेरा हाथ जोर से पकड़े हैं। कहती हैं, मैं इस घर को छोड़कर नहीं जाऊं—"

"डाक्टर बाबू आए थे ?"

"हां, वे जिस तरह नियमित रूप में आते हैं, उसी तरह आए थे।"

"क्या बताया ?"

"बस वही पुरानी बात। जीवित रहने की उम्मीद नहीं है। सिर्फ रुपया लेकर चले गए।"

"फिर डाक्टर को बुलाने से फायदा ही क्या ?"

विशाखा बोली, "कुछ हो, डाक्टर को तो बुलाना ही होगा। मझले बाबू ही सारी व्यवस्था करके गए हैं। कह गए हैं कि रुपये की खातिर इलाज में कोई लापरवाही नहीं होनी चाहिए।"

यह बात सुनने के बाद मल्लिकजी के लिए कहने को कुछ नहीं रह जाता है। लेकिन जो बात वे कहने आए थे, कहने की इच्छा रहने पर भी नहीं कह सके। कहने के समय जबान पर ताला बंद हो गया। इन्दौर की फैक्टरी की आमदनी से ही इस गृहस्थी की रेलगाड़ी चल रही है, यह सबको मालूम है। यहां तक कि मकान की नई ब्याही पौत्र-वधू को भी।

लेकिन उन्हें जताकर लाभ ही क्या होगा ? व्यर्थ ही विरक्त होगी नई बहू।

अब वे वहां खड़े नहीं रहे। खड़े रहने से यदि वह बात मुंह से निकल जाए तो फिर क्या होगा ?

वे जल्दी-जल्दी सीढ़ियां उतर अपने दफ्तर में चले आए। आने पर देखा, वहां तपेश गांगुली खड़ा है।

मल्लिकजी अपनी उस मानसिक स्थिति में तपेश गांगुली को देखकर खुश नहीं हुए।

पूछा, "क्या बात है, आप एकाएक आ धमके !"

तपेश गांगुली ने कहा, "एक खबर पहुंचाने चला आया—"

"कौन-सी खबर ? बिजली की शादी पक्की हो गई क्या ?"

तपेश गांगुली ने कहा, "अरे नहीं मैनेजर साहब, बिजली का भाग्य क्या विशाखा जैसा है ? बिजली के लिए पात्र कहां मिल रहा है ? आप कोई अता-पता दीजिए न, गरीब की लड़की का उद्धार हो जाएगा।"

उसके बाद अपनी व्यक्तिगत बातों की चर्चा को रोककर कहा, "आप लोग क्या चाहते हैं कि मैं पागल हो जाऊं ?"

मैनेजर बाबू बोले, "देखिए तपेश बाबू, हम अभी काफी मुसीबत के दौर से गुजर रहे हैं। अभी आपसे बातचीत करने की मानसिक स्थिति में नहीं हूं—"

"तो आप अभी मुझे चले जाने कह रहे हैं ?"

मल्लिकजी बोले, "आप जैसे भले आदमी से मैं यह कैसे

तपेश गांगुली ने कहा, "कहें तो मैं आपकी कोई मदद कर

मल्लिकजी बोले, "आप मदद नहीं कर सकिएगा। आप

"आप मुझे भगा रहे हैं ?"

मल्लिकजी बोले, "सभ्य भाषा में मैं आपको ऐसा कैसे कह सकता हूं ! इसीलिए मैं कह रहा हूं कि कृपया आप अभी चले जाएं। अभी सचमुच ही हम लोगों के घर में बेहद मुसीबत का दौर चल रहा है—"

"सुनूं तो सही किस तरह की मुसीबत है।"

मल्लिकजी बोले, "आपकी भतीजी विशाखा की मां का दो दिन पहले देहान्त हो गया है।"

"भाभी जी का देहांत हो गया ? कैसे देहांत हो गया ?"

"कैंसर से।"

"कैंसर से देहांत हो गया ? हाय, तब तो बड़ी तकलीफ झेलकर मरी हैं। डाक्टर के पीछे कितने रुपये खर्च हुए ?"

मल्लिकजी ने कहा, "यह बात संदीप ही बता सकता है।"

"वही संदीप जो नेशनल यूनियन बैंक के हावड़ा ब्रांच का मैनेजर है ?"

मल्लिकजी ने कहा, "हां।"

तर्पण गांगुली ने कहा, "उसके पास रुपये की कोई कमी नहीं है। रेल की नौकरी से बैंक की नौकरी की तनख्वाह कहीं अधिक है। कैंसर रोग दूर करने के लिए उन लोगों के पास बहुत रुपये हैं। लेकिन भाभीजी के कैंसर का खर्चा संदीप ने क्यों किया ? उसकी खुद की भी तो लड़की है जिसके पास बेशुमार रुपये हैं। बैंक में लाखों रुपये सड़ रहे हैं।"

उसके बाद जरा रुककर फिर बोला, "भाभीजी का श्राद्ध नहीं होगा ?"

मल्लिकजी ने कहा, "होना तो उचित है।"

"कहां होगा ? इस मकान में ?"

"इस मकान में क्यों होगा ? जिस मकान में देहांत हुआ है वहीं होगा।"

"श्राद्ध में क्या-क्या खिलाया जाएगा ?"

मल्लिकजी ने कहा, "यह बात संदीप जानता है। संदीप ने ही मुंह में आग दी है।"

"खाना-पीना चलेगा न ?"

"सो संदीप अपनी सामर्थ्य भर करेगा।"

"ब्राह्मण-भोजन ?"

अब मल्लिकजी को क्रोध आ गया। बोले, "आप यह सब बात मुझसे क्यों पूछ रहे हैं ? यह सब संदीप जानता है। उसकी जितनी सामर्थ्य होगी, करेगा। इलाज कराने में उसका ढेर सारा पैसा खर्च हो गया है। श्राद्ध कराने का खर्च वह कहां से लाएगा !"

तर्पण गांगुली ने कहा, "लेकिन कई दिनों तक ब्राह्मण-भोजन तो कराना ही होगा। इसे टालने से काम नहीं चलेगा। नियम का पालन न करने से काम नहीं चल सकता। चाहे जो हो आखिर हम हिन्दू ही तो हैं।"

मल्लिकजी बोले, "नियम का पालन करेगा या नहीं यह मैं कैसे बता सकता हूं ? मैं तो ब्राह्मण नहीं हूं।"

"श्राद्ध कहां होने की बात आपने कही ?"

मल्लिकजी बोले, "इस मकान में दादी मां सख्त बीमार हैं, इसी के चलते भाभी-रानी बहुत ही व्यस्त हैं। बेड़ापोता में ही होगा—"

तर्पण गांगुली ने कहा, "बेड़ापोता में हो तो भी मेरे लिए कोई असुविधा की बात नहीं है। मैं रेल की नौकरी करता हूं, मुझे टिकट नहीं कटाना पड़ेगा।"

"यदि आपको निमन्त्रित नहीं किया जाए ?"

"शुभ काम में निमन्त्रण की जरूरत ही क्या है ? खबर मिलते ही जाना चाहिए।

बिजली को भी ले जाऊंगा। रानी को भी ले जाऊंगा। दो वक्त का खाने का खर्च बच जाएगा।"

यों भी मल्लिकजी मन-ही-मन क्षुब्ध हो उठे थे, उस पर तपेश गागुली से फालतू बातों की चर्चा! यह आदमी जाए तभी राहत की सांस लेने का मौका मिले। लेकिन बातचीत के बीच अचानक बाधा पड़ गई।

एक अनजान वर्दीधारी आदमी आया। बोला, "मैं जेलखाने का मुलाजिम हूं। कैदी सौम्यपद मुखर्जी के पास से आ रहा हू, उन्होंने यह चिट्ठी भेजी है—"

मल्लिकजी ने चिट्ठी ले ली। देखा, चिट्ठी पर भाभी रानी का नाम लिखा हुआ है।

मल्लिकजी ने कहा, "यह चिट्ठी सौम्य बाबू की पत्नी के नाम भेजा गया है। मैं भाभी रानी को यह चिट्ठी देकर आता हू—"

उसके बाद आदमी से पूछा, "सौम्य बाबू जेलखाने मे कैसे है?"

आदमी बोला, "अच्छी हालत में नही है बाबूजी।"

"क्यो, अच्छी हालत मे क्यों नही है?"

आदमी बोला, "खाना अच्छा नही मिलता है तो ऐसे मे अच्छी हालत मे कैसे रहेगे?"

"खाना खराब मिलता है?"

"जेलखाने का खाना कभी अच्छा रहता है बाबूजी? मिलावट-ही-मिलावट रहती है। पानी मिला हुआ दूध, मोटे चावल का भात, घी मे मिलावट, पानी मिला हुआ दाल। उसके बाद कच्ची पावरोटी जिसमे मक्खन नदारद। जी को रुचे तो कैसे? जी को रुचे तभी तो सेहत अच्छी रहेगी। सौम्यपद बाबू तो बडे आदमी के घर के लड़के हैं। उस पर शराब पीने को नही मिल रही है—"

"शराब? जेलखाने मे शराब भी दी जाती है?"

"नही। लेकिन हा, पैसा देने से बाजार से छिपाकर शराब मगा दी जाती है। शराब न पीने के कारण बहुत ही दुबले हो गए हैं। आप सौम्य बाबू की घरवाली को यह चिट्ठी दे आएं।"

मल्लिकजी अब खडे नही रहे। सीधे ऊपर चले गए।

भाभी रानी दादी मा के पास बैठी थी। दोनों नर्स भी कमरे के अन्दर थी।

मल्लिकजी पर नजर पडते ही भाभीरानी बाहर आई। बोली, "कुछ कहना है?"

मल्लिकजी बोले, "जेलखाने से आदमी आया है। सौम्य बाबू ने उसके हाथ से एक पत्र भेजा है।"

भाभी रानी ने पत्र पढा। पूछा, "आपने पत्र पढा है?"

मल्लिकजी ने कहा, "नही, आपका पत्र मैं कैसे पढू?"

"यह लीजिए, पढ़िए।"

यह कहकर मल्लिकजी को पत्र पढ़ने को दिया। पत्र मे यो कोई खास बात नही थी। सिर्फ लिखा हुआ था: "यहा मेरे पास रुपये की बहुत कमी है। इस आदमी के हाथ फिलहाल सत्तर हजार रुपये भेज दो। *मैं ठीक हालत में नही हू। खाने-पीने की असुविधा* हो रही है। बहुत दिनो से स्कॉच व्हिस्की पीने को नही मिल रही है। यह आदमी मेरा बड़ा ही विश्वासी है। इति—"

पढना खत्म होने के बाद भाभी रानी ने पूछा, "आप क्या सोच रहे हैं?"

मल्लिकजी सोचेंगे ही क्या! अपनी कोई राय जाहिर नही की।

भाभी रानी बोली, "रुपये भेज दूं क्या? आपका क्या कहना है?"

मल्लिकजी बोले, "जो रुपये के मालिक हैं उन्होंने जबकि खुद ही रुपये की मांग की है तो इस सम्बन्ध में हम क्या कह सकते हैं!"

"तो फिर भेज दूं?"

मल्लिकजी बोले, "लेकिन एक बात है। आपसे नहीं कही थी।"

"कौन-सी बात? कहिए न।"

मल्लिकजी ने कहा, "इन्दौर से आज सवेरे मंझले बाबू ने अचानक मुझे टेलीग्राम भेजा है।"

"टेलिग्राम? आपको? आपने तो मुझे कुछ बताया नहीं।"

मल्लिकजी बोले, "टेलिग्राम मिलते ही आपके पास कहने के लिए आया था। उस समय आप दादी मां का सिर सहला रही थीं। इसलिए बोलना चाहकर भी बोल नहीं सका।"

"खबर क्या है?"

"खबर बहुत ही बुरी है। उस समय वह बुरी खबर कहने में मुझे दुविधा महसूस हुई थी।"

विशाखा ने कहा, "वैसी कौन-सी खबर है जिसे सुनकर मेरे दिल में ठेस पहुंचेगी?"

"यही उस दिन आपकी मां के देहान्त की खबर मिली, उसके बाद ही यह बुरी खबर सुनाऊं, इसीलिए..."

विशाखा खबर सुनने को और अधिक उत्कण्ठित हो गई, "जल्दी कहिए—संदीप की कोई बुरी खबर है क्या? संदीप बीमार है क्या? फिलहाल मैंने स्वयं को तमाम बुरी खबरों के लिए तैयार कर लिया है। अपने बारे में अब मैं कोई उम्मीद नहीं रखती। बताइए, मेरी तकदीर में और कितनी तकलीफें हैं..."

मल्लिकजी ने कहा, "मंझले बाबू ने सूचित किया है कि उनकी इन्दौर की फैक्टरी में लॉक-आउट चल रहा है—कब खुलेगी उसकी कोई उम्मीद नहीं।"

यह खबर सुनकर विशाखा स्तंभित हो गई। कुछ देर तक उसके मुंह से एक भी शब्द नहीं निकला। सिर्फ इतना ही कहा, "दुबारा ऐसी हालत!"

"हां, मंझले बाबू ने तार भेजा है। वहां सारा काम ठप्प पड़ गया है।"

विशाखा बोली, "तो फिर क्या उसी तरह की हालत होगी। तमाम लोगों की नौकरी चली जाएगी?"

"लगता तो यही है।"

"फिर यह गृहस्थी कैसे चलेगी?"

मल्लिकजी के मुंह से इसका कोई जवाब नहीं निकला। सिर्फ क्या इस गृहस्थी का खर्च, दादी मां की दीर्घस्थायी चिकित्सा के खर्च का जुगाड़ कौन करेगा? इस घर के नौकरों-नौकरानियों के इस दल के वेतन में क्या कोई कम खर्च होता है?

उसके बाद मल्लिकजी हैं। मल्लिकजी भले ही अपना वेतन न लें, मगर कपड़ा-लत्ता, खाने-पीने का खर्च? यह सब कहां से आएगा?

कुछ देर तक किसी के मुंह से कोई शब्द नहीं निकला। इतने दौलतमंद देखकर उसकी मां ने उसकी इस घर में शादी की थी। अन्ततः क्या उसकी यह परिणिति है? मां जिन्दा होती तो वह उससे यह सब बात पूछती। कहती—इतने बड़े आदमी के घर में ब्याहने का मां को लोभ क्यों हुआ था? अब क्या हुआ? अभी मां क्या जवाब देती?

"जलखाने का आदमी क्या अब भी नीचे खड़ा है?"

"हां।" मल्लिकजी ने कहा।

विशाखा ने पूछा, "यह सत्तर हजार रुपये की रकम क्या अभी ही देनी है ?"

"हां।"

विशाखा बोली, "आप जाकर कह दीजिए कि वह रकम मैं कल खुद जाकर अपने हाथ से दे आऊंगी। आज मेरे पास नकद रुपये नहीं हैं—"

मल्लिकजी बोले, "नकद रुपये नहीं हैं, इस बात पर वह आदमी यकीन करेगा ?"

"आप एक बार कहकर देखिए न। देखिए, क्या कहता है।"

मल्लिकजी बोले, "जेलखाने के आदमी बहुत बदमाश होते हैं। मेरी बात वह मानेगा ? रुपया न मिलने पर यदि सौम्यपद बाबू को जेल में बहुत तकलीफ दे, कठिन परिश्रम कराए तो ?"

विशाखा बोली, "आप एक बार कहकर देखिए न—"

मल्लिकजी बोले, "आप औरत हैं, हो सकता है आपकी बात मान ले—"

विशाखा बोली, "अच्छा, ठीक है। आप उसे यहां बुला लाइए—"

मल्लिकजी बोले, "यही करता हूं—"

और वे नीचे चले गए। उसके बाद यमदूत जैसे चेहरे वाले आदमी को ऊपर ले आए। विशाखा सीढ़ी के पास इन्तजार कर रही थी। उस आदमी का चेहरा देखते ही विशाखा चौंक पड़ी। बोली, "तुम यह चिट्ठी लेकर आए हो ?"

आदमी बोला, "हां मेमसाहब, मैं ही साहब की देखभाल करता हूं।"

"तुम्हारे साहब कैसे हैं ?"

"उनकी तबीयत बहुत खराब है। शराब पीने को नहीं मिल रही है इसलिए उन्हें बहुत ही तकलीफ का अहसास होता है। जेलखाने में शराब देने का कानून नहीं है। इसलिए जो लोग शराब पीते हैं वे घर से रुपये मंगाकर शराब पीते हैं।"

विशाखा ने पूछा, "सभी लोग शराब पीते हैं ?"

आदमी बोला, "जो लोग रईस हैं वे शराब पीते हैं। अब चूंकि शराब के रुपये खत्म हो गए हैं इसलिए आपके पास रुपया लाने को भेजा है।"

विशाखा बोली, "तुम शराब पीने को मना नहीं कर सकते ?"

आदमी बोला, "साहब बात मानने को तैयार नहीं होते।"

विशाखा बोली, "तो फिर मैं जाऊंगी, साहब को समझाऊंगी-बुझाऊंगी। साहब मेरी सुनेंगे। मैं जाऊंगी।"

"आपको जेलर साहब जेलखाने के अन्दर नहीं जाने देंगे।"

विशाखा बोली, "पहले से अगर दरख्वास्त करूं तो मुलाकात नहीं करने देंगे ?"

आदमी बोला, "नहीं। और अगर मुलाकात करने भी देंगे तो साथ में कुछ ले जाने नहीं देंगे। जेल का खाना साहब को रुचता नहीं है। साहब के नशे की कोई चीज ले जाने नहीं देंगे। जेल का सड़ा हुआ भात और पानी मिली दाल खाने देंगे। वह क्या साहब के गले के नीचे उतरेगा ?"

उसके बाद वह आदमी बोला, "इसके अलावा मैं तमाम कैदियों के घर से रुपये ले आता हूं। सभी रुपये देते हैं।"

विशाखा कुछ देर तक सोचती रही। उसके बाद बोली, "साहब सकुशल हैं न ?"

आदमी बोला, "सकुशल कैसे रहेंगे ? हाथ का सारा पैसा खर्च हो गया है। आप रुपया दीजिएगा तो और कुछ महीने तक काम चलेगा। उसके बाद फिर हाथ खाली हो जाएगा। एक ही बोतल की कीमत है ढाई सौ रुपये। उसके बाद घूस है।"

"घूस कौन लेगा ?"

आदमी बोला, "घूस सभी लेते हैं। घूस न देने पर साहब को खाना नहीं मिलेगा और उनकी सेहत बिगड़ जाएगी।"

बात तर्कसंगत है। जो आदमी घर पर इतने आराम से रहता था, रात में घर से निकल क्लब जाता और रात के आखिरी पहर में वापस आता था, वह दिन-भर जेल-खाने में पड़ा रहेगा तो सेहत बिगड़ना स्वाभाविक है।

"सत्तर हज़ार अभी तुरन्त देना है ?"

"साहब ने चिट्ठी में तो यही लिखा ।"

विशाखा ने कहा, "अभी तो हमारा बहुत ही बुरा वक्त चल रहा है। साहब से कहना, हम लोगों की इन्दौर की फैक्टरी में तालाबन्दी चल रही है। अभी आमदनी बन्द है। इतने सारे रुपये एक साथ कैसे दूं ? साहब को ज़रा समझा-बुझाकर नहीं कह सकते ? उसके बाद कहना, घर की मालकिन मरने-मरने की हालत में हैं। अब मरें कि तब मरें। तुम साहब से जाकर सबकुछ कहना। अभी हम लोगों को रुपये की बड़ी ही तंगी है। इतने सारे रुपये अभी नहीं दे पाऊंगी।"

"कितने दे सकिएगा ?"

विशाखा बोली, "अभी किसी तरह पचास हज़ार रुपये दे रही हूं। उसके बाद मंझले मालिक इन्दौर से आएंगे तो उनसे बातचीत करने के बाद जो कुछ बन पड़ेगा, दूंगी—"

आदमी बोला, "लेकिन यह सुनकर साहब बहुत बिगड़ेंगे। बड़े ही गुस्सैल आदमी हैं, यह तो आप जानती ही होंगी।"

उसके बाद बोला, "साहब को शराब नहीं मिलती है तो मारपीट करने लगते हैं। एक दिन शराब खत्म हो गई थी और मुझे इसकी जानकारी नहीं थी। शराब न मिल पाने के कारण मेरी जमकर पिटाई की थी। यह देखिए, मेरा दाहिना हाथ टूट गया है। आखिर में डाक्टर को दिखाकर दवा खानी पड़ी थी।"

विशाखा बोली, "तुम जेलर साहब को बता सकते थे।"

"बाप रे ! जेलर साहब को बता दूं तो वे कैदी की भरपूर पिटाई करेंगे। तीन दिन तक खाने को कुछ नहीं देंगे। उस समय मैं छुपाकर बाज़ार से खाना ला देता हूं और तभी साहब खाना खा पाते हैं। साहब बड़े ही भले मानस हैं। लेकिन बस एक ही खोट है और वह यह कि शराब का नशा छोड़ नहीं पाते हैं—"

विशाखा ने कहा, "तुम्हें देर कराना ठीक नहीं रहेगा। मेरे पास ज्यादा रुपया नहीं है। मैं तुम्हें पचास हज़ार रुपये देती हूं। कुछ दिनों तक इसी रकम से काम चला लो, बाद में देखूंगी। तुम मेरी हालत साहब को समझाकर कहो।"

यह कहकर आलमारी खोली और रुपया निकाल उस आदमी को दिया। आदमी रुपयों को गिनकर जाने लगा। विशाखा ने कहा, "तुमने अपना नाम नहीं बताया ?"

"मुझे हमीद कहते हैं।"

बेड़ापोता स्टेशन में अभी कुल मिलाकर तीसरा पहर उतरा है। तपेश गांगुली के साथ रानी और बिजली हैं। अनजानी जगह ट्रेन से उतरने पर एक मिठाई की दुकान मिलती है। तपेश गांगुली ने वहां जाकर पूछा, "यह संदीप लाहिड़ी का घर कहां है ?"

दुकानदार बोला, "पच्छिम की तरफ सीधे चले जाइए। आधा मील जाने के बाद एक गली मिलेगी। वहीं संदीप लाहिड़ी का मकान है। वहां तो आज संदीप की मौसीजी

का श्राद्ध है।"

"श्राद्ध या स्वजाति का भोज ?"

"श्राद्ध हो चुका है। आज स्वजाति का भोज है। मेरी दुकान से मिठाई गई है।"

तपेश गागुली ने पूछा, "कौन-कौन-सी मिठाइयां गई है ?"

आदमी बोला, "गुलाबजामुन, राजभोग, पनतुआ और दही-रबड़ी—"

"वाह फिर तो सदीप ने बहुत तरह का आयोजन किया है। मांस-मछली भी पका है ?"

दुकानदार ने कहा, "उसका भी भरपूर आयोजन किया है संदीप ने। मुर्गी, बकरे का मास, चॉप कटलेट···"

अब तपेश गागुली रुका नही। रानी को तकाजा किया। बोला, "चलो, जल्दी-जल्दी चलो, सारा खाना खत्म हो जाएगा। लम्बा डग भरो। बड़े आदमी के घर का न्योता है, बहुत सारे लोगो को निमत्रित किया है।"

रानी बोली, "हम लोगो को तो निमंत्रित नही किया है। कही संदीप पहचान नही सके तो !"

तपेश गागुली बोला, "कोई मजाक की बात है भला ! मेरी अपनी भाभी का श्राद्ध है, मुझे भोज खाने का हक है। हम अपने आदमी हैं। हमे अगर जाने न दिया तो मुकदमा ठोक दूगा। देखू, कैसे भगाता है। इतना खर्च करके आ रहा हूं। चलो-चलो, लम्बे-लम्बे डग भरते हुए चलो। आखिर में सारा खाना खत्म हो जाएगा।"

"संदीप बाबू हैं, सदीप बाबू ?"

यह आदमी बहुत बार आ चुका है सदीप के पास। जब इस आदमी को रुपये की जरूरत पडती थी तो सदीप के पास ही आता था। बीच मे कई बरसो तक उसे रुपये की जरूरत नही पडी थी। इस तरह का सिर्फ एक ही आदमी नही है। रुपया मागने वाले और भी बहुत सारे आदमी सदीप के जीवन मे आए हैं।

मा कहती, "यह आदमी तेरे पास क्यो आया है रे ?"

सदीप कहता, "रुपया मागने।"

"तूने रुपया दिया ?"

सदीप कहता, "क्या कहू, यह आदमी बडा ही जरूरतमद है। पाच रुपया दे दिया।"

"इस महीने तू खर्च कैसे चलाएगा ? पास मे तो अब रुपया नही है।"

सदीप कहता, "जरा कष्ट से चला लो, और कई दिन बाद ही तो नया-महीना आने वाला है। उस समय नए महीने का वेतन हाथ मे आ जाएगा।"

मा कहती, "मुसीबत की घड़ी के लिए कुछ रुपये-पैसे जमा करके रखना चाहिए। उस समय तो किसी के सामने हाथ फैला नही सकेगा। तू इतना शर्मीला है—"

आदमी इस दुनिया मे स्वर्ग का निर्माण करना चाहते हैं। इसलिए वे अपना सारा कुछ देकर मदिर-मसजिद और गिरिजा का निर्माण करते हैं। सोचते हैं, यह सब ही स्वर्ग है। इसलिए वह कष्ट उठाकर पहाड पर चढ़ता है मदिर में प्रणाम करने के लिए, मदिर के देवता की पूजा करने के लिए।

लेकिन स्वर्ग कही नही है। उन्होंने कहा है: "तुम लोगो को अपने अतर मे ही स्वर्ग बनाना होगा। मनुष्य के ससार मे ही उन्हें आना होगा। तभी यह ससार स्वर्ग मे परिणत हो जाएगा।" यह सुनकर मा कहती, "तो फिर आदमी तीर्थ करने इतना पैसा

जाने कर पुरी-वृन्दावन-मथुरा क्यों जाते हैं ?"

संदीप कहता, "गलती करते हैं।"

मां को अपने बेटे की बात पर यकीन नहीं होता न ही वह इस तरह की बात पसंद करती।

वह आदमी जानता था कि संसार में जिसके पास रुपया मांगने से कुछ न कुछ मिल सकता है वह है बेड़ापोता का संदीप। इसलिए जरूरत के वक्त उसी के पास आता।

यही वजह है कि उस दिन संदीप की तलाश में बहुत दूर से आया है। इसीलिए बाहर से पुकार रहा था, "संदीप बाबू हैं ? संदीप बाबू—"

मुहल्ले के कुछ युवकों की निगाह पड़ते ही कहा, "किसको पुकार रहे हैं, संदीप को ?"

आदमी ने कहा, "हां।"

"वे यहां नहीं हैं।"

"वे नहीं हैं तो उसकी विधवा मां तो हैं।"

युवकों ने कहा, "संदीप की मां भी नहीं हैं, मां की मृत्यु हो चुकी है। मां के मरते ही संदीप-दा घर छोड़कर कलकत्ता चले गए हैं।"

"कलकत्ता चले गए हैं ?"

"उनके बैंक में जाइए। वे कलकत्ता के बैंक में नौकरी करते हैं। नेशनल यूनियन बैंक के बाग बाजार ब्रांच के मैनेजर हैं।

"घर का पता क्या है ?"

युवकों ने कहा, "नेबूबागान लेन। पांच नंबर।"

वह आदमी अब रुका नहीं। इन कई बरसों के दौरान कितना बदलाव आ गया है ! संदीप बराबर बेड़ापोता से डेली पैसेंजरी करता था। अब क्योंकि मां नहीं है इसलिए बेड़ापोता का मकान छोड़ कलकत्ता का निवासी हो गया है। शायद शादी भी कर चुका है।

आदमी अब रुका नहीं। सवेरे कलकत्ता जाने वाली एक ट्रेन है। उससे जाने से टिफिन के पहले पहुंच जाएगा।

लेकिन बेड़ापोता से बाग बाजार के नेबूबागान जाने में कम वक्त नहीं लगता। आदमी जब पता पूछते-पूछते नेबूबागान लेन पहुंचा तो पता खोजना ही मुश्किल हो गया। गलियों की भरमार है। अन्ततः मुहल्ले के लोगों की मदद से जब ठिकाने पर पहुंचा तो तीसरा पहर बीत चुका था। बाहर किसी की गाड़ी खड़ी थी। देखकर लगा कि किसी बड़े आदमी की गाड़ी है। सामने की सीट पर ड्राइवर बैठा हुआ था। आदमी ने उसी से पूछा, "यही है भई पांच नंबर नेबूबागान लेन ?"

ड्राइवर ने कहा, "हां, आप कुंडी खटखटाइए—"

आदमी कुंडी खटखटाने लगा, "संदीप बाबू घर में हैं ? संदीप बाबू ?"

अंदर से किसी ने औरताना स्वर में पूछा, "कौन ?"

संदीप की मां तो मर चुकी है। फिर यह औरताना आवाज किसकी है ?

"मैं संतोष हूं।"

फौरन दरवाजे के पल्ले खुल गए। जिस महिला ने दरवाजा खोल दिया उसे देखकर संतोष अवाक् हो गया। बिलकुल अनपहचाना चेहरा। महिला संतोष को पहचान नहीं सकी। पूछा, "आप किसे खोज रहे हैं ?"

"मैं संदीप लाहिड़ीजी से मिलना चाहता हूं।"

महिला बोली, "संदीप लाहिड़ी अभी बीमार हैं। वे अभी मिल नहीं सकेंगे। बाद

में आएगा—"

संतोष ने कहा, "आप कृपया उनसे एक बार कहें कि संतोष आया है। मैं बहुत उम्मीद के साथ काफी खर्च करके आया हूं। एक बार मिलकर दो-चार बातें करूंगा और चला जाऊंगा—"

अंदर से संदीप के गले की आवाज़ आई, "कौन? संतोष है? आओ-आओ, मेरी तबीयत कई दिनों से ठीक नहीं है। विशाखा, उसे अन्दर आने दो, वह मेरा जाना-पहचाना आदमी है।"

विशाखा ने कहा, "लेकिन डाक्टर साहब ने तो तुम्हें चुपचाप लेटे रहने को कहा है—"

संदीप ने कहा, "सो कहने दो, संतोष मेरा जाना-पहचाना आदमी है। उसे रुपये की ज़रूरत पड़ी है इसीलिए आया है। दरवाजा खोल दो और उसे आने दो।"

संतोष ने अंदर आकर संदीप के चरणों का स्पर्श किया।

संदीप ने पूछा, "तुम्हारे घर का क्या हालचाल है?"

संतोष ने कहा, "हालचाल ठीक नहीं है—छोटे लड़के को टायफाइड हो गया है—"

"तुम्हें कितने रुपये की ज़रूरत है?"

संतोष ने कहा, "पचीसेक रुपया होने से ही काम चल जाएगा।"

"और ट्रेन का किराया? तुम्हें तो ट्रेन से ही घर वापस जाना है?"

"हां, सो तो है ही।"

"तो फिर पचीस रुपये में क्या होगा? पचास रुपये से कम में काम नहीं चलेगा। विशाखा, मेरी जेब में पचास रुपये निकालकर संतोष को दे दो—"

विशाखा अब करे ही क्या! बोली, "पचास रुपये देने से पॉकेट में क्या बचा रहेगा?"

संदीप ने लेटे-लेटे कहा, "सो जो होगा, देखा जाएगा। अभी संतोष का लड़का तो स्वस्थ हो जाए। और कई दिन बाद ही मुझे तनख्वाह मिल जाएगी लेकिन संतोष नौकरी नहीं करता है। पहले उसकी ज़रूरत देखनी है—"

विशाखा ने संदीप की कमीज की जेब से पचास रुपये निकालकर संतोष को दिए। रुपया पाकर संतोष ने पुन: संदीप के चरणों का स्पर्श कर उसे प्रणाम किया। संदीप बोला, "इसके बाद लड़के को ज़रा अच्छा खाना खाने को देना। और पानी उबालकर पिलाना। यह देखो, कलकत्ता में रहने के बावजूद पानी उबालकर पीता हूं। क्यों उबालता हूं? क्योंकि मेरा कोई नहीं है। मैं किसी के सामने जाकर हाथ फैलाऊं वैसा कोई संदीप इस दुनिया में नहीं है। मेरे बारे में सोचने वाला कोई नहीं है। एक मां ही थीं अपनी, सो वह भी अचानक चल बसीं।"

संतोष को तब रुपया मिल चुका था। वह अब रुका नहीं, चला गया। विशाखा ने कहा, "इस तरह रुपया बांटते रहोगे तो तुम्हारा काम कैसे चलेगा संदीप? एकमात्र नौकरी ही तो तुम्हारा भरोसा है—"

संदीप ने कहा, "मेरे अकेले का पेट किसी तरह भर जाएगा—"

"मगर इस तरह की बीमारी होने से नौकर तुम्हारी देखरेख कैसे करेगा?"

संदीप ने कहा, "मेरे जीवन का मूल्य ही क्या है? मरना या जीना एक जैसा है—"

"ऐसी बात मत बोलो। जीवन उतना सस्ता नहीं होता।"

संदीप ने कहा, "मेरा जीवन सस्ता है। मेरे जीवन का किसी की निगाह में कोई

खर्च कर पुरी-वृन्दावन-मथुरा क्यों जाते हैं ?"

संदीप कहता, "गलती करते हैं।"

मां को अपने बेटे की बात पर यकीन नहीं होता न ही वह इस तरह की बात पसंद करती।

वह आदमी जानता था कि संसार में जिसके पास रुपया मांगने से कुछ न कुछ मिल सकता है वह है बेड़ापोता का संदीप। इसलिए जरूरत के वक्त उसी के पास आता।

यही वजह है कि उस दिन संदीप की तलाश में बहुत दूर से आया है। इसीलिए बाहर से पुकार रहा था, "संदीप बाबू हैं ? संदीप बाबू—"

मुहल्ले के कुछ युवकों की निगाह पड़ते ही कहा, "किसको पुकार रहे हैं, संदीप को ?"

आदमी ने कहा, "हां।"

"वे यहां नहीं हैं।"

"वे नहीं हैं तो उसकी विधवा मां तो हैं।"

युवकों ने कहा, "संदीप की मां भी नहीं हैं, मां की मृत्यु हो चुकी है ! मां के मरते ही संदीप-दा घर छोड़कर कलकत्ता चले गए हैं।"

"कलकत्ता चले गए हैं ?"

"उनके बैंक में जाइए। वे कलकत्ता के बैंक में नौकरी करते हैं। नेशनल यूनियन बैंक के श्याम बाजार ब्रांच के मैनेजर हैं।

"घर का पता क्या है ?"

युवकों ने कहा, "नेबूबागान लेन। पांच नंबर।"

वह आदमी अब रुका नहीं। इन कई बरसों के दौरान कितना बदलाव आ गया है ! संदीप बराबर बेड़ापोता से डेली पैसेंजरी करता था। अब क्योंकि मां नहीं है इसलिए बेड़ापोता का मकान छोड़ कलकत्ता का निवासी हो गया है। शायद शादी भी कर चुका है।

आदमी अब रुका नहीं। सवेरे कलकत्ता जाने वाली एक ट्रेन है। उससे जाने से टिफिन के पहले पहुंच जाएगा।

लेकिन बेड़ापोता से बाग बाजार के नेबूबागान जाने में कम वक्त नहीं लगता। आदमी जब पता पूछते-पूछते नेबूबागान लेन पहुंचा तो पता खोजना ही मुश्किल हो गया। गलियों की भरमार है। अन्ततः मुहल्ले के लोगों की मदद से जब ठिकाने पर पहुंचा तो तीसरा पहर बीत चुका था। बाहर किसी की गाड़ी खड़ी थी। देखकर लगा कि किसी बड़े आदमी की गाड़ी है। सामने की सीट पर ड्राइवर बैठा हुआ था। आदमी ने उसी से पूछा, "यही है भई पांच नंबर नेबूबागान लेन ?"

ड्राइवर ने कहा, "हां, आप कुंडी खटखटाइए—"

आदमी कुंडी खटखटाने लगा, "संदीप बाबू घर में हैं ? संदीप बाबू ?"

अंदर से किसी ने औरताना स्वर में पूछा, "कौन ?"

संदीप की मां तो मर चुकी है। फिर यह औरताना आवाज़ किसकी है ?

"मैं संतोष हूं।"

फौरन दरवाज़े के पल्ले खुल गए। जिस महिला ने दरवाज़ा खोल दिया उसे देखकर संतोष अवाक् हो गया। बिलकुल अनपहचाना चेहरा। महिला संतोष को पहचान नहीं सकी। पूछा, "आप किसे खोज रहे हैं ?"

"मैं संदीप लाहिड़ीजी से मिलना चाहता हूं।"

महिला बोली, "संदीप लाहिड़ी अभी बीमार हैं। वे अभी मिल नहीं सकेंगे। बाद

में आइएगा—"

संतोष ने कहा, "आप कृपया उनसे एक बार कहें कि संतोष आया है। मैं बहुत उम्मीद के साथ काफी खर्च करके आया हूं। एक बार मिलकर दो-चार बातें करूंगा और चला जाऊंगा—"

अंदर से संदीप के गले की आवाज़ आई, "कौन? संतोष है? आओ-आओ, मेरी तबीयत कई दिनों से ठीक नहीं है। विशाखा, उसे अन्दर आने दो, वह मेरा जाना-पहचाना आदमी है।"

विशाखा ने कहा, "लेकिन डाक्टर साहब ने तो तुम्हें चुपचाप लेटे रहने को कहा है—"

संदीप ने कहा, "सो कहने दो, संतोष मेरा जाना-पहचाना आदमी है। उसे रुपये की ज़रूरत पड़ी है इसीलिए आया है। दरवाजा खोल दो और उसे आने दो।"

संतोष ने अंदर आकर संदीप के चरणों का स्पर्श किया।

संदीप ने पूछा, "तुम्हारे घर का क्या हालचाल है?"

संतोष ने कहा, "हालचाल ठीक नहीं है—छोटे लड़के को टायफाइड हो गया है—"

"तुम्हें कितने रुपये की ज़रूरत है?"

संतोष ने कहा, "पचीसेक रुपया होने से ही काम चल जाएगा।"

"और ट्रेन का किराया? तुम्हें तो ट्रेन से ही घर वापस जाना है?"

"हां, सो तो है ही।"

"तो फिर पचीस रुपये से क्या होगा? पचास रुपये से कम में काम नहीं चलेगा। विशाखा, मेरी जेब से पचास रुपये निकालकर संतोष को दे दो—"

विशाखा अब करे ही क्या! बोली, "पचास रुपये देने से पॉकेट में क्या बचा रहेगा?"

संदीप ने लेटे-लेटे कहा, "सो जो होगा, देखा जाएगा। अभी संतोष का लड़का तो स्वस्थ हो जाए। और कई दिन बाद ही मुझे तनख्वाह मिल जाएगी लेकिन संतोष नौकरी नहीं करता है। पहले उसकी ज़रूरत देखनी है—"

विशाखा ने संदीप की कमीज की जेब से पचास रुपये निकालकर संतोष को दिए। रुपया पाकर संतोष ने पुनः संदीप के चरणों का स्पर्श कर उसे प्रणाम किया। संदीप बोला, "इसके बाद लड़के को ज़रा अच्छा खाना खाने को देना। और पानी उबालकर पिलाना। यह देखो, कलकत्ता में रहने के बावजूद पानी उबालकर पीता हूं। क्यों उबालता हूं? क्योंकि मेरा कोई नहीं है। मैं किसी के सामने जाकर हाथ फैलाऊं वैसा कोई संदीप इस दुनिया में नहीं है। मेरे बारे में सोचने वाला कोई नहीं है। एक मां ही थी अपनी, सो वह भी अचानक चल बसी।"

संतोष को तब रुपया मिल चुका था। वह अब रुका नहीं, चला गया। विशाखा ने कहा, "इस तरह रुपया बांटते रहोगे तो तुम्हारा काम कैसे चलेगा संदीप? एकमात्र नौकरी ही तो तुम्हारा भरोसा है—"

संदीप ने कहा, "मेरे अकेले का पेट किसी तरह भर जाएगा—"

"मगर इस तरह की बीमारी होने से नौकर तुम्हारी देखरेख कैसे करेगा?"

संदीप ने कहा, "मेरे जीवन का मूल्य ही क्या है? मरना या जीना एक जैसा है—"

"ऐसी बात मत बोलो। जीवन उतना सस्ता नहीं होता।"

संदीप ने कहा, "मेरा जीवन सस्ता है। मेरे जीवन का किसी की निगाह में कोई

कीमत नहीं है। मैं चला जाऊंगा तो एक किसी दूसरे आदमी को बैंक में नौकरी मिल जाएगी—"

"लेकिन वह क्या तुम्हारे जैसा होगा ?"

संदीप ने कहा, "दुनिया में क्या कोई किसी की तरह होता है ?"

"यही देखो, कहां का कौन संतोष, जिसका छोटा लड़का बीमार है और वह कहां कितनी दूर से आकर तुमसे पचास रुपया कर्ज़ लेकर चला गया। कर्ज़ क्या वह चुका सकेगा ?"

संदीप ने कहा, "कोई क्या किसी का कर्ज़ चुका पाता है ?"

"कोई भी नहीं चुकाता ?"

संदीप ने कहा, "तुम्हीं ने क्या चुकाया है ?"

विशाखा ने कहा, " मैंने तुमसे कब कौन-सा कर्ज़ लिया है ? '

"यह तुम सोचकर देखो ।"

विशाखा ने कहा, "आठ-दस साल पहले की बात क्या याद रहती है ?"

संदीप ने कहा, "जो लोग याद नहीं रख पाते वे सुरक्षित हैं। उन लोगों की सेहत अच्छी रहती है।"

विशाखा ने कहा, "मैं लेकिन आज तुमसे झगड़ा नहीं करूंगी। यह आठ-दस साल का मेरा अरसा कैसे गुजरा है, काश, तुम समझ पाते !"

संदीप ने कहा, "जानता नहीं हूं, यही कहना चाहती हो ? तुमसे अलबत्ता मुलाकात नहीं हुई थी लेकिन मैं चुपके से सारी खबरों की जानकारी रखता था—"

"किस खबर की जानकारी रखी है, बताओ।"

संदीप ने कहा, "तुम लोगों ने बिडन स्ट्रीट का मकान बेच दिया है।"

"तुम यह भी जानते हो ?"

"जानूंगा नहीं ? मैं तो छुटपन में वहीं पला था। और यह भी जानता हूं कि तुम्हारी ददिया सास का देहांत हो गया है—"

यह सुनकर विशाखा की आंखें छलछला आईं। ददिया सास की मृत्यु की खबर सुनकर उसे सारी बातें नए सिरे से याद आ गईं। बोलीं, "वे थीं घर की लक्ष्मी। उनके जाते ही सारा कुछ तहस-नहस हो गया। कैसे क्या हो गया, उसका पता नहीं चला।"

"तुम लोगों का नया मकान बढ़िया है ?"

विशाखा ने कहा, "तुम तो एक बार देखने भी नहीं गए।"

"कैसे जाऊं, बताओ ? मां के मरने के बाद बिलकुल अनाथ हो गया हूं। बस, रतन ही एकमात्र भरोसा है। रतन अभी-अभी आया है, वह किस-किस तरफ निगरानी रखेगा ? उसके भरोसे घर खाली रखकर नहीं जा पाता हूं। लेकिन तुम तो बीच-बीच में आ सकती हो।"

विशाखा बोली, "मेरे साथ भी यही बात है। नौकरानी के भरोसे घर छोड़कर आना मुश्किल है। पहले बिन्दु थी, सुधा थी, कालीदासी थी। कितनी महरियां थीं बिडन स्ट्रीट के भवन में ! अब उन्हें वेतन देकर रखने की सामर्थ्य नहीं है। अभी मुझे अपने हाथ से खाना पकाना पड़ता है। मेरे पास जो कुछ था हमीद को देते-देते खत्म हो गया—"

"और इंदौर में मुखर्जी बाबू का क्या हालचाल है ?"

"उन लोगों की अब कोई खबर नहीं मिलती है। आठ-दस साल से फैक्टरी बंद है, वहां से एक रुपया तक नहीं आता। वे लोग भी कोई खबर पूछते भी नहीं।"

"फिर गाड़ी क्यों रखी है ? उस हाथी को पालने से फायदा ही क्या ?"

विशाखा बोली, "अच्छी कीमत मिलते ही बेच दूंगी।"

उसके बाद बोली, "अचानक तुम बीमार कैसे हो गए ?"

"एक बस से धक्का लगने मे गिर गया था। सुनने को मिला, सड़क के कुछ नौजवान मुझे उठाकर अस्पताल ले आए थे। वहा तकरीबन एक महीने तक लेटे रहना पडा था। लेकिन हा, तकदीर अच्छी थी कि हड्डी नही टूटी। फिर तो तुम देख ही नही पाती, मैं मौत के घर में समा जाता।"

"यह बात मत कहो। तुम दुनिया से चले जाओगे तो मेरी देखरेख कौन करेगा ? तुम्हारे अलावा मेरा कोई नही है। एक थी मां लेकिन अब वह भी नही है।"

"क्यो तुम्हारे चाचा ? तपेश गागुली ? उसके पास जाकर तो रह सकती हो।"

विशाखा ने कहा, "तुम तो उन्हें पहचानते ही हो, फिर उनकी चर्चा क्यो कर रहे हो ? रुपये के अलावा उन्हें और किस चीज की समझदारी है ? वे मेरे घर पर बहुत बार आ चुके हैं, मुझे अपने मनसातल्ला लेन में ले जाने के ख्याल से। इसका मतलब यह कि वे सोचते हैं मेरे पास पहले जैसा ही बेशुमार रुपया-पैसा है।"

संदीप ने पूछा, "सच, तुम्हारे पास क्या पहले जैसा रुपया-पैसा नही है ?"

"रुपया कैसे रहेगा, तुम्ही बताओ। मैं तो नौकरी-चाकरी नही करती। जब तक मैं कंपनी की डाइरेक्टर थी उन दिनो मेरे पास लाखों रुपये रहते थे। यह बात सभी जानते हैं। लेकिन जेल में अपने पति के पास हजारों रुपये भेजते-भेजते सारे रुपये बर्बाद हो गए। इन कई सालो के दरमियान हमीद को क्या कोई कम रुपया दिया है ? कभी सत्तर हजार, कभी अस्सी हजार, कभी एक लाख। जितने भी हीरे के गहने, जडाऊ गहने थे सभी को बेच देना पड़ा। बाकी जितने रुपये थे उन्ही से किसी तरह एक पुराना मकान खरीदकर मैं किसी तरह···"

उसके बाद शिकवे के लहजे मे बोली, "तुम तो मेरे बारे मे अब कोई खोज-खबर ही नही रखते।"

संदीप ने कहा, "खोज-खबर रखने का समय कहां मिलता है ? मौसीजी के कैंसर के रुपये का जुगाड करते-करते फटेहाल हो गया। उसके बाद मेरी मा बीमार पड़ी। इन कई सालो को कैसे गुजारा है। यह मैं जानता हूं और करमचदजी जानते हैं।"

उसके बाद पूछा, "तुम्हे मेरे घर का पता कहा से चला ?"

"बेडापोता जाने के बाद।"

"तुम बेड़ापोता गई थी ?"

"न गई होती तो नेबूबागान लेन का पता कैसे चला होता ? वहीं जाने पर मालूम हुआ कि तुम इस पते के किराए के मकान मे रह रहे हो।"

संदीप ने कहा, "मकान किराए पर न लू तो क्या करू ? पैतृक मकान को रख नही पाया। देना चुकाने के लिए मा की मृत्यु के बाद मकान बेच देना पडा।"

"मकान बेच दिया ?"

"हां, बेच दिया। अपना इतना बडा मकान तुमने रुपये के अभाव के कारण बेच दिया। मेरे साथ भी यही बात हुई। अब इस कलकत्ता मे किराएदार की हैसियत से रह रहा हू।"

"तुम कम से कम एक नौकरी तो कर रहे हो लेकिन मेरे साथ यह बात भी नही है। तुम्हारा पता मिलते ही तुमसे मिलने चली आई— लेकिन आने पर जैसी हालत देख रही हूं, घर लौटने की इच्छा नही हो रही—"

संदीप ने कहा, "मेरे बारे मे चिन्ता मत करो। मेरे जैसा आदमी जिन्दा रहे या मरे कोई फर्क नही पडता। मेरे मरने पर कोई रोने वाला भी नही रहेगा।"

"ऐसी बात मत कहो। मेरा ही कौन है ?"

संदीप ने कहा, "तुम्हारा तो फिर भी पति है। मेरा कौन है?"

विशाखा ने कहा, "इसे जीना कहा जाएगा?"

"जीना नहीं कहा जाएगा?"

"तुम तो सारा कुछ जानते हो। जान-सुनकर भी यह बात कह रहे हो?"

संदीप ने कहा, "फिर भी मर्जी हो तो तुम उनसे मिल सकती हो।"

"मैं नहीं मिलती हूं।"

"क्यों?"

"मिलने से वह सिर्फ एक ही बात रटता है—रुपया। रुपये के अलावा उस आदमी की जबान से कोई दूसरा शब्द नहीं निकलता। सिर्फ रुपये की मांग करते हैं।"

"इतना रुपया लेकर वे क्या करेंगे?"

"और क्या करेंगे, शराब पिएंगे। मेरे पास क्या रुपयों का पेड़ है कि पेड़ से तोड़-तोड़कर देती रहूं?"

"जेल में क्या शराब पीने देते हैं? सुना है बाहर से कुछ लाने नहीं दिया जाता है।"

विशाखा बोली, "मुझे भी यही मालूम था। लेकिन सारा कुछ बाहर से लाया जा सकता है। पैसा खर्च करने-भर की देर है।"

"खैर, अब ज्यादा दिन नहीं हैं, अब रिहा होने का समय आ गया है।"

"इसी वजह से तो मैं घोर चिन्ता में पड़ गई हूं—"

"क्यों?"

विशाखा बोली, "घर आने पर किसी की बात नहीं मानेंगे।"

"लेकिन रुपया कहां से आएगा? तुमने तो बताया कि रुपए की आमदनी नहीं हो रही है। इन्दौर से रुपया आना बन्द हो गया है—"

विशाखा बोली, "पियक्कड़ क्या शराब का नशा छोड़ सकता है?"

संदीप बोला, "नशाखोर रुपए के अभाव में काबुल वाले से रुपया कर्ज लेते हैं।"

विशाखा बोली, "सबकुछ समझती हूं लेकिन क्या करूं, यह समझ नहीं पाती। इसीलिए सोचती हूं, जब तक वे जेल में हैं तब तक शान्ति से रहने का मौका मिलेगा। घर लौटकर आने पर क्या होगा, यही सोचती हूं—"

संदीप ने कहा, "तुम्हें जरा सख्त रुख अपनाना चाहिए।"

"मैंने क्या सख्त रुख नहीं अपनाया है?"

"अगर सख्त रुख अपनाया है तो हमीद को रुपए क्यों देती हो?"

विशाखा ने कहा, "फिलहाल हमीद को सच्ची बात बता दी है। कहा है, मे पास रुपए नहीं हैं।"

"हमीद तुम्हारी बात मानने को तैयार होता है?"

"नहीं, सुनने को तैयार नहीं होता। हल्ला-गुल्ला करता है। हल्ला-गुल्ला के ड से कुछ देना पड़ता है। जेलखाने के लोग कितने बुरे होते हैं इसका पता हमीद को देख से ही चल जाता है।"

संदीप ने इस बात का कोई उत्तर नहीं दिया। विशाखा बोली, "बहरहाल, सब बात तब सोचूंगी जब वे आएंगे। पहले से ही यह सब सोचने से क्या फायदा होगा तो उस समय गाड़ी बेच दूंगी। गाड़ी पर चढ़ने की आदत हो गई है इसलिए एकाएक छोड़ने में तकलीफ का अहसास होगा।"

उसके बाद बोली, "अब मैं चलती हूं।"

"वक्त मिले तो बीच-बीच में आना।"

विशाखा बोली, "आने की इच्छा तो हर समय होती है। घर पर एक कामगार रखा है लेकिन दो जनों के लिए रसोई पकाने के अलावा उसका कोई काम नही है। वह खामोश बैठा रहता है और मैं भी खामोश बैठी रहती हूं। भाग्य से खबर मिली कि तुम इस मकान में हो, इसीलिए आई। कम से कम कुछ वक्त तो कट गया। लेकिन कुछ दिन बाद तुम स्वस्थ होते ही दफ्तर जाना शुरू कर दोगे। उस समय मेरा वक्त कैसे कटेगा ?"

"मैं क्या दिन-भर दफ्तर में ही रहता हूं ? शाम को घर पर ही रहूंगा।"

"तुम बताओ कि कब तुम्हारे पास आऊं।"

संदीप ने कहा, "मर्जी होने पर तुम जब चाहो आ सकती हो। रतन को तो तुमने पहचान ही लिया। वह भी तुम्हें पहचान गया। तुम अकेली हो, मैं भी अकेला। किसी ओर से कोई बाधा नही है। तुम्हारी ददिया सास जीवित नही है। पति रहने के बावजूद नही है। अभी हम स्वतन्त्र हैं। हम दोनों जने जो मर्जी हो कर सकते हैं, जब मर्जी हो मिल सकते हैं। ऐसा क्या नही कर सकते ?"

"हा, कर सकते हैं। लेकिन माग मे सिंदूर भरकर उन्होंने मुझसे शादी की है, यह बात क्यों भूल रहे हो ?"

संदीप ने कहा, "तुमसे मिलकर मुझे जो भी मर्जी होगी, करूंगा—यह बात तुमसे किसने कही ? मुझमें इसानियत नही है क्या ?"

विशाखा बोली, "है; इसीलिए तो मैं तुम्हारे घर का पता लगाकर नि संकोच [illegible]"

[illegible], यह मैं जानता हू। इसीलिए एक बात [illegible]

"कहो।"

संदीप ने कहा, "तुम्हारी आर्थिक अवस्था से मैं परिचित हू और तुम भी मेरी आर्थिक अवस्था से परिचित हो। अगर कभी तुम्हे रुपए की जरूरत पडे तो मुझसे कहने मे सकोच मत करना।"

विशाखा बोली, "आज अपनी आखो से ही देखा कि एक आदमी तुमसे कर्ज मांगकर ले गया।"

संदीप ने कहा, "यह तुम्हारी गलत धारणा है। कर्ज नही, दान—"

"लेकिन इस तरह दान करते रहोगे तो किसी दिन दिवालिया हो जाओगे।"

संदीप ने कहा, "जब तक है, देता जाऊंगा। जानती हो, देश के आदमी बडे ही गरीब हैं। जिस तरह सरो-सामान की कीमत बढती जा रही है, उन्हें दोष भी नही दिया जा सकता—"

"लेकिन इनमें से सभी ईमानदार है ?"

"ईमानदार मान लेना ही स्वास्थ्यकर है। इससे मन की शान्ति कायम रहती है।"

"लेकिन यह नही सोचा कि किसी दिन तुम्हें पैसे के अभाव मे रास्ते पर खडा होना होगा।"

संदीप ने कहा, "तुमने क्या यही सोचा है कि मुझे रुपए-पैसे का अभाव नही है ? मेरा बैंक में एक भी रुपया जमा नही है—"

"यह क्या कह रहे हो तुम ! तुम बैंक के मैनेजर हो और बैंक मे तुम्हारा एक रुपया भी जमा नही है !"

संदीप ने कहा, "केवल तुम्ही नही बल्कि कोई भी इस बात पर यकीन नही

करता है। यह बात सिर्फ जानते हैं मेरे एकमात्र शुभैषी करमचन्द मालव्यजी—"

"वे कौन हैं?"

"उन्हें तुमने मेरी बीमारी के दौरान देखा है। उन्हीं के 'अण्डर' में नौकरी में दाखिल हुआ था। एक तरह से उन्होंने ही मुझे योग्य बनाया है। वे मेरे अभिभावक हैं—"

विशाखा बोली, "उन्होंने ही सबको रुपया देने कहा है?"

"नहीं; कहा है देना ही प्रेम है और लेना स्वार्थपरता। स्वार्थी आदमी आदमी नहीं, जानवर है। जानवर सिर्फ लेना ही जानते हैं, देना नहीं—"

"इसी वजह से तुमने उस आदमी को रुपया दिया?"

"हां।"

विशाखा बोली, "मगर तुम्हारे अभाव के वक्त क्या होगा?"

संदीप बोला, "अपने अभाव के वक्त मैं निराहार रहकर मर जाऊंगा।"

विशाखा बोली, "तुम्हें मरने में डर नहीं लगता?"

संदीप ने कहा, "मरने में मुझे डर क्यों लगेगा? मेरा अपने के नाम पर कौन है जो रोएगा? मैं तो तनहा आदमी हूं। मां जब तक जीवित थी, उसके लिए चिन्ता थी। अब तो निडर हूं।"

"मैं?"

संदीप ने कहा, "तुम?"

"हां, तुम्हारी ही तरह मेरा भी कोई नहीं है। मां दुनिया से विदा हो चुकी है, ददिया सास का भी देहान्त हो चुका है। उतनी बड़ी इमारत, उतनी सारी जायदाद, कुछ भी नहीं है। फैक्टरी भी नहीं है कि वहां से रुपए आएंगे।"

"अब भी फैक्टरी नहीं खुली है?"

विशाखा ने कहा, "नहीं, लॉकआउट के बाद उस फैक्टरी को बेच दिया गया है। मेरे चचिया ससुर वहीं रहते हैं। जायदाद का बंटवारा होने के बाद से वे वहीं बस गए हैं। अब कलकत्ता नहीं आते हैं।"

•

संदीप को उन दिनों की बात की जानकारी थी। वह कितने दिन पहले की घटना है! आज भी वे स्मृतियां उसकी आंखों के सामने दमक रही हैं। मां की मृत्यु की खबर सुनकर मंझले बाबू आए थे। शोक के घर में जैसा होता है, वही हुआ। लेकिन उसमें पहले जैसी आन्तरिकता नहीं थी। नितान्त नियम-पालन जैसी बात थी। खबर मिलने पर हजारों काम रहने के बावजूद संदीप अनिमंत्रित होने के बावजूद उस आयोजन में आया था। सारा कुछ चुपचाप देख रहा था। सबसे शोचनीय हालत हो गई थी मल्लिक चाचा की। दादी मां के मरने के समय ही मल्लिक चाचा समझ गए थे कि उनका भी आश्रय हमेशा-हमेशा के लिए चला गया। उन्होंने अपना जीवन-यौवन, इहलोक-परलोक, जो कुछ तमाम लोगों का होता है—सारा कुछ इस मुखर्जी-भवन के लिए विसर्जित कर दिया था। जबकि भविष्य के नाम पर उनका कुछ नहीं रहा। मल्लिक चाचा के चेहरे की ओर निहारकर भी संदीप खुलकर कुछ नहीं कह सका। चुपचाप केवल मल्लिक चाचा की ओर ताकता रहा।

मल्लिक चाचा ने कहा था, "क्या निहार रहे हो?"

संदीप की आंखों में तब आंसू छलछला आए थे। मुंह से कुछ बोल न पा रहा था। खामोशी के साथ केवल चाचा की ओर तक रहा था।

मल्लिक चाचा ने दुबारा पूछा, "क्यों, कुछ बोल क्यों नहीं रहे हो ?"

संदीप ने कहा था, "मैं सिर्फ आपके बारे में ही सोच रहा हूं।"

मल्लिकजी ने कहा था, "मेरे बारे में सोचकर क्या होगा ? दादी मां का देहान्त हो चुका है। साथ ही मुझे अपनी आसक्ति के बन्धन से छुटकारा मिल गया। बड़ी बात यही है—"

मल्लिकजी की बात सुनकर संदीप के आश्चर्य की कोई सीमा नहीं रही। तो क्या आसक्ति का बन्धन काटना ही मुक्ति है ? यह बन्धन कट गया तो मल्लिक चाचा को कहां आश्रय मिलेगा ? कैसे उनका पेट भरेगा ? कौन उन्हें खाने को भोजन और देह ढंकने के लिए कपड़ा देगा ?

हर आदमी को तो एक ही चिन्ता रहती है और वह है भोजन और देह ढंकने के कपड़े की चिन्ता। उसी चिन्ता के कारण आदमी रुपया, मकान और सन्तान चाहता है। जिसमें कि बुढ़ापे के समय उसे आश्रय मिले, खाना मिले और मृत्यु के समय सेवा-सुश्रूषा प्राप्त हो।

लेकिन संदीप को यह सोचकर उस दिन हैरानी हुई थी कि मल्लिक चाचा के अन्दर यह आदिम कामना क्या नहीं है ?

"उसके बाद ?"

विशाखा शुरू से सारी बात सुन रही थी। संदीप ने कहा, "उसके बाद तुम लोगों के बारह बटे ए मकान को बेच दिया गया। सम्पत्ति बेचकर बंटवारा कर लिया गया। अब मल्लिक चाचा की नौकरी भी चली गई। तब मैं उन्हें अपने बेहापोता के मकान में ले गया। उस समय तुम्हारी मा की मृत्यु हो चुकी थी। घर पर अपनी मां और मल्लिक चाचा दोनों की मैं देखभाल करने लगा। दोनों बूढ़े थे। एक दिन दोनों का देहावसान हो गया। पहले मेरी मां का, उसके बाद मल्लिक चाचा का। उन लोगों की मैं आखिरी दिन तक सेवा-सुश्रूषा करता रहा। ठीक उसी तरह जिस तरह मौसीजी की करता था। मतलब तुम्हारी मा की···"

विशाखा ने पूछा, "मेरी मा को आखिर में क्या हुआ था ?"

संदीप ने कहा, "कैंसर। डाक्टर ने अन्त में यही बताया था—"

विशाखा ने कहा, "सुना है, उस रोग में बहुत ही तकलीफ महसूस होती है।"

संदीप ने कहा, "मौसीजी को कितनी तकलीफ हो रही थी, इसके बारे में तुम्हें इसलिए नहीं बताया था कि तुम्हें कहीं बेइन्तहा सदमा न पहुंचे—"

"उस बीमारी में तो बहुत खर्च होता है। खर्चे का पैसा तुम्हें कहां मिला ?"

संदीप ने कहा, "मैंने अपने बैंक से कर्ज लिया था। वह कर्ज आज तक नहीं चुका पाया हूं। पूरी रकम अब भी नहीं चुका पाया हूं—"

"कहां कैंसर हुआ था ?"

"पहले पैर में। उसके बाद वह कैंसर पूरे शरीर में फैल गया था। उस इलाज में क्या कम खर्च होता है ? शुरू में मल्लिक चाचा ने तुम्हारी शादी के दिन वादा किया था कि दो-तीन लाख रुपया जो भी खर्च होगा, वह तुम्हारी ददिया सास देंगी। लेकिन मेरे बारे में किसी को याद ही नहीं रहा। और सबसे बड़े अचरज की बात है, तुम भी उस समय ददिया सास के कारण व्यस्तता में डूब गई थी—"

विशाखा की आंखों में आंसू भर आए। बोली, "मुझे तुम क्षमा कर दो संदीप। उस समय मेरे दिन किस तरह गुजरे हैं, यह केवल मैं ही जानती हूं। और एक आदमी जानते थे वे हैं तुम्हारे मल्लिक चाचा जो अब न रहे। लिहाजा यह सब बात मैं अकेली ही जानती हूं—"

उसके वाद ज़रा रुककर वोली, "मेरी मां के कारण तुम्हें कितना कर्ज़ लेना पड़ा है, वताओ न—"

संदीप ने चेहरा उठाकर सीधे विशाखा की ओर ताका। लेकिन वोला कुछ भी नहीं। विशाखा ने कहा, "वताओ न, तुम्हें सचमुच कितना कर्ज़ लेना पड़ा है मां की वीमारी में ?"

संदीप ने कहा, "क्यों ? तुम वह कर्ज़ चुका दोगी क्या ?"

विशाखा ने कहा, "एक साथ भले ही न चुका पाऊं लेकिन किस्तों में थोड़ा-थोड़ा देकर चुका दे सकती हूं।"

संदीप गुस्सा गया। वोला, "अव ज़ख्म पर नमक मत छिड़को।"

विशाखा वोली, "नहीं-नहीं, तुम यह वात मत कहो। सिर्फ यही वताओ कि मेरी मां के लिए कितना रुपया कर्ज़ लेना पड़ा है।"

संदीप ने कहा, "तुम अपने ऋण का रुपया चुकाना चाहती हो ?"

विशाखा वोली, "तुम इसे ऋण क्यों कह रहे हो ? मैं सिर्फ तुम्हारी मुसीवत की घड़ी में थोड़ी-वहुत सहायता करना चाहती हूं—"

संदीप ने कहा, "मौसीजी की वीमारी का इलाज मैंने क्या तुम्हारे वारे में सोचकर कराया है ? मैंने मान लिया था कि तुम्हारी मां की मुसीवत मेरी मां की मुसीवत है। मैंने तुम्हें कभी पराया नहीं समझा था।"

विशाखा ने कहा, "यह तुम्हारी महानता है।"

संदीप ने कहा, "नहीं, यह महानता नहीं, मानवता है। मैंने करमचंद मालव्यजी से यही सीखा है। जिनके वारे में तुम्हें वता चुका हूं। खैर, यह वात रहे, तुम्हें मेरा पता कैसे मिला ?"

"वताया न, कि मैं तुम्हारी खोज में वेड़ापोता गई थी। वहीं तुम्हारे कलकत्ता का पता मालूम हुआ। तुम्हारे वैंक में जाने की भी कोशिश की थी। पर वेड़ापोता जाने की मुझे ज़रूरत भी थी।"

"क्यों ?"

"सोचा था, वैंक जाने पर तुम्हारे काम-काज की भीड़-भाड़ में मन की वात जी खोलकर नहीं कह पाऊंगी। इसलिए एक छुट्टी का दिन देख वेड़ापोता ही गई थी।"

संदीप ने कहा, "कहो न, तुम्हारे मन की वात क्या है ?"

"मन की वात क्या हो सकती है तुम महसूस नहीं कर पाते ?"

संदीप ने कहा, "मैं कैसे महसूस करूं ?"

"यदि समझ ही नहीं पाते तो फिर जव हमें रसेल स्ट्रीट के मकान से भगा दिया तो उस समय हमें खिदिरपुर के मनसातल्ला लेन के मकान में वापस ले जाने के वजाय अपने वेड़ापोता के मकान में क्यों ले गए थे ? वह महज परोपकार था ? और कुछ भी नहीं ?"

"और क्या हो सकता है ?"

विशाखा वोली, "यह जवाव क्या तुम मेरे मुंह से ही सुनना चाहते हो ?"

एकाएक वातचीत के वीच अड़चन खड़ी हो गई।

"आज कैसे हो ?"

यह कहते हुए करमचंदजी ने कमरे के अंदर प्रवेश किया।

संदीप ने कहा, "आज ज़रा अच्छा हूं।"

"पैर का दर्द ?"

संदीप जवाव दे कि इसके पहले ही मालव्यजी ने विशाखा की ओर देखा। देख-

कर उनकी आखें विशाखा पर स्थिर हो गईं। संदीप ने कहा, "आप हैं विशाखा मुखर्जी, मेरे एक्सिडेंट के बारे में सुनकर मुझे देखने आई हैं—"

मालव्यजी बोले, "लगता है मैंने इन्हें कहीं देखा है।"

उसके बाद खुद ही बोले, "हां याद आ गया। उसी नर्सिंग होम में जहां तुम्हारा इलाज हो रहा था। ये तुम्हारे लिए बिना खाए-पिए रह रही थीं। कई दिनों तक कुछ भी नहीं खाया था। नर्सों के क्वार्टर में अकेले रहती थी—"

विशाखा ने शर्म से सिर झुका लिया।

मालव्यजी बोले, "इन्हीं से तुम्हारी शादी की बातचीत चल रही थी?"

संदीप ने कहा, "हां, आपको तो सारा कुछ मालूम है। आपसे तो सारा कुछ बताया था।"

"इन्हीं की मां के इलाज के चलते तो तुम पर बहुत सारे रुपयों का कर्ज लद गया था।"

संदीप ने इस बात का कोई जवाब नहीं दिया।

"इनकी शादी तो दूसरे आदमी से हो गई है न?"

इस बात का जवाब ही क्या हो सकता है!

उसके बाद संदीप की ओर ताकते हुए बोले, "आज कैसे हो, यही देखने चला आया—"

संदीप ने कहा, "पहले से बेहतर हालत है।"

"बुखार खत्म हो गया है?"

"हां, डाक्टर साहब सवेरे ही आकर देख गए हैं। आज भात खाने को कहा है।"

मालव्यजी कुर्सी पर बैठे हुए थे। अब उठकर खड़े हो गए। बोले, "चलता हूं, आज बहुत सारे काम इकट्ठे हो गए हैं। कब ऑफिस ज्वाइन कर रहे हो?"

"डाक्टर साहब जिस दिन कहेंगे उसी दिन ज्वाइन करूंगा।"

मालव्यजी बोले, "अब सड़क पर चलने के दौरान चारों तरफ ध्यान से देखकर चला करना। कलकत्ता में दिन-ब-दिन गाड़ियों की भीड़ बढ़ती जा रही है, लेकिन उस अनुपात में सड़क चौड़ी नहीं हो रही है। चलू, फिर किसी दिन आऊंगा—"

यह कहकर मालव्यजी चले गए। विशाखा अब तक चुपचाप बैठी थी। अब बोली, "इन्हीं के बारे में तुम कुछ देर पहले कह रहे थे?"

"हां, इन्होंने ही मुझे देने-लेने का अन्तर समझाया था। इन्होंने ही मुझे बताया था कि आदमी जब अपने सगे-संबंधी को पराया बनाता है तो उसे पराए से भी ज्यादा पराया बना देता है।"

विशाखा ने कहा, "उन्होंने तो मुझे ठीक-ठीक पहचान लिया। उतने दिन पहले की बात कैसे याद रखते हैं!"

संदीप ने कहा, "तुम्हारे संबंध में मैंने उन्हें सारा कुछ बताया है।"

"सबकुछ बताने क्यों गए?"

"वे तो फिलहाल मेरे लिए अपने से भी बढ़कर हैं। उनसे नहीं कहूंगा?"

"लेकिन मुझसे अपने रिश्ते की बात क्यों कहने गए?"

संदीप ने कहा, "वाह रे, तुम क्या कह रही हो? मैंने बैंक से उतना कर्ज लिया है, यह देखकर एक दिन उन्होंने ही कहा था: इतना रुपया लोन क्यों ले रहे हो? तुम्हारी गृहस्थी में सिवाय तुम्हारी मां के और कोई नहीं है, तो फिर इतने रुपये किसके लिए दरकार होते हैं? इस पर मुझे सारा कुछ बताना पड़ा।"

"हम लोगों की शादी टूटने की बात भी कही है?"

"कहूंगा नहीं ?"

विशाखा ने कहा, "हम लोगों की शादी कैसे टूट गई, क्यों टूट गई, यह सब भी कहा है।"

"हां सबकुछ, सारा कुछ। कोई बात छिपाकर नहीं रखी है।"

विशाखा कुछ देर तक गुमसुम रही। उसके बाद बोली, "सुनकर मुझे बड़ी ही शर्म का अहसास हो रहा है। तुम सारा कुछ बताने क्यों गए? सारी बात बताए बगैर काम नहीं चलता ?"

संदीप ने कहा, "क्यों, शर्म का अहसास क्यों हो रहा है ?"

विशाखा बोली, "शर्म का अहसास नहीं होगा ? फांसी के मुजरिम से शादी होने की बात की कोई कल्पना कर सकता है ?"

संदीप ने कहा, "मालव्यजी उस किस्म के आदमी नहीं हैं।"

"लेकिन वे मुझे यहां तुम्हारे पास देखकर कितने आश्चर्यचकित हो गए ! इस पर गौर करो तो।"

संदीप ने कहा, "आश्चर्यचकित क्यों होंगे ? वे तो जानते ही हैं कि किसी-न-किसी दिन तुम्हारे पति को जेल से रिहा कर दिया जाएगा। उस समय तुम दोनों सुख-शांति से घर-गृहस्थी चलाओगे। तुमसे शादी करने से कम-से-कम एक आदमी की जिन्दगी तो बच गई। यह क्या कोई कम पुण्य की बात है ?"

"पुण्य ? तुम क्या कह रहे हो ?"

संदीप ने कहा, "पुण्य नहीं है ?"

विशाखा ने कहा, "तुम लोग बाहर से सोचते हो कि पुण्य है। लेकिन मैं तो भुक्तभोगी हूं। मेरे लिए तो यह अभिशाप है।"

"अभिशाप ? अभिशाप क्यों ?"

विशाखा बोली, "इसे अभिशाप नहीं कहूंगी तो और क्या कहूगी ? जब उस घर में शादी हुई तो सोचा, कितने रुपयों की मालकिन हूं मैं। मेरे पास कितने नौकर, नौकरानी, मैनेजर हैं, मेरा घर कितना बड़ा है, कितनी बड़ी फैक्टरी की डाइरेक्टर हूं मैं। उस समय दो दिन के दरमियान मैं सारा कुछ भूल गई। लेकिन उसके बाद ?"

कहते-कहते विशाखा चुप हो गई। अपनी साड़ी के पल्लू से आंखें पोंछ लीं।

संदीप ने कहा, "रहने दो, अब कहने की ज़रूरत नहीं।"

विशाखा ने कहा, "तुमसे बहुत सालों के बाद मुलाकात हुई। अभी न कहूं तो कब कहूंगी, किस समय कहूंगी ? यदि अब जिन्दा नहीं रहूं—"

संदीप ने कहा, "हर कोई अपने दुख को ही बड़ा मानता है। सोचता है, उसके जैसा दुखी इस दुनिया में कोई नहीं है। साथ ही साथ ऐसा भी आदमी देखा है जो सोचता है, उसके जैसा सुखी आदमी इस संसार में कोई नहीं है। उसके बाद उसी सुखी आदमी को एक दिन रोते देखा है। तुम तो अपने दुख की बात ही कहने आई हो। लेकिन याद रखो, धरती पर तुमसे भी बढ़कर दुखी आदमी हैं—"

विशाखा संदीप की बात नहीं समझ सकी। पूछा, "मुझसे भी दुखी आदमी तुमने देखा है ?"

संदीप ने कहा, "हां देखा है।"

"कहां देखा है ?"

संदीप ने कहा, "क्यों, मुझे तुम देख नहीं पा रही हो ?"

"तुम ? तुम्हें किस चीज का दुख है ? तुम मर्द हो। तुम बैंक में मोटी रकम तनख्वाह के तौर पर पाने वाले अफसर हो···तुम्हें किस चीज का दुख है ?"

संदीप ने कहा, "उस दुख के बारे में बताऊं भी तो तुम्हारी समझ में नहीं आएगा।"

"फिर भी सुनूं तो सही!"

"तुम कह रही हो कि मैं बैंक का मोटी तनख्वाह पाने वाला अफसर हूं! हां, मैं स्वीकार करता हूं कि मैं बैंक का मोटी रकम पाने वाला अफसर हूं। जब बैंक की नौकरी में दाखिल हुआ था, उस समय मेरा वेतन था डेढ़ सौ रुपया। डेढ़ सौ रुपये से ही चार जनों की गृहस्थी किसी तरह चला लेता था। उसी के दौरान तुम्हारी मां के दबाव पर मैं तुमसे शादी करने को राजी हुआ था। लेकिन उसके बाद?"

"उसके बाद क्या हुआ?"

संदीप ने कहा, "उसके बाद की तमाम बातों की तुम्हें जानकारी है। मेरे मुंह से सुनना क्यों चाहती हो? उसके बाद तुम्हारी मांग में दूसरा आदमी सिंदूर भर गया, यह भी देखा। उसके बाद तुम अपनी फैक्टरी की एक डाइरेक्टर बन गईं, बेशुमार रुपये की मालकिन हो गईं, यह भी देखा। तुम किसी दिन खिदिरपुर के मनसातल्ला लेन के मकान में अपनी मां के पास घोर उपेक्षा से पल-बढ़ रही थीं, यह भी देखा है। उसके बाद तुम एक करोड़पति पासी के मुजरिम से शादी कर राजरानी बन बैठीं, यह भी देखा। आज फिर अभी उस 'तुमको' देख रहा हूं। अब सुन रहा हूं, तुम एक तनहा औरत हो। बारह बटे ए बिडन स्ट्रीट के मकान को छोड़ एक छोटा-सा मकान खरीदकर तुम अकेले रह रही हो।"

विशाखा बोली, "तुम जो कुछ कह रहे हो बिलकुल सच है। मैं स्वीकार करती हूं कि उसका एक भी अक्षर मिथ्या नहीं है।"

संदीप ने कहा, "लेकिन तुम्हें सारी जिन्दगी अकेले नहीं रहना पड़ेगा। एक दिन सौम्यपद बाबू जेल से रिहा कर दिए जाएंगे। उस वक्त? उस समय तो देखभाल करने वाला एक आदमी मिल जाएगा, उस समय तो तुम्हें एक साथी मिल जाएगा। तब?"

विशाखा बोली, "सुना है, उन्हें जल्द ही रिहा कर दिया जाएगा!"

"सच? फिर तो तुम्हारा जीवन दुबारा सुखी हो जाएगा। किसने इस खबर की सूचना दी?"

विशाखा ने कहा, "हमीद ने—"

संदीप अब कुछ नहीं बोला। विशाखा ने कहा, "एक दिन दादी मां की बीमारी के कारण पैरोल पर छुट्टी लेकर आए थे, उसके बाद दादी मां के श्राद्ध के दिन भी आए थे। उन दो दिनों के दरमियान क्या-क्या कांड कर गए, क्या कहूं—"

"क्या-क्या कांड?"

विशाखा बोली, "और क्या कांड, वही बोतल पर बोतल शराब पीने का सिलसिला। सच, उसके लिए न हया-शर्म न ही नफरत होती है। जेलखाना जाने पर भी नशाखोरी नहीं छोड़ सके। जबकि मैंने सोचा था, जेलखाने में रहते-रहते शायद नशाखोरी छोड़ देंगे।"

"हमीद को इतना रुपया क्यों देती हो?"

विशाखा बोली, "मैं रुपया न देनेवाली कौन होती हूं? रुपया तो उन्हीं का है। उनका रुपया मैं उन्हें ही दे रही हूं। हमीद कहता है, शराब न पीने को मिलती है तो वे जेलखाने में छटपटाने लगते हैं। खाना-पीना बंद कर देते हैं। इसलिए मजबूर होकर रुपया देना पड़ता है—"

संदीप ने कहा, "तो फिर रुपया देकर तुम उनकी हानि ही करती हो—"

"लेकिन क्या करूं, बताओ। चाहे जो हो, कानूनी तौर पर मुझसे उनकी शादी हुई

है। वे ही तो मेरे पति हैं, सो चाहे वे जेल में रहें या जेल के बाहर। और तुम्हीं बताओ न, तुम्हारी यदि मेरी जैसी हालत होती तो तुम क्या करते ?"

संदीप क्या जवाब दे ! सिर्फ इतना ही कहा, "जब जेलखाने से रिहा होकर घर आएं तो उस समय तुम उनका नशा छुड़ाने की कोशिश करना—"

"इतने दिनों का नशा क्या आदमी छोड़ सकता है !"

संदीप ने कहा, "तुम समझाना-बुझाना। यह सब तुम पर निर्भर करता है।"

विशाखा बोली, "देखो, यह भी मेरी तकदीर ही है। मेरी ददिया सास के गुरुदेव ने मेरा 'विशाखा' नाम बदलकर 'अलका' नाम रखना चाहा था। नाम बदलने से हो सकता है तकदीर में बदलाव आता ! लेकिन ऐसा नहीं हुआ। चूंकि नहीं हुआ इसलिए मेरी यह बदकिस्मती है !"

"अब भी तो तुम अपना नाम बदल सकती हो !"

विशाखा बोली, "आधी जिन्दगी तो बीत ही चुकी। अब क्या उम्मीद करने की उम्र है ? लगता है, इसी तरह बाकी जिन्दगी भी बीत जाएगी। इन दस बरसों के दरमियान मेरा आशा-भरोसा समाप्त हो गया है, यह जानते हो ?"

संदीप ने कहा, "इतने सहज ढंग से हताश नहीं होना चाहिए। हताश होना पाप है। मानव्यजी ने मुझे इस बात की सीख दी है। सौम्य बाबू के जेल से लौट आने के बाद तुम्हें नए सिरे से जीवन जीने का मौका मिलेगा, मैं यही उम्मीद करता हूं।"

विशाखा बोली, "तो तुम यह कहना चाहते हो कि मैं सुखी होऊंगी ?"

संदीप बोला, "जरूर ही सुखी होओगी। मैं कह रहा हूं, तुम सुखी होओगी। सौम्य बाबू जेल से लौटकर आएंगे तो उन्हें अनुताप होगा। तब वे निश्चय ही और ही तरह के आदमी हो जाएंगे। देख लेना—"

"यह क्या कह रहे हो तुम ? जो आदमी जेलखाने में जाने पर भी अपने स्वभाव में बदलाव नहीं ला सकता···"

संदीप बोला, "अवश्य ही बदलाव आ जाएगा। तुम जरा कोशिश करोगी तो यह सम्भव हो जाएगा—"

विशाखा बोली, "यदि बदलाव नहीं आए ?"

संदीप ने कहा, "तब मैं बातें करूंगा। उस समय तुम मुझे बुला लेना, मैं समझाऊंगा।"

"तुम हम लोगों के घर पर आओगे ?"

"तबीयत ठीक रही तो जरूर जाऊंगा।"

"अपना पता तो तुम्हें बता ही चुकी हूं। पांच नंबर, भुवन गांगुली लेन—"

"सो मैं खोजकर निकाल लूंगा।"

विशाखा बोली, "यह नया मकान है। मेरे पास जितना रुपया था, उसे देकर मैंने यह मकान खरीदा है। उसके बाद जो कुछ बचा जेलखाने का हमीद मांगकर ले गया।"

"कब सौम्यपद बाबू को रिहा किया जाएगा ?"

विशाखा ने कहा, "हमीद ने तो बताया कि बहुत जल्द ही रिहा कर दिए जाएंगे।"

"इतनी जल्दी कैसे छुटकारा मिल जाएगा ?"

विशाखा बोली, "उम्रकैद व्यक्ति की सजा की मियाद कुछ सालों के लिए कम कर दी जाती है। और उस पर अगर ऊंचे पदाधिकारी को खुश रखा जाए तो उसके पहले भी रिहाई हो जाती है।"

"किस तरह खुश किया जाता है ?"

"घूस देकर। रुपया देकर।"

"कितना रुपया ?"

विशाखा बोली, "उसका क्या कोई लेखा-जोखा है ? हमीद के हाथ में कितने लाख रुपये भेजे हैं, उसका कोई हिसाब-किताब नहीं है।"

"तो तुमने सारे रुपये बर्बाद कर डाले ?"

विशाखा ने कहा, "इसे बर्बाद करना नहीं कहा जा सकता। पति की तकलीफ का खयाल कर हमीद को रुपया देना पड़ा है। और मकान खरीदने में डेढ़ लाख रुपया लगा है। इन्हीं सब झंझटों के कारण तुम्हारी याद ध्यान से बिलकुल उतर गई थी। उसके बाद जाने, एक दिन क्या हुआ कि सोचा, तुम कैसे हो, चलूं, देख आऊं। इसीलिए तो बेहापोता गई थी। वहां जाने पर सुनने को मिला, तुम्हारी मां की मृत्यु के बाद तुमने मकान बेच दिया है और कलकत्ता में इस पते पर रह रहे हो। तुम्हारा पता लेकर अब तुम्हारे घर आई हूं। सो भाग्यवश तुम घर पर थे इसीलिए मुलाकात हो गई।"

संदीप ने कहा, "तुम्हें तो मालूम है कि मैं किस बैंक में नौकरी करता हूं। वहां जाने पर तुम्हें मेरा यह नया पता मिल जाता।"

"क्या यही सोचते हो कि मैं गई नहीं थी ? गई थी। जाने पर सुनने को मिला कि प्रमोशन हो जाने के कारण तुम्हारा हावड़ा ब्रांच से तबादला हो गया है। इसीलिए बेहापोता गई थी।"

संदीप ने कहा, "वही तो कई साल कट गए। अब मेरा प्रमोशन हुआ है, वेतन बढ़ा है और जिम्मेवारी भी बढ़ गई है—"

"लेकिन ऐसा होने पर तुम हम लोगों को इस तरह बिसरा बैठोगे ? जरा सोचो तो, खिदिरपुर के मनसातल्ला लेन की बात, रसेल स्ट्रीट के मकान की बात और बारह बटे ए बिडन स्ट्रीट के मकान की बात। साथ ही मेरे ससुर के मकान के ऐश्वर्य की बात। वह सब कहां चला गया ? इस तरह तुम्हें मुझे भूल जाना चाहिए था ?"

संदीप ने इस बात का जवाब देने में थोड़ा वक्त लिया। उसके बाद एक लम्बी सांस लेकर बोला, "काश, तुम्हें भूल पाता ! दरअसल तुम्हीं मुझे भुला बैठी थीं।"

विशाखा बोली, "हां ठीक, ठीक ही कह रहे हो, मैं तुम्हें भुला बैठी थी। सिर्फ़ तुम्हें ही नहीं, अपनी मां को भुला बैठी थी। अचानक इतने सारे रुपये, गहने-जेवरात और ऐश्वर्य ने मुझे सब कुछ भूल जाने को विवश कर दिया था। सच संदीप, अपराधी मैं ही हूं। मुझे तुम क्षमा कर दो।"

"क्षमा ?"

"हां, अब सारा कुछ खो देने के बाद मैं महसूस कर रही हूं कि गलती मैंने ही की है। इस गलती की क्या कोई क्षमा नहीं है ? यदि नहीं है तो तुम जो भी सजा दोगे, मैं सिर झुकाकर स्वीकार कर लूंगी।"

संदीप ने इस बात का कोई प्रत्युत्तर नहीं दिया।

विशाखा बोली, "क्या हुआ, मेरी बात का जवाब क्यों नहीं दे रहे हो ?"

संदीप ने कहा, "बताओ, क्या जवाब दूं ?"

विशाखा बोली, "ठीक है, जवाब न देना है तो मत दो, लेकिन मेरा एक अनुरोध स्वीकार करोगे ?"

"क्या ?"

विशाखा ने कहा, "मेरा अनुरोध है कि तुम शादी कर लो।"

"शादी ?"

"हां, तुम्हारा जीवन व्यर्थ होते देखकर, जब तक मैं जिन्दा रहूंगी तब तक मुझे यही दुख सालता रहेगा कि मेरे ही चलते तुम्हें जीवन में कोई सुख नहीं मिला।"

संदीप ने कहा, "शादी करने से ही क्या आदमी सुखी हो जाता है ?"

"ऐसी बात नहीं। लेकिन हां, तुमसे ही मेरी शादी होने जा रही थी और तुम करने को राजी भी हो गए थे। और थोड़ी-सी देर होते ही तुम मेरे पति बन ।"

संदीप ने कहा, "तुमसे जो शादी करने को राजी हुआ था वह मौसीजी का करुण रा देखकर ही।"

"महज यही एकमात्र कारण था ? और कुछ भी नहीं ? मन के अन्दर क्या और ई कारण नहीं था ?"

संदीप ने कहा, "देखो, यह सब बहुत पहले की बात है। उतने दिन पहले की बात ब मुझे याद नहीं है। अब मैं उस समय का 'मैं' नहीं हूं और तुम भी उस समय की ुम' नहीं हो। उन बातों की चर्चा इतने दिन, इतने बरसों के बाद क्यों कर रही हो ?"

विशाखा बोली, "लेकिन मैं वह सब बात भूल नहीं पाती—"

"मगर इतने बरसों तक तो तुम भूले हुए थीं।"

विशाखा ने कहा, "मैं मुर्दा हो गई थी, इसीलिए भूल गई थी। गलती तो हर आदमी से होती है। लेकिन उस गलती के लिए यदि अनुताप हो तो उसका कोई प्रायश्चित्त नहीं है ?"

"उसका प्रायश्चित्त तुम कैसे करोगी, बोलो।"

विशाखा ने कहा, "तुम शादी कर लोगे तो उस गलती का प्रायश्चित्त हो जाएगा।"

बातचीत के बीच ही बाधा खड़ी हो गई। सदर दरवाजे की कुण्डी की खटखटा-हट होते ही संदीप बोला, "अब इस वक्त कौन आ गया ?"

रतन ने जाकर दरवाजा जैसे ही खोला, उस समय जो आदमी अन्दर आया, उस पर नजर पड़ते ही दोनों जने चौंक पड़े। वह तपेश गांगुली था।

"अरे, आप हैं !"

तपेश गांगुली विशाखा को देखकर अवाक् हो गया है।

विशाखा एकाएक उठकर खड़ी हो गई। बोली, "मैं चलती हूं—"

यह कहकर कमरे से निकल बाहर चली गई। तपेश गांगुली ने उस ओर ताकते हुए कहा, "जो चली गई वह विशाखा है न ?"

संदीप ने कहा, "हां।"

तपेश गांगुली बोला, "वह तुम्हारे पास क्यों आई थी ?"

संदीप ने कहा, "यूं ही।"

"उसके पति को जेल से रिहा कर दिया गया है क्या ?"

"नहीं, अब रिहाई का वक्त आ चला।"

तपेश गांगुली ने पूछा, "तुमने तो सुना ही होगा कि उन लोगों का सारा कुछ हाथ से निकल गया। बिडन स्ट्रीट का मकान बिक चुका है। ददिया सास के मरने के बाद उन लोगों की फैक्टरी बन्द हो गई है। अब वे लोग रास्ते के भिखारी हो गए हैं। सुना है न ?"

"हां।"

तपेश गांगुली ने कहा, "यह सब अहंकार का नतीजा है भाई। बड़े आदमी के घ की बहू बनने के कारण वह अहंकार से जमीन पर पैर नहीं रखती थी। आदमी को आद ही नहीं समझती थी। जानते हो, मैं एक दिन अपनी पत्नी और लड़की को साथ ले उस मिलने गया था, लेकिन पैसे की गर्मी से मुझसे मिली ही नहीं। इतना अहंकार हो ग

था ! अब जो कुछ हुआ है, अच्छा ही हुआ है। अब समझ रही होगी कि हवीयत क्या है। दर्पहारी मधुसूदन नामक एक व्यक्ति सिर के ऊपर है भाई मेरे। वे वहां बैठे-बैठे सारा कुछ देख रहे हैं—"

उसके बाद अचानक उस संदर्भ से अलग हटकर कहा, "तुम्हारी तबीयत खराब है क्या ?"

संदीप ने कहा, "हां। आप एकाएक मेरे पास क्यों आए हैं ? कोई जरूरी काम है ?"

"हां, अपनी बिजली की शादी इतने दिनों के बाद तय करने में कामयाब हो गया हूं। तुम मुझे कुछ रुपये बतौर कर्ज दे सकते हो ?"

संदीप ने कहा, "रुपया ?"

"हां भाई, बीसेक हजार रुपया होने से मेरा काम चल जाएगा। तुम तो बिजली को देख ही चुके हो। कितने ही बरसों से बिजली की शादी की कोशिश करता आ रहा हूं, लेकिन चूंकि रुपये का जुगाड़ नहीं कर सका था, इसलिए कोई पात्र ठीक नहीं कर पाया था। अब बिजली काफी उम्रदार हो चुकी है। अन्ततः एक पात्र का जुगाड़ कर सका हूं। लेकिन पात्र विधुर है। शादी हुई थी लेकिन पत्नी दो लड़कियां छोड़ चल बसी है।"

संदीप ने कहा, "इस तरह के पात्र से अपनी इकलौती बेटी की शादी क्यों कर रहे हैं ?"

तपेश गांगुली ने कहा, "पात्र कहां मिलेगा, कहो। तुम्हारी तरह क्या मैं पैसेवाला हूं। जितने भी पात्र देख चुका हूं सभी तीस-चालीस हजार रुपये नकद की मांग करते हैं। साथ ही गाड़ी, फ्रिज सबकुछ चाहिए। लड़की का बाप होकर कब तक विवाह योग्य सयानी लड़की को घर पर बिठाए रखूं—" उसके बाद जरा रुककर बोला, "अब इस विपत्ति में एकमात्र तुम्हीं मेरा उद्धार कर सकते हो भाई। मेरा और कोई अपना नहीं है। इतने दिनों तक मेरी पत्नी थी, वह भी चल बसी—"

"बिजली की मां का देहान्त हो गया है ?"

"हां भाई, वह भी एक दुर्घटना ही थी। स्टोव जलाकर खाना पकाने के दौरान एकाएक साड़ी में आग लग गई। उस समय मैं दफ्तर में था। खबर पाकर जब मैं दौड़ा-दौड़ा घर आया तो सब समाप्त हो चुका था।"

संदीप ने पूछा, "बिजली की शादी हो जाएगी तो फिर आप कहां रहिएगा ?"

"जमाई के घर में। जमाई के घर में लड़की रहेगी और मैं भी रहूंगा। और तुम तो जानते ही हो कि मेरी रेल की नौकरी है, इसलिए ट्रेन पर चढ़ने पर पैसा नहीं खरचना पड़ता है। जमाई के घर में रहूंगा, एक भी पैसा किराये के तौर पर नहीं देना पड़ेगा। इसके अलावा बगैर पैसे के देश-भ्रमण करूंगा। अभी लड़की की शादी हो जाए तो मैं बिलकुल आजाद हो जाऊं। दो भाई, तुम बड़े ही सज्जन हो, मुझे बीसेक हजार रुपया कर्ज दो, प्रोविडेंट फण्ड का पैसा मिलते ही मैं तुम्हारा कर्ज चुका दूंगा—दो भाई, दे दो—"

संदीप चुप्पी ओढ़े रहा। तपेश गांगुली फिर बोला, "क्यों भाई, चुप्पी साधे क्यों हो ? विशाखा की तकदीर तो देख ही चुके। तुम्हारे पास विशाखा जरूर ही रुपया मांगने आई होगी। कहा न, यह और कुछ नहीं, अहंकार का नतीजा है। विशाखा और भाभीजी अहंकार से चूर हो गई थीं। सोचा था, करोड़पति के घर में लड़की की शादी हो रही है, हाथ में आकाश का चांद आ जाएगा। लेकिन वह रुपया कहां चला गया ? अब वह रुपया कहां चला गया ? रह गया ? पति तो जेलखाने में है और रुपये तो सब-के-सब गायब हो गए। शादी होने के बाद विशाखा हमें आदमी ही नहीं समझती थी। लेकिन अब ?"

संदीप ने कहा, "शादी करने से ही क्या आदमी सुखी हो जाता है ?"

"ऐसी बात नहीं। लेकिन हां, तुमसे ही मेरी शादी होने जा रही थी और तुम शादी करने को राजी भी हो गए थे। और थोड़ी-सी देर होते ही तुम मेरे पति बन जाते।"

संदीप ने कहा, "तुमसे जो शादी करने को राजी हुआ था वह मौसीजी का करुण चेहरा देखकर ही।"

"महज़ यही एकमात्र कारण था ? और कुछ भी नहीं ? मन के अन्दर क्या और कोई कारण नहीं था ?"

संदीप ने कहा, "देखो, यह सब बहुत पहले की बात है। उतने दिन पहले की बात अब मुझे याद नहीं है। अब मैं उस समय का 'मैं' नहीं हूं और तुम भी उस समय की 'तुम' नहीं हो। उन बातों की चर्चा इतने दिन, इतने बरसों के बाद क्यों कर रही हो ?"

विशाखा बोली, "लेकिन मैं वह सब बात भूल नहीं पाती—"

"मगर इतने बरसों तक तो तुम भूले हुए थीं।"

विशाखा ने कहा, "मैं मुर्दा हो गई थी, इसीलिए भूल गई थी। गलती तो हर आदमी से होती है। लेकिन उस गलती के लिए यदि अनुताप हो तो उसका कोई प्रायश्चित्त नहीं है ?"

"उसका प्रायश्चित्त तुम कैसे करोगी, बोलो।"

विशाखा ने कहा, "तुम शादी कर लोगे तो उस गलती का प्रायश्चित्त हो जाएगा।"

बातचीत के बीच ही बाधा खड़ी हो गई। सदर दरवाज़े की कुण्डी की खटखटाहट होते ही संदीप बोला, "अब इस वक्त कौन आ गया ?"

रतन ने जाकर दरवाज़ा जैसे ही खोला, उस समय जो आदमी अन्दर आया, उस पर नज़र पड़ते ही दोनों जने चौंक पड़े। वह तपेश गांगुली था।

"अरे, आप हैं !"

तपेश गांगुली विशाखा को देखकर अवाक् हो गया है।

विशाखा एकाएक उठकर खड़ी हो गई। बोली, "मैं चलती हूं—"

यह कहकर कमरे से निकल बाहर चली गई। तपेश गांगुली ने उस ओर ताकते हुए कहा, "जो चली गई वह विशाखा है न ?"

संदीप ने कहा, "हां।"

तपेश गांगुली बोला, "वह तुम्हारे पास क्यों आई थी ?"

संदीप ने कहा, "यूं ही।"

"उसके पति को जेल से रिहा कर दिया गया है क्या ?"

"नहीं, अब रिहाई का वक्त आ चला।"

तपेश गांगुली ने पूछा, "तुमने तो सुना ही होगा कि उन लोगों का सारा कुछ हाथ से निकल गया। बिडन स्ट्रीट का मकान बिक चुका है। ददिया सास के मरने के बाद उन लोगों की फैक्टरी बन्द हो गई है। अब वे लोग रास्ते के भिखारी हो गए हैं। सुना है न ?"

"हां।"

तपेश गांगुली ने कहा, "यह सब अहंकार का नतीजा है भाई। बड़े आदमी के घर की बहू बनने के कारण वह अहंकार से जमीन पर पैर नहीं रखती थी। आदमी को आदमी ही नहीं समझती थी। जानते हो, मैं एक दिन अपनी पत्नी और लड़की को साथ ले उससे मिलने गया था, लेकिन पैसे की गर्मी से मुझसे मिली ही नहीं। इतना अहंकार हो गया

था ! अब जो कुछ हुआ है, अच्छा ही हुआ है। अब समझ रही होगी कि हकीकत क्या है। दर्पहारी मधुसूदन नामक एक व्यक्ति सिर के ऊपर हैं भाई मेरे। वे वहां बैठे-बैठे सारा कुछ देख रहे हैं—"

उसके बाद अचानक उस संदर्भ से अलग हटकर कहा, "तुम्हारी तबीयत खराब है क्या ?"

संदीप ने कहा, "हां। आप एकाएक मेरे पास क्यों आए हैं ? कोई जरूरी काम है ?"

"हां, अपनी बिजली की शादी इतने दिनों के बाद तय करने में कामयाब हो गया हूं। तुम मुझे कुछ रुपये बतौर कर्ज दे सकते हो ?"

संदीप ने कहा, "रुपया ?"

"हां भाई, बीसेक हजार रुपया होने से मेरा काम चल जाएगा। तुम तो बिजली को देख ही चुके हो। कितने ही बरसों से बिजली की शादी की कोशिश करता आ रहा हूं, लेकिन चूंकि रुपये का जुगाड नहीं कर सका था, इसलिए कोई पात्र ठीक नहीं कर पाया था। अब बिजली काफी उम्रदार हो चुकी है। अन्ततः एक पात्र का जुगाड़ कर सका हूं। लेकिन पात्र विधुर है। शादी हुई थी लेकिन पत्नी दो लडकियां छोड चल बसी है।"

संदीप ने कहा, "इस तरह के पात्र से अपनी इकलौती बेटी की शादी क्यों कर रहे हैं ?"

तपेश गांगुली ने कहा, "पात्र कहां मिलेगा, कहो। तुम्हारी तरह क्या मैं पैसेवाला हू। जितने भी पात्र देख चुका हू सभी तीस-चालीस हजार रुपये नकद की मांग करते हैं। साथ ही गाडी, फ्रिज सबकुछ चाहिए। लडकी का बाप होकर कब तक विवाह योग्य सयानी लड़की को घर पर बिठाए रखूं—" उसके बाद जरा रुककर बोला, "अब इस विपत्ति में एकमात्र तुम्हीं मेरा उद्धार कर सकते हो भाई। मेरा और कोई अपना नहीं है। इतने दिनों तक मेरी पत्नी थी, वह भी चल बसी—"

"बिजली की मां का देहान्त हो गया है ?"

"हां भाई, वह भी एक दुर्घटना ही थी। स्टोव जलाकर खाना पकाने के दौरान एकाएक साडी में आग लग गई। उस समय मैं दफ्तर में था। खबर पाकर जब मैं दौडा-दौडा घर आया तो सब समाप्त हो चुका था।"

संदीप ने पूछा, "बिजली की शादी हो जाएगी तो फिर आप कहां रहिएगा ?"

"जमाई के घर में। जमाई के घर में लडकी रहेगी और मैं भी रहूंगा। और तुम तो जानते ही हो कि मेरी रेल की नौकरी है, इसलिए ट्रेन पर चढने पर पैसा नहीं खरचना पड़ता है। जमाई के घर में रहूंगा, एक भी पैसा किराये के तौर पर नहीं देना पडेगा। इसके अलावा बगैर पैसे के देश-भ्रमण करूंगा। अभी लडकी की शादी हो जाए तो मैं बिलकुल आजाद हो जाऊं। दो भाई, तुम बड़े ही सज्जन हो, मुझे बीसेक हजार रुपया कर्ज दो, प्रोविडेंट फण्ड का पैसा मिलते ही मैं तुम्हारा कर्ज चुका दूगा—दो भाई, दे दो—"

संदीप चुप्पी ओढे रहा। तपेश गांगुली फिर बोला, "क्यों भाई, चुप्पी साधे [illegible] हो ? विशाखा की तकदीर तो देख ही चुके। तुम्हारे पास विशाखा जरूर ही [illegible] आई होगी। कहा न, यह और कुछ नहीं, अहंकार का नतीजा है। विशाखा और [illegible] अहंकार से चूर हो गई थी। सोचा था, करोड़पति के घर में लड़की की [illegible] हाथ में आकाश का चांद आ जाएगा। लेकिन वह रुपया कहां चला गया [illegible] कहां चला गया ? रह गया ? पति तो जेलखाने में है और रुपये तो [illegible] गए। शादी होने के बाद विशाखा हमें आदमी ही नहीं समझती थी। लेकिन अब

संदीप अब भी चुप्पी साधे रहा। तपेश गांगुली फिर बोला, "क्यों भाई, बातें नहीं करोगे? बीसेक हज़ार रुपये तुम्हारे लिए हाथ की मैल के बराबर है। तुम बैंक में नौकरी करते हो। तुम लोगों की तो हमारी जैसी हालत नहीं है। न तो तुम्हारी मां जीवित हैं और न विशाखा की मां ही जीवित है कि तुम्हारा रुपया खर्च हो। तुम्हारे सारे रुपये बैंक में जमा हैं। तुम्हें पत्नी या बाल-बच्चे भी नहीं हैं। तुम तो बेफिक्र आदमी हो। मेरी बात का जवाब क्यों नहीं दे रहे हो? दो—"

संदीप अब भी खामोशी में डूबा हुआ है। उसके मुंह से कोई शब्द नहीं निकल रहा है।

तपेश गांगुली फिर कहने लगा, "विशाखा की मां के श्राद्ध की खबर पाते ही उस बार पत्नी और लड़की के साथ बेड़ापोता गया था। तुमने हमें न्योता भेजा ही नहीं था। सो नहीं भेजा तो कोई बात नहीं। मैंने सुना था, तुम हम लोगों को अच्छा-अच्छा खाना खिलाओगे। सुना था, तुमने नाना किस्म के खाने की चीज़ों का बन्दोबस्त किया है—मुर्गी, बकरे का मांस, चॉप, कटलेट, पनतुआ, राजभोग, गुलाब जामुन, दही, रबड़ी—लेकिन सब धोखाधड़ी थी। तुमने दाल और मछली का शोरबा खाने को दिया। हम उतनी दूर से गए सिर्फ तुम्हारी दाल और मछली का शोरबा खाने? बहरहाल, यह सब बहुत साल पहले की बात है, लेकिन अब भी उसे नहीं भूला हूं। यदि मालूम होता कि तुम इतने कंजूस हो तो हम क्या बेड़ापोता जाते? खैर, रहने दो, रहने दो इन बातों को, उन पुरानी बातों को दुहराने से फायदा ही क्या? अभी मुझे तुम्हें बीसेक हज़ार रुपया देना ही होगा, मुझे इस विपत्ति से बचाना ही है। तुम्हारी कोई आपत्ति मैं मानने को तैयार नहीं हूं।"

संदीप जिस तरह खामोश था उसी तरह खामोशी ओढ़े रहा, उसके मुंह से कोई शब्द नहीं निकला।

इतने दिनों के बाद दुबारा वही सब बात याद आने लगीं। उसी समय की, उन्हीं सब वारदातों की। इतने दिनों के बाद, जेल से निकलने पर आंखों के सामने वह सब तस्वीरें तैरने लगीं। पूरी दुनिया में सचमुच ही बदलाव आ गया है। आज अपनी आंखों के सामने उसने जैसे एक नया कलकत्ता का साक्षात्कार किया। कितने नए-नए मकान खड़े हो गए हैं इस शहर में! बारह बटे ए बिडन स्ट्रीट के मकान में कैसी तब्दीली आ गई है! उसी तरह पूरा पार्क स्ट्रीट भी बदल गया है। आज कोई जाना-पहचाना आदमी संदीप को देख ले तो उसे पहचान नहीं सकेगा। आज उसका चेहरा दाढ़ी-मूछों से भरा हुआ है। इतने दिनों तक जेल में रहने के कारण वह खुद भी अपने आपको, हो सकता है, पहचान नहीं सके। उसमें भी निश्चय ही बदलाव आ गया है। कलकत्ता शहर और कलकत्ता शहर के लोग जबकि बदल गए हैं तो वह भी एक ही जैसा रहे, यह कैसे हो सकता है?

दूर से एक विशाल जुलूस आ रहा था। लम्बा जुलूस। शायद आठ मील लम्बा। किस चीज का जुलूस है?

सामने लाल सालू पर कुछ लिखा हुआ है। दूर से कुछ पढ़ा नहीं गया। सिर्फ एक लिखावट पढ़ सका—'विजय उत्सव'।

किसी एक जूट-मिल के मेहनतकशों के यूनियन की हड़ताल के विजयोत्सव का जुलूस निकला है। उसी के नीचे लाल सालू पर बड़े-बड़े अक्षरों में लिखा हुआ है—डेमोक्रेटिक एक्शन पार्टी।

संदीप सड़क के एक किनारे हटकर खड़ा हो गया। सड़क की पूरी जगह को

घेरकर पार्टी का जुलूस आगे बढ़ रहा है। मेहनतकश कर्मचारियों के चेहरे पर खुशियों की छाप है। सभी एक स्वर में चिल्ला रहे हैं—गोपाल हाजरा जिन्दाबाद, गोपाल हाजरा जिन्दाबाद !

यहां भी गोपाल हाजरा !

एक जीप गाड़ी जुलूस के आगे आहिस्ता-आहिस्ता चल रही थी। सदीप ने देखा, सामने जो आदमी खड़ा होकर, दोनों हाथों को जोड़ माथे तक ले जाकर नमस्कार कर रहा है, वह गोपाल हाजरा है। सदीप ने गोपाल हाजरा को बहुत दिनों के बाद देखा। उसी डेमोक्रेटिक एक्शन पार्टी के अनन्य सस्थापक गोपाल हाजरा को। बेहापोता के हाजरा बूढ़े के एकमात्र बेटे को। जिस आदमी ने कितने ही लोगों का सर्वनाश किया है, ड्रग के नशे का शिकार बनाकर कितने ही लोगों का खून किया है, सैक्सबी मुखर्जी कपनी के कितने ही हजार कर्मचारियों को बेरोजगार बनाया है, उसी आदमी को आज हजारों आदमी का जयजयकार प्राप्त हो रहा है। आज यदि सदीप के चेहरे पर दाढ़ी-मूछें न होती तो शायद उसे भी पहचान लेता।

और अगर न पहचान पाता तो हानि ही क्या है ? उस जीप पर क्या सिर्फ गोपाल हाजरा था ? उसके साथ था श्रीपति मिश्र भी। तीन बार मैट्रिक फेल मिनिस्टर। कितने ही लाख रुपये घूस लिए थे मुक्तिपद मुखर्जी से। पर मेहनतकशों की भलाई के नाम पर तमाम मेहनतकशों को नौकरी से हाथ धोना पड़ा था, वे दाने-दाने को मुंहताज हो गए थे, बर्बाद हो गए थे। उन लोगों के साथ ही नौकरी चली गई थी वेलफेयर ऑफिसर जसवंत भार्गव, चीफ एकाउन्टेंट नागराजन, वर्क्स मैनेजर कांति चटर्जी, डिप्टी वर्क्स मैनेजर अर्जुन सरकार की। और सिर्फ इतना ही नहीं, एक विख्यात खानदान तहस-नहस हो गया था। दादी मां की साध की गृहस्थी उजड़ गई थी, इस गोपाल हाजरा, श्रीपति मिश्र और बरदा घोषाल की साजिश से। आज इतने दिनों के बाद एक और नए सैक्सबी मुखर्जी का सर्वनाश करने को अभी विजयोत्सव मनाया जा रहा है। विजयोत्सव किन लोगों का है, सदीप यह अच्छी तरह जानता है। इतने बरसों तक जेलखाने में बिताने के बावजूद सदीप के लिए जानना बाकी नहीं है। इन कई बरसों के दरमियान दुनिया जरा भी बदली नहीं है। हालांकि गोपाल हाजरा वगैरह का अनाचार और बढ़ गया है।

इतने दिनों के बाद निवारण की बात ही उसे सत्य प्रतीत हुई। सूर्य के चारों-तरफ, हो सकता है, इतने दिनों तक पृथ्वी घूमती थी लेकिन अब सूरज ही ने धरती के चारों तरफ घूमना शुरू कर दिया है। वरना मुक्तिपद, सौम्यपद और विशाखा वगैरह इतने अमीर से गरीब क्यों हो जाते और श्रीपति मिश्र, बरदा घोषाल और गोपाल हाजरा वगैरह गरीब से उठकर इतने बड़े आदमी क्यों हो गए होते ?

अचानक एक ही लमहे में सदीप लगभग बीस वर्ष पीछे लौटकर चला गया। उस समय उसे कितना काम रहता था ! बस का धक्का लगने के कारण मरने-मरने से बच गया था। अब लगता है, उस दिन मर गया होता तो शायद अच्छा रहता। तो फिर उस आदमी के जीवन का इस तरह की असभावित घटना और अवमूल्यन नहीं देखना पड़ता। और साथ ही साथ ऐसा पतन।

हालांकि किसी दिन वह कितनी उम्मीद लिए एक जगल-झाड़ी से भरे गांव से आया था। मल्लिक चाचा ने उसे पहले ही दिन कहा था "जानते हो सदीप, तुम जिन लोगों के घर में आकर टिके हो वे लोग बहुत बड़े आदमी हैं। तुम्हारे मन में यदि कभी इन लोगों की तरह बड़े आदमी बनने की तमन्ना रहे तो सारा कुछ गहरी छानबीन के साथ देख लो। उसके बाद भी तुम्हें बड़ा आदमी बनने की तमन्ना रहे तो तुम बड़ा आदमी बनने की कोशिश करो।"

इस बात का कोई जवाब नहीं दिया था संदीप ने।

मल्लिक चाचा ने यह भी कहा था, "दुनिया में आज भी जो लोग प्रातः के रूप में जाने जाते हैं, उनमें से कोई बड़ा आदमी नहीं था। जिन कुछेक वैज्ञानिकों ने अपने आविष्कार से दुनिया की शक्ल बदल दी है वे प्रारम्भ में गरीब ही थे। अपवाद के रूप में हैं तो केवल बुद्धदेव। राजपुत्र होने के बावजूद, वे गरीब बन रास्ते पर उतर आए थे और गरीबी अपना ली थी। क्यों? बताओ तो, क्यों ऐसा किया था?"

सब कुछ सुनने के बाद संदीप ने सिर्फ एक ही बात पूछी थी, "आप किस उम्मीद में इस घर में इतने दिनों से नौकरी कर रहे हैं?"

मल्लिकजी ने कहा था, "तुम्हीं कहो न कि किसलिए कर रहा हूं?"

संदीप ने कहा था, "या तो आश्रय के लिए या फिर पैसे के लिए।"

मल्लिक चाचा ने कहा था, "अभी मैं तुम्हारे इस सवाल का जवाब नहीं दूंगा।"

"कब जवाब दीजिएगा?"

"जब तुम बड़े हो जाओगे, नौकरी करोगे और रुपया कमाओगे तो तुम्हें खुद-ब-खुद अपने सवाल का जवाब मिल जाएगा।"

उसके बाद उसने सौम्यपद बाबू को देखा था, दादी मां को देखा था, मुक्तिपद बाबू को देखा था, उनकी पत्नी नंदिता को देखा था, पिकनिक को देखा था। जब उसे बैंक की नौकरी मिली थी तो मौसीजी के कैंसर की बीमारी की यातना देखी थी, गोपाल हाजरा, बरदा घोषाल, श्रीपति मिश्र को देखा था। बैंक से सम्बन्धित होने के बाद बहुत सारे करोड़पतियों को देखा था। उसके बाद दादी मां के श्राद्ध के दिन बिना बुलाए बारह बटे ए विडन स्ट्रीट के मकान में गया था और वहां की स्थिति का जायजा भी लिया था।

लेकिन सबसे अधिक आश्चर्य उसे मल्लिक चाचा को देखकर हुआ था। चेहरे पर किसी प्रकार के विकार का लक्षण न देखकर संदीप अवाक् हो गया था। दादी मां की मौत के साथ ही वे बेरोजगार हो गए। इस घर से सारे रिश्ते टूटने का जो सवाल पैदा हो गया, उसकी वजह से उनके चेहरे पर जो छाप पड़नी चाहिए थी उसका कहीं कोई नामो-निशान नहीं था।

आखिर में मल्लिक चाचा को एकांत में पाकर उसने पूछा था, "अच्छा, मल्लिक चाचा, आपसे एक बात पूछूं?"

"क्या, कहो।"

"अब तो आपकी नौकरी चली गई। अब किसी दिन, हो सकता है, इस मकान की भी बिक्री हो जाए। यह सब सोचकर आपको डर नहीं लग रहा?"

"डर? किस बात का डर?"

संदीप ने कहा था, "इतने सालों का आपका एक स्थायी आश्रय चला गया, उसके लिए आपको कोई दुश्चिन्ता नहीं हो रही है?"

मल्लिक चाचा ने हंसते हुए जवाब दिया था, "दुश्चिन्ता क्यों होगी? इस मकान में मैं अगर न आया होता, इन लोगों से इतनी घनिष्ठता नहीं हुई होती तो क्या जान पाता कि उत्थान होने से पतन भी होता है? चढ़ाव रहने पर उतार को भी स्वीकारना पड़ता है, जन्म रहने पर मृत्यु को भी स्वीकार करना पड़ता है। इन बातों को इतनी सच्चाई के साथ कैसे जान पाता!"

"इसके बाद क्या होगा?"

"इसके बाद जो होगा उसके लिए मैं प्रस्तुत हूं। इसके बाद मैं कहां रहूंगा, किसके पास जाकर टिकूंगा, उस सम्बन्ध में सोचने को कुछ नहीं रह गया। इसके बाद जो कुछ होगा, उसके लिए मैं प्रस्तुत हूं। अब मुझे कोई दुश्चिन्ता न रही। अब जान गया कि

मैं स्वतन्त्र हूं। किसी वस्तु के प्रति कोई आसक्ति नहीं होनी चाहिए, इसका मुझे प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त हो गया।"

"कौन?"

बीस साल पहले के गले की आवाज इतने दिनों के बाद संदीप के कानों में आकर पहुंची। औरताना गले का जवाब आया, "मैं विशाखा दी हूं रतन।" आज के इस गोपाल हाजरा का विजयोत्सव, पहले के उस दादी मां के श्राद्ध का दिन और बीस साल पीछे की विशाखा के गले की आवाज—सारा कुछ जैसे एक ही निमिष में एकाकार हो गया।"

"आप बैठ जाइए, दादा बाबू अब तक ऑफिस से नहीं आए हैं।"

"आज तुम्हारे दादा बाबू को ऑफिस से आने में इतनी देर क्यों हो रही है?"

रतन ने कहा, "सुना है, आजकल ऑफिस का काम कुछ बढ़ गया है। ऑफिस से आने में थोड़ी देर हो जाती है। आप थोड़ी देर बैठिएगा?"

"तुम्हारे बाबू को घर आने में कितनी देर लगेगी?"

रतन ने कहा, "हो सकता है एकाध घण्टे में चले आएं। आप जरा बैठ जाइए न। मैं चाय बना दूं?"

विशाखा बोली, "नहीं, इसकी जरूरत नहीं है। तुम कह देना कि मैं एक खास जरूरी काम से आई थी। मैं अभी चलती हूं। बाद में किसी दिन आऊंगा—"

यह कहकर विशाखा चली गई। संदीप एक घण्टे के बाद जब ऑफिस से लौटकर आया तो उसे यह खबर सुनने को मिली। बोला, "कौन-सा खास जरूरी काम था, यह नहीं बताया?"

"नहीं। मैंने बैठने को कहा था, चाय बना दूं या नहीं, यह भी पूछा था। लेकिन बैठी नहीं। चली गई।"

संदीप को ऑफिस के काम से दिन-भर जी तोड़ परिश्रम करना पड़ा है। हजारों लोगों का हजारों किस्म का कथन सुना है। हजारों आदमी को हजारों हुक्म दिए हैं। कोई भी पहले की तरह काम करना नहीं चाहता। अभी जिस तरफ निगरानी नहीं रखेगा वहीं सब लोग लापरवाही बरतेंगे। ऑफिस की छुट्टी का घण्टा बजते ही सभी तुरन्त घर चले जाते हैं।

लेकिन संदीप को ऑफिस में रहना पड़ता है। दिन-भर जिन कागजातों को देखने की फुर्सत नहीं मिलती, उन कागजातों को लेकर बैठता है। उस समय दरवान भी रहता है। इसके लिए उसे ओवरटाइम भी देना पड़ता है। और सिर्फ क्या यही?

रविवार तो छुट्टी का दिन होता है। उस दिन संदीप के अलावा सबको छुट्टी रहती है। संदीप हर रविवार को ऑफिस आता है और बाकी बचे तमाम कामों को करता है। ऐसा न करेगा तो ऑफिस निष्क्रिय हो जाएगा। लोगों के काम की हानि होगी। सारे काम को वह पहले ही करके रख देना चाहता है। स्टाफों के लिए छोड़कर रख देने से काम नहीं चलता।

यही वजह है कि उसे उस दिन ऑफिस से आने में देर हो गई थी। लेकिन घर आने पर जब सुनने को मिला कि विशाखा किसी जरूरी काम से उसके घर आई थी तो फिर इन्तजार करना बरदाश्त नहीं हुआ। रतन से कहा, "रतन, मैं थोड़ी देर में आ रहा हूं। आने के बाद खाना खाऊंगा।"

यह कहकर संदीप घर से निकल सीधे बड़ी सड़क पर चला आया। भुवन गांगुली लेन से वह परिचित है। घर से निकल पांच नम्बर भुवन गांगुली लेन के विशाखा के घर पहुंचने में लगभग एक घण्टा समय लगता है। बहुत दिनों में जाने की बात सोचते रहने पर भी विशाखा के घर जाना नहीं हो सका था। इसके अलावा एक और बात है।

विशाखा अकेली है। वह परायी स्त्री है। सामी पति के घर में न रहने के कारण उसके पास ज्यादा आने-जाने को लोग अच्छी नजर से नहीं देखेंगे। हालांकि उसकी इस मुसीबत की घड़ियों में संदीप उसकी देखरेख नहीं करेगा तो फिर कौन करेगा ? विशाखा के लिए कोई और ऐसा व्यक्ति नहीं है जिसे वह अपना आदमी समझ सके।

कलकत्ता शहर का हर आदमी भला आदमी नहीं है। कलकत्ता के लोगों के मुसीबत के दिनों में कोई किसी का नहीं होता। सुख के दिन में रश्क करने वाले बहुत सारे लोग होते हैं।

संदीप जब ठीक पते पर पहुंचा तो घर के दरवाजे और खिड़कियां बाहर से बन्द थीं। अंधेरे में दीवार पर लिखे नम्बर को मिलाकर संदीप दरवाजे की कुंडी खटखटाने लगा। अन्दर से औरताना गले की आवाज आई, "कौन ?"

बाहर से संदीप बोला, "मैं संदीप हूं, बेड़ापोता का संदीप लाहिड़ी। विशाखा देवी घर में हैं ?"

औरताना गले से आवाज आई, "नहीं, भाभीरानी घर में नहीं हैं—"

"कब आएंगी ?"

"उन्हें आने में देर होगी।"

संदीप बोला, "आप कौन हैं ?"

औरताना आवाज आई, "मैं इस घर की कामगार हूं।"

संदीप ने कहा, "तुम दरवाजा खोल दो। मैं तुम्हारी भाभीरानी से मिलने आया हूं। वे आएंगी तो उनसे कुछ बातें करनी हैं। उनसे मिलने के लिए कुछ देर तक बैठा रहूंगा। मुझे उनसे जरूरी बातें करनी हैं—"

औरताना गले की आवाज आई, "भाभीरानी ने किसी को अन्दर घुसने देने से मना किया है। मैं दरवाजा खोल नहीं सकूंगी।"

संदीप इस बात के बाद कर ही क्या सकता है ! कुछ देर तक इन्तजार करना ही बेहतर रहेगा। इतनी दूर आकर घर क्या वापस जाया जा सकता है ?

चारों तरफ रात का अंधेरा गहरा होता जा रहा है। मुहल्ला भी क्रमशः वीरान होता जा रहा है। रास्ते के लोग क्या सोचेंगे ? हो सकता है मन-ही-मन सवाल करें कि यह आदमी यहां इस तरह चक्कर क्यों लगा रहा है ? इसका मकसद क्या है ?

"अरे, तुम यहां ?"

संदीप ने देखा, तपेश गांगुली अपनी लड़की को लेकर रास्ते से जा रहा है। संदीप ने उसे अनदेखा करना चाहा था। लेकिन देख लिए जाने पर बात करनी ही पड़ी। बोला, "आप यहां किधर गए थे ?"

तपेश गांगुली ने कहा, "अपनी लड़की को लिए विशाखा के नए मकान में आया था। लेकिन विशाखा घर में नहीं है। कहीं निकली हुई है। उसकी नौकरानी ने दरवाजा खोला ही नहीं। बोली, भाभीरानी दरवाजा खोलने से मना करके गई है। सोचकर देखो, अब तो सर्वस्व चला गया, फिर भी इतना अहंकार ! मैंने अपना परिचय बताया तो भी दरवाजा नहीं खोला भाई। हालांकि वह मेरी सगी भतीजी है। आज अपनी नौकरानी के हाथों मुझे अपमानित कर भगा दिया—"

संदीप ने कहा, "लगता है, आप बीच-बीच में विशाखा के घर आते रहते हैं।"

तपेश गांगुली ने कहा, "विशाखा मेरी सगी भतीजी है, आऊंगा नहीं ? इसके अलावा बिजली के कारण भी परेशानी में हूं। इतनी बड़ी जवान लड़की को किसके पास अकेली छोड़ कर आफिस जाऊं, इसलिए बीच-बीच में विशाखा के पास बिजली को रख जाता हूं। बिजली लड़की होने के बजाय यदि लड़का होती तो फिर मेरे लिए चिन्ता

की कौन-सी बात थी?"

'क्यों, आपकी बिजली की शादी नहीं हुई है? आपने तो कहा था, बिजली की शादी बिलकुल पक्की हो गई है।"

तपेश गांगुली ने कहा, "अरे, वह शादी हुई ही कहां! होती तो तुमसे बीस हजार रुपया कर्ज नहीं लिया होता?"

संदीप ने पूछा, "उस पात्र ने क्या अन्ततः बिजली को पसन्द नहीं किया?"

"अरे नहीं, उस पात्र के बड़े भाई की एक सयानी साली थी, अन्ततः उसी को पसन्द कर लिया। जाने-पहचाने खानदान में रिश्ता कायम कर दिया और क्या!"

उसके बाद जरा रुककर बोला, "चलूं भाई, अब खिदिरपुर के मनसातल्ला लेन ही लौट चलूं। आने के समय यह नहीं सोचा था कि विशाखा घर में नहीं होगी। सोचा था, आज रात यहीं रहूंगे, यहीं खाना खाएंगे। सो नहीं हुआ तो फिर जल्द-से-जल्द चला जाऊं। घर जाकर रसोई पकानी है, चलूं। विशाखा कहां गई है, कब आएगी, इसका कोई ठिकाना नहीं। उसके भरोसे बैठे रहने से काम नहीं चलेगा, मुझे कल फिर दफ्तर जाना है—"

यह कहकर बिजली को अपने साथ ले तेज कदमों से बड़ी सड़क की ओर बढ़ गया।

संदीप भी घर लौटने की बात सोच रहा था। कल सवेरे से ही काम का सिलसिला शुरू हो जाएगा। उसके बाद चलने के दौरान तपेश गांगुली बाबू की याद आई। रुपये के लिए वह आदमी जिन्दगी-भर मारा-मारा फिर रहा है फिर भी रुपया-पैसा नहीं मिला। और उस पर है लड़की। लड़की की शादी के लिए कितनी ही जगह धरना दिया पर लड़की की शादी नहीं हुई।

"ओ भाई, ओ भाई—"

अचानक पीछे से तपेश गांगुली की आवाज सुनाई पड़ी। संदीप विशाखा से मिलने की उम्मीद छोड़ घर की तरफ ही जा रहा था। एकाएक पीछे से तपेश गांगुली के गले की आवाज सुन पीछे की तरफ मुड़कर खड़ा हो गया। बिजली के साथ लपकते हुए आकर नजदीक में खड़ा हो गया। बोला, "लड़की की शादी के बारे में सोचते-सोचते मेरा दिमाग खराब हो गया था भाई। असली बात कहना ही भूल गया था। सुना है तुम्हारी मां का देहांत हो गया है। तुम्हारा खाना अब कौन पका रहा है?"

संदीप ने कहा, "घर में काम करने के लिए एक आदमी है, वही पकाता है।"

"नौकर रखा है? वह तो चोरी करके घर खाली कर रहा है—"

संदीप ने कहा, "नहीं, वह बड़ा ही विश्वासी आदमी है।"

तपेश गांगुली ने कहा, "तुम मेरी बिजली से शादी कर सकते हो। उसके जैसा विश्वासी आदमी तुम्हें कहीं नहीं मिलेगा।"

संदीप क्या कहे, समझ में नहीं आया। बगल में खड़ी बिजली की ओर गौर से देखा। वह उस समय अपने बाप की बातें सुन शर्म से सिर झुकाए हुए थी। तपेश गांगुली ने अपनी लड़की से पूछा, "क्यों री, तू सिर झुकाए हुए क्यों है? संदीप को तो तू छुटपन से ही पहचानती है। उसके सामने सिर उठाकर ताकने में तुझे शर्म क्यों लग रही है? बोल। मेरी बात का जवाब दे—"

तो भी बिजली सिर झुकाए ही खड़ी रही। कोई जवाब नहीं दिया। तपेश गांगुली ने संदीप से कहा, "जानते हो भाई, मेरी बिजली से शादी करने पर तुझे घर में नौकर-नौकरानी नहीं रखना पड़ेगा। वह काम कर सकती है। वह अपनी मां से भी अच्छा खाना पकाती है। उसके बाद कपड़ा-लत्ता फींचने से शुरू कर घर में झाड़ू-बुहारू लगाना, बर्तन

मांजना वगैरह सारा काम कर देगी। तुम्हारे लिए चिंता की कोई बात नहीं रहेगी। शादी करोगे ?"

संदीप को उस समय तपेश गांगुली की बातें असह्य जैसी लग रही थीं। बोला, "मेरी शादी हो चुकी है।"

"तुम्हारी शादी हो चुकी है ? क्या कह रहे हो तुम ? कब हुई ? हमें तो निमंत्रित नहीं किया तुमने !"

"सचमुच ही मेरी शादी हो चुकी है।"

"मगर कब ? हम लोगों में से किसी को भी यह मालूम नहीं हो सका। एक बार तो विशाखा के साथ शादी के पीढ़े पर बैठ कर उठ जाना पड़ा था। हमें वह सब मालूम है। तुम्हारे कुछ रुपये इसके चलते व्यर्थ ही खर्च हो गए। उसके बाद फिर कब तुम्हारी शादी हुई ?"

संदीप बोला, "एक आदमी कितनी बार शादी करता है ?"

तपेश गांगुली ने कहा, "अरे, वह तो शादी नहीं थी। शादी करने के दौरान अड़चन पैदा हो जाने के कारण अचानक बिडन स्ट्रीट के मुखर्जी-भवन के फांसी के मुजरिम पोते से विशाखा की शादी हो गई। वह क्या कोई शादी है भला ? तुम उसे शादी होना कहते हो ?"

संदीप ने कहा, "हां, मैं उसे शादी होना कहता हूं—"

"तो फिर क्या तुम जिन्दगी भर अकेले ही रहोगे ? शादी नहीं करोगे ?"

संदीप ने कहा, "मैं तो कह ही चुका हूं कि मेरी शादी हो चुकी है। एक आदमी कितनी बार शादी करता है ? आप यह मान क्यों नहीं लेते कि मेरी शादी हो चुकी है !"

"तो तुम यह कहना चाहते हो कि मेरी बिजली से शादी नहीं करोगे ? बिजली को तो देख ही रहे हो। इसके लिए अब मैं क्या करूं ? और तुम अगर शादी नहीं करना चाहते हो तो तुम्हारे आफिस में तुम्हारे अधीन और भी कितने ही आदमी काम करते हैं। उनमें से कोई पात्र हो तो उसके बारे में मुझे बताओ। चाहे एक ब्याहा हो, दो ब्याहा हो, मुझे कोई आपत्ति नहीं है, सिर्फ खाने-पहनने का जिसे अभाव न हो, ऐसा ही ब्राह्मण पात्र होने से काम चल जाएगा—"

संदीप ने कहा, "अच्छा, देखूंगा—"

"तो फिर हम चलते हैं। हमें बहुत दूर जाना है। जाकर रसोई पकानी है, चलता हूं—बाद में तुमसे किसी दिन मुलाकात करूंगा।"

यह कहकर तपेश गांगुली अपनी लड़की के साथ चला गया।

"कौन ?"

रतन के गले की आवाज संदीप के कान में आई। सचमुच, इतनी रात में कौन उसके घर में आया ! विशाखा बोली, "मैं विशाखा हूं ! तुम्हारे मालिक हैं ?"

बैट्रण्ड रसेल ने कहा है कि इतिहास के पन्नों को देखने पर पता चलेगा कि दुनिया में सिर्फ दो ही युग घूम-फिरकर आते हैं। एक है विश्वास का युग और दूसरा है अविश्वास का युग। विश्वास के युग में आदमी को विश्वास रहता है कि पुण्य करने से मनुष्य का शुभ होता है। और अविश्वास के युग में आदमी को विश्वास रहता है कि पुण्य-वुण्य बेकार की चीज है। असली शुभ है सांप्रतिक लाभ। सांप्रतिक लाभ ही बड़ी बात है। भविष्य की बात दरकिनार कर दो। आज क्या मिलेगा, पहले इसी का जवाब दो।

विश्वास के युग में आदमी को साधुपन पर कोई संदेह नहीं रहता, प्रेम और प्यार

पर कोई संदेह नहीं [illegible]
कहता है, "मेरे कार [illegible]
कौन-सी भलाई कर [illegible]

विश्वास युग के बाद ही अविश्वास का युग लौटकर आता है। उस समय आदमी कहता है : "उस आदमी का इतना भला क्यों हुआ ? उसके बदले मेरा भला क्यों नहीं हुआ ? इसलिए उसे हानि पहुँचाने की चेष्टा करते रहो।"

लेकिन अविश्वास के युग में भी ऐसे-ऐसे आदमी जन्म लेते हैं जो विश्वास करने की खातिर अपने प्राणों को [illegible]
पर टपकते हैं [illegible]
कार्य नहीं होत [illegible]
है।" लोग उन्हें पागल कहते हैं। लेकिन उनके विश्वास में दरार नहीं पड़ती। वे तमाम विपरीत धाराओं के बीच भी आगे बढ़ते जाते हैं। इसीलिए कली की हालत में ही अधिकांश फूल या फल पेड़ में रहने के दौरान ही सूखकर असमय ही जमीन पर झड़ जाते हैं। कुछेक जो विश्वास की शक्ति लिए टिके रह जाते हैं वे ही आदमी में शक्ति की आपूर्ति करते हैं।

अविश्वास के युग में सभी कहा करते थे कि समुद्र का कोई किनारा नहीं होता। पर कोलम्बस नामक एक आदमी ने कहा, "यह नहीं हो सकता। उस पार जरूर ही कोई किनारा है जहां आदमी वास करते हैं। इसलिए वह निर्भयता के साथ पाल तनी नौका लेकर कूल किनारा विहीन समुद्र में उतर पड़ा। और उसने प्रमाणित कर दिया कि अंततः विश्वास की ही जीत होती है।

संदीप भी उसी तरह का एक आदमी है। उसे विश्वास था कि गोपाल हाजरा या वरदा घोषाल या कि श्रीपति मिश्र के चाहे जितने भी पार्टी कैडर हों, उनका रास्ता सही नहीं है। वह जानता था कि उसके मन में कहीं कोई भ्रांति नहीं है। यह चाहे जितने ही अविश्वास का युग क्यों न हो, जिसे विश्वास है कोलम्बस की तरह, उसे समुद्र का कोई-न-कोई तट ढूँढने से मिल ही जाएगा।

संदीप जानता था, कि देश की आजादी के पहले तक विश्वास का युग था। उस समय आदमी आदमी पर विश्वास करता था, आदमी आदमी की श्रद्धा करता था। उस समय आदर्श नामक चीज थी जिसे लोग श्रद्धा की दृष्टि से देखते थे। उसी के फलस्वरूप खुदीराम से लेकर यतीन दास, भगतसिंह ने अपने प्राणों को देश की भलाई के लिए, सबको गुलामी से छुटकारा दिलाने के लिए, निछावर कर दिया था।

लेकिन 1947 ई० के 15 अगस्त के बाद ?

1947 ई० के 15 अगस्त के बाद देश जैसे ही आजाद हुआ, तत्क्षण आदमी-आदमी के बीच के रिश्ते में दरार पड़ गई। तारक घोष जैसे लोगों के घरों को गोपाल जैसे लोगों ने आग लगाकर जला डाला। न्याय क्योंकि अपना चरित्र खो बैठा इसलिए काशी बाबू जैसे लोगों ने प्रैक्टिस छोड़ दी और इधर बैंकों में एक ही आदमी कई नामों से एकाउण्ट खोलने लगा। आइडियल फूड प्रोडक्ट्स प्राइवेट लिमिटेड कंपनी नौकरी देने के नाम पर चाकलेट के अन्दर जहर की टिकिया मिलाने लगी और कीड स्ट्रीट के हरदयाल और अंटी मेमसाहब नई लड़कियों के व्यापार का फंदा डालकर बैठ गए। इन सब अविश्वासों के बीच भी संदीप ने विश्वास बनाए रखा कि समुद्र के उस पार जरूर ही कोई-न-कोई किनारा है, जहां एक नई धरती है और वहां उसे एक निश्चिन्त आश्रय अवश्य ही मिलेगा।

"यह क्या, तुम हो ?"

मांजना वगैरह सारा काम कर देगी। तुम्हारे लिए चिंता की कोई बात नहीं रहेगी। शादी करोगे?"

संदीप को उस समय तपेश गांगुली की बातें असह्य जैसी लग रही थीं। बोला, "मेरी शादी हो चुकी है।"

"तुम्हारी शादी हो चुकी है? क्या कह रहे हो तुम? कब हुई? हमें तो निमंत्रित नहीं किया तुमने!"

"सचमुच ही मेरी शादी हो चुकी है।"

"मगर कब? हम लोगों में से किसी को भी यह मालूम नहीं हो सका। एक बार तो विशाखा के साथ शादी के पीढ़े पर बैठ कर उठ जाना पड़ा था। हमें वह सब मालूम है। तुम्हारे कुछ रुपये इसके चलते व्यर्थ ही खर्च हो गए। उसके बाद फिर कब तुम्हारी शादी हुई?"

संदीप बोला, "एक आदमी कितनी बार शादी करता है?"

तपेश गांगुली ने कहा, "अरे, वह तो शादी नहीं थी। शादी करने के दौरान अड़चन पैदा हो जाने के कारण अचानक बिडन स्ट्रीट के मुखर्जी-भवन के फांसी के मुजरिम पोते से विशाखा की शादी हो गई। वह क्या कोई शादी है भला? तुम उसे शादी होना कहते हो?"

संदीप ने कहा, "हां, मैं उसे शादी होना कहता हूं—"

"तो फिर क्या तुम जिन्दगी भर अकेले ही रहोगे? शादी नहीं करोगे?"

संदीप ने कहा, "मैं तो कह ही चुका हूं कि मेरी शादी हो चुकी है। एक आदमी कितनी बार शादी करता है? आप यह मान क्यों नहीं लेते कि मेरी शादी हो चुकी है!"

"तो तुम यह कहना चाहते हो कि मेरी बिजली से शादी नहीं करोगे? बिजली को तो देख ही रहे हो। इसके लिए अब मैं क्या करूं? और तुम अगर शादी नहीं करना चाहते हो तो तुम्हारे आफिस में तुम्हारे अधीन और भी कितने ही आदमी काम करते हैं। उनमें से कोई पात्र हो तो उसके बारे में मुझे बताओ। चाहे एक ब्याहा हो, दो ब्याहा हो, मुझे कोई आपत्ति नहीं है, सिर्फ खाने-पहनने का जिसे अभाव न हो, ऐसा ही ब्राह्मण पात्र होने से काम चल जाएगा—"

संदीप ने कहा, "अच्छा, देखूंगा—"

"तो फिर हम चलते हैं। हमें बहुत दूर जाना है। जाकर रसोई पकानी है, चलता हूं—बाद में तुमसे किसी दिन मुलाकात करूंगा।"

यह कहकर तपेश गांगुली अपनी लड़की के साथ चला गया।

"कौन?"

रतन के गले की आवाज संदीप के कान में आई। सचमुच, इतनी रात में कौन उसके घर में आया! विशाखा बोली, "मैं विशाखा हूं! तुम्हारे मालिक हैं?"

बर्ट्रण्ड रसेल ने कहा है कि इतिहास के पन्नों को देखने पर पता चलेगा कि दुनिया में सिर्फ दो ही युग घूम-फिरकर आते हैं। एक है विश्वास का युग और दूसरा है अविश्वास का युग। विश्वास के युग में आदमी को विश्वास रहता है कि पुण्य करने से मनुष्य का शुभ होता है। और अविश्वास के युग में आदमी को विश्वास रहता है कि पुण्य-वुण्य बेकार की चीज है। असली शुभ है सांप्रतिक लाभ। सांप्रतिक लाभ ही बड़ी बात है। भविष्य की बात दरकिनार कर दो। आज क्या मिलेगा, पहले इसी का जवाब दो।

विश्वास के युग में आदमी को साधुपन पर कोई संदेह नहीं रहता, प्रेम और प्यार

पर कोई संदेह नहीं रहता। विश्वास के युग में मनुष्य को अमानुष बनने में डर लगता है। कहता है, "मेरे कारण तुम्हारी हानि हो, मैं यह नहीं चाहता।" कहता है : "मैं तुम्हारी कौन-सी भलाई करूं, यही कहो, मैं यथासाध्य उसे करने की चेष्टा करूंगा।"

विश्वास युग के बाद ही अविश्वास का युग लौटकर आता है। उस समय आदमी कहता है : "उस आदमी का इतना भला क्यों हुआ ? उसके बदले मेरा भला क्यों नहीं हुआ ? इसलिए उसे हानि पहुंचाने की चेष्टा करते रहो।"

लेकिन अविश्वास के युग में भी ऐसे-ऐसे आदमी जन्म लेते हैं जो विश्वास करने की खातिर अपने प्राणों को निछावर कर देते हैं। वे लोग कहते हैं, "पेड़ से जो फल जमीन पर टपकते हैं उसका भी निश्चय ही कोई-न-कोई कारण है। कारण के बिना जबकि कोई कार्य नहीं होता है तो फल का पेड़ से जमीन पर गिरने के पीछे अवश्य ही कोई कारण है।" लोग उन्हें पागल कहते हैं। लेकिन उनके विश्वास में दरार नहीं पड़ती। वे तमाम विपरीत धाराओं के बीच भी आगे बढ़ते जाते हैं। इसीलिए कली की हालत में ही अधिकांश फूल या फल पेड़ में रहने के दौरान ही सूखकर असमय ही जमीन पर झड़ जाते हैं। कुछेक जो विश्वास की शक्ति लिए टिके रह जाते हैं वे ही आदमी में शक्ति की आपूर्ति करते हैं।

अविश्वास के युग में सभी कहा करते थे कि समुद्र का कोई किनारा नहीं होता। पर कोलम्बस नामक एक आदमी ने कहा, "यह नहीं हो सकता। उस पार जरूर ही कोई किनारा है जहां आदमी वास करते हैं। इसलिए वह निर्भयता के साथ पाल तनी नौका लेकर कूल किनारा विहीन समुद्र में उतर पड़ा। और उसने प्रमाणित कर दिया कि अंततः विश्वास की ही जीत होती है।

संदीप भी उसी तरह का एक आदमी है। उसे विश्वास था कि गोपाल हाजरा या वरदा घोषाल या कि श्रीपति मिश्र के चाहे जितने भी पार्टी कैडर हों, उनका रास्ता सही नहीं है। वह जानता था कि उसके मन में कहीं कोई भ्रांति नहीं है। यह चाहे कितने ही अविश्वास का युग क्यों न हो, जिसे विश्वास है कोलम्बस की तरह, उसे समुद्र का कोई-न-कोई तट ढूंढने में मिल ही जाएगा।

संदीप जानता था, कि देश की आजादी के पहले तक विश्वास का युग था। उस समय आदमी आदमी पर विश्वास करता था, आदमी आदमी की श्रद्धा करता था। उस समय आदर्श नामक चीज थी जिसे लोग श्रद्धा की दृष्टि से देखते थे। उसी के फलस्वरूप खुदीराम से लेकर यतीन दास, भगतसिंह ने अपने प्राणों को देश की भलाई के लिए, सबको गुलामी से छुटकारा दिलाने के लिए, निछावर कर दिया था।

लेकिन 1947 ई० के 15 अगस्त के बाद ?

1947 ई० के 15 अगस्त के बाद देश जैसे ही आजाद हुआ, तत्क्षण आदमी-आदमी के बीच के रिश्ते में दरार पड़ गई। तारक घोष जैसे लोगों के घरों को गोपाल जैसे लोगों ने आग लगाकर जला डाला। न्याय क्योंकि अपना चरित्र खो बैठा इसलिए काशी बाबू जैसे लोगों ने प्रैक्टिस छोड़ दी और इधर बैंकों में एक ही आदमी कई नामों से एकाउण्ट खोलने लगा। आइडियल फूड प्रोडक्ट्स प्राइवेट लिमिटेड कंपनी नौकरी देने के नाम पर चाकलेट के अन्दर ज़हर की टिकिया मिलाने लगी और फ्रीड स्ट्रीट का हरदयाल और अटी मेमसाहब नई लड़कियों के व्यापार का फंदा डालकर बैठ गए। इन सब अविश्वासों के बीच भी संदीप ने विश्वास बनाए रखा कि समुद्र के उस पार जरूर ही कोई-न-कोई किनारा है, जहां एक नई धरती है और वहां उसे एक निश्चिन्त आश्रय अवश्य ही मिलेगा।

"यह क्या, तुम हो ?"

संदीप के तमाम निभृत सोच के जगत के बीच अचानक विशाखा का आविर्भाव हुआ।

रतन विशाखा को एकबारगी संदीप के शयन-कक्ष में पहुंचा गया। संदीप ने कहा, "चलो-चलो, बाहर के कमरे में चलो। मैं तो तुम्हारे भुवन गांगुली लेन के मकान से ही लौट रहा हूं। वापस आने के बाद अभी सोने के लिए आया था—चलो, बाहर के कमरे में चलकर बैठोगी।"

विशाखा इस बीच कोने में रखी हुई एक कुर्सी पर बैठ चुकी थी।

बोली, "तुम्हारे कमरे में बैठने में कौन-सी आपत्ति है?"

संदीप ने कहा, "बाहर आराम से बैठ सकती थी।"

विशाखा ने कहा, "इतने आराम की जरूरत नहीं है, अब कष्ट करने के दिन आ गए—"

"क्यों?"

"कल छोटे बाबू घर लौट रहे हैं।"

"कौन? सौम्यपद बाबू? घर लौट रहे हैं? जेल से रिहा कर दिए जा रहे हैं? तुमसे किसने कहा?"

"यही जानने के लिए तो मैं हमीद के घर पर गई थी।"

"हमीद! हमीद कौन है?"

विशाखा ने कहा, "हमीद के बारे में तुमसे इसके पहले बता चुकी हूं। वह एक दलाल है। उसी दलाल के हाथ से मैं रुपया-पैसा भेजती थी। हमीद बराबर उस मकान में रुपया-पैसा लेने को आया करता था। दलाल के माध्यम से ही रुपये जेलखाने में पहुंचते थे, वहां सब लोग रुपयों का बंटवारा कर लिया करते थे। वही हमीद आज मेरे घर में आकर सूचित कर गया है कि छोटे बाबू कल जेलखाने से घर लौट रहे हैं। उस समय मैं घर पर नहीं थी। अपने बैंक गई थी। मंगला से कह गई थी—"

संदीप ने पूछा, "मंगला कौन है?"

विशाखा बोली, "मंगला मेरे घर की महरी है। मैं उससे कह गई थी कि कोई घर आए तो उसे घुसने न दे। लेकिन तुम अचानक मेरे घर पहुंच जाओगे, यह कैसे जान पाती।"

संदीप ने कहा, "सिर्फ मैं ही नहीं, तुम्हारे चाचा तपेश गांगुली और उनकी लड़की बिजली भी गए थे। उन्हें भी मंगला ने मेरी ही तरह घुसने नहीं दिया था।"

विशाखा ने कहा, "उन्हीं के कारण मैं मंगला से यह बात कहकर गई थी।"

"क्यों?"

"वे लोग मुझे परेशान कर मारते हैं। बगैर बुलाए जब-तब मेरे चाचा बिजली के साथ मेरे घर पर ठहर जाते हैं। उन लोगों से तंग आकर मैं मंगला से यह बात कहकर गई थी। उस बीच तुम एकाएक मेरे घर पहुंच जाओगे, यह मैं कैसे जानती! इसीलिए हमीद को रुपया-पैसा देकर जब घर वापस आई तो सुनने को मिला कि तुम मेरे घर पर आए थे। यह सुनते ही मैं तुरन्त भागी-भागी तुम्हारे घर पहुंची हूं—"

संदीप ने कहा, "तुमसे किसने कहा कि सौम्य बाबू कल घर आ रहे हैं?"

"हमीद के पास जाने पर मुझे सुनने को मिला। उसके बाद मैं वहां से गई जेल-सुपरिन्टेंडेण्ट के क्वार्टर में। वे क्या आसानी से मुलाकात करते हैं? बहुत अनुनय-विनय करने के बाद मुलाकात हुई। उन्होंने ही बताया—छोटे बाबू का जेल-कैरियर बहुत अच्छा है इसलिए बहुत सालों का रेमिशन दिया गया है। उन्हें कल ही छोड़ दिया जाएगा। मुझे कल दस बजे तैयार होकर आने को कहा है।"

उसके बाद जरा रुककर बोली, "दरअसल मैं समझ गई कि रेमिशन देने का कारण है रुपया। मुझे कितने लाख रुपये बतौर घूस देने पड़े हैं, उसका कोई ठिकाना नहीं। इतने दिनों तक सभी उन रुपयों का आपस में बंटवारा करते रहे। उसी के फलस्वरूप यह रेमिशन मिला है।"

संदीप ने कहा, "तुमने मुझे बहुत बड़ी खुशखबरी सुनाई। बहरहाल इतने दिनों के बाद तुम्हारे कष्ट का निवारण हुआ।"

विशाखा ने कहा, "कौन जानता है कि मेरे कष्ट का निवारण हुआ या फिर से उसकी शुरुआत हुई! शराबी पर मैं विश्वास नहीं करती। खैर, तुम सो रहो, मैं चलती हूं—"

यह कहकर उठने जा रही थी कि विपरीत दिशा की दीवार पर नजर जाते ही विशाखा थमककर खड़ी हो गई। बोली, "वह क्या है? वह मेरी तस्वीर है न?"

संदीप ने कहा, 'हां, यह तुम्हारी ही बहुत दिन पहले की तस्वीर है। मैंने तुम्हारी तस्वीर को फ्रेम में मढ़वाकर टांग दिया है—"

"तुम्हें वह तस्वीर कहां मिली?"

"याद नहीं है कि तुम जब आइडियल फूड प्रोडक्शन आफिस में इंटरव्यू देने के लिए जाने पर लापता हो गई थी…"

"हां, याद है।"

उस समय मैं तुम्हारी तलाश में लाल बाजार को पुलिस के पास गया था। उन लोगों ने तुम्हारे एक फोटो की मांग की थी। उस समय मौसीजी जीवित थीं। उन्होंने मुझे यह फोटो दिया था। ब्रिटन स्ट्रीट की दादी मां ने तुम्हारा यह फोटोग्राफ खिंचवाया था। उसकी एक कापी थी मौसीजी के पास। उन्होंने पुलिस को देने के लिए मुझे दिया था। जब तुम वेलिंगटन स्क्वायर की सड़क पर बेहोशी की हालत में मिली तो पुलिस को वह फोटो देने की जरूरत नहीं पड़ी। उस समय उसे अपने पास ही रख लिया था। उसके बाद स.सा जब सौम्य बाबू से तुम्हारी शादी हो गई तो उसे मैंने एनलार्ज करा लिया था। इस घर में आने के बाद उस तस्वीर को रंगीन बनवाकर फ्रेम में मढ़वा लिया और अपने सोने के कमरे में टांग दिया।"

"क्यों?"

संदीप ने कहा, "वह मेरे विश्वास का प्रतीक है—"

"इसका मतलब?"

संदीप ने कहा, "याद है, तुमने एक दिन रसेल स्ट्रीट के मकान में मुझे 'बेवकूफ गंगाराम' कहा था, मैं उस बात को अब भी याद रखे हुए हूं। मुझे विश्वास है कि मैं सचमुच ही 'बेवकूफ गंगाराम' हूं। विश्वास है कि मैं वाकई बेवकूफ हूं। मैं बेवकूफ नहीं होता तो कभी तुम्हारी शादी सौम्य बाबू से नहीं हुई होती। शादी होती तो मुझसे ही। यह तस्वीर हमेशा मुझे याद करा देती है कि तुमने जो कहा था, सचमुच मैं वही हूं, मैं बेवकूफ हूं।"

विशाखा ने आपत्ति करते हुए कहा, "नहीं-नहीं, बेवकूफ तुम नहीं, मैं हूं। मेरे कारण ही उस दिन सौम्य बाबू से मेरी शादी हुई थी। मैं आज स्वीकार करती हूं तुम्हारे पास, कि बेवकूफ मैं हूं, न कि तुम। उस तस्वीर को तुम तोड़ दो। या फिर मुझे दे दो, मैं तोड़ डालूंगी।"

संदीप ने कहा, "नहीं, अब यह नहीं हो सकता विशाखा, नहीं हो सकता। मैं हर रोज उस तस्वीर की ओर निहारकर ही सोने जाता हूं। तुम्हारी तस्वीर की ओर निहारने से ही मेरा विश्वास लौटकर चला आता है—"

उसके बाद एक क्षण चुप रहने के बाद बोला, "अब तुम घर जाओ, काफी रात हो चुकी है। कल छोटे बाबू बहुत सालों के बाद घर लौटकर आएंगे। फिर नए सिरे से तुम्हारे जीवन की शुरुआत होगी, तुम अब जाओ—"

विशाखा उठकर खड़ी हुई। बोली, "ठीक है, मैं चलती हूं। मगर तुम वादा करो कि तुम मेरे भुवन गांगुली लेन के घर पर नियमित तौर पर आया करोगे।"

संदीप ने कहा, "ठीक है, फ़ुर्सत मिलते ही जाऊंगा। मगर सौम्य बाबू क्या मेरा तुम्हारे घर पर आना पसन्द करेंगे ?"

विशाखा ने कहा, "उसकी ज़िम्मेदारी मुझ पर छोड़ दो। तुम सिर्फ मुझे वचन दो कि तुम आओगे।"

"मुझसे यह बात क्यों कह रही हो ? तुम तो सब जानती हो। तुम्हारे पति के वापस आने के बाद मेरा तुम्हारे घर अक्सर आना-जाना क्या अच्छा रहेगा ?"

"हां, मैं कह रही हूं, अच्छा रहेगा, उससे कोई गलतफहमी नहीं होगी—"

वचन लेकर विशाखा चली गई। जाने के दौरान इतना ही पूछा, "ठीक-ठीक कहो, जाओगे न ?"

संदीप ने कहा, "हां, वचन दे रहा हूं, जरूर जाऊंगा। मैं चाहता हूं कि सौम्य बाबू के घर लौट आने के बाद तुम्हारा जीवन सुखी हो !"

अब संदीप ने फिर से चहलकदमी करना शुरू कर दिया है। इतने दिन, इतने बरसों के बाद वही कलकत्ता उसे नया जैसा लग रहा है। इस कलकत्ता को वह कितने दिनों से देखता आ रहा है। दिन-रात कितनी ही तरह, कितने ही नजरिये से देखा है इस कलकत्ता को, लेकिन उसे लग रहा है कि वह एक नए कलकत्ता को देख रहा है। जेल जाने के पहले उसने जिस कलकत्ता को देखा था यह जैसे वह कलकत्ता न हो। यह जैसे नया शहर, नया देश है। उन दुकानों के साइनबोर्डों को बदलकर दूसरे साइनबोर्ड लगाए गए हैं। इन कई सालों के दरमियान इतना परिवर्तन हो सकता है ?

हालांकि जेलखाने के अन्दर बैठकर वह सोचता, सारा कुछ पहले ही जैसा है। वह बारह बटे ए बिडन स्ट्रीट का मकान पहले ही जैसा है। लेकिन असल में वैसा ही नहीं है। उस मकान को जिन लोगों ने खरीदा था उसे तोड़कर फ्लैटनुमा मकान बनवाकर और ऊंचा, और खूबसूरत बना दिया है। जो लोग अभी वहां वास करते हैं उन्हें उसका पुराना इतिहास मालूम भी नहीं है। वे नहीं जानते हैं कि किसी ज़माने में इसी मकान में दादी मां नामक एक दुखी औरत ने अपनी जिन्दगी बिता दी है। वे नहीं जानते कि दौलतमन्द आदमी की लम्बी उसांस पूरे मकान की हवा में घुलमिलकर माहौल को विषाक्त कर दिया करती थी। नहीं जानते कि एक आदमी एक मेमसाहब की हत्या कर फांसी का मुजरिम बन गया था। और यह भी नहीं जानते कि उसी फांसी के मुजरिम से विशाखा नामक एक गरीब लड़की की शादी हुई थी और शादी होने के बाद उसने बड़े कष्ट से जीवन बिताया था।

सहदेव बीच-बीच में आता और देखता कि संदीप अन्यमनस्क जैसा पड़ा हुआ है। सहदेव ने एक दिन कहा था, "आप हरवक्त इतना क्या सोचते रहते हैं ?—घर की बात ?"

संदीप ने कहा, "मेरा तो कोई घर नहीं है सहदेव !"

"मतलब ?"

"घर नहीं है का मतलब यह कि मेरा अपने के नाम पर कोई नहीं है—"

महादेव कहता, "इस शर्त है न है मगर अपना कोई मुसलमान दोस्त है। उस लोगों का पता दीजिए न। आप जो कुछ कहेंगे, उन लोगों से मालूम ले आऊंगा।"

नवीन कहता, "नहीं, मुझे किसी चीज की जरूरत नहीं है—"

महादेव कहता, "किसी चीज की जरूरत नहीं है, यह कहीं हो सकता है? इस लोग के आदमी हैं बाबू। एक बार हुक्म देने पर वे लोग वह चीज लाकर दे सकते हैं।"

यह सब बात वह विशाखा से भी सुन चुका था। इसीलिए शायद एक दलाल जेल में सामान लाने के लिए विशाखा के पास आता था। एक या दो नहीं, दस-बीसों हजार रुपया लाता। विशाखा भी उसकी मदद देती। उस दलाल ने देखी कि जेल में सीमेन्ट को चोरी-छिपे बाहर निकाल, बेच-कर माल लिया। विशाखा को इसीने बताया था कि उस रकम का सब लोग बाहर में बैठे-बैठे कर उसका उपभोग करते हैं।

नीचे से ऊपर तक के कर्मचारी को उसका हिस्सा मिलता है।

महादेव कहता, "आप क्या सोच रहे हैं?"

नवीन कहता, "नहीं महादेव, मुझे किसी चीज की आवश्यकता नहीं है। अपनी घर-गृहस्थी के नाम पर मेरा कुछ भी नहीं है।"

सच, नवीन के पास क्या कुछ भी नहीं था?

"था। वह सिर्फ एक फोटो था। फोटोग्राफ। तब विशाखा की शादी नहीं हुई थी। उसी समय दादी माँ ने विशाखा का एक फोटो खिंचवाकर रखवा लिया था। नवीन ही बाजार से एक फोटोग्राफर को बुलाकर ले आया था और उसी ने फोटो खींचा था। उसे दादी माँ ने अपने काशी के गुरुदेव के पास भेज दिया था। उद्देश्य था उस कन्या का भविष्य कैसा है, यही जानना। उसके सिवा और कुछ भी नहीं।

उस फोटो को देखकर दादी माँ के गुरुदेव ने क्या भविष्यवाणी की थी, नवीन को उससे कोई सरोकार नहीं था। तो भी नवीन ने एक दिन मल्लिक बाबा से पूछा था, "फोटो देखकर गुरुदेव ने क्या भविष्यवाणी की है मल्लिक बाबा?"

मल्लिक बाबा ने कहा था, "तुम्हें यह सब जानने की क्या जरूरत है? तुम और मैं सिर्फ हुक्म के बन्दे हैं, दादी माँ जो हुक्म देंगी, उसी की तामील करेंगे। तुम जो कुछ लिख-पढ़ रहे हो, सिर्फ वही करो ताकि तुम्हें कोई नौकरी मिल जाए। और किसी तरफ ध्यान देने की तुम्हें जरूरत नहीं—"

बात तो सही है। नवीन को दूसरी तरफ ध्यान नहीं देना चाहिए। फिर भी उसी फोटोग्राफर से उस समय अपनी जेब से पैसा खर्चकर उस फोटो की एक कापी ली थी। उसके बाद उसे अपने कपड़े-लत्ते रखने के टीन के सूटकेस में रख दिया था। वह बात बाद में उसके ध्यान से बिलकुल उतर गई थी। उसके बाद?

उसके बाद बहुत दिनों तक नवीन को उस फोटो की याद नहीं थी।

बहुत दिनों के बाद जब माँ की मृत्यु हो गई तो बेहाला छोड़ कलकत्ता चला आया था और मेडिकल कालेज का मकान किराये पर लिया था। उसी समय एक दिन पुराना सूटकेस साफ करने के दौरान उस फोटो को पाकर उसे अलौकिक आनन्द का अनुभव हुआ था। क्या से क्या हो जाता है, कौन कह सकता है!

उसी फोटो को एनलार्ज करवाकर नवीन ने फ्रेम में मढ़वा लिया था और अपने सोने-कमरे की दीवार पर टांग दिया था। ऐसी जगह में टांग दिया था कि बिस्तर पर लेटे रहने पर भी फोटो सामने-सामने दिख पड़े। विशाखा से फिर किसी दिन उसकी मुलाकात होगी, उसकी उसने कल्पना भी नहीं की थी। क्योंकि सोमनाथ बाबू से विशाखा की शादी होने के बाद उसे कोई आग्रह भी नहीं था। विशाखा तो उसके लिए पराई हो गई थी। लेकिन यदि पराई हो गई थी तो क्यों उसने विशाखा का फोटो अपने कमरे की

दीवार पर टांग कर रखा था ?

फोटो को स्वयं देखने के लिए टांग कर रखा था। उसने कभी नहीं चाहा था कि विशाखा को पता चल जाय कि संदीप अपने शयन-कक्ष की दीवार पर उस फोटो को टांगकर रखे हुए है। आश्चर्य की बात है, विशाखा उस दिन अचानक उसके कमरे के अन्दर क्यों चली आई ? और अन्दर आई भी तो उसने फोटो को वापस लेना क्यों नहीं चाहा ?

यह सब कितने दिन पहले की बात है ! जेल जाने के बहुत दिन पहले की यह बात है, जब विशाखा को पहले-पहल पता चला कि संदीप उसका फोटो अपने शयन-कक्ष की दीवार पर टांगे हुए है। उसी समय विशाखा ने पहली बार कहा था, "तुम मेरा फोटो टांगकर क्यों रखे हुए हो ?"

संदीप ने कहा था, "बेड़ापोता से जब चला आया था तो सारा सरो-सामान कलकत्ता ले आया था। उसके बाद जब सरो-सामान की सफाई करने लगा तो उस फोटो पर नज़र पड़ी। कहीं वह खो न जाए, इसीलिए रतन को दीवार पर टांग देने को कहा।"

"उसे मुझे दे दो। मैं घर ले जाऊंगी—"

संदीप ने कहा, "उसे तुम वापस मत मांगो।"

"क्यों वापस मांगने में दोष ही क्या है ?"

संदीप ने कहा था, "उसे वापस कर देने से मेरे पास रह ही क्या जाएगा ? उसे वापस दे दूं तो मैं फिर क्या लेकर रहूंगा ? मेरे पास वैसी कोई चीज नहीं रह जाएगी जिसे मैं अपना कह सकूं—"

इसके बाद चंद लमहों तक विशाखा के मुंह से कोई शब्द नहीं निकला था। थोड़ी देर बाद कहा था, "तुम शादी कर लो।"

"शादी ?"

"हां, तुमसे शादी करने कह रही हूं। तुम शादी कर सुखी होओ, मैं यही चाहती हूं।"

संदीप कुछ कहने जा रहा था पर बोला कुछ भी नहीं। शब्द उसके मुंह में अटक गए। विशाखा बोली, "क्यों तुम कुछ बोल क्यों नहीं रहे हो ?"

"बोलूं ?"

"हां, बोलो न। मैं तुम्हारे मुंह से ही इसका जवाब सुनना चाहती हूं—"

उस पर संदीप ने कहा था, "काफी रात हो चुकी है, इसका उत्तर सुनने में तुम्हारा बहुत वक्त बर्बाद हो जाएगा।"

विशाखा ने कहा था, "सो हो, मैं एक मामूली औरत, उसका वक्त ! मेरे पास अशेष समय है। मेरे समय का मोल ही क्या ? मेरा तो समय कटना ही नहीं चाहता।"

संदीप ने कहा था, "अभी तुम कह रही थीं कि तुम यह देखना चाहती हो कि मैं शादी करके सुखी होऊं। शादी तो तुमने भी की है ? तुम क्या सुखी हुई हो ?"

विशाखा ने कहा था, "मेरी बात रहने दो। मैं शादी करके सुखी जो नहीं हो सकी उसके लिए तुम्हीं जिम्मेवार हो।"

"मैं ?"

"तुम नहीं तो और कौन ? तुमने तो एक पियक्कड़ पति से मेरी शादी करा दी।"

संदीप ने कहा था, "आज मेरे घर में अपना फोटो टंगा हुआ देखकर तुम यह बात कह रही हो ? पहले तो नहीं कहा था।"

"तो क्यों मेरा फोटो अपने सोने के कमरे में टांग कर रखे हुए हो ? बोलो,

किसलिए ?"

"तुम इसका जवाब मांगती हो ?"

"हां, आज ही मांगती हूं। अभी तुरन्त—"

सदीप सोच रहा था कि सच कहे या न कहे। सच बात कहने से हो सकता है विशाखा नाखुश हो जाए, लेकिन तो भी संदीप की जबान से सच बात निकल ही गई थी।

कहा था, "मेरा विश्वास है तुम असल में रुपये को ही प्यार की दृष्टि से देखती हो—"

विशाखा ने कहा, "मैं रुपये-पैसे को ही प्यार की दृष्टि से देखती हूं ? तुमने आज यह बात कही ?"

सदीप ने कहा, "आज इतने काड के बाद हो सकता है तुम यकीन न करो। रुपये को तुम प्यार नहीं करती तो जब बेडापोता में थी तो नौकरी के लिए दरख्वास्त क्यों भेजी थी ? उस 'आइडियल प्रोडक्ट्स' नामक ऑफिस के बारे में सोचकर देखो। उसके बाद एक दिन तुम वेलिंगटन स्ट्रीट पर बेहोश होकर पड़ी हुई थी। यह सब बात तुम्हें याद है ? उस दिन किसने तुम्हारा उद्धार किया था, बताओ ?"

"यह तो मुझे याद है। लेकिन मैं रुपये-पैसे से प्रेम करती हूं, यह बात तुमसे किसने कही थी ?"

सदीप ने कहा था, "तुम मुझे इतना बेवकूफ समझती हो ? सोचती हो कि मैं कुछ भी नहीं समझता ?" उसके बाद जरा रुककर संदीप बोला था, "तुम्हारी मां की भी तमन्ना थी कि तुम्हारी शादी बड़े आदमी के लड़के से हो। मैं तुम्हारी शादी के मंडप से इसीलिए हट गया था कि मैं तुम्हारे रास्ते की रुकावट बनना नहीं चाहता था।"

विशाखा की आंखों से तब आंसू ढुलक रहे थे। उसने अपनी साड़ी के पल्लू से आंखें पोंछ ली थीं। संदीप ने कहा था, "क्या हुआ, बोल क्यों नहीं रही हो ?"

विशाखा ने कहा था, "नहीं, इसके बाद मुझे कुछ नहीं कहना है—"

संदीप ने कहा था, "इस बात से तुम्हें बहुत तकलीफ पहुंची ?"

विशाखा ने कहा था, "मुझे तकलीफ ही पहुंचे तो तुम्हारा क्या आता-जाता है ? तुम तो खासे आराम से ही हो—"

यह कहकर खड़ी नहीं रही, यह बात कहकर चली गई थी।

सड़क पर चलने के दौरान पहले की तमाम बातों की याद आ रही थी। साथ ही वह चारों तरफ फैले कलकत्ता शहर को देख रहा था। कितना विशाल शहर है यह और कितना बड़ा परिवर्तन आ गया है इसमें। भूगोल में लिखा हुआ है कि पृथ्वी गोल है। लेकिन पृथ्वी इतनी परिवर्तनशील है, उसे मालूम नहीं था। जब तक वह जेल के अन्दर था तब तक महसूस नहीं कर सका था कि कलकत्ता में इतना परिवर्तन आ गया है। उस समय वह सोचता, कलकत्ता पहले जैसा ही है। पहले की ही तरह आदमी अपने पड़ोस के आदमी को पहचानता है, समझता है और न भी समझता हो तो कम से कम समझने की चेष्टा अवश्य ही करता है।

परन्तु अब कुछ दूसरा ही माहौल है। अब कोई किसी के लिए नहीं सोचता। किसी के सुख-दुख की परवाह नहीं करता। आसपास बसें और ट्रामें भागी जा रही हैं और जब बीच-बीच में रुकती हैं तो चढ़ने और उतरने वालों का तांता पहले से बढ़ गया है। कौन उतरने के दौरान गिर पड़ा या कौन पहले उतरेगा, कौन पहले चढ़ेगा, उसके

लिए आपस में होड़ लग जाती है। गाड़ी के तमाम लोग उतर जाएं तभी चढ़ना चाहिए—इसका ख्याल किसी को नहीं है।

यह सब निहारते हुए संदीप सड़क पर पैदल चल रहा था।

अचानक पीछे से किसी ने पुकारा, "ऐ संदीप, संदीप—"

इतने दिनों के बाद उसे कौन पुकार सकता है? उसने पीछे की तरफ मुड़कर देखा। एक सज्जन उसकी ओर आगे बढ़कर आया और फिर पीछे हट गया। बोला, "कृपया अन्यथा न लें, मैंने सोचा था, मेरा दोस्त संदीप लाहिड़ी है।"

संदीप ने कहा, "मेरा नाम भी तो संदीप लाहिड़ी है—"

"नहीं, वह दूसरा ही आदमी है।"

यह कहकर दूसरी तरफ चला गया। एक ही नाम के दो आदमियों का होना यों कोई विचित्र बात नहीं है। लेकिन यह किस किस्म की गलती है! एक-दूसरे व्यक्ति जैसा दिखे और उपाधि भी एक ही हो—यह क्या संभव है?

यों संदीप की काफी उम्र हो चुकी है। जेलखाने में इतने साल बिताने के कारण उसकी उम्र भी तो काफी बढ़ चुकी है। नियमित रूप से पसन्द लायक खाना भी नहीं मिला है। जेलखाने जैसा अखाद्य पदार्थ खाते-खाते वह और भी बूढ़ा हो गया है। नियमित तौर पर बहुत दिनों से दाढ़ी भी नहीं बनाई है। उसके सिर के आधे बाल भी पक गए हैं। तो फिर उस आदमी से ऐसी गलती क्यों हो गई?

दोपहर के पहले ही उसे जेल से रिहा किया गया था। उस समय शायद बारह बज रहे थे। जेलर ने बुला भेजा था। सहदेव ने कहा था, "चलिए, आज आपको रिहा कर दिया जाएगा, बड़े साहब आपको बुला रहे हैं—"

यह मालूम ही था कि उस दिन उसे छुटकारा मिलने वाला है। लेकिन कब, कितने बजे छुटकारा मिलेगा, सहदेव को यह मालूम नहीं था। सवेरे जेलखाने में जो कुछ नाश्ते में देने का रिवाज है, और-और लोगों के साथ उसे भी दिया गया था।

उसके बाद दोपहर में सहदेव के साथ उसने जेलर साहब से मुलाकात की थी। एक बहुत बड़ा कमरा। वह जेलखाने का एक दफ्तर है। चारों तरफ तरह-तरह की चीजें सजी हुई। वहां और भी कई किरानी किस्म के आदमी बैठे हुए थे। वे लोग अपनी-अपनी मेज पर बैठकर काम कर रहे है।

संदीप ने सहदेव के साथ जैसे ही प्रवेश किया, एक आदमी ने पूछा, "कितना नंबर।"

सहदेव को नंबर मालूम था। उसने नम्बर बताया तो उसके नंबर की फाइल निकाली।

उसके बाद फाइल मिलाकर नंबर देखकर खुश हुआ और पूछा, "आपका नाम संदीप लाहिड़ी है न?"

संदीप ने सिर हिलाकर सहमति जताई। उसके बाद उस आदमी ने प्यून को जैसे ही नंबर बताया वह बगल के कमरे से एक झोला ले आया। बोला, "यह आपका है न?"

संदीप क्या कहे! बोला, "हां।"

"नहीं, अच्छी तरह देख लीजिए।"

संदीप देखेगा ही क्या? उसे क्या याद रह सकता है कि कितने साल पहले वह क्या-क्या चीज लेकर जेलखाने में घुसा था?

"फिर भी अच्छी तरह देख लीजिए।" सारी चीजें एक पैकेट में बंधी हुई थीं।

किरानी ने कहा, "पैकेट को खोलकर अच्छी तरह देख लीजिए और झोले को वापस कर दीजिए।"

सदीप ने अखबार में मुड़े पैकेट को उठाकर खोला वापस कर दिया। किरानी बोला, "पैकेट को खोल अच्छी तरह देख लीजिए। जिन सारी चीजों को आप जेल में घुसने के पहले अपने साथ ले आए थे, वे सब हैं या नहीं देख लीजिए। मिला लीजिए। उसके अन्दर आपकी शर्ट-पैंट भी हैं, उन्हें पहन लीजिए और जेलखाने की पैंट और कुरता वापस कर दीजिए।"

सदीप कैसे पैंट-शर्ट बदलेगा, यह सोच रहा था। किरानी ने कहा, "बगलवाले कमरे में चले जाइए, पैंट-शर्ट बदलने का कमरा है—"

सदीप ने ऐसा ही किया। पैंट-शर्ट बदल सदीप फिर ऑफिस में आया, जेलखाने का लिबास वापस करने के खयाल से। एक वार्डर उन्हें अपने हाथ में ले यथास्थान रखने चला गया।

"पैकेट खोलकर नहीं देखा ?"

"उसे देखने की जरूरत नहीं है।"

उस आदमी ने कहा, "नहीं, देख लीजिए, हम लोगों के सामने खोलिए।"

संदीप ने कहा, "मैं जानता हू कि अन्दर में क्या था। सिर्फ एक महिला की तस्वीर और कुछ छुट्टे रुपये थे।"

"कितने रुपये ?"

सदीप ने कहा, "वह याद नहीं है—"

उस आदमी ने कहा, "तो भी हम लोगों के सामने गिन लीजिए। देखना हमारी ड्यूटी है—"

अन्तत. सदीप को पैकेट खोलना पड़ा। जितने रुपये-पैसे थे, वे मौजूद थे ही। साथ में विशाखा की वह तस्वीर भी निकल आई।

तस्वीर की ओर गौर से देखने पर सदीप को तत्काल उन दिनों की याद आ गई। वही बारह बटे ए बिडन स्ट्रीट के मकान, मनसातल्ला लेन, रसेल स्ट्रीट की तीन मंजिला इमारत और मा की याद। उसके बाद उस नेबूबागान और उस पाच नबर भुवन गागुली लेन के मकान में विशाखा के फूट-फूट कर रोने की याद '

"सुनिए, सुनिए, कहा जा रहे हैं ?"

सदीप ने कहा, "मुझे तो अपना सारा सरो-सामान मिल चुका है—"

"वेतन नहीं लीजिएगा ?"

"किस चीज का वेतन ?"

उस आदमी ने कहा, "वाह, इतने दिनों तक आपने हम लोगों के एकाउन्ट्स डिपार्टमेंट में काम किया है, उसका वेतन नहीं लीजिएगा ?"

"मुझे उन रुपयों की जरूरत नहीं है।"

उस आदमी ने कहा, "नहीं, एकाउन्ट डिपार्टमेंट में जाइए—वेतन लेना होगा, सब 'रेडी' है।"

यह कहकर सहदेव से बोला, "कैदी को वहा ले जाओ।"

सहदेव ही संदीप को एकाउन्ट्स डिपार्टमेंट में ले गया। वहा शायद पहले ही सूचना भेज दी गई थी। सदीप कितने ही साल वहा काम कर चुका है। सब लोग उसे पहचानते हैं। नेशनल यूनियन बैंक का मैनेजर था सदीप। वहा इतने सालों से काम करने के कारण एकाउन्ट के सबध में उसे पूरी जानकारी है।

उन लोगों ने सदीप की ओर देखा और मुसकराते हुए उसका स्वागत किया। बोले, "बैठिए-बैठिए, सदीप बाबू—"

सदीप ने कहा, "नहीं, अब नहीं बैठूगा। मैं जा रहा था लेकिन उन लोगों ने मुझे

वेतन लेने इस कमरे में भेज दिया।"

"हां, आपके 'रिलीज' की खबर हमें पहले ही मिल गई थी। आपकी रकम तैयार है।"

उसके बाद ज़रा रुककर बोले, "एक कप चाय देने कहूं ?"

उसके बाद उन्हें अपनी गलती का अहसास हुआ और बोले, "ओह, आप तो चाय, बीड़ी, सिगरेट कुछ भी नहीं पीते—"

"हां।"

एक आदमी ने संदूक खोलकर रुपया निकाला और गिनने लगा।

उसके बाद रुपयों को संदीप की ओर बढ़ाते हुए बोला, "तीन हजार रुपया है, गिन लीजिए।"

संदीप ने नोटों की गड्डी ली और जेब के अन्दर उसे रख लिया।

वह आदमी बोला, "आपने रुपये गिने नहीं ?"

संदीप ने कहा, "आप लोग भला मुझे धोखा दे सकते हैं ?"

उस आदमी ने कहा, "यह क्या कह रहे हैं ! हर कोई रुपये की ही तो धोखाधड़ी करता है। इतने दिनों तक बैंक में नौकरी करने के बावजूद यह भी नहीं जान सके ? आपने भी तो दूसरे से धोखाधड़ी की है—"

"मैंने धोखाधड़ी की है, यह आपसे किसने कहा ?"

उस आदमी ने कहा, "आपने धोखाधड़ी नहीं की तो फिर आपको जेल क्यों भेजा गया ? क्यों इतने बरसों तक जेल की सजा भुगतते रहे !"

संदीप ने कहा, "बात तो सही ही है। लोगों के साथ धोखाधड़ी करने के कारण ही मुझे जेल की सजा दी गई थी—"

"घर पर आपके कौन-कौन हैं ? उन्हें क्या पता नहीं है कि आज आपको जेल से रिहा कर दिया जाएगा ?"

संदीप ने कहा, "मालूम नहीं।"

"यह क्या कह रहे हैं आप ! इतने बड़े ऑफिसर थे आप बैंक के और कह रहे हैं कि अपना कोई आदमी नहीं है ?"

संदीप ने कहा, "है, एक व्यक्ति है, लेकिन⋯ "

बताने जा रहा था पर रुक गया। बोला, "नहीं, इस बात को रहने दीजिए। मेरा अपना कोई नहीं है इसका मतलब यह कि कोई नहीं है। हरेक का अपना आदमी होता है ?"

जेलखाने के लोगों को इतना बोलने की फुर्सत नहीं रहती। उस आदमी ने कहा, "समझ गया, यहां आप हस्ताक्षर कर दीजिए।"

संदीप ने रसीद पर हस्ताक्षर कर दिया। उसके बाद दरवाज़े की ओर कदम बढ़ाए। उस तरफ बड़ा गेट या मुख्य फाटक है। वह फाटक हमेशा बंद ही रहता है। अंदर से कोई बाहर आने का पास दिखाता है तो खोल दिया जाता है।

संदीप ने बाहर निकलते ही मुक्ति की सांस ली। कोई उसकी अगवानी करने को कहीं खड़ा नहीं है। हाथ में रुपये हैं, सामने है अन्तहीन समय। सौम्य बाबू को भी ठीक इसी तरह एक दिन जेल से बाहर निकलने की अनुमति मिली थी।

लेकिन उस दिन क्या हुआ था ? उस दिन पूरे तौर पर दूसरी किस्म के हालात थे। जेलखाने के बाहर उस दिन बहुत सारे लोग गेट के सामने सौम्य बाबू के इन्तजार में खड़े थे। विशाखा को पिछले दिन की रात में ही हमीद से पता चल गया था कि सौम्य बाबू आज ही रिहा कर दिए जाएंगे। इसलिए खबर पाकर वह तैयार ही थी। मंगला ने

कहा था, "भाभी रानी, तपेश बाबू बिजली-दी को लेकर तुमसे मिलने आए थे। मैंने उन्हें घर के अन्दर घुसने नहीं दिया था—"

"घुसने नहीं दिया न?"

"नहीं।"

"बहुत अच्छा किया। और कोई आया था?"

मगला ने कहा था, "हां, और एक आदमी आया था—"

"कौन?"

मगला ने कहा था, "मैं उन्हें नहीं पहचानती।"

"उन्होंने अपना नाम नहीं बताया?"

"हां, नाम बताया था। मुझे ठीक-ठीक याद नहीं आ रहा है।"

उसके बाद ही कहा था, "हां-हां, याद आ गया—सदीप। सदीप बाबू, संदीप लाहिड़ी।"

"यह क्या किया तूने! उन्हें घुसने नहीं दिया? तुम तो जानती थी कि मैं थोड़ी देर बाद ही लौटनेवाली हूं। उन्हें बैठने क्यों नहीं कहा?"

मगला ने कहा, "तुमने तो कहा था कि किसी को घुसने न दूं। तपेश बाबू घर मे घुसने के लिए हल्ला मचा रहे थे। तो भी मैंने उन्हें घुसने नहीं दिया।"

"सो बहुत ही अच्छा किया, लेकिन संदीप को घुसने क्यों नहीं दिया?"

"तुम तो घुसने देने से मना करके गई थी।"

"लेकिन जो आदमी कभी इस घर में नहीं आया था वह पहली बार आया और तूने उसे घुसने नहीं दिया। चेहरा देखकर ही समझ लेना चाहिए था कि वह भला आदमी है। उसे इन्तजार करने कह सकती थी। तू तो जानती ही थी कि देर भले ही हो पर मैं आऊंगी ही···"

'वैसा हो तो भी क्या अनजाने आदमी को घर मे घुसने दू?"

विशाखा ने कहा, "कौन भला आदमी है और कौन बुरा, यह अगर चेहरा देखकर तू नहीं पहचान पाएगी तो मनुष्य की योनि में जन्म ही क्यों लिया था?"

"तपेश बाबू भी तो भले आदमी हैं!"

"धत्तेरी की! तपेश बाबू भले आदमी हैं, यह तुझसे किसने कहा? देखती नहीं कि मैं उससे कैसे पेश आती हूं? देखती नहीं किस तरह रोज-ब-रोज रुपये मांगता रहता है? किस तरह बिजली को इस घर में अकेली छोड़कर खुद घर वापस चला जाता है। उसके बाद रुपये जब खत्म हो जाते हैं तो फिर आकर रुपये के लिए निहोरा करता है। यह क्या भले आदमी का लक्षण है? उसे घुसने न देकर तूने बहुत ही अच्छा किया है। लेकिन संदीप बाबू कभी इस घर मे नहीं आए थे, उन्हें तूने घर में घुसने न देकर बहुत बड़ी गलती की है।"

उसके बाद ज़रा रुककर फिर बोली, "लेकिन तुझे दोष ही कैसे दूं? तू उसे कैसे पहचानेगी? वह आदमी तो कभी आया नहीं था। उसे मैंने ही कल अपने घर का पता बताया था। और मैंने कल उसे एक दिन इस घर में आने को कहा था लेकिन तूने उसे भगा दिया! सो तेरा भी कोई दोष नहीं, अब मुझे ही इसका प्रायश्चित्त करना है। मैं ही अभी उसके घर चलती हूं—"

यह कहकर ड्राइवर को पुकारकर फिर गाड़ी पर बैठ गई। बोली, "कल जिस मकान में गई थी, वहीं चलो।"

रात काफी हो जाने पर भी ड्राइवर ने गाड़ी स्टार्ट कर दी। उसके बाद ठीक उसी मकान के सामने जाकर पहुंचते ही विशाखा फौरन घर के सामने के सदर दरवाजे की

कुण्डी खटखटाने लगी।

रतन ने जैसे ही दरवाजा खोला, विशाखा ने पूछा, "तुम्हारे मालिक क्या सो गए हैं ?"

रतन ने कहा, "नहीं।"

यह सुनते ही विशाखा और कुछ बोले बिना एकबारगी संदीप के सोने के कमरे में चली गई थी।

उसके बाद, बहुत देर तक बात-चीत का दौर चला था और यह बात अब भी याद है। संदीप के शयन-कक्ष की दीवार पर विशाखा की रंगीन तस्वीर टंगी हुई है, यह उसने देख लिया था।

उसके बाद संदीप को कोई विशेष कष्ट नहीं दिया था। सिर्फ इतना ही कहा था, "तुम्हें बहुत ही तंग करके जा रही हूं, अन्यथा न लेना। तुम्हें मेरे घर में घुसने नहीं दिया था, इसके लिए मंगला को मैंने खरी-खोटी सुनाई है।"

संदीप ने कहा, "उसे व्यर्थ ही क्यों खरी-खोटी सुनाई, वह तो मुझे पहचानती नहीं—"

विशाखा ने कहा था, "मैंने कल्पना भी नहीं की थी कि तुम आज ही मेरे घर पर आओगे। असल में मुझे भय था कि मेरा चाचा बिजली को अपने साथ लेकर जिस तरह अक्सर पहुंच जाता है, उसी तरह आ धमकेगा।"

"क्यों, तपेश बाबू बिजली को लेकर आते हैं तो तुम्हारे लिए डरने की कौन-सी बात है ?"

विशाखा ने कहा था, "तुम मेरे चाचा को अच्छी तरह नहीं पहचानते। बिजली को मेरे नए मकान में लाकर मेरा चाचा बीच-बीच में एक-दो महीने तक रखकर चला जाता है। मुझे यह अच्छा नहीं लगता। मेरे ससुरालवाले मकान में ले जाने का साहस नहीं होता था। लेकिन इस घर में मुझे अकेले पाकर सुविधा हो गई है। जब-तब मेरे घर में आ जाता है और बिजली को मेरे पास रखकर चला जाता है—"

"उसमें हानि ही क्या है ? तुम तो अकेली हो। तुम्हें एक संगिनी मिल जाती है।"

"नहीं, मैं इस तरह की संगिनी नहीं चाहती।"

"क्यों नहीं चाहतीं ?"

विशाखा ने कहा था, "बिजली की अब तक शादी नहीं हुई है। अभी घर के मालिक को इतने सालों के बाद जेल से रिहा कर दिया जा रहा है। अभी बिजली को घर में रखना अच्छा है क्या ? मालिक के स्वभाव और चरित्र से तुम परिचित हो। सिर्फ शराब ही क्यों ? शराब के साथ-साथ दूसरे आनुषंगिक भी जो मर्दों में हुआ करते हैं। अभी अगर बिजली मेरे घर में रहेगी तो क्या होगा, सोचकर तो देखो तो सही।"

उसके बाद ही विशाखा उठकर खड़ी हो गई थी। कहा था, "चलती हूं, तुम्हें बहुत ही तंग किया—"

यह कहकर विशाखा चली गई। रतन ने सदर दरवाजा बन्द कर दिया। लेकिन उसके बाद क्या संदीप को नींद आई थी ? और संदीप ही क्यों, विशाखा को भी उस रात क्या नींद आई थी ?

संदीप जिस जेलखाने से बाहर निकलकर आया, उसी जेलखाने और उसी गेट से एक दिन सौम्य बाबू बाहर निकले थे।

यह बहुत साल पहले की बात है। उसके निकलकर आने और सौम्य बाबू के निकलकर आने में कोई सम्बन्ध नहीं है। सौम्य बाबू की भले ही दादी मां न थी, चाचा नहीं थे, बहुत बड़ी जायदाद न थी, बैंक में बेशुमार रुपये-पैसे नहीं थे, 'मैकसबी मुग़र्बी बत्तनों' की फैक्टरी न थी लेकिन पत्नी विशाखा तो थी। पत्नी के रहने का मतलब ही है लक्ष्मी का रहना। पत्नी है तो गृहलक्ष्मी। इसलिए पहले से ख़बर मिल जाने के कारण विशाखा बहुत तड़के ही तैयार हो गई थी।

घर का मालिक इतने दिनों के बाद घर आ रहा है, लिहाज़ा उसके लिए सारा आयोजन करके रखना होगा। मंगला को बाज़ार भेजकर तरह-तरह का खाना पकाने की तैयारियां कर लीं। पास में ज्यादा समय नहीं था। वह रसोई क्या कोई साधारण रसोई थी? बढ़िया चावल, बढ़िया दाल, बढ़िया सब्ज़ियां और उम्दा क़िस्म की मछली। जो खाना वह पसन्द करता है, विशाखा को यह मालूम नहीं था। उसके बाद?

उसके बाद की बात सोचते ही विशाखा भय से कांप उठी। अगर शराब पीना चाहे तो? जब-जब जेलखाने से पैरोल पर कई घण्टों के लिए आया है तब-तब बोतल खरीदकर लाने का हुक्म दिया है। एक-दो बार तो कै कर कमरे को गन्दा कर दिया है। अबकी भी यदि उसी का हुक्म दे तो?

इसके अलावा विशाखा को यह मालूम नहीं है कि शराब की दुकान कहां है। मालूम होता तो यह भी खरीद कर ला चुकी होती। इतने सालों के बाद घर का मालिक लौट रहा है, इसलिए अभ्यर्थना या खातिरदारी की उचित व्यवस्था नहीं हो सकी, और इसके कारण एक दुख रह गया विशाखा के मन में। लेकिन क्या करे वह?

जो कुछ बन पड़ा, वही करके विशाखा बाहर निकलने को तैयार हुई तो घड़ी की ओर देखकर चौंक पड़ी। मंगला को मालिक के विषय में कोई जानकारी नहीं थी। उसे किसी ने कुछ नहीं बताया था।

पूछा, "मालिक कहां गए थे भाभी रानी? आज कहां से आ रहे हैं?"

कैसे विलायत की बात उसके ध्यान में आ गई, कौन जाने! विशाखा के सुख-दुख के इतिहास के बारे में वह कुछ नहीं जानती है। मंगला यह नहीं जानती कि घर की मालकिन होने के बावजूद विशाखा उससे भी ज्यादा दुखी औरत है। गृहलक्ष्मी को भी कोई दुख हो सकता है, यह अनेक मंगलाएं नहीं जानतीं। ड्राइवर गाड़ी लेकर तैयार ही था। विशाखा ने कहा, "चलो, अलीपुर जेलखाना—"

ड्राइवर विशु इसके पहले कभी जेलखाना नहीं गया है। फिर भी वह चौंका नहीं। क्योंकि वह हुक्म का नौकर है। हुक्म मिलते ही उसने गाड़ी स्टार्ट कर दी। जेलखाना पहुंचते-पहुंचते साढ़े दस बज गए।

लेकिन गेट के पास पहुंचकर विशाखा चिहुंक उठी। देखा, वहां पहले से ही चाचा और बिजली मौजूद हैं।

विशाखा पर निगाह जाते ही तपेश गांगुली आगे बढ़ आया। बोला, "तुम्हें आने में इतनी देर हो गई? हम लोग साढ़े दस बजे के पहले ही पहुंच गए हैं। इतनी देर क्यों कर दी?"

बिजली पर आंख जाते ही पहले से ही मूड बिगड़ा हुआ था, इसलिए वह कोई उत्तर दिए बग़ैर जेलखाने के गेट की ओर चली गई। हमीद ने पहले ही बता दिया था कि दस बजे छोटे बाबू जेल से रिहा कर दिए जाएंगे।

लेकिन हमीद कहां है? वही तो छोटे बाबू और विशाखा के बीच का मिलन-सूत्र है। हमेशा उसी के माध्यम से सौम्य बाबू की सारी ख़बरें मिलती रही हैं। आख़िर में उसी ने पहुंचने में देर कर दी!

अचानक वह दिख गया। वह जेलखाने के भीतर से निकलकर बाहर आया। जो सिपाही गेट पर पहरा दे रहा था उसने अदब के साथ उसे बाहर निकलने दिया।

वह सीधे विशाखा की ओर चला आया। आसपास तपेश गांगुली और बिजली को देखकर बोला, "माताजी, एक बात कहनी है, आप इस ओर आइए। एक झमेला खड़ा हो गया है—"

संदीप उस समय अपने बैंक के चेम्बर में सामने कागज-पत्तर लेकर बैठा हुआ था। लेकिन उसका मन जेलखाने के गिर्द मंडरा रहा था। वह जैसे जेलखाने की तस्वीर देख रहा था। देख रहा था कि विशाखा जेलखाने के गेट के सामने खड़ी है। खड़ी-खड़ी सौम्य बाबू की प्रतीक्षा कर रही है।

थोड़ी देर बाद ही एक सिपाही ने जेलखाने का गेट खोल दिया और तत्काल वहां से निकलकर बाहर आए सौम्य बाबू। सामने विशाखा को देखते ही उसे बांहों में भर लिया। रास्ते के हज़ारों आदमी की भीड़ में विशाखा लज्जा से सिमट-सिकुड़ गई। इसका मतलब यह कि पूरी दुनिया के आदमी जैसे उसी की ओर आंख फाड़े देख रहे हैं।

विशाखा ने कहा, "यह क्या कर रहे हो तुम! यह क्या कर रहे हो? छोड़ो-छोड़ो। जो करने का मन हो घर पर चलकर करना, अभी छोड़ दो, छोड़ दो—"

"नहीं-नहीं!" यह कहकर सौम्य बाबू ने उसे और भी जोर से बांहों में भर लिया।

कल्पना का संपूर्ण परिदृश्य देखकर जब संदीप का मन आत्म-विभोर हो उठा था उसी समय बैंक का चपरासी अन्दर आया। और तत्क्षण सारा सपना टूटकर चूर-चूर हो गया। और इधर उस समय हमीद विशाखा को एक कोने में ले जाकर कह रहा है, "माताजी, जेल में एक झमेला खड़ा हो गया है—"

"अब कौन-सा झमेला? साहब को आज रिहाकर दिया जाएगा न?"

"हां, रिहा कर दिया जाएगा। लेकिन बाबुओं को और भी कुछ रुपये देने पड़ेंगे।"

"फिर रुपया क्यों?"

हमीद ने कहा, "बाबू लोग इतने पहले रिहा कर दे रहे हैं, इसलिए मिठाई खाने के लिए बख्शीश मांग रहे हैं—"

"कितने रुपयों की मिठाई?'

"दस हजार रुपया देने से ही सब लोग खुश हो जाएंगे। साहब रिहा कर दिए जाएंगे—"

"दस हजार रुपया!" विशाखा इतने रुपये तो अपने साथ लेकर नहीं आई है। बोली, "इतने रुपये तो अपने साथ लेकर नहीं आई हूं। मेरे बैग में इतने रुपये अभी नहीं हैं हमीद।"

"तो फिर अभी तुरन्त घर से ले आइए, वरना बाबू लोग साहब को रिहा नहीं करेंगे। रिहा करने में देर हो जाएगी।"

विशाखा का चेहरा उतर गया। घर में क्या इतने रुपये हैं? कौन जाने! जो भी रुपया-पैसा था, सौम्य बाबू के लिए रिश्वत के तौर पर दे देना पड़ा है।

लेकिन इस हालत में यह सब सोचने से काम नहीं चलेगा। बाबुओं ने मुंह खोलकर मांगा है तो जैसे हो, जहां से हो, देना ही पड़ेगा। उसके लिए यदि कर्ज भी लेना पड़े तो किसी के सामने हाथ फैलाना होगा। उसके लिए जो ब्याज देना होगा, वह भी देना पड़ेगा।

और फिर संदीप तो है ही। कहीं से रुपये का जुगाड़ न हो पाए तो संदीप पर ही भरोसा है। इतने दिनों तक संदीप ही उससे सम्पर्क रखे हुए है, संदीप अपने कमरे में

उसकी तस्वीर टांग कर रखे हुए है। यह विशाखा को इस मुसीबत से जरूर ही उबारेगा। संदीप ने ही सौम्य बाबू को फांसी के फंदे से बचाया है। अब के भी जरूर ही बचाएगा। जरूरत पड़ेगी तो विशाखा सीधे उसके बैंक चली जाएगी।

विशाखा ने हमीद से कहा, "अच्छा, एक काम करो हमीद, तुम मेरी गाड़ी में बैठ जाओ। घर जाकर देखती हूं कि इतने रुपये हैं या नहीं।"

यह कहकर गाड़ी में बैठकर बोली, "चलो बिशु, अब फिर घर जाना है।"

हमीद ने सामने की सीट पर बैठ जैसे ही दरवाजा बन्द कर दिया, बिशु ने गाड़ी स्टार्ट कर दी। गाड़ी चलने लगी। पीछे से तपेश गांगुली यह अनहोनी देखकर अवाक् हो गया था। वह भी बिजली को वहीं छोड़ गाड़ी के पीछे दौड़ते हुए कहने लगा, "अरी विशाखा, कहां जा रही है? हमें अपने साथ ले ले—"

उन्हें पीछे छोड़ गाड़ी तब बहुत आगे निकल चुकी थी।

दादी मां अक्सर विशाखा से कहा करती कि विशाखा ही उनके घर की लक्ष्मी है। यह सब बात विशाखा को बहुत दिनों तक याद थी। 'लक्ष्मी' शब्द का अर्थ क्या है दादी मां उसे समझाती थी।

लक्ष्मी ही स्वर्ग की सभी देवियों से सुन्दर हैं और सभी गुणों से सम्पन्न। यानी सिर्फ सुन्दरी ही नहीं। लक्ष्मी के और भी बहुत सारे नाम हैं। लक्ष्मी ही सब कुछ हैं। जन्म, विकास, आभरण, प्रकाश, लावण्य, सौभाग्य और समृद्धि सारा कुछ। साथ ही लक्ष्मी चचला, चपला, अस्थिर, भंगुर, ईर्ष्यालु एव कलहप्रिया हैं। लक्ष्मी चाहे जगत की जननी हो या लोकमाता, वे लक्ष्मी रूप में वध्या हैं। पारिवारिक सुख से वंचिता। धन्य-धान्य, मणि-मुक्ता, पति-बधु-बांधव रहने पर भी गृह-कलह अनिवार्य है। लक्ष्मी का वाहन उल्लू है। इसलिए जो मनुष्य लक्ष्मी से उपकृत होगा, उसके अन्दर कुछ उल्लू का स्वभाव रहेगा ही न कुछ। लक्ष्मी पद्मासना हैं। उनके पद्म का तो कीचड़ में ही जन्म होता है। इसलिए लक्ष्मी को प्राप्त करने पर उनमें कीचड़ का सम्बन्ध स्वीकार कर ही लेना होगा। गंगा की पवित्रता, अदिति की शान्ति, पार्वती की निस्पृहता, उमा के त्याग, दुर्गा के वैशिष्ट्य, गणेश की विघ्ननाशक क्षमता, राधा के निःस्वार्थ-भाव, सरस्वती की प्रज्ञा एवं विवेक से बहुत दूर लक्ष्मी का अवस्थान है।

यह सब बात काशी के गुरुदेव ने दादी मां को समझाई थी। बोली थी, "इसके लिए दुख मत करना बहूरानी। यही सबके लिए सुन्दर युवती का जीवन हुआ करता है। मुन्ना अगर किसी दिन कोई गलत काम करे तो तुम शांत मन से उसे क्षमा कर देना। तुम लक्ष्मी हो, इसलिए तुम्हें यह सब सहना ही होगा। यह सब मैंने अपने गुरुदेव से ही सुना है—"

सदीप यह सब जानता था। विशाखा ने खुद ही सदीप से कहा था। सदीप बैंक की कुर्सी पर बैठकर काम करता, लेकिन यह सब बात हमेशा उसके मन में गूंजती रहती थी। थोड़ी देर बाद ही सोचता, वह यह सब क्यों सोच रहा है? विशाखा आखिर उसकी है ही कौन? वह तो अब सारे बन्धनों से मुक्त हो चुका है। तमाम दायित्वों से उसे छुटकारा मिल गया है। तो फिर वह अपनी नौकरी के काम में तल्लीन हो जाता। लेकिन रात में?

रात के समय जब वह गम्भीरतर बिछावन पर निढाल पड़ जाता तो अचानक विशाखा की तस्वीर की ओर नजर चली जाती और वह फिर विशाखा में विलीन हो जाता। उसे अतीत की सारी घटना याद आ जाती। बीते दिनों की हरेक घटना, छोटी-

मोटी वात, बीते दिनों की रोजमर्रा जिन्दगी का सारा कुछ।

अलवत्ता उसके लिए सोचने को था ही क्या ? किसी के प्रति अव न तो उसे कोई गिला है और न ही किसी की जिम्मेदारी है उस पर। मां नहीं रही, मौसीजी नहीं रही, मल्लिक चाचा भी नहीं रहे। यहां तक कि वेड़ापोता से उसका सारा संपर्क टूट चुका है। वह अव पराये के घर का किरायेदार है। वाग वाज़ार के नेवू वागान का वाशिन्दा। लेकिन तो भी कहीं न कहीं एक सूक्ष्म वंधन है।। उसी वंधन के कारण वह उस तस्वीर को अपनी दीवार पर टांगे हुए है

उस दिन आफिस जाते ही उसे अलीपुर जेलखाने की याद आने लगी। आज अभी शायद सौम्यपद वावू रिहा होकर वाहर आए हैं। और वाहर आते ही विशाखा से रूवरू मुलाकात हो गई है।

मुलाकात होने पर पहले कौन वातचीत करेगा ?

हो सकता है विशाखा ही पहले वातचीत करे। पूछेगी, "कैसे हो ?"

शादी के दिन उनके वीच विशेप वार्त्तालाप नहीं हुआ था। न फूलों की सेज सजाई गई थी, न मिलन-रात्रि का आयोजन हुआ था और न ही प्रीतिभोज का आयोजन। हिन्दुओं के शादी-विवाह में जो-जो होने का रिवाज़ है उनमें से कुछ भी नहीं हुआ था। भेंट-मुलाकात या जो कुछ भी वातचीत हुई है, वह वहुत ही वाद। जव पैरेल पर छूटकर जेलखाने से सौम्य वावू एक-दो वार घर आया है, उस समय। सो भी शराव के नशे से चूर नीम वेहोशी की हालत में।

लेकिन इस वार तो वैसी वात नहीं है। इतने वरसों के वाद पति से मुलाकात होगी। विलकुल पति के रूप में साक्षात्कार। गाड़ी में वैठते ही सौम्य वावू ने गौर से विशाखा की ओर निहारा।

विशाखा ने कहा, "तुम विलकुल दुवले हो गए हो।"

"मैं दुवला-पतला दिख रहा हूं ?"

"हां, तुम क्या महसूस नहीं कर पा रहे कि तुम दुवले हो गए हो ?"

"नहीं। कैसे महसूस करूंगा कि मैं दुवला हो गया हूं। मैंने कितने ही दिनों से आईने में अपना चेहरा नहीं देखा।"

विशाखा अवाक् हो गई।

"यह क्या कह रहे हो ! जेलखाने में उन लोगों ने तुम्हें आईना भी देखने को नहीं दिया था ?"

सौम्य ने कहा, "आईना कौन देगा ?"

"मैंने तो कितने ही लाख रुपए तुम्हारे लिए भेजे हैं जिससे कि तुम्हें कोई कष्ट न हो। वह रुपया तो तुम्हारे लिए ही देती थी कि तुम्हें कोई कष्ट न हो।"

सौम्य ने कहा, "इतने लम्बे अरसे तक मुझे वहां घटिया से घटिया खाना खाने को दिया है। मेरा पेट किसी दिन नहीं भरता था।"

विशाखा ने कहा, "लेकिन तुम्हें कोई तकलीफ न हो यही सोचकर जितना भी रुपया मुझसे मांगा है, मैंने दिया है।"

"किसके हाथ में रुपया दिया था ?"

"हमीद के द्वारा भेजा था।"

सौम्य ने कहा, "हमीद कौन ? मैं उसे नहीं पहचानता।"

"वह जेलखाने का कर्मचारी नहीं, वाहर का आदमी है। जो लोग जेल के अन्दर रहते हैं उनसे उनके घर का पता लेकर रुपया-पैसा, सरो-सामान ले जाकर पहुंचा जाता है। तुम उसे कैसे पहचानोगे ? वह तो वाहर का आदमी है। वह लोगों के घर से रुपया-

पैसा लेकर सामान खरीदकर पहुँचा आता है। तुम यह नहीं जानते ?"

"नहीं, मुझे तो कुछ भी मालूम नहीं है।"

"वह आदमी यही कहकर मुझसे कितने लाख रुपए ले गया है, उसका कोई ठीक नहीं। तुम्हें अपने खाने-पीने का कोई सरो-सामान नहीं मिला है ?"

सौम्य ने कहा, "सभी जो कुछ खाते हैं, मैं भी वही खाता था।"

"शराब ?"

सौम्य ने कहा, "हाँ, बहुत कहने-सुनने पर कभी-कभी देता था। सो भी बहुत ही कम।"

विशाखा ने कहा, "यह तो अच्छी ही बात है। उसका नशा जितना कम किया जाए उतना ही अच्छा। अब उसे मत पीना—"

सौम्य बोला, "थोड़ी-सी पिया करूँगा—"

इसके बाद चारों तरफ निगाह दौड़ाकर कहा, "यह किधर जा रही हो ? बिडन स्ट्रीट तो पार कर चुकी, यह किस तरफ जा रही हो ?"

विशाखा ने कहा, "तुम लोगों का वह मकान बिक चुका है।"

"क्यों ?"

विशाखा ने कहा, "तुम्हें सारा कुछ बताऊँगी। पहले घर चलो। सुलाने के बाद सारा कुछ बताऊँगी।"

"नहीं-नहीं। अभी तुरन्त बताओ।"

विशाखा ने कहा, "तुम लोगों की वह फैक्टरी, बिडन स्ट्रीट का वह मकान सब कुछ बिक गया है—और तुम्हारी दीदी माँ का देहान्त हो चुका है, यह तो तुम जानते ही हो। उस समय तो उनके श्राद्ध के अवसर पर तुम छुट्टी लेकर घर आए थे—"

सच, यह सब कितने पहले की बात है। अब यह सब इतिहास में बदल गया है। तो भी सौम्य को सब कुछ याद आ गया। कितने ही सालों तक वह दुनिया से कटा हुआ था ! एक तरह से उसकी जैसे मृत्यु ही हो चुकी थी। अब फिर उसका जीवन लौटकर आया। अब वह नई दृष्टि से एक नई दुनिया को देख रहा है। उसका फिर एक नया जन्म हुआ हो, एक नई ही दुनिया की, चारों तरफ [illegible] [illegible] जहाँ चारों तरफ [illegible] थी वहाँ चार मंजिला, पाँच मंजिला मकान खड़े हो गए हैं। कलकत्ता में आदमी ठसाठस भर गए हैं।

विशाखा बगल में ही बैठी हुई थी। उसने पूछा, "[illegible]"

सौम्य बोला, "देख रहा हूँ कि कितने लोगों की भीड़ है। पहले इतनी भीड़ नहीं था। इतने आदमी सहसा कहाँ से आ गए ? और इतनी [illegible] किस [illegible] की है ?"

विशाखा बोली, "अभी तो देखकर है, [illegible] तुम [illegible] उस समय इस शहर की दुर्दशा ही नजर देखने को मिलती। [illegible] तुम इसकी कल्पना कर पाते !"

"तुम क्या शहर पर निवासी हो ?"

"निवासी नहीं ? [illegible]

उनसे काम करने को क्यों नहीं कहतीं ? वे लोग तनख्वाह लेंगे और काम करोगी तुम !"

विशाखा बोली, "तुम सपना देख रहे हो क्या ?"

"क्यों, मैंने गलत क्या कहा ? घर पर इतने सारे आदमी हैं और सारा काम तुम्हें अकेले करना होगा ? क्यों, मैनेजर साहब मल्लिकजी तो हैं !"

"मल्लिकजी नहीं रहे ?"

"क्यों ? उन्हें भी हटा दिया क्या ?"

"हां। घर बिक जाने के बाद संदीप उन्हें ले गया था। उनका देहांत भी हो चुका है।"

सौम्य ने पूछा, "कौन संदीप ? वह कौन है ?"

विशाखा ने कहा, "संदीप को तुम पहचानते नहीं हो ?"

"नहीं।"

विशाखा ने कहा, "वही, जिससे मेरी शादी होने-होने पर थी कि तभी तुमसे मेरी शादी हो गई। याद नहीं है ? मैं उस समय बेड़ापोता में रहती थी। याद नहीं आ रहा ?"

"नहीं।"

विशाखा बोली, "तुम्हें कुछ भी याद नहीं है ? कितने आश्चर्य की बात है ! जेलखाने में रहने से आदमी क्या अपनी शादी की भी बात भूल जाता है ? मुझसे तुम्हारी शादी हुई थी, यह याद है न ?"

"हां, वह याद है।"

विशाखा बोली, "उस समय मेरी शादी संदीप से हो रही थी, एकाएक उस वक्त तुम वहां पहुंच गए। साथ में थी तुम्हारी दादी मां, उनके साथ मल्लिकजी और एक दल पुलिस का पहरा। याद आ रहा है ?"

"हां, अब याद आ रहा है।"

तब तक गाड़ी मकान के करीब आ चुकी थी। विशाखा ने कहा, "यह हम लोगों का नया मकान है। इसी मकान को मैंने ढाई लाख रुपए में खरीदा है। इन कई सालों के दौरान जगह-जमीन की कीमत बहुत बढ़ गई है। और सिर्फ जगह-जमीन की ही नहीं, चावल-दाल वगैरह तमाम चीजों की कीमत बढ़ गई है।"

सौम्य भी नीचे उतरा। उतरकर मकान की तरफ गौर से देखा। देखने पर लगा, उसे मकान पसन्द नहीं आया। बोला "यहां मकान क्यों खरीदा ? इस मुहल्ले में क्या रह पाऊंगा ?"

विशाखा ने कहा, "यही मकान जो मिल गया यही काफी है। आजकल मकानों की कितनी किल्लत हो गई है, क्या कहूं !"

सौम्य बोला, "लेकिन अपने रसेल स्ट्रीट के मकान में जाकर रह सकती थी। वह मकान तो अच्छा था—"

"वह कहां रहा ?"

"क्यों ? उस मकान का क्या हुआ ?"

विशाखा ने कहा, "तुम्हारे चाचा ने ही उसे बेच दिया।"

"मेरे चाचा ? मुक्तिपद मुखर्जी ने ?"

"हां।"

"वह लम्बी दास्तान है। रुपए-पैसे की बात थी। संपत्ति के वे भी तो एक हिस्सेदार थे।"

और भविष्य के बाद भी भविष्य रहेगा। इसलिए अतीत के पहले के अतीत की बातें उस पर व्यंग्य करने लगीं।

"क्यों री, अभी तक तैयार नहीं हुई? कब वहां पहुंचेगी, सोचकर तो देख।"

तपेश गांगुली के गले की आवाज़ में उस समय क्रोध का पुट था।

"मैं तुझसे बार-बार कह गया था कि ऑफिस से ज़ल्दी लौटूंगा, तू तैयार होकर रहना। तू अब भी सज-संवरकर तैयार नहीं हुई है?"

बिजली बोली, "मैं वहां नहीं जाऊंगी बाबूजी—"

"क्यों? जाएगी क्यों नहीं? तुझे विशाखा के घर जाने में कौन-सी आपत्ति है? उन लोगों का खाना खराब रहता है या रहने में कोई असुविधा होती है? बात क्या है?"

बिजली बोली, "वहां मुझे रहना अच्छा नहीं लगता।"

"क्यों, अच्छा क्यों नहीं लगता?"

"अपना घर रहते विशाखा के घर में क्यों रहने जाऊं?"

"हम लोगों के घर में कौन है जो तेरी देखरेख करेगा? मैं तो ऑफिस चला जाता हूं, उस समय तुझे अकेले ही घर में रहना पड़ता है! तेरी मां ज़िन्दा होती तो और ही कुछ बात थी लेकिन तेरी जैसी सयानी लड़की का दिन-भर अकेले घर में रहना क्या अच्छा है? यह मुहल्ला भी अच्छा नहीं है। किसके मन में क्या है, कौन कह सकता है! तेरी मां जब थी तो अलग बात थी, लेकिन अब? इसके अलावा यहां रसोई पकाने से लेकर बर्तन मलना, झाड़ू लगाना वगैरह काम तुझे अकेले ही करना पड़ता है और वहां दाई-नौकर हैं, विशाखा है। बात करने के लिए कोई आदमी मिलेगा वहां। दोनों बहनें आराम से रहोगी, गपशप करोगी। कितना सुख मिलेगा! चल-चल—"

बिजली बोली, "और आप भी वहां रहिएगा?"

"क्यों, तू रहेगी तो मेरे रहने में दोष ही क्या है? विशाखा तो मेरे लिए अपनी जैसी ही है। चाहे जो हो, अभी भी उसके पास ढेर सारे रुपये हैं। हम दोनों के लिए उसका अतिरिक्त खर्च ही क्या होगा! चल, चल—"

इसी तरह मनसातल्ला लेन के मकान में ताला लगाकर तपेश गांगुली बिजली को अपने साथ लेकर एक दिन विशाखा के भुवन गांगुली लेन के मकान में हाजिर हो जाता और लगातार विशाखा के घर पर अड्डा जमाए रहता। इससे तपेश गांगुली को अपने मासिक वेतन के रुपये में से एक भी पैसा खर्च नहीं करना पड़ता। सिर्फ खिदिरपुर के मकान का किराया ही देना पड़ता। और सो भी कितने रुपये!

तपेश गांगुली सिर्फ महीने के सप्ताहान्त में विशाखा से पैसे की मांग करता। कहता, "अरी विशाखा, बीसेक रुपया कर्ज़ दे सकती है मुझे? फिलहाल मैं बहुत तंगी में हूं।"

शुरू-शुरू में विशाखा दे देती। कभी बीस, कभी पन्द्रह और कभी पचीस रुपये। मगर बिजली को शर्म का अहसास होता। एकान्त में कहती, "आप रुपये क्यों मांगते हैं बाबूजी? मुझे शर्म लगती है—"

बाप कहता, "मांगने में शर्म की कौन बात है? जानती है, मुखर्जीभवन के कितने लाख रुपयों की संपत्ति मिली है विशाखा को? उतना सारा रुपया रखकर वह क्या करेगी? बाल-बच्चे नहीं हैं, उतना रुपया वह किसके पीछे खर्च करेगी?"

यही नहीं, विशाखा के पास जब तक रहता, बाजार करने का काम अपने हाथ में

ले लेता। मांस-मछली से लेकर रसगुल्ला, सन्देश, दही वगैरह खरीद लाता तरेश गांगुली।

विशाखा बाजार करने का आडम्बर देखकर चकित होने के साथ-साथ विरक्त भी होती। लेकिन मुंह खोलकर उसे जाहिर नहीं करती। सिर्फ इतना ही कहती, "इतने मांस-मछली, रसगुल्ला क्यों ले आए चाचा? यह सब कौन खाएगा?"

चाचा कहता, "तू खाएगी। यह सब खाने से तेरी सेहत अच्छी रहेगी। तू कितनी दुबली है! यह सब खाएगी तो थोड़ी मोटी हो जाएगी। जब जेलखाने से जमाई लौटकर आएगा तो तुझे देखकर खुश होगा। तेरे बदन में थोड़ी-सी चर्बी का होना जरूरी है। जमाई के बारे में सोचते-सोचते तू दिन-ब-दिन बहुत दुबली होती जा रही है। तेरे लिए मांस-मछली खाना नितान्त आवश्यक है—"

दरअसल विशाखा अपने चाचा की नस-नस पहचानती थी। जानती थी कि चाचा को खाने का बड़ा ही लोभ है। इसीलिए कुछ नहीं कहती। खामोशी के साथ सब कुछ बरदाश्त कर लेती। लेकिन कुछ दिन के बाद विशाखा कहती, "चाचा, आपको अब बाजार नहीं करना है, आप जरा आराम करें। आज मेरी मंगला बाजार जाएगी—"

और उसके बाद खाना खाने पर तरेश गांगुली को सुख नहीं मिलता। वही एकरस दाल, सब्जी और छोटी-छोटी मछलियां। सस्ते किस्म का भोजन। यदि यही सब खाना है तो विशाखा के घर क्यों आया है? यह सब साग-सब्जी खाने?

बीच-बीच में कहता, "अरी विशाखा, नाश्ते में तो रोटी-सब्जी के अलावा कोई दूसरी चीज नहीं बनाती। बाजार में क्या रसगुल्ला-सनतुआ नहीं मिलता है?"

विशाखा कहती, "मंगला कब जाएगी बताइए? उसे वक्त कहां मिलता है?"

चाचा कहता, "मंगला को भला वक्त नहीं मिलता, उसे बहुत काम रहता है, लेकिन मेरे पास तो वक्त है। मैं बाजार जा सकता हूं, मुझे रुपया दे न—"

विशाखा कहती, "नहीं चाचा, आपको तकलीफ नहीं करनी है। आपके लिए खाना पक गया है, आप खा-पीकर ऑफिस चले जाइए—"

"धत्त! मेरा ऑफिस! मेरी तो सरकारी नौकरी है, मैं ऑफिस न जाऊं तो भी कोई हर्ज नहीं। तू मुझे रुपया दे—"

ऐसी स्थिति आने पर बिजली अपने बाप को एकान्त में बुलाकर कहती, "बाबूजी, आप मुझे यहां क्यों ले आए? मनसातल्ला लेन के अपने मकान में तो हम अच्छी ही तरह थे। आप यहां क्यों आए? चलिए, आप वहीं वापस चलिए—"

बाप कहता, "क्यों, तुझे यहां कौन-सी असुविधा हो रही है?"

बिजली कहती, "हां, मुझे असुविधा हो रही है—"

"किस चीज की असुविधा?"

"असुविधा नहीं, शर्म महसूस होती है।"

बाप कहता, "शर्म की कौन-सी बात है? हम लोगों का कितना खर्च बच जाता है, यह सोचकर तो देख। यहां हम दोनों के खाने का खर्च नहीं लगता। यह क्या कोई कम बात है?"

बिजली कहती, "नहीं, मुझे यह सब अच्छा नहीं लगता—"

"क्यों, तुझसे किसी ने कुछ कहा है?"

बिजली कहती, "यों विशाखा ने मुंह खोलकर कुछ नहीं कहा है, लेकिन हम उस पर निर्भर होकर खाना खा रहे हैं, यह वह महसूस करती है। वह भले ही अपने मुंह से न कहे मगर मैं उसके हाव-भाव से समझ जाती हूं। चलिए, हम लोग घर चलें—"

बाप कहता, "अगर ऐसी बात है तो चल हम चलें।"

रहने के कारण मेरी सांस घुटने लगी है।"

विशाखा ने पूछा, "बाहर कहां जाओगे ?"

सौम्यपद ने कहा, "इतने दिनों तक तो जेलखाने में तनहाई की ज़िन्दगी जीता रहा। अब घर में अकेले रहना मुझे अच्छा नहीं लगता—"

"तो फिर कहां जाओगे, कहो। सिनेमा देखने जाओगे ?"

"धत्त ! सिनेमा देखकर क्या होगा ?"

विशाखा समझ नहीं सकी कि क्या करने से उसका पति खुश हो सकता है।

बोली, "मैं तो तुम्हारे पास ही हूं, तो भी तुम्हें अकेलेपन का अहसास होता है ? कहो न, क्या करने से तुम्हें अच्छा लगेगा। बेहतर तो यही रहेगा कि तुम इस आराम-कुर्सी पर पीठ टिकाकर ज़रा लेट जाओ, मैं तुम्हारे हाथ-पैर-बदन दबा देती हूं—"

सौम्यपद 'हो-हो' कर हंस पड़ा। बोला, "मैं क्या कोई बच्चा हूं कि हाथ-पैर-बदन दबाने से मुझे आराम मिलेगा ?"

विशाखा हताश होकर बोली, "कितने दिन, कितने बरसों के बाद तुम घर आए हो, अब मैं क्या करूं कि तुम्हें खुशी हो, यही बताओ। मैं तुम्हारे पास हूं, फिर भी तुम्हें अच्छा नहीं लग रहा ?"

सौम्य बोला, "मुझे कुछ भी अच्छा नहीं लग रहा। मुझे लगता है कि मैं अब भी जेलखाने में ही हूं—"

"क्यों ? तुम तो कह रहे थे कि जेलखाने में वे लोग तुम्हें कुछ खाने नहीं देते थे। यहां तो मैं हर रोज़ नया-नया खाना पका कर देती हूं। तो भी तुम्हें यह अच्छा नहीं लग रहा है ?"

सौम्यपद ने कहा, "आदमी को सिर्फ खाना खाने में ही सुख मिलता है ?"

"तो फिर बताओ कि तुम्हें किसमें सुख प्राप्त होगा ? आज फिर मंगला को मांस पकाने कहूं ?"

सौम्य बोला, "कई दिन से तो मांस खा रहा हूं।"

"वो क्या करने से तुम्हें अच्छा लगेगा ? सिनेमा देखने चलोगे ? मैं अभी तुरन्त तुम्हारे साथ चलती हूं।"

सौम्य ने कहा, "तुम अपनी गाड़ी दो, मैं अकेले ही निकलूंगा—"

"गाड़ी लेकर कहां जाओगे ?"

"क्लब।"

विशाखा ने कहा, "समझ गई, तुम नाइट-क्लब जाकर फिर व्हिस्की पियोगे।"

सौम्य ने कहा, "इतने सालों से व्हिस्की नहीं पी है, थोड़ी-सी पीने में हर्ज़ ही क्या है ? मैं तो हर रोज़ नहीं पीता।"

विशाखा ने कहा, "तुम अगर क्लब जाओगे तो मैं भी तुम्हारे साथ क्लब चलूंगी। तुम्हें अकेले नहीं जाने दूंगी—अकेले जाओगे तो तुम ढेर सारी शराब पी लोगे।"

सौम्य ने कहा, "नहीं, तुम्हें घर में बहुत काम हैं, तुम मत जाओ। मैं अकेले ही चलता हूं। जल्द ही लौट आऊंगा—"

"नहीं, तुम अकेले नहीं जाओगे। मैं तुम्हें अकेले नहीं जाने दूंगी। अकेले जाओगे तो तुम कौन-सा खतरनाक कांड कर बैठोगे, कौन जाने !"

"क्यों ? ऐसी बात क्यों कह रही हो ?"

विशाखा ने कहा, "ज्यादा शराब पीने से क्या होता है, तुम यह नहीं जानते ?"

"क्या होता है, तुम्हीं बताओ।"

विशाखा बोली, "बताऊं ?"

"हां, बताओ।"

विशाखा ने कहा, "ज्यादा शराब पीने के कारण तुम नशे में धुत हो गए थे और तुमने एक औरत का खून कर डाला था। अब क्या मेरा भी खून करना चाहते हो?"

"यह क्या कह रही हो तुम!"

विशाखा बोली, "हां, ठीक ही कह रही हूं। मेरा कोई नहीं है इसलिए तुम मुझ पर वैसा ही अत्याचार करना चाहते हो? मेरे पिताजी नहीं हैं, मां कभी थीं, अब वह भी नहीं है। अपने के नाम पर सिर्फ तुम्हीं हो। अब तुम यदि मेरा खून करना चाहते हो तो मुझे कुछ नहीं कहना। करो, अभी तुरन्त तुम मेरा खून कर डालो—"

सौम्य ने कहा, 'मैं व्हिस्की पियूंगा तो तुम्हारा खून हो जाएगा?"

"इसके अलावा और क्या होगा? इसी वजह से कह रही हूं कि तुम अगर शराब पिए बगैर नहीं रह सकते तो मुझे अपने साथ ले चलो। मैं साथ रहूंगी तो तुम ज्यादा नहीं पी सकोगे, मैं तुम्हें संभाले रहूंगी।"

विशाखा का कथन समाप्त होते ही सदर दरवाजे की कुण्डी खटखटाने की आवाज हुई। अन्दर से मंगला ने पूछा, "कौन?" आवाज बिजली की थी। बिजली ने कहा, "मैं हूं मंगला। मैं और बाबूजी आए हैं। बाबूजी बहुत बीमार हैं। बाबूजी को अस्पताल से ले आई हूं—" .

विशाखा के पास आकर मंगला ने कहा, "बिजली दी आई है, साथ में उनके पिता हैं। कह रही है बहुत बीमार हैं। दरवाजा खोल दूं?"

आदमी की जिन्दगी कभी जटिल और कभी सरल होती है। लेकिन संसार में ऐसे भी आदमी हैं जिनके जीवन में जटिलता और सरलता घुलमिलकर असमतल भूमि के समान असमान होती है। इस असमान जीवन के अधिकारियों को हम सबने देखा है, समझा है और जाना है। लेकिन विशाखा का जीवन?

विशाखा के जीवन जैसा जटिल जीवन संदीप ने न अपनी आंखों से देखा है और न ही इतिहास में पढ़ा है। आखिर में विशाखा ने संदीप से कई बार शिकायत की है "मेरे इस दुखी जीवन के लिए तुम्हीं जिम्मेदार हो संदीप। हां, तुम्हीं, और कोई नहीं [illegible]"

संदीप अवाक् हो जाता, "मैं?"

"तुम नहीं तो और कौन?"

"मैं कैसे जिम्मेदार हूं?"

"तुम जिम्मेदार नहीं हो? सब कुछ जानने-सुनने पर [illegible] बात कह रहे हो?"

संदीप इस बात के बाद क्या कहे, समझ में नहीं आता।

सिर्फ इतना ही कहता, "तुम्हारे सारे दुखों के लिए यदि मैं ही जिम्मेदार [illegible] तुम जो भी सजा दोगी बरदाश्त कर लूंगा। दो, तुम मुझे क्या सजा [illegible] दो—"

"सजा क्या तुम्हें कोई कम दे रही हूं?"

"कौन-सी सजा दे रही हो?"

विशाखा कहती, "यही जो मैं तुम्हारे पास आकर बार-बार [illegible] इसी तरह तो तुम्हें सजा दे रही हूं—"

संदीप हंसकर कहता, "इस तरह तुम मुझे [illegible] तो भी मुझे कोई कष्ट नहीं होगा। बल्कि, तुम और [illegible]"

"इतने दिनों तक मुझे कितने रुपए दिए हैं, बताओ तो ? इन रुपयों को कभी किसी दिन वापस नहीं कर पाऊंगी—"

संदीप कहता, "तुम्हारे अलावा मेरा कोई अपना आदमी नहीं है। अपने के नाम पर एकमात्र तुम्हीं हो। मेरा कोई होता तो उसे ही मुझे सारा कुछ देना पड़ता—"

विशाखा कहती, "नहीं, मैं तुम्हारी कोई नहीं हूं, मैं तो पराए की पत्नी हूं। मैं वादा करती हूं, मेरी आर्थिक स्थिति सुधर जाएगी तो किसी दिन तुम्हारा सारा कर्ज चुका दूंगी।"

संदीप कहता, "इसे कर्ज मत समझो विशाखा, मैं केवल तुम्हारा मुंह जोह कर ही दे रहा हूं। मुझे यही सोचकर प्रसन्नता होती है कि तुम मुझे अपना समझती हो—"

ज़रा रुककर संदीप फिर बोला, "और एक बात। तुम्हें जो इतने रुपए दे रहा हूं, इसका व्याज भी नहीं मांगूंगा। तुम्हें देकर ही मुझे प्रसन्नता होती है। तुम लोगी तो उसीमें मुझे खुशी हासिल होगी।"

इस बात के बाद विशाखा कुछ देर तक चुप्पी ओढ़े रहती। एकाध बार साड़ी के पल्लू से अपनी आंखें पोंछ लेती। उसके बाद कहती, "अगर मेरे प्रति इतना खिचाव है तो उस दिन तुम विवाह के पीछे से क्यों उठ गए ? क्यों तुमने ज़बरन मुझसे शादी नहीं की ?"

"आज इतने सालों के बाद फिर यही बात पूछ रही हो ?"

"यह बात पूछे बिना मैं रह नहीं पाती हूं—"

संदीप कहता, "इस बात का उत्तर मैं नहीं दूंगा। जीवन में कभी मुझसे इस बात का उत्तर नहीं मिलेगा। अभी दूसरी बात कहो। बताओ कि सौम्य बाबू अभी कैसे हैं ?"

विशाखा कहती, "वे अच्छे होते तो इस तरह तुमसे रुपया मांगने आती ?"

"अब व्हिस्की पीना छोड़ दिया है ?"

विशाखा कहती, "वे व्हिस्की छोड़ देते तो मैं सुखी हो जाती।"

"अब भी क्लब जाते हैं ?"

"जाते हैं तो मैं भी साथ में रहती हूं। ज्यादा पीने नहीं देती हूं, घर में बोतल लाकर इकट्ठी नहीं करती हूं। बहुत दबाव डालते हैं तो एक बोतल ले आती हूं। सो भी छोटी-सी बोतल। मैं खुद ही गिलास में ढाल देती हूं। बहुत दिनों से पीने का मौका न मिलने पर अब जेल से छुटकारा पाने पर पीने की तीव्र इच्छा होती है। डाक्टर बुलाकर दिखाया था। उन्होंने कहा है, मामूली एक-दो पेग पिलाने में कोई हर्ज नहीं है—"

उसके बाद विशाखा और भी बहुत सारी बातें बताती, एक दिन आकर बोली, "और एक मुसीबत खड़ी हो गई है—"

"मुसीबत ? कौन-सी मुसीबत ?"

विशाखा ने कहा, "मेरे चाचा को अपने साथ लाकर बिजली ने फिर मेरे घर पर डेरा-डण्डी जमा दिया है।"

"क्यों ?"

विशाखा ने कहा, "चाचा बहुत बीमार है। घर पर सेवा करने को कोई नहीं है, इसलिए बीमार चाचा के साथ मनसातल्ला लेन से आकर मेरे घर में टिक गई है—"

"उसके बाद ?"

"उसके बाद और क्या ? चाचा के इलाज का सारा खर्च मेरे माथे पड़ गया है। मैं अपने झमेलों के चलते परेशान हूं, उस पर चाचा और बिजली दोनों मेरी गरदन पर सवार हो गए हैं !"

सदीप ने कहा, "यह तो बहुत खर्च का मामला है।"

"इसीलिए तो अभी तुम्हारे दर पर आयी हूं। तुम्हारे सिवा तो मेरा अपने के नाम पर कोई नहीं है—"

विशाखा के घर में तब सचमुच ही अशांति अपनी चरम सीमा तक पहुंच चुकी थी। मकान छोटा। मात्र दुछेक कमरे। लेकिन मंगला को मिलाकर पांच जने थे। उन्ही में से एक में तपेश गांगुली लेटा रहता। लेटे-लेटे ही दिन-रात गुजार देता। लेटे-लेटे ही बिजली या विशाखा से बातें करता।

बीच-बीच में डाक्टर बुलाकर लाना पड़ता। पूरे शरीर की जांच होने के बाद तपेश गांगुली पूछता, "मेरी तबीयत ठीक हो जाएगी तो डाक्टर साहब ?"

डाक्टर साहब प्रेसक्रिप्शन लिखते हुए कहते, "हां-हां, जिन्दा क्यों नहीं रहिएगा, जरूर रहिएगा।"

उसके बाद बिजली डाक्टर साहब को दस रुपये देती। रुपया लेकर डाक्टर साहब बाकायदा चले जाते। तपेश गांगुली के अस्वस्थ होने के बाद से बिजली ऑफिस जाकर अपने बाप की तनख्वाह ले आती। लेकिन वह तो सिर्फ छह महीने ही। उसके बाद हाथ खाली हो गया। उस समय हाथ में पैसा नहीं रहा। उस समय विशाखा के सामने हाथ फैलाना पड़ता। बिजली विशाखा के पास जाकर कहती, "क्या करूं विशाखा दी, अब बाबूजी के दफ्तर से वेतन मिलना बंद हो गया है। अब डाक्टर और दवा का खर्च कैसे चलेगा ?"

विशाखा कहती, "तू फिक्र मत कर, मैं तो हूं ही। चाचा के इलाज में जो भी खर्चा होगा, मैं दूंगी।"

तपेश गांगुली की बीमारी दिन-दिन बदतर होती गई। देह की बीमारी जितनी बढ़ने लगी मन में भी उतना ही क्षोभ जमने लगा।

इतने दिनों के दरमियान उसने क्या किया ? एक लड़की की शादी तक नहीं करा सका ? दस नहीं, एक ही लड़की है उसे। बंगाली होकर बहुत सारे लोग बहुत कुछ कर गए हैं। उसी के साथ कितने ही लोगों ने नौकरी की है। वे भले ही कुछ न कर सके लेकिन कम-से-कम बाल-बच्चों के साथ सुखी तो हैं। बहुतों ने कलकत्ता शहर में मकान भी बनवा लिए हैं।

लेकिन वह ? वह क्यों नहीं अपनी लड़की की शादी करा सका ?

बीच-बीच में आंख खोलता तो बिजली को अपनी ओर टकटकी लगाए देखते हुए पाता। पिता को जगी हुई हालत में देख बिजली पूछती, "अभी कैसा लग रहा है बाबूजी ?"

बाप कहता, "तू मेरे पास बैठकर क्या कर रही है ?

बिजली कहती, "मैं देख रही हूं कि आप अभी कैसे हैं।"

बाप गुस्सा जाता। कहता, "मेरे बारे में सोचने के बजाय तू अपने बारे में सोच। तेरे बारे में ही सोच-सोचकर मैं बीमार पड़ गया—"

"आप अब मेरे बारे में नहीं सोचिए बाबूजी।"

बाप कहता, "तेरे बारे में नहीं सोचूंगा तो और किसके बारे में सोचूंगा ? तू ही मेरा सत्रग्रह है।"

"इसके लिए मैं दोषी हूं ?"

बाप कहता, "तू लड़का होकर पैदा क्यों नहीं हुई ? तुझे लड़की होकर पैदा होने किसने कहा था ? तू लड़का होकर पैदा हुई होती तो मुझे आज यह चिन्ता रहती ?"

बाप यह सब कहता और रोने लगता। बाप का रोना देख बिजली भी रोने

लगती। उस पर नज़र पड़ते ही बाप बहुत गुस्सा जाता। कहता, "तू क्यों रो रही है? तू चुप हो जा—"

बाप बेशक लड़की को चुप होने को कहता, लेकिन अपनी रुलाई रोक नहीं पाता। आखिर में बिजली कहती, "बाबूजी, सभी सुन रहे हैं, अब चुप हो जाइए। मुझे बहुत शर्म लगती है—"

जो आदमी किसी दिन कलकत्ता शहर का चप्पा-चप्पा छान मारता था, उसे इस तरह लेटे हुए देखकर लड़की को आश्चर्य होता। लड़की की शादी के लिए किसी दिन बाप ने क्या नहीं किया है? बिजली को खुद के प्रति भी लज्जा का बोध होता। वह लड़की होकर वाकई क्यों पैदा हुई? और अगर लड़की होकर ही पैदा हुई तो उसकी शादी क्यों नहीं हुई? जब तक मां जीवित थी तब तक कम-से-कम एक व्यक्ति तो था जिससे बातें की और सुनी जा सकती थी। लेकिन मां के मरते ही बिजली अनाथ हो गई। उसकी शादी के लिए बाप ने किसी के पैरों पर गिरना बाकी नहीं रखा। उसकी शादी क्यों नहीं हुई? वह क्या देखने में बुरी है? बदसूरत से बदसूरत लड़की की भी शादी हो जाती है। खिड़की से बाहर सड़क की ओर ताकने पर बहुत सारी लड़कियों पर नज़र पड़ती है। उनके चेहरे भद्दे हैं, लेकिन सिर पर घूंघट और मांग में सिंदूर है। तो फिर उन लोगों की भी गृहस्थी है, उन्हें भी पति-संतान और घर-द्वार हैं। और विशाखा?

विशाखा और वह तो एक ही घर में पली हैं। विशाखा का बाप नहीं था, मां विधवा थी लेकिन किस अलौकिक करिश्मे से उसकी शादी हो गई! एक पैसा भी खर्च नहीं हुआ बल्कि उल्टे ससुराल से अनगिनत रुपये आने लगे।

सारा कुछ बिजली की आंखों के सामने घटित होता रहा। हर महीने ससुराल से निर्धारित राशि आने लगी। और उसके बाद ताईजी विशाखा को लेकर साहबी मुहल्ले में चली गई।

वहां जाकर भी बिजली ने देखा है, कितना सुख, कितना आराम है विशाखा दी को। नौकर-दाई, गाड़ी वगैरह लगे रहते हैं। एक अंग्रेज़ी सिखाने के लिए मास्टरनी है, एक बंगला सिखाने के लिए और एक गणित के लिए। उस साहबी मुहल्ले के मकान में वह जब-जब अपने बाप के साथ गई है, विशाखा ने कितनी ही तरह के खाने खिलाए हैं। कितनी तरह के आराम उन लोगों का देखा है।

बाबूजी हमेशा बढ़िया खाना पसन्द करते और ताईजी भी उन्हें भरपेट खाना खिलातीं। घर लौटने के दौरान बाबूजी बिजली को सांत्वना देते, "दुख मत करो बिजली। तेरी शादी हो जाएगी तो तुझे भी ऐसा ही आराम मिलेगा। तू तो विशाखा के बनिस्वत खूबसूरत है। देख लेना, तुझे भी बहुत ही धनवान पति मिलेगा।"

उसके बाद कितने ही दिन, कितने ही महीने और कितने ही साल गुजर गए। कितने ही आदमी उसे पसन्द करने के खयाल से आए। जाने के दौरान, कह गए, "बाद में खबर भेजेंगे।"

लेकिन बाद में किसी ने खबर नहीं भेजी। असली चीज़ रूप और गुण नहीं रुपया है। लेन-देन का सवाल ही बराबर प्रमुख बनकर खड़ा हो गया है। रुपये-पैसे को मांगने के खयाल से बाबूजी कितनी ही बार विशाखा के रसेल स्ट्रीट के मकान पर जा चुके हैं। कितनी ही बार भाभी से तपेश गांगुली ने कहा है, "मुझे कुछ रुपये दे सकती हो भाभी?"

भाभी ने कहा है, "बताओ, कितने रुपये?"

तपेश गांगुली ने कहा है, "अपनी बिजली की शादी के लिए मांग रहा हूं—"

भाभी ने कहा है, "इसके लिए तो बहुत सारे रुपये चाहिए। पांच-दस होता तो दे सकती थी। उससे ज्यादा रुपये मेरे पास नहीं रहते हैं—"

"क्यों, मुखर्जी-गृहिणी के पास तो अनगिनत रुपये हैं। उन लोगों के रुपये का कोई अन्त नहीं है—"

भाभी कहती, "उन लोगों के पास अनगिनत रुपये हैं लेकिन वे मुझे रुपये क्यों देंगे? अगर पूछें कि किस चीज के लिए रुपयों की जरूरत है तो क्या जवाब दूंगी?"

तुम कहना, "मेरे देवर की लड़की की शादी के लिए जरूरत है।"

भाभी कहती, "मुंह खोलकर यह नहीं कहा जा सकता है? मेरे और विशाखा के पीछे जो खर्च होता है उसके अलावा किसी और खर्च के लिए मैं रुपये मांग सकती हूं? मैं कौन-सा मुंह लेकर मांगने जाऊंगी?"

तपेश गांगुली कहता, "कर्ज के तौर पर मांगना।"

"कर्ज? तुम यह क्या कह रहे हो देवरजी? अभी तक विशाखा से उस घर के पोते की शादी नहीं हुई है और इसी बीच मैं रुपया मांगने जाऊं? पहले वे हमारे कुटुम्बी बन जाएं, विशाखा उस घर की पौत्रवधू बन जाए, तो हो सकता है, विशाखा उस समय अनगिनत रुपये की मालकिन बन जाए। वैसी हालत में विशाखा खुद ही जमाई से रुपये मांगकर तुम्हें देगी—"

तपेश गांगुली कहता, "उस समय बिजली की बात तुम्हें याद रहेगी तो?"

भाभी कहती, "यह क्या कह रहे हो तुम! याद नहीं रहेगी? तुमने मेरे संकट के दिनों में क्या किया था, किस तरह अपने घर में आश्रय दिया था, यह क्या मैं भूल सकती हूं? इसके अलावा बिजली भी मेरी लड़की की तरह ही है—"

तपेश गांगुली कहता, "संसार में यह सब बात कोई याद नहीं रखता भाभी। एक तुम ही हो कि याद रखे हुए हो। सो यह बात याद रखना भाभी। उस समय भूल मत जाना।"

"नहीं-नहीं, कभी नहीं भूलूंगी, तुम देख लेना—"

यह सब कितने पहले की बात है? लेकिन तपेश गांगुली को यह सब पुरानी बातें याद हैं।

उसके बाद किस तरह के हैरतअंगेज कांड घटित हो गए इस संसार में! शुरू में सबकी यह धारणा पक्की हो गई थी कि विशाखा की शादी उस आदमी से नहीं हुई। लेकिन उसकी खुशकिस्मती इतनी जबर्दस्त है कि घूम-फिरकर फिर उसी सौम्य बाबू से उसकी शादी हो गई। पर उसे जेलखाने में अनेक वर्ष बिताने पड़े। जेलखाने से पति के रिहा होने पर विशाखा उसी के साथ घर-संसार चला रही है। पहले की वह विशाल इमारत और फैक्टरी अलबत्ता अब नहीं है, तो भी विशाखा के द्वारा खरीदा गया एक मकान है, गाड़ी है और ड्राइवर है। बड़े आदमी के पास जो-जो होने से लोग उसे बड़ा आदमी कहते हैं, वह सब विशाखा के पास है। चाहे जो हो, सौम्य बाबू को तो किसी दफ्तर में नौकरी नहीं करनी पड़ती, जमा राशि से खर्च करने से खाना-पहनना चल जाता है और साथ ही ठाठ-बाट बना रहता है। उसकी तरह दूसरे के घर में रहकर सम्मान नहीं खोना पड़ता है।

बीच-बीच में बाप बिजली से पूछता है, "उस ओर किसी के गले की आवाज नहीं सुनाई पड़ रही है, वे लोग घर पर नहीं हैं क्या?"

बिजली कहती है, "नहीं—"

"आज भी क्लब गए हैं क्या?"

"हां।"

"विशाखा भी साथ में गई है?"

बिजली कहती है, "हां—"

एकाएक तपेश गांगुली कहते हैं, "वहां जाकर विशाखा क्या करती है ? शराब पीती है क्या ?"

विजली कहती है, "नहीं—"

"तो फिर तुझे भी क्यों नहीं ले जाते हैं ?"

विजली कहती है, "मुझे क्यों ले जाएंगे। आप बीमार हैं, मुझे ले जाएंगे तो आपकी देखरेख कौन करेगा ?"

"नहीं, अब मेरी देखरेख की ज़रूरत नहीं है। मैं बूढ़ा बीमार आदमी हूं, मेरा जीवित रहना अब कोई मानी नहीं रखता, मैं मर जाऊं तो चैन मिले। तू मेरे लिए तकलीफ क्यों झेल रही है ? तू भी उन लोगों के साथ क्लब जाना। मेरे लिए किसी को सोचना नहीं है—"

विजली कहती है, "लेकिन वे लोग मुझे क्लब क्यों ले जाएंगे ? जमाई बाबू और विशाखा-दी मुझे अपने साथ क्यों ले जाएंगे ?"

"ले जाएंगे, ले जाएंगे। तू एक बार कहकर तो देख।"

विजली ने कहा, "नहीं-नहीं, मैं यह कह नहीं पाऊंगी। आप मुझे यह सब कहने नहीं कहिए। आखिर में यदि जमाई बाबू मुझे शराब पीने कहें तो ?"

तपेश गांगुली ने कहा, "पी लेना, शराब पी लेना।"

"मैं शराब पियूंगी ? आप क्या कह रहे हैं !"

"क्यों, दोष ही क्या है ? शराब पीने से तुझे कोई आश्रय मिल जाए तो शराब पीने में दोष ही क्या है ? मैं बाप होकर तेरे लिए कुछ नहीं कर सका, तेरी शादी भी नहीं करा सका ऐसा अभागा बाप हूं मैं—"

यह कहकर तपेश गांगुली फफक-फफक कर रोने लगा। विजली भय से सिहर उठी। बोली, "बाबूजी रोइए नहीं, रोइए नहीं। उस ओर मंगला रसोईघर में खाना पका रही है, सुन लेगी। आप चुप हो जाइए, चुप हो जाइए—"

लेकिन कौन किसकी बात सुने ! बाप और जोर-जोर से रोने लगा, "अरे मैं एक ऐसा बदकिस्मत बाप हूं कि तेरे लिए कोई सहारा नहीं ढूंढ़ सका। मरने पर भी मुझे सुख नहीं मिलेगा। हाय भगवान, मैंने ऐसा कौन-सा पाप किया था कि अपनी इकलौती बेटी के लिए कोई सहारा नहीं ढूंढ़ सका, उसे बेसहारा छोड़कर जा रहा हूं—"

यह कहकर संभवतः किसी अदृश्य भगवान को संबोधित कर ज़ोर-ज़ोर से रोने लगा। विजली ने शर्म और दहशत से सिहरकर झट-से कमरे के दरवाज़े की सिटकनी बन्द कर दी। आवाज़ बाहर जाएगी तो पता चल जाएगा।

लेकिन इस बीच जो बर्बादी होने को थी, हो चुकी है। मंगला बाहर से चिल्ला-चिल्लाकर कहने लगी, "दादी रानी, दादी रानी, क्या हुआ ? दरवाज़ा बन्द क्यों है, दरवाज़ा खोलो—"

दो-चार बार दरवाज़े पर धक्का देने पर विजली ने जैसे ही दरवाज़ा खोला, देखा मंगला रसोईघर से आकर सामने खड़ी है। विजली पर नज़र पड़ते ही मंगला ने कहा, "बाबू इस तरह चिल्ला क्यों उठे ? बीमारी बढ़ गई है क्या ? डाक्टर बाबू को बुलाना है ?"

विजली ने कहा, "नहीं-नहीं, ऐसी कोई बात नहीं। डाक्टर बाबू को नहीं बुलाना है। बीमारी की तकलीफ का अहसास हो रहा है, इसलिए बाबूजी इस तरह चिल्ला रहे हैं। तुम जाकर अपना काम करो—"

यह कहकर दुबारा दरवाज़ा बन्द करने जा रही थी लेकिन बन्द न करके बोली, "मंगला, सुनो—"

"क्या ?" मंगला ने कहा।

"तुम्हारी मामी रानी और भैयाजी अब भी नहीं लौटे हैं ?"

"नहीं।"

"ठीक है। तुम जाकर अपना काम करो।"

यह कहकर दरवाजा दुबारा बन्द कर दिया।

वापस आते ही बाप ने पूछा, "कौन थी ?"

"और कौन, मंगला थी। सोचा था, आपकी बीमारी बहुत बढ़ गई है, इसलिए पूछ रही थी कि डाक्टर को बुलाना है क्या। मैंने कहा, नहीं।"

बाप ने कहा, "ठीक ही कहा है। वे लोग कैसे समझेंगे कि मुझे कौन सी बीमारी है। वे नहीं जानते कि मेरी बीमारी कोई भी डाक्टर ठीक नहीं कर सकेगा। एकमात्र ईश्वर के अलावा मेरी यह बीमारी और कोई भी दूर नहीं कर सकेगा।"

बिजली बोली, "आप मेरे लिए इतनी फिक्र क्यों करते हैं बाबूजी ? कितनी ही ऐसी लड़कियां हैं जिनकी शादी नहीं हुई है। उसमें हानि ही क्या है ? आजकल तो कितनी ही लड़कियां शादी किए बगैर कुमारी ही रह जाती हैं। वे क्या मर गई हैं, जिन्दा नहीं हैं ?"

बाप बोला, "अरी, तू यदि लड़की की बाप होती तो मेरा कष्ट समझती।"

बिजली बोली, "मैं पहले नहीं समझती थी, अब समझती हूं। लेकिन आप लोगों का जमाना बदल गया है बाबूजी। आजकल कितनी ही लड़कियां बगैर शादी किए नौकरी कर रही हैं। नौकरी करके अब कितनी ही लड़कियां मां-बाप को खिला रही हैं। मैंने सुना है—"

"लेकिन तेरे लिए मैंने क्या वह रास्ता खुला छोड़ा है ? वह उपाय रहता तो आज मेरे लिए चिन्ता की कौन-सी बात थी ? माना, मैं जब तक जिन्दा रहूंगा, पेंशन मिलता रहेगा। लेकिन मेरे मरने के बाद ? मेरे मरने के बाद वह तीन सौ रुपये की मासिक रकम भी बन्द हो जाएगी। उस वक्त ? उस वक्त तो तुझे एक कौर भात के लिए विशाखा की दाई का काम करना होगा, यह सोच क्यों नहीं रही है। और···"

बातें करते-करते तपेश गांगुली हांफने लगा था। जरा रुका, उसके बाद फिर कहने लगा, "उस समय तुझे विशाखा की तरह लिखा-पढ़ा पाता तो उसके कारण तू नौकरी कर सकती थी। अपना पेट भरने के वास्ते कोई काम कर सकती थी या किसी दफ्तर में तुझे कोई नौकरी मिल जाती। अपने ऑफिस में भी कितनी ही लड़कियों को नौकरी में भर्ती होते देखा है। लेकिन मैं ठहरा पुराने जमाने का आदमी। सोचता, एक अच्छा-सा पात्र देखकर तेरी शादी करा दूंगा। लड़की होकर मर्दों के साथ नौकरी करना क्या अच्छा होता है ! और मेरी किस्मत कितनी खराब है ! सभी के वेतन में बढ़ोत्तरी हुई, सभी को प्रमोशन मिला, लेकिन मेरे वेतन में वृद्धि क्यों नहीं हुई ?"

यह कहकर तपेश गांगुली एक हाथ से अपना कपाल छूता। कहता, "सब मेरी किस्मत, तेरी किस्मत और तेरी मां की किस्मत का नतीजा। ऐसा न होता तो कम-से-कम मामा-मामी का कोई घर होता। सभी के तो मामा-मामी होते हैं।"

अपने बाप की बातें बिजली खामोशी के साथ सुनती पर कोई जवाब नहीं देती। चन्द लमहों के बाद नींद से जगने जैसे अन्दाज में तपेश गांगुली बोल पड़ा, "तू एक काम कर सकती है बिजली ?"

बिजली ने कहा, "कौन-सा काम ?"

"अपने जीजाजी से तू थोड़ा-बहुत हेलमेल नहीं बढ़ा सकती ?"

बिजली आश्चर्यचकित हो गई अपने बाप की बात सुनकर।

बोली, "जीजाजी से हेलमेल ? हेलमेल तो है ही ?"

"तुझसे यह बात पहले भी कह चुका हूं। उस तरह का हेलमेल नहीं री, उस तरह का हेलमेल नहीं। जमाई बाबू के साथ विशाखा जिस तरह क्लब जाती है उस तरह का हेलमेल। उसी तरह तू कभी-कभी अपने जीजाजी के साथ नहीं जा सकती ?"

"मैं ?"

बिजली चिहुंक उठी। बोली, "मैं ? जीजाजी के साथ क्लब जाऊं ?"

"क्यों ? इसमें हानि ही क्या है ?"

उसके बाद बिजली ने कहा, "आप बाप होकर इस तरह की बात कह रहे हैं ?"

"कहूंगा नहीं ? मैं जब ज़िन्दा नहीं रहूंगा तो विशाखा के अलावा तेरी देखरेख करनेवाला कोई नहीं रहेगा। उस समय के बारे में तूने कभी सोचा है ? उस समय तेरी देखरेख कौन करेगा ? विशाखा करेगी ? देखना, उस समय वह तुझे नौकरानी की तरह खटाएगी। उस समय देखना, मेरी बात सच होती है या नहीं। मैं तो दिन-रात यही सोचता रहता हूं। उस समय तेरी क्या हालत होगी, यह सोचकर मुझे नींद नहीं आती। इसलिए अभी से जमाई बाबू से ज़रा हेलमेल रखा कर। देखना, तुझे सहारा मिल जाएगा। एक बार अगर उसकी तुम पर कृपा-दृष्टि पड़ गई तो···"

बिजली ने कहा, "इसका मतलब बाबूजी ? आप क्या कहना चाहते हैं, खोलकर कहिए।"

"इसका मतलब तू समझ नहीं सकी ? मैं मर जाऊंगा तब तू समझेगी।" यह कहने के बाद तपेश गांगुली की आंखों से फिर टप-टप आंसू की बूंदें चूने लगीं।

उसके बाद ज़रा रुककर फिर कहने लगा, "तेरा बाप होकर मैं अपने मुंह से इससे ज्यादा क्या कह सकता हूं ? मैं मर जाऊंगा तो तू सब कुछ अपनी आंखों से ही देखेगी। उस समय मुझे अपने मुंह से कुछ नहीं कहना पड़ेगा—"

तो भी बिजली ने कहा, "आप अभी ही कहिए न, सुनूं। मैं ज़रा सावधान हो जाऊंगी।"

"सुनेगी ? तो फिर सुन। मैं मर जाऊंगा तो क्या होगा, सुन ले। उस समय छोटे बाबू मंगला को हटाकर तुझसे रसोई पकाने, बर्तन मांजने, कपड़ा फींचने वगैरह का काम कराएंगे। मंगला को फिर भी अस्सी रुपया देना पड़ता है, लेकिन तुझे बगैर पैसे की महरी के रूप में रख लेंगे। तू कुछ आपत्ति नहीं कर सकेगी।···अब समझी ?"

बिजली बाप की बात सुनकर अवाक् हो गई। बोली, "आप यह क्या कह रहे हैं ?"

"हां, री हां। तूने बाहरी दुनिया से हेलमेल नहीं बढ़ाया, इसलिए इस दुनिया को पहचान नहीं सकेगी। मैंने दुनिया को भली-भांति देख लिया है। दुनिया में कहीं इंसान नहीं है। यहां सब लोग अपने-अपने धंधे के लिए चक्कर काट रहे हैं, कोई किसी की तरफ नजर उठाकर भी नहीं देखता, कोई किसी के बारे में नहीं सोचता। सिर्फ अपना मतलब निकालने के लिए चक्कर काटता रहता है। इसीलिए मैं कह रहा हूं कि मैं मर जाऊंगा तो मेरी इन बातों का मर्म तेरी समझ में आएगा—"

"तो मैं इस हालत में क्या करूं, आप मुझे यही बता दीजिए—"

तपेश गांगुली ने कहा, "तू अब से सौम्य बाबू से ज़रा हेलमेल बढ़ाने की कोशिश कर। अपने भविष्य को बना लेने का प्रयास कर। वरना···"

बिजली ने कहा, "कैसे हेलमेल बढ़ाऊं ?"

"तुझे क्या लुभाने-भुलाने की कला भी सिखानी होगी ? तू नहीं जानती कि किस तरह पुरुषों के मन को लुभाया जा सकता है ? गरीब की लड़की होने के कारण भगवान ने

तुझे इसकी भी सीख नहीं दी है ? मुझे ही इसकी तालीम देनी होगी ?"

कहते-कहते तपेश गांगुली की आंखों से आसू की धारा बहने लगी और उसका गला भी पीड़ा से अवरुद्ध हो गया। बिजली बोली, "बाबूजी, आपको तकलीफ हो रही है, अब आपको बातें नहीं करनी हैं। मेरी तकदीर यदि खराब है तो उसे कौन सुधार सकता है ? कोई नहीं। आप चुप हो जाइए बाबूजी, वरना आपकी बीमारी और बढ़ जाएगी। आप चुप हो जाइए बाबूजी—"

एकाएक बाहर से आवाज आई, "मंगला, दरवाजा खोलो—"

बिजली बोली, "वे लोग क्लब से आ गए।"

तपेश गांगुली ने कहा, "जा, जाकर दरवाजा खोल दे—"

बिजली बोली, "अभी सामने नहीं जाऊंगी, छोटे बाबू अभी शराब पीकर आए हैं।"

तपेश गांगुली उत्तेजित हो उठा। बोला, "जा-जा, अभी तुरन्त जा, अभी शराब के नशे से चूर है। इसी वक्त जाना अच्छा रहेगा—जा-जा—"

यह सुनकर बिजली ने अब इन्तजार नहीं किया। झटपट कमरे से निकल दरवाजा खोल दिया। खोलते ही देखा, विशाखा दी के पीछे ही छोटे बाबू खड़ा है। विशाखा ने कहा, "तूने दरवाजा क्यों खोला ? किसने तुझे दरवाजा खोलने कहा ? मंगला कहा है ?"

बिजली बोली, "वह चूकि रसोई पका रही है इसलिए मैंने दरवाजा खोल दिया।"

पीछे से छोटे बाबू ने कहा, "यह कौन है ?"

विशाखा ने इस बात का जवाब देकर कहा "वह कोई नहीं है, तुम आओ। देखकर चलना, कल तुम ठोकर लगने से यहा गिर पड़े थे। ज़रा सावधानी से आना, मैं तुम्हें पकड़ लेती हू, आओ—"

बिजली ने फौरन आगे बढ़कर छोटे बाबू का हाथ पकड़ लिया।

बोली, "मैं पकड़ लेती हू, यहा एक सीढ़ी है—"

"तू हाथ छोड दे—"

यह कहकर विशाखा ने जबरन उसका हाथ हटा दिया।

उसके बाद बिजली की ओर आख घुमाकर बोली, "तू क्यों आई ? मंगला ही तो हमेशा दरवाजा खोल दिया करती है। तुझे किसने दरवाजा खोलने कहा ?"

छोटे बाबू उस समय भी बिजली की तरफ अपलक निहार रहा था। बोला, "यह कौन है ? अपने घर में इसे कभी नहीं देखा था।"

विशाखा ने फटकारने के लहजे में कहा, "तुम चले आओ, उधर देखने की जरूरत नहीं। मेरा हाथ पकड़ लो—"

यह कहकर छोटे बाबू को पकड़ घर के अन्दर ले गई और वहा से सीधे शयन-कक्ष में चली गई। बिजली अपमान से संकुचित होकर वहीं खड़ी रही। उसके बाद आहिस्ता-आहिस्ता अपने बाप के कमरे में चली गई। उसकी आखें रुलाई से छलछला गई हैं। बाप ने पूछा, "क्यों री, क्या हुआ ? रो रही है ?"

बिजली ने अपनी रुलाई को रोककर कहा, "आप और छोटे बाबू के सामने जाने कहिए—"

"क्यों री, क्या हुआ ?"

बिजली ने पूरी घटना का ब्योरा दिया। उसके बाद बोली, "मेरी शादी अगर नहीं होती है तो कौन-सी हानि है ? लड़कियों के लिए शादी के अलावा और कोई रास्ता नहीं है ? लड़कियों की शादी होना क्या नितात आवश्यक है ? मंगला की ही मि—

लीजिए। मंगला की शादी नहीं हुई है। वह क्या खूब कष्ट भोग रही है ?"

"अरे, तू उससे अपनी तुलना कर रही है ? वे लोग निचले तबके के लोग हैं। उसकी लिखाई-पढ़ाई नहीं हो सकी है इसलिए दूसरे के घर में महरी का काम कर रही है। उससे तू अपनी तुलना कर रही है ? तुझे तो मैंने थोड़ा-बहुत लिखाया-पढ़ाया है। वह और तू क्या एक ही जैसी है ? यह तू क्या कह रही है ?"

संदीप तब भी पैदल चला जा रहा था। उसे लगा, कलकत्ता की सड़कें पहले के बनिस्बत पतली हो गई हैं। जिस सड़क पर जो सब पहले था, अब नहीं है। उनकी जगह नई दुकानें खुल गई हैं, नए मकान खड़े हो गए हैं, नए साइनबोर्ड लग गए हैं।

सच, इन कई सालों के दौरान उसका जीवन जिस तरह बदल गया है, उसी तरह यह दुनिया भी बदल गई है। कहां गए वे विश्वशान्ति यज्ञ के साइन बोर्ड ? उन दिनों बहुत सारी जगहों में वे साइन बोर्ड थे और सामने थाली में छुट्टे पैसे बिखरे रहते थे। उनकी जगह दीवारों पर लॉटरी की दुकानें खुल गई हैं। जहां झाड़ी-झंखाड़ फैले हुए थे वहां बस्ती की चहल-पहल से भरी झुग्गी-झोपड़ियां खड़ी हो गई हैं। कलकत्ता शहर इन कई बरसों के दौरान जैसे अजनबी बन गया है।

"भाई साहब, मनसातल्ला लेन किधर है, बता सकते हैं ?"

मनसातल्ला लेन ? संदीप पुनः सुदूर व्यतीत में लौट आया। उस समय वह सब मिलाकर कलकत्ता आया था। मल्लिक चाचा उसे अपने साथ ले बिडन स्ट्रीट से बस पर सवार हो तपेश गांगुली के मकान में गए थे। उसी समय से वह मन और प्राणों से विशाखा से जुड़ गया था।

उसके बाद वहां से तीन नम्बर रसेल स्ट्रीट। रसेल स्ट्रीट के तीन नम्बर मकान में ही वह विशाखा से अधिक घुल-मिल गया था। उसके बाद उसे नौकरी मिली। बैंक की नौकरी। वहां जाने पर भी बहुत सारे लोगों के सम्पर्क में आया था। हाशिम उसका सिर्फ शुभेंपी ही न था, वह संदीप का बहुत सारा काम भी कर देता। उससे हाशिम का कोई उपकार नहीं होता था। उपकार होता था तो संदीप का ही। उसके फलस्वरूप उसे सिर्फ ख्याति ही नहीं मिलती, बल्कि नौकरी में भी प्रोन्नति होती गई।

"कौन-सा रास्ता आपने पूछा ?"

"मनसातल्ला लेन।"

"कितना नम्बर ?"

"सात नम्बर।"

"आप किससे मिलना चाहते हैं ? तपेश गांगुली से ?"

आश्चर्य संदीप को मतिभ्रम हो गया क्या ? कब कितने साल पहले तपेश गांगुली बिजली को अपने साथ ले सात नम्बर मनसातल्ला लेन का मकान छोड़ पांच नम्बर भुवन गांगुली लेन के सौम्य बाबू के मकान पर हमेशा के लिए टिकने चले गए थे, यह बात क्या वह भूल गया था ? और वहीं जाकर तो तपेश गांगुली···

बहरहाल, वह बात अभी रहे !

"नहीं, मैं अवनी नाथ बसु से मिलना चाहता हूं। वे मेरे चाचा हैं। नए किरायेदार की हैसियत से सात नम्बर मनसातल्ला लेन के मकान में आए हैं।"

संदीप ने कहा, "आप सीधे ट्राम-रास्ता पकड़ दाहिनी ओर मुड़ जाइए। वहां जाने पर जिससे भी पूछिएगा, बता देगा।"

कितना अजीबो-गरीब है यह मतिभ्रम ! चक्कर लगाते-लगाते वह कब अपने

जीवन के प्रथम परिच्छेद में चला आया है, मालूम नहीं। लेकिन कौन उसे इस तरह ले आया? यहा आने की बात तो नही थी।

सदीप पुन सजग होकर अपने आपमे लौट आया। एकबारगी अपने वजूद की गहराई में। अब उसे कोई पहचान नही सकेगा। अभी उसका चेहरा दाढी से भरा हुआ है। जेल में दाखिल होने के बाद से उसने अपनी दाढी पर उस्तरा नहीं फेरा है। अभी अगर उसका कोई क्लाइण्ट या स्टाफ उसे देख ले तो पहचान नही सकेगा। और जिस तरह की घटना घटित हो चुकी है, उसके बाद उसे न पहचानना ही बेहतर रहेगा। पहचानते ही उसकी शिनाख्त चोर के रूप मे करेगा। कहेगा: "यह आदमी बैंक में नौकरी करता था और वहा से रुपया चोरी करने के कारण उसे जेल की सजा मिली थी। उसके बाद दसियो लोगों को बुलाकर सबो के सामने उसे अपमानित करेगा। उससे बेहतर यही है—इस दाढ़ी की आड मे खुद को छिपाए रखना।

लेकिन कितने दिनो तक वह अपने आपको छिपाए रहेगा? कहा छिपाकर रखेगा।

चारो तरफ तीखी धूप रेंग रही है। दिन जितना ही बढता जा रहा है धूप की तपिश उतनी ही बढती जा रही है और वह तपिश असह्य जैसी लग रही है। उसे कहा आश्रय मिलेगा? कौन जेल के मुजरिम को आश्रय देगा?

थोड़ी दूर जाने के बाद उसे एक विशाल बरगद का पेड़ मिला और उसके नीचे जाने पर उसे थोडा आराम महसूस हुआ। बगल मे ही एक पुराने मकान को तोडा जा रहा है। उसे तोडकर शायद सात-आठ मंजिला फ्लैटनुमा मकान तैयार किया जाएगा। एक आदमी पहले से ही वहां बैठा हुआ था। सदीप को वहा बैठते देखकर वह जरा खिसककर बैठ गया। उसके बाद पूछा, "आप कौन हैं?"

सदीप बोला, "मैं यहां जरा आराम करने के लिए बैठा हू—आप कौन हैं?"

आदमी बोला, "मैं भी आपकी ही तरह जरा सुस्ता रहा हूं। जानते हैं, यह जिस मकान को तोड़ा जा रहा है, उसी के कोने मे मेरी पकौड़े की दुकान थी। पकौडे बेचकर ही मेरी रोजी-रोटी चलती थी। वे लोग मेरी पकौडे की दुकान को भी तोडकर मलबे मे बदल दे रहे हैं। अब मेरी रोजी-रोटी कैसे चलेगी, बताइए तो? सुना है, यहा एक बारह मंजिला मकान बनवाया जाएगा। उस समय हम लोग कहां जाएंगे?"

सदीप ने पूछा, "आपका मकान कहा है?"

"मैं फेरीवाला हू। देश का बंटवारा होने के बाद जो कपडा पहने था, सिर्फ उसी के साथ कलकत्ता चला आया था। मेरे लडके-बच्चे-पत्नी का खून कर दिया गया था। मैं किसी तरह यहा एक झोपडी खडी कर पकौडे बनाकर अपनी रोजी-रोटी चला रहा था। लेकिन अब वह भी हाथ से निकल गया।"

"आपका शुभ नाम?"

"गणेश सरकार। हालाकि कितने ही आदमी उस देश से यहा आकर, दूसरे की जमीन को जबरन दखलकर, यहा दो-तीन-मंजिला मकान बनाकर मजे मे रह रहे हैं, लेकिन मेरी तकदीर मे ही इतनी दुर्गति लिखी हुई थी!"

उसके बाद जरा रुककर फिर बोला, "कल से मैंने भात नही खाया है, एक रुपया बतौर भीख दीजिएगा हुजूर?"

"भीख?"

"भीख के अलावा क्या कहू! पकौडे बनाकर जो दो-तीन रुपये मिल जाते थे उन्ही से मेरे पेट का खर्च चलता था। अब न तो वह झोपड़ी है और न ही पकौड़े की दुकान।"

सदीप ने कहा, "आजकल क्या एक रुपये में पेट भरता है?"

"जितना भी भरे, उसीसे काम चला लेना पडेगा। उससे ज्यादा भीख कौन देगा?"

संदीप ने कहा, "मैं दूंगा।"

उसकी बात सुनकर आदमी चौंक पड़ा। उसने एक बार फिर संदीप का दाढ़ी-मूछों से भरा चेहरा गौर से देखा। उसने गलत सुना है क्या ?

संदीप इस बीच अपने झोले से पांच रुपये का एक नोट निकाल चुका है। गणेश सरकार की ओर बढ़ाते हुए बोला, "आज का दिन इस पांच रुपये से चला लीजिए उसके बाद कल फिर दूंगा। जब तक आपकी पकोड़े की दुकान फिर खड़ी नहीं होती है तब तक रुपये देता रहूंगा—"

आदमी को अपनी आंखों पर उस समय भी जैसे यकीन नहीं हो रहा था। रुपया लेकर वह संदीप की ओर अपलक ताकने लगा। संदीप ने कहा, "जाइए, रुपया लेकर खाना खा आइए।"

आदमी ने एकाएक झुककर संदीप के चरणों को छूकर प्रणाम किया। बोला, "आप आदमी नहीं, देवता हैं ! मेरी इतनी उम्र हो चुकी, इस बीच बहुत सारे लोगों को देख चुका हूं, लेकिन आप जैसा आदमी देखने को नहीं मिला। सच, आप आदमी नहीं, देवता हैं। साक्षात् देवता…"

संदीप ने कहा, "नहीं, मैं चोर हूं, डाकू हूं जाइए, खाना खा आइए…काफी वक्त हो चुका है…"

"तो फिर मेरा यह झोला अपने पास रहने दीजिए, मैं इस बीच होटल से खाना खा आता हूं।"

संदीप ने पूछा, "इस झोले में क्या है ?"

"और रहेगा ही क्या करछी, छलनी, संड़सी, हथौड़ा वगैरह। इन सब चीज़ों के साथ लोहे की एक कढ़ाई भी थी। उसे पुलिस ले गई—मैं चलता हूं।"

यह कहकर आदमी लपकते हुए खाना खाने चला गया।

"कौन ?"

बहुत साल पहले के व्यतीत से कोई जैसे यह शब्द बोल उठा। प्रतिध्वनि जैसा सुनाई पड़ा यह शब्द। वह रतन के गले की आवाज़ थी। सदर दरवाज़े की कुण्डी खट-खटाने की आवाज सुनते ही रतन रसोई पकाते हुए पूछता, "कौन ?"

इतनी रात में एकमात्र विशाखा के अलावा और कौन आएगा ?

"रतन ! मैं विशाखा हूं। तुम्हारे मालिक घर लौट चुके हैं ?"

"हां, दरवाज़ा खोल रहा हूं। मालिक लौट आए हैं।"

रतन ने नहीं, बल्कि खुद संदीप ने जाकर दरवाज़ा खोल दिया था। विशाखा खड़ी थी। विशाखा के अन्दर आते ही दरवाज़े के पल्ले भेड़कर संदीप ने सिटकनी बन्द कर दी। विशाखा बोली, "ऑफिस से आए कितनी देर हुई ?"

संदीप को उस दिन की बात अब भी याद है। संदीप ने कहा था, "तुम्हें आने में इतनी देर क्यों हुई ? तुम्हारी वजह से आज मैं बहुत ज़ल्दी ही ऑफिस से चला आया हूं। आओ, अन्दर के कमरे में आओ, तुम्हारे रुपये ले आया हूं—"

"ले आए हो ?"

अन्दर के कमरे की तरफ जाने के दौरान विशाखा बोली, "मुझे मिस्टर हाजरा के चलते देर हो गई। मिस्टर हाज़रा आज हमारे घर पर आए थे—"

"मिस्टर हाजरा ? मिस्टर हाजरा कौन ?"

"गोपाल हाज़रा।"

संदीप ने कहा, "गोपाल हाजरा से तुम्हारी कैसे जान-पहचान हुई ?"

विशाखा ने कहा था, "क्लब जाने पर। मैं छोटे बाबू के साथ नाइट-क्लब जाया करती हूं। वहीं छोटे बाबू ने मिस्टर हाजरा से परिचय करा दिया था—"

संदीप विशाखा को अपने कमरे के अन्दर ले गया था।

उस दिन की बात इतने दिनों के बाद भी संदीप को अच्छी तरह याद है। वही उसके बेड़ापोता के हाजरा बूढ़े का लड़का गोपाल हाजरा। कितने दिनों बाद वह मंच पर आकर उपस्थित हुआ है।

कमरे के अन्दर जाकर संदीप ने कहा था, "बैठो, तुम्हारा रुपया निकालकर ले आया हूं—"

उसके बाद आलमारी खोल एक पैकेट निकालकर विशाखा के हाथ में दिया था। कहा था, "यह लो रुपया—"

"इसके अन्दर कितने रुपये हैं ?"

संदीप ने कहा था, "एक लाख।"

विशाखा ने उन रुपयों को लेकर अपने हैण्ड बैग में रखा।

संदीप ने कहा, "रुपयों को गिन नहीं लिया ?"

विशाखा बोली, "इसके पहले कभी गिनकर लिया था ?"

"और कितने रुपयों की जरूरत है ?"

विशाखा बोली, "यह कहना मुश्किल है। मिस्टर हाजरा बता सकते हैं।"

"क्यों, वे कौन हैं ? तुम लोगों को कितने रुपये की जरूरत है, यह बात वे कैसे जानेंगे ?"

विशाखा बोली, "वाह, वे ही सबकुछ हैं।"

"वे ही सबकुछ हैं—इसका मतलब ?"

विशाखा ने कहा, "मिस्टर हाजरा ने तो आज यही सब बात कही थी। सैक्सबी-मुखर्जी कम्पनी की फैक्टरी फिर से चालू करने कहा है। मेरे चचिया ससुर मुक्तिपद मुखर्जी आए थे। उन्होंने कहा, इंदौर की फैक्टरी ठीक से नहीं चल रही है। उस फैक्टरी को उठाकर ले आएंगे और फिर यही कारखाना चालू करेंगे।"

"लेकिन अगर फिर से यूनियनबाजी चालू हो जाए ? फिर से यदि डी० ए० पी० पार्टी आन्दोलन शुरू कर दे तो ?"

विशाखा ने कहा, "मिस्टर हाजरा से वचन दिया है कि अब वे लोग गड़बड़ी पैदा नहीं करेंगे। अब हड़ताल नहीं होगी। मेरे चचिया ससुर भी सारी बात सुनकर बेहद खुश हुए हैं। उन्होंने कहा है, अभी छोटे रूप में शुरुआत करेंगे।"

"इससे तुम सुखी हो जाओगी तो ?"

विशाखा ने कहा, "लगता तो है कि छोटे बाबू को मैं पा जाऊंगी। अभी ही उन्होंने व्हिस्की का नशा बहुत कम कर दिया है। मैं तो हमेशा उनके साथ रहती हूं न, इसी वजह से नशा बहुत कम हो गया है। अब सिर्फ तीन पेग लेते हैं। अभी रात में जल्द ही बिस्तर पर लिटा दिया करती हूं—"

संदीप ने कहा "वैसा आदमी बात मानने को कैसे राजी हो गया ?"

विशाखा बोली, "जानते हो संदीप, आदमी के लिहाज से वे भलामानस हैं। सिर्फ बुरे लोगों से हिलने-मिलने के कारण उस तरह हो गए थे। आजकल मैं हमेशा छोटे बाबू पर निगाह रखे रहती हूं। लेकिन···"

"लेकिन क्या ?"

"बिजली के कारण डर बना रहता है।"

विशाखा साड़ी के पल्लू से आंखें पोंछती हुई कमरे से बाहर चली गई।

संदीप ने दीवार पर टंगी विशाखा की तस्वीर की ओर गौर से देखा। उसके बाद बिस्तर पर अपना शरीर निढाल छोड़ दिया। आंखों के ऊपर विशाखा के चेहरे की तस्वीर दमकने लगी। उसके बाद कमरे की बत्ती बुझाकर लेट गया।

इस तरह की घटना एक बार ही नहीं, बार-बार घटित हुई है संदीप के जीवन में।

एकाएक सपना टूट गया। संदीप ने देखा, वह खिदिरपुर की सड़क के किनारे एक बरगद के पेड़ के तले एकाकी बैठा हुआ है। उसका झोला उसके हाथ में है। उसकी बगल में एक और झोला पड़ा हुआ है। वह किसका है ?

याद आ गया, उस आदमी का नाम है गणेश सरकार। संदीप ने उसे खाना खाने के लिए पांच का नोट दिया था। पकौड़े की दुकान और झोंपड़ी से उसे उजाड़ दिया गया है। लेकिन खाना खाने में क्या इतना वक्त लगता है ?

संदीप काफी देर तक इन्तज़ार करता रहा। लेकिन उसके वापस आने का कहीं कोई लक्षण नहीं दिख पड़ा। कहां किस होटल में खाने गया है गणेश सरकार, इसका भी पता नहीं है।

लेकिन संदीप यदि चला जाए तो झोले को कहां रख जाएगा ? उसका पता क्या है ? झोले के अन्दर जो सब है वह कोई खास कीमती नहीं है। मगर इसे लेकर वह क्या करेगा ?

लगभग तीसरा पहर होने-होने को है पर वह अदामी नहीं दिख रहा है। आस-पास में वैसा कोई आदमी नहीं है, जिस पर यकीन कर उसके पास झोला रखकर वह चला जाए।

अंततः संदीप को उठना पड़ा क्योंकि उसे और भी बहुत सारी जगहें जाना है। पांच नंबर भुवन गांगुली लेन के विशाखा के घर पर जाना है। वहां जाकर देखना है कि नब्बे लाख रुपए देकर जिसके लिए सुख खरीदना चाहता था, वह विशाखा सचमुच ही सुखी हुई है या नहीं।

उसके पहले जाना है बेलुड़। बेलुड़ की वह सैक्सबी मुखर्जी कंपनी की वह फैक्टरी कितनी बड़ी हुई है, यह भी जाकर देखना है। गोपाल हाजरा जिनका मददगार है उनके लिए भय की कौन-सी बात है ? वे लोग तो बड़े होंगे ही।

संदीप उठकर खड़ा हो गया और जितनी दूर आंखें जा सकती हैं, देखने लगा। कहीं किसी तरफ गणेश सरकार दिख नहीं रहा है।

आखिर में संदीप ने झुककर अपना झोला और गणेश सरकार का झोला ले लिया, उसके बाद वहां बहुत देर तक चुपचाप खड़ा रहा। गणेश सरकार कहां आ रहा है ? खाने में किसी आदमी को क्या इतनी देर लगती है ?

वैसा कोई आदमी भी नहीं है जिसे वह झोला देकर जा सके। चलते-चलते एक मकान के बाहरी बरामदे पर उसने एक आदमी को देखा। उस आदमी के पास जाकर पूछा, "यहां कोई होटल-वोटल है भाई ?"

वह आदमी अवाक् हो गया। होटल ?

"आपको होटल जाना है ?"

"हां, लेकिन खाने के लिए नहीं, बल्कि एक आदमी को ढूंढ़ने के लिए।"

वह आदमी बोला, "उस गली में घुस जाइए, वहां आपको एक होटल मिलेगा। साइनबोर्ड [illegible] हुआ है।"

"ठीक [illegible]

यह कहकर संदीप उस आदमी के द्वारा बताई गई गली के अंदर घुस गया। एक मकान की दीवार पर वाकई होटल का नाम लिखा हुआ है। नाम देखकर अंदर घुसा। एक आदमी सामने लकड़ी का एक कैश बाक्स लिए बैठा हुआ है।

पूछा, "आपको क्या खाना है ?"

संदीप ने कहा, "मुझे कुछ नही खाना है, एक आदमी की तलाश मे आया हूं। देखने आया हूं कि वह यहा आया है या नही।"

"उसका चेहरा-मोहरा कैसा है ?"

"रंग काला, दुबला-पतला, उम्र लगभग पैंतालीस वर्ष।"

होटल वाले ने पूछा, "वह आदमी क्या हमेशा इसी होटल मे खाना खाता है ?"

सदीप ने कहा, "यह मैं बता नही पाऊंगा, लेकिन यहा जिस मकान को ढहाया जा रहा है, वही वह झोपडी बनाकर रहता था और पकौड़े बेचता था। वह इस झोले को मेरे पास रख यहा खाना खाने आया था। उसके बाद उसे आते न देखकर मैं उसे तलाशने के लिए चक्कर काट रहा हू—"

"नही जनाब, उस तरह का कोई आदमी मेरे यहा खाना खाने नही आया है। उसका नाम क्या है, बता सकते है ?"

सदीप ने कहा, "गणेश सरकार।"

"नही। उस नाम का कोई आदमी इस होटल मे खाना खाने आया है, इस तरह का कोई प्रमाण नही मिला।"

सदीप ने इधर-उधर के कई होटल मे तलाशा। लेकिन कोई उसका पता नही दे सका।

उन लोगो ने कहा, "नही साहब, यह पकौड़े बेचने वाले के लिए होटल नही है। यहां भले लोग खाना खाने आते हैं—"

आखिर मे हताश हो सदीप झोले को लेकर सडक पर निकल पड़ा। उसे अभी बहुत दूर बेलुड जाना है। बेलुड़ जाकर सैक्सबी मुखर्जी कंपनी की फैक्टरी देखनी है और यह जानना है कि वह फैक्टरी किस हालत मे चल रही है। उसके बाद सौम्य बाबू के मकान को देखेगा, विशाखा का मकान देखेगा। यह भी देखेगा कि विशाखा कितनी सुखी है।

सदीप ने अपनी गई-गुज़री हालत के बारे में कभी नही सोचा है। मगर विशाखा सुखी हो, उसे पति-सुख प्राप्त हो—सिर्फ यही बात उसने जीवन भर सोची है। जब कभी उसे खुद के लिए तकलीफ का अहसास हुआ है, उसने उस वक्त विशाखा के बारे में सोचा है। जेलखाने के उसके बंदी-जीवन को विशाखा ने ही सदैव परिपूर्ण करके रखा था।

वह रामप्रसाद के उसी गीत की कुछ पंक्तिया मन ही मन दुहराता—वही काशी बाबू के घर मे पढ़ी हुई पुस्तक की पंक्तिया :

मन, तू सोच रहा क्यो इतना
मातृहीन बालक के जैसा।
भव मे आकर सोच रहा है बैठे-बैठे
होकर भीत काल के भय से
अरे, काल का भी काल जो महाकाल है
वह मा के चरणों पर अवनत···

उस गीत की पंक्तिया दुहराते हुए सदीप ने सामने के रास्ते की ओर कदम बढ़ाए।

किसी दिन श्रमिक-अशान्ति के कारण ही वेलुड़ की सेवसवी मुखर्जी कंपनी की फैक्टरी कलकत्ता से उठकर इन्दौर चली गई थी। उसके लिए कौन लोग ज़िम्मेदार थे उस सवाल का जवाव किसी दिन मिलेगा भी नहीं।

वीच में मुखर्जी-परिवार को दुर्भाग्य ने वुरी तरह जकड़ लिया था। देवीपद मुखर्जी जिस व्यवसाय की नींव डाल गए थे उसका अन्त दूसरी पीढ़ी में ही हो गया था। उसके लिए श्रमिक अशान्ति जिम्मेदार नहीं थी। मुख्यतः जिम्मेदार थी श्रीपति मिश्र, वरदा घोपाल और गोपाल हाजरा की डी० ए० पी० पार्टी। उस राजनीतिक कारण ने ही उस समय अहम भूमिका निभायी थी। मुक्तिपद की मां ने यदि ए० सी० चटर्जी की एम० ए० पास लड़की से शादी करा दी होती तो सौम्यपद को फांसी का मुजरिम नहीं वनना पड़ता, फैक्टरी में भी श्रमिक संकट नहीं आता और संदीप को भी वैंक के नव्वे लाख रुपये के गवन करने के मामले में जेल की सजा नहीं भुगतनी पड़ती। साथ ही विशाखा की मां को भी असमय कैंसर रोग का शिकार होकर जान नहीं गंवानी पड़ती।

दरअसल सवकुछ के मूल में थी विशाखा। क्यों, किस स्थिति में, किस तरह संदीप के जीवन-मंच पर विशाखा का आविर्भाव हुआ था, सारा कुछ उसे ज्ञात था। सचमुच, दुःखी के लिए यदि किसी के मन में समवेदन न जगे तो वह क्या इंसान है!

संदीप ने जीवन-भर इन्सान ही वने रहने की चाह की थी। इन्सान वनने का मतलव सिर्फ एक नौकरी पाना, नौकरी में तरक्की करना। उसके वाद नौकरी के अन्त में मोटी रकम वतौर पेंशन पाना—संदीप ने नहीं माना था और इसीलिए उसके जीवन में इतने दुख और दुर्भाग्य का वोलवाला रहा।

लेकिन वह दुख क्या सचमुच ही दुख था? उसके अन्दर परमार्थ नहीं था? संदीप के सोच से विशाखा के दुख की चिन्ता के वजाय अपनी सुख-सुविधा का स्वार्थ जुड़ा रहता तो वह क्या निंदा का पात्र वनता?

विशाखा अक्सर उसके नेवू वागान के मकान में आती। काफी रात होने के वाद ही आती।

कहती, "वार-वार तुमसे रुपया मागने में मुझे वेहद शर्म लगती है संदीप, लेकिन क्या करूं! मैं किसी दिन तुम्हारा सारा कर्ज़ चुका दूंगी, यह कहे देती हूं—"

संदीप कहता, "तुम लोगों की फैक्टरी इतने वरसों के वाद फिर से खुलने जा रही है, मेरे लिए यह एक वहुत वड़ी खुशखवरी है।"

विशाखा कहती, "लेकिन सारा कुछ तुम्हारे कारण ही सम्भव हो सका, यह छोटे वावू भी स्वीकार करते हैं। हां, तुमने कहा था कि किसी दिन हमारे घर पर आओगे, इसका क्या हुआ?"

"मैं जाऊं? मुझे जाने कह रही हो तुम? सच, जाने कह रही हो?"

"सच नहीं तो क्या झूठ? तुम्हारा सारा परिचय मैंने छोटे वावू को वता दिया है। तुम आओगे तो छोटे वावू वड़े ही खुश होंगे।"

वार-वार कहने पर संदीप ने कहा था, "अच्छा, मैं किसी दिन जाऊंगा। तुम इतना कह रही हो तो ज़रूर जाऊंगा।"

"कव आओगे?"

"शाम को जाऊं या तीसरे पहर आफिस से लौटने के वाद जाऊं? कव, कहां।"

विशाखा ने कहा था, "जिस दिन फैक्टरी में छुट्टी रहे, उसी दिन आना अच्छा रहेगा। मंगलवार को फैक्टरी में छुट्टी रहती है।"

संदीप ने कहा था, "तो फिर किसी मंगलवार को ही जाऊंगा। आफिस से लौटने के दौरान—"

"ठीक है।"

लेकिन बैंक के काम मे काफी झमेले रहते हैं। नेशनल यूनियन बैंक का हेड ऑफिस बम्बई में है। वहा से जो पत्र आते हैं उनका जवाब जल्द-से-जल्द देना पड़ता है। मंथली स्टेटमेंट जा रहा है या नहीं, उसके बाद में खोज-खबर लेनी पड़ती है। मैनेजर के काम का कोई अन्त नहीं, बीच-बीच मे पार्टियों मे भी बातचीत करनी पड़ती है। काम क्या कोई कम है! बैंक मे फिक्सड डिपोजिट बढ़े, इस बात का ध्यान रखना पड़ता है। सदीप जीवन-भर काम में ही डूबा हुआ रहा है। घर-गृहस्थी के तरह-तरह के झमेले रहने के दौरान भी बैंक के काम मे उसने कभी लापरवाही नही बरती थी। जब भी समय मिलता, काम मे मशगूल हो जाता। सदीप को सभी काम का पागल कहा करते थे। बीच-बीच में जब कभी फुर्सत मिलती, अपने चेम्बर से निकल सेक्शन का चक्कर लगा आता। किसी काउन्टर पर यदि कभी भीड़ देखता तो वहा जाकर हाथ बटाने लगता।

स्टाफ सदीप से काफी डरे-डरे रहते। और सिर्फ डरे-डरे ही नही रहते बल्कि उसकी श्रद्धा भी करते। ऑफिस में कौन तल्लीनता के साथ काम करता है और कौन काम करने से कतराता है, सदीप को यह ज़बानी याद था। कौन नियमित रूप से देर से आता है और कौन सही समय पर उपस्थित हो जाता है, यह भी सदीप को ज़बानी याद था। निर्धारित समय गुज़रने के बाद हाज़िरी-बही सदीप के पास चली जाती। कोई देर करके आता तो उसे सदीप के कमरे में आकर हस्ताक्षर करना पड़ता और बगल में समय दर्ज करना पड़ता। उस आदमी पर नज़र पड़ते ही सदीप कहता, "आज भी आने में देर कर दी?"

वह आदमी उधेड़-बुन के साथ जवाब देता, "सर ट्रैफिक जाम के चलते बीच रास्ते में रुक जाना पड़ा था।"

सदीप कहता, "घर से ज़रा जल्दी क्यो नही निकलते? जो लोग दूर से आते हैं वे देर करके नही आते। आप तो कलकत्ता में रहते हैं। आपको देर क्यों हो जाती है।"

तीन दिन विलम्ब करके आने से एक दिन की छुट्टी काट ली जाती है। तो भी किसी को होश नहीं रहता। जिस दिन से बैंकों का राष्ट्रीयकरण हो गया है, उसी दिन से काम मे ढिलाई शुरू हो गई है।

लेकिन जब बैंकिंग कारोबार प्राइवेट सेक्टर था तो कर्मचारी समय पर ऑफिस मे उपस्थित होते, उनकी तमाम सुख-सुविधाओं की पूर्ति होती थी। सदीप ने उस समय भी बैंक मे काम किया है और बाद मे भी। लेकिन तमाम चीजों की शक्लों में तब्दीली आ गई है। या फिर यह हो सकता है कि दुनिया बदल गई है, इसलिए उन लोगों के काम-काज के चरित्र में भी बदलाव आ गया है।

साल मे एक दिन के लिए एक सम्मेलन होता है। उस दिन गाने-बजाने का इन्तज़ाम रहता है। उसके बाद किसी एक व्यक्ति को सम्मानित करने का इन्तज़ाम रहता है। बैंक के किसी स्टाफ या बाहर के किसी नामी व्यक्ति को सम्मानित करने की व्यवस्था। उसके साथ भरपूर खाने-पीने का इन्तज़ाम। काम का दिन होने पर भी किसी शनिवार को इसकी व्यवस्था की जाती है ताकि ऑफिस की छुट्टी के बाद भी सभी रह सकें।

इस काम को शुरू किया था पूर्ववर्ती मैनेजर कर्मचन्द मालव्यजी ने। वे बहुत पहले रिटायर हो चुके हैं लेकिन उनके चले जाने के बाद भी यह सिलसिला जारी है। उस दिन सबने आकर सदीप को घेर लिया। कहा था, "इस बार आपको सम्मानित करने का निर्णय किया गया है—"

जवाब में सबने कहा था, "हमारी कमेटी के मतानुसार आपके जैसा ईमानदार पंक्चुअल मैनेजर इसके पहले हमें नही मिला है—"

यह सुनकर संदीप ने हैरत में आकर कहा था, "आप लोग ऐसा नहीं करें। मुझे इसकी अभिलाषा नहीं है। सुनने पर लोग-बाग कहेंगे कि मैं चूंकि यहां का मैनेजर हूं इसीलिए आप लोग मुझे सम्मानित कर रहे हैं। यह एक बैड प्रेसिडेंट बना रह जायेगा।"

सबने कहा था, "नहीं सर, यहां हम लोगों के क्लास फोर स्टाफ तक आपका रेसपेक्ट करते हैं। हम लोगों ने बहुत सारे मैनेजर देखे हैं लेकिन मालव्यजी और आप जैसा ऑनेस्ट मैनेजर नहीं देखे हैं—"

आज सोचने पर बेशक चकित होना पड़ता है। लेकिन उसके कई साल बाद? जब पुलिस ने आकर उसे नब्बे लाख रुपये के गबन के अपराध में गिरफ्तार किया, उस समय उन लोगों ने क्या सोचा होगा!

मगर वह बात अभी रहे। यथासमय वह सब बताया जायेगा।

अभी उस दिन की बात याद आ रही है। वह एक मंगलवार था। मंगलवार को सैक्सबी मुखर्जी कम्पनी की बेलुड़ स्थित फैक्टरी में छुट्टी रहती है। छुट्टी के दिन सौम्य बाबू घर पर रहते हैं, इसका उल्लेख विशाखा पहले ही कर चुकी थी।

लेकिन वह जाना इतना मर्मवेधी होगा, यह कौन जानता था!

याद आने लगा, बैंक के उस स्वागत समारोह के मानपत्र में लिखा हुआ था कि वह बड़ा ही ईमानदार, अत्यन्त श्रद्धेय, कर्मठ, सहृदय और निरपेक्ष है। यही नहीं, वह दयालु, आलस्य से उदासीन, परोपकारी मैनेजर है और बैंक का अपरिहार्य पदाधिकारी। उनके कारण उन्हें गौरव का अनुभव होता है। संदीप ने कहा था, "आप लोगों ने यह सब क्यों लिखा है?" उन लोगों ने कहा था: "आप सर अपने आपको नहीं पहचानते, इसीलिए यह बात कह रहे हैं। हम लोगों ने और भी बहुत सारे मैनेजर देखे हैं, बहुत सारे मैनेजरों के अधीन काम किया है लेकिन आप जैसे मैनेजर के साथ जो आनन्द मिला है वह और किसी के साथ काम करने पर नहीं मिला है।"

शुरू में किसी को अनुमान नहीं था कि संदीप जैसा आदमी बिना अग्रिम सूचना दिए पांच नम्बर भुवन गांगुली लेन के मकान में आ सकता है।

इसलिए अन्दर से सवाल किया गया, "कौन?"

"मैं संदीप लाहिड़ी हूं।"

उसके जवाब के साथ ही दरवाज़ा खुल गया। मंगला शायद उसी का नाम है। मंगला हड़बड़ाती हुई अन्दर गई और पुकारा, "आइए देखिए, कौन आए हैं—"

अन्दर उस समय शायद बहुत सारे लोग थे। वहीं सब लोग सम्भवत: व्यस्तता में डूबे हुए थे। शुरू में विशाखा के बदले तपेश गांगुली की लड़की बिजली ही आगे बढ़कर आई। उस समय उसके हाथ में खाने का ट्रे था और ट्रे में कटलेट। कटलेट से उस समय भी धुआं उठ रहा था।

"अरे, तुम!"

बाहर एक गाड़ी खड़ी देखकर संदीप ने अनुमान लगा लिया था कि कोई खास अतिथि घर में आया है। बिजली की बात समाप्त होते ही विशाखा भागी-भागी आई। आते ही बोली, "मेरे लिए यह कितने सौभाग्य की बात है! अभी तुम्हारी ही चर्चा चल रही थी—"

"मेरी चर्चा?"

संदीप के द्वारा यह कहते ही विशाखा ने बिजली के हाथ से कटलेट का ट्रे ले लिया और बोली, "तुझे उस कमरे में नहीं जाना है। तू बल्कि मंगला को ज़रा मदद कर दे—"

यह कहकर संदीप से बोली, "आज हम लोगों का सौभाग्य है! अभी तुम्हारी ही

चर्चा चल रही थी और तुम तुरन्त आ गए—"

"मेरी क्या चर्चा चल रही थी? किससे चल रही थी? कोई आया है क्या?"

विशाखा ने कहा, "हां—"

"कौन आया है? आज तो मंगलवार है। तुम लोगों की फैक्टरी तो मंगलवार को बन्द रहती है। तुमने तो किसी मंगलवार को ही मुझे आने कहा था।"

विशाखा ने कहा, "मंगलवार रहने के कारण ही मिस्टर हाजरा को छोटे बाबू ने निमन्त्रित किया है—और-और दिन तो फुर्सत ही नहीं मिलती।"

संदीप अवाक् हो गया। वह बैंक का काम बकाया छोड़ आज ही इस घर में आ गया!

"चलो, खड़े-खड़े क्या सोच रहे हो?"

संदीप ने कहा, "आज आकर मैंने गलती की। किसी दूसरे मंगलवार को आना बेहतर रहेगा।"

विशाखा ने कहा, "नहीं-नहीं, आज ठीक ही दिन में आए हो। तुम भी कुछ खाकर जाना। और तुमने तो बताया था कि मिस्टर हाजरा तुम्हारा क्लासफेंड था। तुम लोग तो एक ही गांव के रहनेवाले हो। वे भी तुम्हें देखकर खुश होंगे। तुम्हारी और मिस्टर हाजरा की सहायता के कारण ही फैक्टरी खुली है। चलो-चलो, डाइनिंग रूम में चलो। वहीं मिस्टर हाजरा हैं—"

इच्छा न रहने पर भी संदीप को डाइनिंग रूम की तरफ जाना पड़ा। कमरे के अन्दर जाते ही गोपाल हाजरा ने हाथ बढ़ाकर स्वागत किया। बोला, "अरे, तू है! तुझे कैसे मालूम हुआ कि मैं आज अभी इस घर में आऊंगा?"

संदीप के कुछ बोलने के पहले ही विशाखा ने सौम्यपद बाबू की ओर ताकते हुए कहा, "ये कौन हैं, जानते हो? आप हैं संदीप, संदीप लाहिड़ी। जिनके बारे में तुम्हें बहुत बार बता चुकी हूं। संदीप अभी नेशनल बैंक के मैनेजर हैं। ये न होते तो मुझे भूखों रहना पड़ता—"

"क्यों? क्यों मिसेज मुखर्जी?" गोपाल हाजरा ने पूछा।

"इन्होंने ही तो मुझे रुपयों की आपूर्ति की। प्रोपर्टी का मुझे जो कुछ हिस्सा मिला था, सारा कुछ इस मकान के खरीदने और हमीद के द्वारा धोखा दिए जाने के कारण निकल गया।"

"हमीद कौन है?"

विशाखा ने कहा, "वह एक दलाल है। जेलखाने का दलाल। मैंने भी उस पर विश्वास कर कभी पचास हजार, कभी सत्तर हजार रुपए दिए और बिलकुल फटेहाल हो गई।"

गोपाल हाजरा ने कहा, "इसका मतलब?"

सौम्यपद बोला, "मुझे कोई जानकारी नहीं थी मिस्टर हाजरा। विशाखा ने उस पर यकीन कर लाखों रुपये दिए। कहा था, मुझे कोई कष्ट नहीं होना चाहिए। लेकिन मैंने उन कई सालों के दरमियान कितनी तकलीफ झेली है, क्या बताऊं—"

मिस्टर हाजरा ने कहा, "उन रुपयों की आपूर्ति क्या संदीप ने की है?"

उसके बाद संदीप की ओर देखते हुए पूछा, "तूने रुपयों की आपूर्ति की है?"

संदीप ने अपनी जबान से 'हां' या 'नहीं' कुछ नहीं कहा। वह चुप्पी साधे रहा।

सौम्यपद ने गोपाल हाजरा से पूछा, "आप इन्हें पहचानते हैं मिस्टर हाजरा? कैसे जान-पहचान हुई?"

गोपाल हाजरा ने कहा, "पहचानूंगा नहीं। एक ही गांव में हम दोनों का मकान

था, बचपन में हम एक ही साथ एक ही क्लास में पढ़ते थे।"

सौम्यपद ने संदीप की ओर ताकते हुए कहा, "आप खड़े क्यों हैं, बैठिए संदीप बाबू। विशाखा ने आपके बारे में मुझे सबकुछ बताया है। क्या पीजिएगा कहिए। ह्विस्की या रम? आप शाम को क्या पीते हैं?"

विशाखा ने बाधा देकर कहा, "उसे कुछ पीने नहीं कहो, वह यह सबकुछ नहीं पीता है।"

गोपाल हाजरा भी बोल उठा, "वह गुड बॉव्य है, उन सब चीजों का स्पर्श नहीं करता।"

उसके बाद संदीप से पूछा, "सुना है, आजकल तू यूनियन नेशनल बैंक का मैनेजर हो गया है। किस ब्रांच का?"

विशाखा ने कहा, "बड़ा बाज़ार ब्रांच का।"

गोपाल हाजरा बोला, "अरे बाप, वही तो उन लोगों का सबसे बड़ा ब्रांच है। ब्रांच का एसेट अभी कितना है?"

संदीप कुछ जवाब दे कि इसके पहले ही बिजली एक दूसरे ट्रे में तीन कटलेट ले कमरे के अन्दर चली आई। उसे देखते ही विशाखा आपे से बाहर हो गई? बोली, "तू फिर इस कमरे में आई? कहा था कि मंगला के द्वारा भिजवा देना। जा यहां से, चली जा—"

यह कहकर कटलेट का ट्रे लेकर उसे धक्का देकर बाहर निकाल दिया। संदीप बिजली की ओर देखकर अवाक हो गया। वह बिजली अब ऐसी बिजली हो गई है। चेहरे पर स्नो, पाउडर या क्रीम ज़रूर ही लगाया है, वरना वह इतनी ख़ूबसूरत दिखती ही क्यों?

"जानते हैं मिस्टर मुखर्जी, संदीप और मैं छुटपन में एक ही क्लास में पढ़ते थे।"

"सच?"

"हां, उसके बाद लिखने-पढ़ने को तिलांजलि देकर मैं कलकत्ता चला आया और पॉलिटिक्स में दाखिल हो गया और वह गांव में ही रह गया। उसके बहुत साल बाद एक दिन कलकत्ता की सड़क पर इससे मुलाकात हो गई। उस समय इसी ने बताया कि वह आप लोगों के विडन स्ट्रीट के मकान में रहकर कॉलिज में पढ़ रहा है। अरे, कॉलिज में पढ़; बी० ए०—एम०ए० पास कर ही कोई इन्सानियत का दर्जा पा ले तो आजकल सभी इन्सान हैं। मैंने उसे अपने साथ पॉलिटिक्स में आने को कहा था, लेकिन वह तैयार नहीं हुआ। पॉलिटिक्स में आ गया होता तो उसे आज दूसरे की नौकरी कर अपना पेट नहीं पालना पड़ता।"

एकाएक विशाखा बातचीत के बीच ही बोल पड़ी, "नहीं मिस्टर हाजरा, संदीप था इसलिए आज हम ज़िन्दा हैं, संदीप था इसीलिए मिस्टर मुखर्जी को इतनी जल्दी जेल से छुटकारा मिल गया, संदीप था इसीलिए हम लोगों की सैक्सबी मुखर्जी कम्पनी की फैक्टरी इतने सालों के बाद फिर से चालू हो सकी है—यह सब बात बाहर के किसी आदमी को भले ही मालूम न हो, मगर मैं जानती हूं।"

गोपाल हाजरा बोला, "लेकिन हम लोगों का 'हेल्प' न मिला होता तो आप लोगों की फैक्टरी खुल सकती थी? हम लोगों की डी. ए. पी. पार्टी का हेल्प?"

उसके बाद ज़रा रुककर फिर बोला, "आप सिर्फ रुपए की ही बात क्यों कर रही हैं? सिर्फ रुपये से ही क्या व्यवसाय चलता है? टैक्ट की ज़रूरत नहीं पड़ती? संदीप को उस टैक्ट की जानकारी है? मैंने तुझसे कहा नहीं था संदीप, कि तू हम लोगों की पार्टी ज्वाइन कर ले? कहा नहीं था? तुझे कितनी तनख्वाह मिलती है? बैंक का मैनेजर होने

से तुझे कितनी तनख्वाह मिलती है ? दस हज़ार ? बारह हज़ार बीस हज़ार ? उससे ज्यादा किसी भी हालत में नहीं मिलता होगा। और मेरी मासिक आय कितनी है, मालूम है ? मेरी बात रहने दे, हम लोगों के पार्टी-सेक्रेटरी बरदा घोषाल की कितनी आमदनी है, इसकी तू कल्पना कर सकता है ? अच्छा, आमदनी की बात रहे। मिस्टर घोषाल के कंट्रोल में तीस यूनियन हैं। मिस्टर घोषाल की गाड़ी में हर रोज पेट्रोल की कितनी खपत होती है, बताओ तो ? कितने लिटर ? जरा अन्दाजा लगाओ।"

सदीप को यह सब बात अच्छी नहीं लग रही थी। उसे अगर मालूम रहता कि गोपाल हाजरा आज यहां आएगा तो वह क्या इस घर में आता ?

गोपाल हाजरा ने कहा, "अन्दाजा नहीं लगा सका न। तो फिर सुन ले, मिस्टर घोषाल की माहवारी आमदनी पचास हज़ार रुपए से कम नहीं है। और मेरी ?"

बात दूसरी ओर मुड़ रही है, यह देख संदीप बोला, "मैं अब चलता हूं भई, घर जाने में मुझे बहुत देर हो जाएगी। मैं ऑफिस से सीधे आ रहा हूं···चलता हूं—"

विशाखा ने अब अड़चन नहीं डाली। बस इतना ही कहा, "तुमने कुछ खाया नहीं, बगैर खाए चल दिए—"

सौम्यपद ने कहा, "कम से कम एक पेग तो पी लो भाई ··कम से कम एक कटलेट···"

सदीप तब करीब-करीब खड़ा हो चुका था। बोला, "नहीं मिस्टर मुखर्जी, अभी कुछ खा लूंगा तो घर का खाना बर्बाद हो जाएगा। मैं चलता हूं···"

गोपाल हाजरा ने कहा, "नहीं-नहीं-नहीं, उसे खाने नहीं कहिए मिस्टर मुखर्जी, उसे पेट की बीमारी है। उसके जैसे आदमी के पेट में अमृत भी हजम नहीं होगा। उसे जाने दीजिए—"

उसके तुरन्त बाद कहा, "तूने शादी की और मुझे खबर तक नहीं भेजी —"

सदीप कहने जा रहा था, एक आदमी की कितनी बार शादी होती है ?

लेकिन उसके कहने के पहले ही विशाखा बोली, "आपसे किसने कहा कि संदीप ने शादी की है ? उसने शादी नहीं की है—"

संदीप हाजरा ने कहा, "तूने शादी नहीं की है ? तो फिर इतने हज़ार रुपए की जो नौकरी करता है, कौन तेरे रुपए से खाता है ? जमा रख रहा है ?"

"नहीं।"

"तो फिर इतना सारा रुपया लेकर क्या करता है ? कलकत्ता में प्रोपर्टी खरीदी है ?"

सदीप ने कहा, "नहीं, ऐसी बात भी नहीं है।"

"फिर ? बेड़ापोता में तो तेरा अपना एक मकान था, उसे क्या किया ?"

"उसे बेच दिया।"

गोपाल हाजरा ने कहा, "तो फिर कलकत्ता में कहां रह रहा है ? बैंक के क्वार्टर में ?"

"नहीं कलकत्ता में किराए के मकान में रहता हूं।"

गोपाल हाजरा ने कहा, "तूने शादी भी नहीं की और न ही मकान बनवाया ? तेरा इतना सारा रुपया कौन भोगेगा ? गाड़ी खरीदी है ?"

"नहीं।"

गोपाल हाजरा ने कहा, "बस-ट्राम से ऑफिस आता-जाता है ?"

संदीप गोकि जाना चाहता है, पर जा नहीं पा रहा है। गोपाल हाजरा सवाल पर सवाल किए जा रहा है। सवालों का क्या जवाब दे, यह सोचने के पहले ही बिजली

ने एकाएक कमरे में प्रवेश किया। बोली, "विशाखा दी, बाबूजी संदीप को जरा बुला रहे हैं—"

बिजली के आने से संदीप की जान-में-जान आई। बोला, "चलो, तपेश बाबू कहां हैं? किस कमरे में?"

संदीप पीछे-पीछे चलता हुआ एक कमरे के अन्दर गया। विशाखा भी गई। बिस्तर पर मैली चादर और मैला तकिया है। संदीप पर निगाह जाते ही बैठने की कोशिश करने लगा।

संदीप ने कहा, "आप उठिए नहीं, लेटे रहिए।"

यह कहकर सीधे तपेश गांगुली के बिस्तर के सामने जाकर खड़ा हो गया।

तपेश गांगुली बोला, "देख रहो हो न भाई, मेरी हालत। अब मैं ज्यादा दिन जिन्दा नहीं रहूंगा। तुम मेरी थोड़ी-सी मदद करो—"

संदीप ने कहा, "आप अच्छे हो जाइएगा, इतनी फिक्र क्यों कर रहे हैं?"

तपेश गांगुली बोला, "फिक्र क्या यूं ही करता हूं भाई। रात-दिन सिर्फ यही सब सोचता रहता हूं। तुम्हारे गले की आवाज सुन तुम्हें बुला भेजा। मरने का मुझे दुख नहीं है। फिक्र है केवल बिजली के लिए। उसके लिए कोई सहारा नहीं ढूंढ़ सका।"

संदीप इस बात के सन्दर्भ में क्या सांत्वना दे! चूंकि कुछ न कुछ सांत्वना के तौर पर कहना चाहिए, इसलिए बोला, "भगवान पर भरोसा रखिए, सब ठीक हो जाएगा—"

"भगवान?"

'भगवान' शब्द सुनते ही तपेश गांगुली गुस्सा गया। बोला, "क्या कहा? भगवान? भगवान नामक कोई होता तो मेरी यह दुर्दशा हुई होती? पट्ठा भगवान एकबार मिल जाता तो उससे मैं पूछता : इतने लोगों की लड़कियों की शादी हो गई और मेरी लड़की की शादी क्यों नहीं हुई? मैंने कौन-सा गुनाह किया है?"

यह कहकर चन्द लमहों तक हांफता रहा। उसके बाद फिर कहने लगा, "क्यों ऐसा हुआ, बताओ तो भाई? मैंने कौन-सा गुनाह किया है? देखो न, विशाखा की शादी फांसी के एक मुजरिम से हो गई और वही फांसी का मुजरिम जेल से रिहा होकर अब घर-गृहस्थी चला रहा है। उन लोगों की फैक्टरी फिर से खुल गई। उनके लिए कहां से रुपयों का जुगाड़ हो गया और विशाखा का जीवन भी कितना सुखी हो गया! और मेरी बिजली! बिजली की हालत देख रहे हो! वह अपनी चचेरी बहन के यहां नौकरानी का काम करके मर रही है। और मैं भी अपनी ज़िन्दगी के आखिरी दौर में भतीजी-दामाद के घर टिक कर बीमारी भोग रहा हूं। चूंकि पेंशन मिल रहा तो दो कौर भात खाने को मिल रहा है, लेकिन मैं मर जाऊंगा तो पेंशन मिलना बन्द हो जाएगा। ऐसी हालत में मेरी लड़की का क्या होगा···"

बोलते-बोलते और बोल नहीं सका। रुलाई से गला अवरुद्ध हो गया।

संदीप ने चुप कराने के खयाल से कहा, "आप चुप हो जाइए, बातें नहीं कीजिए···चुप हो जाइए···"

तपेश गांगुली कहने लगा, "चुप क्यों रहूं? अभी अगर न बोलूं तो कब बोलूंगा, किससे बोलूंगा? मेरी इस दुर्दशा की बात कौन सुनेगा? विशाखा सुनेगी? उसे क्या अब सुनने का वक्त होगा? वह तो मेरे जमाई को ही संभालने में व्यस्त रहती है। मैं तो कुछ देख नहीं पाता, इस कमरे में लेटा रहता हूं। लेकिन कान में तो सारी बातें आती हैं। उस कमरे में शराब पीने का दौर चल रहा है, यह भी समझ पाता हूं। लेकिन बिजली? मेरी बिजली? वह तो इस घर की महरी है। वह इस घर में महरी का काम करने में ही व्यस्त रहती है। लेकिन उसका दुख कौन समझेगा? वह अवश्य ही अपने मुंह

से मुझे कुछ नही कहती लेकिन बाप होने के नाते मैं सबकुछ महसूस कर सकता हूं। मेरी मौत क्यों नही होती, बता सकते हो? बिजली की शादी क्यों नही होती है, बता सकते हो?..."

संदीप तब भी खड़ा होकर सबकुछ सुन रहा था। सात्वना देने के अतिरिक्त वह कर ही क्या सकता है! बोला, "आप रोकर क्या कीजिएगा? मन को मजबूत बनाइए—"

"तुम मन को मजबूत बनाने कह रहे हो? क्यों, तुम्हारे हाथ मे कोई उपाय नहीं है? तुम्ही मेरा उद्धार कर सकते हो। तुम बिजली से शादी नही कर सकते? मुझे इस कष्ट से छुटकारा नही दिला सकते? यह उपकार कर मुझे बचा नही सकते?"

संदीप इस बात का क्या उत्तर दे?

बोला, "मैं तो एकबार शादी कर चुका हूं तपेश बाबू। आदमी क्या दुबारा शादी करता है?"

"कहा शादी की? कब? तुम्हारी पहली वाली शादी में रुकावट पड गई। यह सब मुझे मालूम है। अब शादी करने में तुम्हें कौन-सी आपत्ति है?"

अचानक अन्दर से सौम्य बाबू के गम्भीर गले की आवाज़ सुनाई पड़ी, "बिजली, बिजली कहा गई?"

बिजली दौड़ती हुई अन्दर की ओर जा रही थी पर विशाखा ने उसे रोककर कहा, "तू मत जा, मैं जा रही हू—"

यह कहकर अन्दर चली गई।

तपेश गागुली ने कहा, "देखा न भाई, तुमने अपनी आखो से सबकुछ देख लिया। मेरी लड़की को छोटे बाबू ने पुकारा तो उसे जाने नही दिया और खुद चली गई। छोटे बाबू के पास विशाखा किसी भी हालत मे बिजली को जाने नही देती। विशाखा को सारा आक्रोश मेरी बिजली पर ही है—"

संदीप ने पूछा, "क्यों, आक्रोश क्यो है?"

तपेश गागुली ने कहा, "आक्रोश क्यो नही होगा?"

"क्यो, आक्रोश क्यों है?"

तपेश गागुली ने कहा, "बिजली विशाखा से ज्यादा खूबसूरत है। यही वजह है कि विशाखा नही चाहती कि बिजली इस घर में रहे। नही चाहती कि बिजली सज-सवरकर छोटे बाबू के गिर्द मडराए। बिजली सजती-सवरती है तो विशाखा उसे डाटती है।...मैं इतनी मुसीबत मे हू कि क्या कहूं! अपनी बेटी के बारे में सोचते-सोचते मैं और अधिक दुर्बल हो गया हू। क्या किया जाए, बताओ तो? मैं जब मर जाऊंगा तो बिजली का क्या होगा, कहो तो! तुमने तो अपनी आखो से सबकुछ देख लिया। तुम बिजली से शादी कर लो भाई। मैंने सुना है, तुमने विशाखा को बहुत सारा रुपया दिया है। तुम्हारे रुपये वे लोग लूट रहे हैं और शराब के पीछे उडा रहे हैं। तुम्हें पत्नी और बाल-बच्चे नही हैं, यह जानकर तुम्हारे रुपये विशाखा जिसको-तिसको बांट रही है। आज तो तुमने अपनी आखो से सबकुछ देख लिया। लेकिन बिजली से अगर तुमने शादी की होती तो तुम्हारे रुपये यो बर्बाद नही होते। एक अनाथिनी लडकी के उपकार मे खर्च होते। जानता हू। इस बूढ़े आदमी की बात सुनना अभी तुम्हें अच्छा नही लगेगा। लेकिन किसी दिन जब तुम मेरी उम्र के हो जाओगे तो उस समय समझ आएगी। उस समय मेरी ही तरह तुम्हारी देखभाल करने वाला कोई नही रह जाएगा—"

अब संदीप ने कहा, "मैं अभी चल रहा हू तपेश बाबू। मैं आफिस से सीधे यही चला आया हू। बहुत देर हो चुकी है। समय हुआ तो किसी दूसरे दिन फिर आऊंगा—"

यह कहकर सीधे कमरे से निकल रहा था। बगल के कमरे से उस समय भी शराब की बू और गोपाल हाजरा के गले की आवाज़ कान में आ रही थी।

संदीप ने रसोईघर की तरफ मुखातिब होकर पुकारा, "मंगला, ऐ मंगला—"

मंगला के बदले सामने विशाखा आई। बोली, "तुम जा रहे हो?"

संदीप ने कहा, "हां—"

विशाखा ने कहा, "तुम ऐसे दिन में आए जिस दिन मिस्टर हाजरा आ गए—"

"गोपाल हाजरा आएगा, यह मालूम होता तो मैं नहीं आता।"

विशाखा ने कहा, "इतने दिनों के बाद तुम आए और तुमसे अच्छी तरह बात भी नहीं कर सकी। मैं छोटे बाबू को संभालने के खयाल से ही हर वक्त उनके पास थी। यदि सामने से ज़रा भी हट जाऊंगी तो फिर पीना चाहेंगे—"

बातचीत के दौरान ही कमरे के अन्दर से बुलाहट आई, "ओ बिजली, बिजली, कहां हो? और एक-एक पेग दे जा—"

बिजली फौरन बोतल लाने के लिए तेज़ कदमों से जा रही थी। लेकिन विशाखा ने तत्क्षण उसे रोक दिया। बोली, "तू चली जा, तुझे नहीं जाना है। मैं जा रही हूं—"

यह कहने के बाद संदीप से बोली, "तुम ज़रा रुके रहो, जाना नहीं। मैं अभी आई—"

संदीप वहीं खड़ा रहा। उसके कान में सारी बात आने लगी। विशाखा ने कमरे के अन्दर घुसकर कहा, "अब शराब नहीं है।"

उसकी बात सुनकर सौम्य बाबू को आश्चर्य हुआ। बोला, "और नहीं है? इसका मानी?"

विशाखा बोली, "नहीं अब नहीं है। फिर से खरीदकर लानी है—"

"तो फिर खरीदकर लाने के लिए मंगला को भेज दो न।"

विशाखा ने कहा, "अब दुकान बन्द हो गई है, कैसे लाएगी?"

सौम्य बाबू ने कहा, "आज मिस्टर हाजरा आए हैं और आज ही शराब खत्म हो गई?"

विशाखा ने गोपाल हाजरा की ओर ताकते हुए कहा, "मिस्टर हाजरा, आप ज़रा मिस्टर मुखर्जी को समझाइए न। डाक्टर ने उन्हें ज्यादा पीने से मना किया है। दो पेग या ज्यादा से ज्यादा तीन पेग तक देने कहा है, उससे ज्यादा किसी भी हालत में नहीं—"

गोपाल हाजरा ने कहा, "डाक्टर ने मना किया है तो ज्यादा पीना उचित नहीं है। मैंने भी आज काफी पी ली है। आज अब रहे—"

विशाखा अब वहां ज्यादा देर तक खड़ी नहीं रही। बात समाप्त करते ही बाहर संदीप के पास आई। बोली, "सुना तो। हर वक्त ऐसा ही करता रहता है। इतने सालों तक न पीने से नशा दूर हो जाना चाहिए था, सो तो हुआ नहीं। नशा और बढ़ गया है। तुमसे और क्या कहूं! जीवन में एक दिन भी शांति नहीं मिली। अब सोचती हूं छुटपन ही सबसे अच्छा वक्त था।"

संदीप ने कहा, "तो फिर चलता हूं।"

"फिर आओगे तो?"

"आऊंगा।"

"किसी एक-दूसरे मंगलवार को आना। सुना है, फैक्टरी की ओर से हम लोगों के लिए एक और मकान बनवाया जाएगा।"

संदीप ने कहा, "क्यों? तुम लोग इस मकान में नहीं रहोगी?"

विशाखा ने कहा, "छोटे बाबू को यह मकान अब अच्छा नहीं लग रहा है।"

"क्यों ?"

"यह मकान छोटा है। मंझले बाबू भी अब कलकत्ता चले आए हैं और बेलुड़ के मकान में रह रहे हैं। इसलिए छोटे बाबू के लिए भी वही एक बड़ा-सा मकान चाहिए। इस घर में रहने से उनकी इज्जत में बट्टा लगता है।"

"क्यों ?"

विशाखा ने कहा, "यह बात उनसे कौन कहने जाए! इस मकान में अच्छा-सा डाइनिंग-रूम नहीं है, इस मकान में पर्लर नहीं है, विजिटर्स वेटिंग-रूम नहीं है। इस मकान में किसी को 'इनवाइट' करने और रहने देने की व्यवस्था नहीं है, जैसा कि मंझले बाबू के मकान में है। यहां से नाइट-क्लब जाने में बड़ी देर लगती है।"

संदीप ने कहा, "वैसा मकान तो खरीदने में कई लाख रुपये लगेंगे। बेकार का खर्च बढ़ाने से लाभ ही क्या है ?"

"वही इज्जत का सवाल। छोटे बाबू तो कंपनी के एक डाइरेक्टर हैं। उनकी निगाह में यह छोटा-सा मकान शोभनीय नहीं है। बहरहाल, जो होने को होगा, होगा। इतनी देर तक मिस्टर हाजरा से यही सब बातचीत चल रही थी। मिस्टर हाजरा भी चाहते हैं कि छोटे बाबू का मझले बाबू जैसा एक बड़ा-सा मकान और गाड़ी होनी चाहिए।"

संदीप ने कहा, "छोटे बाबू यह झंझट क्यों बढ़ाना चाहते हैं ?'

"यही देखो न, मैंने उस वक्त इस मकान को ढाई लाख रुपये में खरीदा था। उस समय सोचा था, यहां हम लोगों का मजे में गुजर हो जाएगा। लेकिन कहां से मेरा चाचा बिजली को लेकर आ धमका और दोनों मेरे सिर पर सवार हो गए। अभी बीमारी भोग रहा है और सिर्फ यही कोशिश कर रहा है कि बिजली को छोटे बाबू के करीब से करीब पहुंचा दे।"

संदीप ने कहा, "छोटे बाबू क्या भुलावे में आ रहे हैं ?"

"आएंगे नहीं ? क्या कह रहे हो तुम ? शराब और औरत के प्रति उन्हें पहले ही जैसा लोभ है। चूंकि मैं हूं तो जरा सभाले हुए हू, वरना क्या होता, यह सोचकर भी मुझे डर लगता है।'

संदीप बोला, "तुम इस मकान को मत छोड़ो, छोटा मकान ही तुम्हारे लिए अच्छा रहेगा। हर तरफ नजर रखी जा सकती है। बड़ा मकान होने से कहां क्या हो रहा है यह देखना सम्भव नहीं है।"

"कहा न, इज्जत की बात है। तुम्हारे आने के पहले मिस्टर हाजरा छोटे बाबू को यही परामर्श दे रहे थे।"

संदीप ने कहा, "इसमें गोपाल हाजरा का कौन-सा स्वार्थ है ?"

"वाह, यह तुम नहीं जानते! फैक्टरी यदि बड़ा मकान बनवा देती है तो इसमें मिस्टर हाजरा को ही फायदा होगा।"

"कौन-सा फायदा ?"

विशाखा बोली, "फायदा नहीं होगा ? फायदे के अलावा मिस्टर हाजरा और कोई बात सोचता है ? मकान खरीदने में जितने लाख रुपये लगेंगे मिस्टर हाजरा को उतना पर्सेन्ट कमीशन मिलेगा। मिस्टर हाजरा का कारोबार क्या सिर्फ लेबरों को लेकर ही है ? और कितने कारोबार है, जानते हो ?"

संदीप ने कहा, "हां, जानता हूं..."

संदीप को पहले जानकारी नहीं थी। लेकिन बाद में सब कुछ जान गया था। किसी जमाने में नशा करने की टिकिया का व्यापार करता था। उसके लिए रात-

चक्कर लगाते हुए रास्ते के हर मोड़ पर पुलिसकर्मियों को रिश्वत देता था। उसके बाद आइडियल फूड प्रोडक्ट्स कंपनी की नींव डाली थी। उसके बाद कलकत्ता के युवक-युवतियों को बेरोक-टोक मिलने की सुविधा देने के खयाल से फ्री स्कूल स्ट्रीट के एक मकान में एक अड्डा तैयार कर दिया था। वहां घटनाक्रम से एक दिन विशाखा भी पहुंच गई थी। उसके बाद कौन है जिसे वहां अटकना न पड़ा हो। मंझले बाबू की लड़की पिकनिक भी वहां हर रोज़ पहुंच जाती थी। विशाखा और संदीप के जीवन में वे सब दिन कैसे गुज़रे हैं! उसी गोपाल हाजरा ने एक दिन श्रमिकों को उत्तेजित कर हड़ताल करा दी थी और सैक्सबी मुखर्जी कंपनी का गेट बन्द करा दिया था। जिसके फलस्वरूप फैक्टरी इंदौर चली गई थी। अब फिर उसी गोपाल हाजरा और उसके साथियों ने फैक्टरी को कलकत्ता में वापस कराकर रुपया कमाने का नया रास्ता ढूंढ़ लिया है। और अब गोपाल हाजरा ही सौम्यपद को नया मकान खरीदने की सलाह दे रहा है।

"क्यों, तुम कुछ बोल क्यों नहीं रहे हो?"

संदीप ने कहा, "यही सोच रहा हूं—"

"क्या सोच रहे हो?"

संदीप ने कहा, "सोच रहा हूं कि गोपाल हाजरा के हाथ से तुम लोगों को किसी भी हालत में छुटकारा नहीं मिला। धर्मतल्ला के आइडियल फूड प्रोडक्ट्स की बात तुम्हें याद है? जहां तुम्हें नौकरी मिली थी? उसके बाद फ्री स्कूल स्ट्रीट की उस अंटी की बात याद है? वेलिंगटन स्ट्रीट के मोड़ पर तुम बेहोश होकर पड़ी थीं। तुम्हारे लापता हो जाने पर मौसीजी से तुम्हारा फोटो मांगकर अखबार में छपाने गया था। वह सब बात याद है? तुम्हारा फोटो देखकर दादी मां के गुरुदेव ने क्या भविष्यवाणी की थी?"

"उसी फोटो को तुम अपने कमरे में टांगकर रखे हुए हो?"

"हां। तुम्हें वह सब बात याद न भी रह सकती है, लेकिन मुझे सब कुछ याद है विशाखा। मैं कुछ भी भूल नहीं पाता। मुझे सब कुछ याद रहता है।"

विशाखा ने कहा, "मुझे भी सब कुछ याद रहता है।"

"तुम्हें याद रहता तो आज गोपाल हाजरा को अपने घर पर बुलाकर तुम उसकी इतनी खातिरदारी नहीं करती, न ही इतनी कीमती शराब पिलाती—"

विशाखा बोली, "क्या करूं, बताओ! मिस्टर हाजरा ने ही फिर से हमारी फैक्टरी खुलवा दी। मिस्टर हाजरा न होते तो यह फैक्टरी खुलती? छोटे बाबू के भविष्य के बारे में सोचकर ही उन्हें घर पर निमंत्रित करके बुलाना पड़ा है।"

"तुम्हारे चचिया ससुर मुक्तिपद बाबू भी तो कलकत्ता आए हुए हैं?"

विशाखा ने कहा, "हां, वे भी आए हैं। उनके साथ उनके परिवार के लोग भी आए हैं। वे लोग एक दिन इस मकान में भी आए थे। उन्होंने भी कहा, इस मुहल्ले में सैक्सबी मुखर्जी कंपनी के एक डाइरेक्टर का रहना लज्जाजनक बात है।"

"यह क्या? मकान से आदमी का विवेचन किया जाता है? उसके काम से नहीं? मझले बाबू ने यह बात कही?"

विशाखा ने कहा, "हां।"

संदीप ने कहा, "तो फिर इतने दिनों तक जो सीखता रहा, कहता रहा, वह झूठ है?"

इस बात के उत्तर में विशाखा ने जब कुछ नहीं कहा तो संदीप फिर बोला, "इतने कांड होने के बावजूद सौम्य बाबू को सीख नहीं मिली? मंझले बाबू को सीख नहीं मिली? यह किस युग में हम-तुम वास कर रहे हैं? यह सब देखने-सुनने के बाद अब मुझे जीवित रहने की इच्छा नहीं होती—"

विशाखा ने कहा, "नहीं-नहीं, तुम इस तरह आदमी के प्रति अपने विश्वास को खोने मत दो। तुम क्या नहीं जानते कि आदमी के प्रति विश्वास खोना पाप है?"

"जानता हूं, सब जानता हूं, लेकिन मैं यह सब सिर्फ तुम्हारे बारे में ही सोचकर कह रहा हूं। तुम आखिर तक संघर्ष करती रहो। तुम उस आदमी को सही रास्ते पर लाने की कोशिश करो।"

"लेकिन इतनी शक्तियों के खिलाफ मैं कैसे संघर्ष करूंगी?"

संदीप ने कहा, "तुम्हें शक्ति प्राप्त हो सके, यही सोचकर मैंने तुम्हें इतने रुपये दिए। किस तरह तुम्हें इतने रुपये दिए, यह बात मेरे अलावा और कोई नहीं जानता—"

"सच बताओ, इतने रुपये तुम्हें कहां मिले?"

संदीप ने कहा, "तुम्हारे सुख के लिए मैं गलत-सही सब तरह का काम कर सकता हूं, यह जानती हो? फूलों का हार तैयार करने के लिए कांटे से डरने से कहीं काम चल सकता है?"

अचानक अन्दर से आवाज आई, "ओ बिजली, बिजली—"

विशाखा का चेहरा पुनः बुझ गया। बोली, "मैं चलती हूं। आज तुमसे अच्छी तरह बातचीत भी नहीं कर सकी। फिर किसी दिन आना—"

यह कहकर विशाखा अन्दर चली गई। संदीप अब रुका नहीं। मंगला को दरवाज़ा भेड़ने कहकर बाहर सड़क पर निकल गया।

रफ्ता-रफ्ता सारी बातें याद आ रही थीं संदीप को। उन दिनों की प्रत्येक छोटी-मोटी बात। खास तौर पर विशाखा की बातें ही उसे आज अधिक याद आ रही हैं। विशाखा को सुखी बनाने के लिए संदीप ने क्या नहीं किया है! अपने सम्मान, सुरक्षा, जीविका वगैरह की तिलांजलि दी है उसने विशाखा के लिए।

उसी विशाखा का जीवन कितना विचित्र था! कहां कलकत्ता के किसी नगण्य छोर में वह जीवन जी रही थी, उसके बाद किस घटनाचक्र के चलते रातों-रात राजरानी बन गई! रातों-रात करोड़ों रुपये की मालकिन बन बैठी। लेकिन उतने रुपयों की मालकिन होने से क्या कोई लाभ हुआ? इससे तो बेहतर था कि वह विधवा हो जाती।

अपनी मांग के सिंदूर के विनिमय में वह पति को नहीं पा सकी। पति को आजीवन कारावास की सजा मिली। लेकिन किसी तरह वह निश्चित मृत्यु के हाथ से पति को छुड़ाकर ले आई।

उसके बाद पति को एक दिन जेल से छुटकारा मिला। लेकिन तब तक वह आर्थिक दृष्टि से फटेहाल हो चुकी थी। उस समय उसकी नई गृहस्थी थी। नई आशा और संकल्प को चरितार्थ करने के खयाल से रुपये की उम्मीद में संदीप के सामने हाथ फैलाया।

"रुपया? कितने रुपये चाहिए?"

"जितना भी तुम दे सको। मैं छोटे बाबू को दुबारा अपने पैरों पर खड़ा होने में सहायता करूंगी। चाहे जैसे भी हो। तुमने तो अपना सारा कुछ दूसरे के लिए दान कर दिया है, अब मेरे लिए भी कुछ करो—"

"तुम्हारे लिए मैं सबकुछ कर सकता हूं। बताओ, कितने रुपये चाहिए?"

विशाखा ने कहा, "एक लकड़ी कम्पनी खड़ी करने में कितने रुपये लगेंगे, यह तुम जानते हो। तुम बैंक में नौकरी करते हो, तुम्हें यह सब मालूम है। तुम लोग तो विभिन्न कम्पनियों को रुपया 'लोन' देते हो। तुम बता सकते हो कि कितने रुपये लेने-देने से

कहानी का सारा वृत्तान्त मैंने दूसरे से सुना है। संदीप लाहिड़ी को मैंने कभी अपनी आंखों से नहीं देखा है। सौम्यपद मुखर्जी और विशाखा मुखर्जी को भी मैंने अपनी आंखों से नहीं देखा है। यहां तक कि बिजली गांगुली को भी मैंने कभी नहीं देखा है। कहा जा सकता है कि अपने परिवार परिजन के अतिरिक्त बाहर की किसी महिला से उस तरह कभी घनिष्ठ नहीं हो सका हूं जिसे हिलना-मिलना या अंतरंगता में बंधना कहते हैं।

सारा कुछ सुना है श्री अजयकुमार वसु से। सीधे शब्दों में कहा जाए तो मिस्टर ए० के० वसु से। अजय बाबू जिन्दगी के आखिरी दौर में मेरे पड़ोसी थे। वे थे विडन स्ट्रीट की दादी मां के मुकदमे के दौरान की सरकार की तरफ के स्टैंडिंग काउंसिल। उन्हीं के हाथ में थी सौम्यपद के जीवन-मरण की निश्चयता। उस मुकदमे में दादी मां की ओर से थे बैरिस्टर नीरद रंजन दास गुप्त। उसी मुकदमे के सूत्र से उन दोनों व्यक्तियों को सारी बात की जानकारी थी।

अजय बाबू के साथ मैं हर रोज लेक के अन्दर चहलकदमी करता था। पूछा, "उसके बाद?"

अजय बाबू ने कहा, "मैंने बाद की घटनाएं हमीद से सुनी हैं—"

"हमीद? हमीद कौन है?"

अजय बाबू ने कहा, "वही हमीद जिसके बारे में आपको पहले ही बता चुका हूं। वह था जेलखाने का दलाल।"

अजय बाबू फिर बोले, "हां, उस तरह की दलाली कर जिन्दगी के आखिरी दौर में कई लाख रुपयों का मालिक बन बैठा था। हम लोगों के मकान के पास एक विशाल तीन-मंजिला भवन खड़ा कर लिया था। उस समय उनकी काफी उम्र हो चुकी थी। शुरू की बातें उस मुकदमे के सिलसिले के कारण मुझे खुद ही मालूम था, बाकी बातें सुनी थीं हमीद साहब से।"

मैंने कहा, "अभी उनसे एक बार मुलाकात हो सकती है?"

"मुलाकात कैसे होगी। वे तो दुनिया से विदा हो चुके हैं।"

"विदा हो चुके हैं?"

अजय बाबू बोले, "हां, विदा हो चुके हैं। अभी उनके बाल-बच्चे, पोते-पोतियां हैं। अब उनकी माली हालत अच्छी ही गई है। अब उन लोगों में से हरेक के पास एक-एक गाड़ी है।"

हमीद के वंशधरों के ऐश्वर्य के बारे में सुनकर मेरे आश्चर्य की कोई सीमा न रही। अजय बाबू बोले, "आपको आश्चर्य क्यों हो रहा है? मैंने वकील, डाक्टर और पुलिसकर्मियों से हमेशा सौ हाथ दूर रहने की कोशिश की है, हालांकि खुद भी जिन्दगी-भर वकालत करता रहा। उनके बीच क्या भले आदमी नहीं होते? मगर दूर रहिएगा कैसे? उन्हीं को लेकर हमें चलना है—"

मैंने कहा, "उसके बाद क्या हुआ, बताइए?"

"उसके बाद?"

हर रोज सुबह के वक्त अजय बाबू और मैं लेक जाकर पानी के किनारे चहलकदमी करते हैं और चलते-चलते गपशप करते हैं। उसके बाद जब थकावट महसूस होने लगती है तो सुविधानुसार एक बेंच पर बैठ जाते हैं।

उसके बाद संदीप के हाथ में हथकड़ी न डालने के बावजूद उसे चार राइफलधारी पुलिसकर्मी चारों तरफ से घेरे रहे।

संदीप शायद जानता था कि एक दिन उसकी यही हालत होगी।

बोला, "मुझे थोड़ा-सा वक्त दीजिए।"

पुलिस सर्जेण्ट बोला, "नहीं, आपको वक्त नहीं दिया जाएगा। आप वक्त क्यों मांग रहे हैं ?"

"मैं जानता हूं कि मैंने कौन-सा अपराध किया है। यह भी जानता हूं कि मुझे कारावास की सजा मिलेगी, इसलिए मैं एक चीज़ अपने साथ ले जाना चाहता हू।"

"कौन-सी चीज़ ?"

संदीप ने कहा, "फ्रेम में मढ़ा हुआ एक फोटोग्राफ।"

"वह कहां है ?"

संदीप ने कहा, "मेरे सोने के कमरे की दीवार पर टंगा हुआ है। उसे मैं अपने साथ ले जाऊंगा।"

ऐसे में अपने मालिक की यह हालत देखकर रतन रो दिया।

संदीप ने कहा, "रो मत रतन। तू कहीं दूसरी जगह नौकरी की कोशिश करना—"

"यह क्या बाबू ? आप फिर नहीं आइएगा ?"

संदीप ने कहा, "नहीं जी, मैं अब लौटकर नहीं आऊंगा। अब कितने साल बाद लौटूंगा, इसका कोई ठिकाना नहीं। मैंने मकान-मालिक को इस महीने का किराया दे दिया है। तू अब कहीं दूसरी जगह नौकरी का इन्तजाम कर लेना—"

"तो फिर आपके इन सब सामानों का क्या होगा ?"

संदीप ने कहा, "यह सब तहस-नहस हो जाए तो भी कोई हानि नहीं। मैंने जीवन में जो चाहा था, पा लिया है। अब मुझे चाहे जेल की सजा मिले या फांसी की, मेरी कोई विशेष हानि नहीं होने वाली है। विशाखा कभी किसी दिन मेरे घर पर आए तो बता देना कि रुपये का गबन करने के कारण मुझे जेल भेज दिया गया है।"

इस बीच रतन संदीप के शयन-कक्ष से विशाखा की वह तस्वीर उतारकर अपने मालिक को दे चुका है। संदीप ने कहा, "इसे किसमें लूं ? मुझे कोई झोला-वोला दो, वरना यह खो जाएगा। मैं इसे अपने साथ रखना चाहता हूं।"

रतन दौड़ता हुआ गया और एक झोला ले आया। विशाखा का फोटो उसके अन्दर डालकर संदीप ने पुलिस सर्जेण्ट से कहा, "चलिए, अब मैं तैयार हूं—"

संदीप पुलिस की जीप गाड़ी के अन्दर घुस गया। बाहर तब भी रतन हक्का-बक्का खड़ा था और निरन्तर रोए जा रहा था। संदीप ने उसकी ओर देखकर कहा, "रो मत रतन, विशाखा आए तो कह देना, मैंने जो चाहा था, पा लिया है, समझे ?"

गाड़ी तब चलने लगी थी। दूर से उस समय भी संदीप कह रहा था, "यदि विशाखा न भी आए तो तू जाकर उसे यह खबर सुना आना। कहना, मेरे लिए वह अफसोस न करे। विशाखा सुख से है, इसी में मुझे सुख मिल रहा है···मेरे मन में अब किसी के लिए कोई गिला नहीं है, मेरे मन में किसी चीज़ के लिए क्षोभ नहीं है। और यदि जिन्दा रहा तो फिर लौटकर मिलूंगा, मेरे लिए विशाखा को अफसोस नहीं करने कहना।"

गाड़ी चलने लगी और कुछ देर बाद रतन संदीप की आंखों से ओझल हो गया।

सब कुछ याद है संदीप को। अब उसके मन में प्रत्याशा नहीं है। निवारण चाचा ने बचपन में ही इन बातों की सीख दी थी कि दुनिया में हर आदमी के जीवन मे एक ऐसा वक्त आता है जब उसे अपने संपूर्ण अतीत की परिक्रमा करने की इच्छा होती है। अतीत का स्मरण आदमी को तभी आता है जब उसका भविष्य छोटा हो जाता है। जवानी में भविष्य

उसके लिए अगली चीज होता है। उस वक्त कम उम्र के दौरान यह तमाम वस्तुओं की कामना करता है। सुख-समृद्धि और सौभाग्य की कामना करता है। सब कुछ दुर्लभ की कामना करने के बीच एक बलिष्ठ प्रत्याशा रहती है जो उसे तमाम विघ्न-बाधाओं को पार करने की सीख देती है, सब कुछ को तिरस्कार करने की शिक्षा देती है।

लेकिन जब आधा जीवन बीत जाता है तो उसी समय प्रत्यय का आगमन होता है। इसलिए पृथ्वी के तमाम मनुष्यों का जीवन प्रत्याशा और प्रत्यय का समन्वय है। प्रत्याशा को पारकर जो प्रत्यय में पहुंच सकता है उसी को परित्राण मिलता है।

छुटपन में ये बातें निवारण चाचा ने बताई थीं। उस समय संदीप इन बातों का वास्तविक अर्थ नहीं समझ सका था। आज थोड़ा-बहुत समझ रहा है। आज इतने बरसों के बाद।

इतने दिनों के बाद पैदल चलने के दौरान उसे फिर से उस दिन की बातें याद आने लगीं जिस दिन उसे पुलिस पकड़कर ले गई थी। नब्बे लाख रुपये का गबन करने के आरोप में।

सच कहा जाए तो उसके लिए उसके मन में जरा भी ग्लानि नहीं है। हां, उसने रुपए की चोरी की है। कोर्ट में जब मुकदमा चल रहा था तो उसने अपने बचाव के लिए कोई दलील पेश नहीं की थी। न्यायाधीश ने पूछा था, "आपने क्या सचमुच ही इतने रुपये का गबन किया था?"

संदीप ने उत्तर दिया था, "हां—"

"संदीप बाबू, आप स्वीकार कर रहे हैं कि आपने गबन किया था?"

"हां, स्वीकार करता हूं।"

न्यायाधीश ने पूछा था, "यह स्वीकार करने का नतीजा क्या होगा, आप जानते हैं?"

"हां, मैं जानता हूं कि चोरी करना महापाप है।"

न्यायाधीश ने उसके बाद पूछा था, "आपने जान-बूझकर यह पाप किया था? फिर तो आपको लम्बे अरसे तक जेल में रहना होगा। आपको बड़ी से बड़ी सजा दी जाएगी।"

"दी जाएगी तो कोई हर्ज नहीं। मैं इसके लिए तैयार हूं।"

कोर्ट का फैसला एक ही दिन में नहीं होता। लेकिन यह एक फौजदारी मामला है और फौजदारी मामले का फैसला होने में ज्यादा दिनों का वक्त नहीं लगता।

लेकिन यह न्यायाधीश जरा अलग ही प्रकृति का आदमी है। उन्होंने सोचा, यह आदमी शायद जरा विकृत मस्तिष्क का है। इतने बड़े अपराध की जिम्मेदारी बेझिझक क्यों स्वीकार कर रहा है? स्वस्थ मस्तिष्क से सोचने-विचारने का इसे थोड़ा-सा वक्त देना जरूरी है। इस बीच जेल की हिफाजत में ही रहे।

यही किया गया। मुजरिम को सोचने-विचारने के लिए एक महीने का समय दिया गया। लेकिन एक महीने के बाद जब मुजरिम को न्यायाधीश के सामने हाजिर किया गया तो उस समय भी वही उत्तर मिला। कोई तब्दीली नहीं आई।

न्यायाधीश ने पूछा, "आपको क्या अब अपने पाप के लिए अनुताप हो रहा है?"

मुजरिम ने तब भी वही उत्तर दिया, "मुझे जरा भी अनुताप नहीं हो रहा है।"

"आपने रुपया किसलिए लिया था?"

मुजरिम ने कहा, "यह मेरा निजी मामला है। उस बात का उत्तर देने को मैं बाध्य नहीं हूं।"

न्यायाधीश ने कहा, "आप किस तरह रुपयों की चोरी करते थे ?"

मुजरिम ने कहा, "मैं जब बड़ा बाजार ब्रांच का मैनेजर बना तो देखा, कुछेक धनीमानी पार्टियां इनकम टैक्स की आंखों में धूल झोंककर दस-बारह नाम से रुपया रखती हैं। एकाउन्ट में एक ही आदमी के कई नाम रहते हैं। किसी-किसी एकाउन्ट का साल-दर-साल कोई ट्रैनजैक्शन नहीं होता है। उन लोगों के जो रुपए रहते हैं उन पर ब्याज दिए जाते हैं। उन पार्टियों के एकाउंट मेरी याददाश्त में थे—मैं उन्हीं एकाउंटों से रुपया निकाल लिया करता था।"

"उस एकाउण्ट को कोई चेक नहीं करता था ?"

मुजरिम बोला, "कौन चेक करेगा ? जिनका झूठे नाम पर रुपए रहते थे, उनके पास इतने रुपये थे कि वे इस एकाउण्ट के सन्दर्भ में माथा-पच्ची नहीं करते थे। उनलोगों के रुपये बैंक में सड़ जाते। उनके तमाम झूठे पते मुझे मालूम थे। इसके अलावा मैं था मैनेजर। इसलिए मेरे काम-धाम को कोई चेक नहीं करता। बैंक में आजकल कोई ईमान-से काम नहीं करता, सिर्फ तनख्वाह लेना ही आजकल रिवाज चल गया है।"

न्यायाधीश ने पूछा था, "लोग काम नहीं करते हैं तो देश कैसे चल रहा है ?"

"देश कहां चल रहा है ? यही वजह है कि मैंने उन रुपयों को एक ऐसे काम के लिए लिया था, जिससे कि एक व्यक्ति सुखी हो सके।"

"वह कौन है ?"

मुजरिम ने कहा था, "मैं उसका नाम-पता वगैरह नहीं बताऊंगा। वह बड़ा दुखी ही व्यक्ति है। इतना दुखी कि उसे जो रुपये मिले हैं उनसे न केवल वही सुखी होगा बल्कि उसके हजारों आदमी को नौकरी मिलेगी, हजारों आदमी को उनकी जिन्दगी वापस मिल जाएगी।"

न्यायाधीश को बहुत काम रहते हैं। व्यर्थ की बातें करने का उन्हें वक्त नहीं रहता। न्यायाधीश अपने सिद्धान्त पर अटल रहे और मुजरिम को आठ साल के सश्रम कारावास का दण्ड देकर उन्होंने अपने कर्त्तव्य का पालन किया।

तब से संदीप का निर्वासन-दण्ड शुरू हुआ। सचमुच, वह एक कठोर निर्वासन था। दुनिया, समाज, मनुष्य—यहां तक कि अपने आपसे भी निर्वासन की शुरुआत हुई। उस निर्वासन के दिन से ही वह एक परम शांति का अनुभव करने लगा। इतनी बड़ी नौकरी चले जाने का उसे तनिक भी दुख और क्षोभ नहीं रहा। उसने अनुभव किया कि उसे मुक्ति मिल गई है। इतने दिनों तक संदीप एक पेड़ बनकर जीवित था। अब उस पेड़ में फूल खिल आए हैं, फल लग गए हैं। वह फल ही तो पूरे वृक्ष की चरम परिणति है। उस परिणति में पहुंचने के बाद चाहने और पाने को कुछ रह नहीं जाता।

इतने दिनों के बाद उस दिन जेलखाने में बैठे-बैठे संदीप को सिर्फ यही महसूस हो रहा था कि वह उस परिणति में पहुंच गया है। उसके अब चाहने या पाने के लिए कुछ नहीं रह गया है। है तो केवल परिणति में पहुंचने का आनन्द। उस समय जो आनन्द प्राप्त होता है उसी का दूसरा नाम है प्रेम। वह प्रेम बांधकर नहीं रखता। वह प्रेम केवल खींचते हुए ले चलता है। निर्मल निर्बोध प्रेम। उसी प्रेम में मुक्ति है। हर प्रकार की आसक्ति की मृत्यु। उसी मृत्यु का सत्कार-मंत्र है—

मधुवाता ऋतायते
मधु क्षरन्ति सिंधव···

एक बार आसक्ति का बंधन टूट जाता है तो जल-स्थल-आकाश, जड़-जन्तु-मनुष्य सब कुछ अमृत से परिपूर्ण हो जाता है और तब क्या आनन्द की कोई सीमा नहीं रह जाती।

यही कारण है कि सदीप का आचरण देखकर सबको आश्चर्य होता। इसीलिए सहदेव अक्सर पूछता, "आप जैसा आदमी किस तरह नब्बे लाख रुपये का गबन कर सकता है, उसकी हम कल्पना भी नही कर सकते लाहिड़ी बाबू।"

जेल सुपर भी बीच-बीच में आकर पूछ जाते, "आप कैसे हैं मिस्टर लाहिड़ी ?"

सदीप उनका सवाल सुनकर अवाक् हो जाता। जेल के कैदी को जेल के सुपर क्यो इतना सम्मान देते हैं ? फिर जेल सुपर को क्या सारी घटना मालूम है ? उसे सश्रम कारावास की सजा मिली है, यह बात सभी जानते थे। फिर भी उसे मेहनत का कोई काम कोई नही देता था। इसके बदले उससे आफिस का काम कराया जाता था आफिस के उस काम के दौरान भी सदीप का मन चला जाता पांच नम्बर भुवन गांगुली लेन के मकान मे। तदेश गांगुली बेशक अब जिन्दा नही होगा। बिजली की भी इस बीच कहीं किसी से शादी हो चुकी होगी।

घर में सिर्फ दो प्राणी होंगे—सौम्यपद और विशाखा।

सौम्यपद ने अवश्य ही शराब पीना छोड दिया होगा। विशाखा ने तो कहा ही था कि वह छोटे बाबू को किसी तरह स्वाभाविक स्थिति मे ले आएगी। प्रेम-प्यार से क्या ऐसा है जो सभव नही हो सकता ? प्रेम ही तो मृत्यु को पार कर अमृत मे पहुंचा देता है।

इसके अलावा इतने दिनो तक घर-ससार क्या दो जनो के बीच ही सीमाबद्ध होगा। किसी तीसरे का आविर्भाव नही हुआ ? जरूर ही हुआ होगा। वरना सदीप के यह कारा-वरण असत्य हो जाएगा ! यह क्या सभव है ? और गोपाल हाजरा

गोपाल हाजरा के हाथ में ही अब सत्ता होगी। उन्ही लोगो की ... सड़कों के जुलूस में नारे उछाले जाते हैं। जेलखाने के अन्दर भी उस ... ध्वनि सुनाई पड़ती है।

इसलिए जब तक गोपाल हाजरा है तब तक सैंक्सवी मुखर्जी ...

की शुरुआत के दौरान जिस आदमी ने प्रदीप की वत्ती के लिए तेल का इंतज़ाम किया था वह आदमी जेल के एक कोने में मर-मरकर जीवन जी रहा है।

सचमुच इतने दिनों तक संदीप मर-मरकर जीवन जी रहा था। एक तरह से वह भूल ही गया था कि उसकी मुक्ति के लिए बुलाहट आएगी। क्योंकि जेल से निकल वह कहां जाएगा? कहां जाकर वह टिकेगा? अपने वेड़ापोता का मकान तो उसने वहुत पहले ही वेच दिया था। नेवूवागान के उस किराये के मकान को मकान-मालिक ने ज़रूर ही अपने कब्जे में कर लिया होगा। उसे वह नए किरायेदार को वहुत ज़्यादा किराए पर लगाएगा।

लेकिन इस हालत में उसे मकान की ज़रूरत ही क्या है? कलकत्ता शहर में इतने आदमी हैं मगर सभी के पास क्या मकान हैं? सड़क पर ही वहुत सारे लोगों का जन्म होता है और फिर रास्ते पर ही किसी दिन उनकी मृत्यु हो जाती है। उन्हीं लोगों के दल का एक आदमी वनकर संदीप कुछ दिनों तक ज़िन्दा रहेगा और एक दिन नि शब्द विलुप्त हो जाएगा और-और लोगों की तरह।

अव वेला वढ़ती जा रही है। पहले वह कहां जाएगा?

पहले वेलुड़ जाएगा। वेलुड़ के उस सैक्सवी मुखर्जी कंपनी की फैक्टरी में। वहां जाकर यह देख लेना अच्छा रहेगा कि जिस कारखाने के लिए संदीप इतने दिनों तक रुपयों की आपूर्ति करता रहा, वह अव किस तरह चल रहा है।

लेकिन वेलुड़ क्या यहीं है! वहां पहुंचने में कई घंटे का वक्त लग जाएगा।

तो भी पहले वहीं जाना वेहतर है। यदि देख पाएगा कि फैक्टरी चल रही है तो समझ जाएगा विशाखा अच्छी तरह है, विशाखा सुख से है।

सामने एक वस आ रही थी। वस नम्वर देखते ही समझ गया कि वह हावड़ा जाएगी। वस जैसे ही करीव आई, वह उसके अन्दर चला गया। अन्दर वेहद भीड़ है। वसें और ट्रामें पहले की नाईं खाली नहीं रहीं। इन आठ वरसों के दरमियान इस शहर में आदमी की संख्या इतनी वढ़ गई है? इतने आदमी कलकत्ता में कहां से आए?

उसे देखकर सवों को मानो ऊव का अहसास हुआ। पूरे चेहरे पर दाढ़ी, लम्वे-लम्वे वाल। आठ साल से वाल नहीं कटाए हैं, दाढ़ी भी नहीं वनवाई है। जान-सुनकर नहीं वनवाई है। वनवाएगा तो सभी पहचान लेंगे। समझ जाएंगे कि यही आदमी एक दिन नेशनल यूनियन वैंक के वड़ा वाजार ब्रांच का मैनेजर था। रुपये का गवन करने के मामले में उसे आठ वर्ष की जेल की सजा मिली थी।

इतना ज़रूर है कि ज्यादातर लोग गरीव हैं। वहुत सारे लोग वैंक में रुपया नहीं रखते।

फिर भी सावधान रहना ही वेहतर है। कोर्ट में जव मुकदमा चल रहा था तो वहुतों ने उसे कठघरे में मुजरिम के रूप में देखा है। कुतूहल शांत करने के खयाल से भी वहुतेरे लोग कोर्ट गए थे। उस समय वहुत सारे लोगों ने उसे देखा है। हो सकता है वे लोग अव उसे पहचान लें। इसलिए चेहरे पर दाढ़ी-मूछें रखना वेहतर सावित हुआ है। इसलिए दाढ़ी-मूछें रखना ही उसके लिए आशीर्वाद हुआ है।

वहुतों ने मैले झोले को देखकर यथासंभव दूर रहने की कोशिश की। लेकिन ज़वान से आपत्ति नहीं कर सके। एक तरह से गणेश सरकार के द्वारा दिए गए झोले ने ही उसकी रक्षा की।

संदीप जव हावड़ा स्टेशन पहुंचा तो दोपहर आग उगल रही थी। वेला ढलती जा रही है।

मुक्तिपद मुखर्जी सुबह के वक्त नेताजी सुभाष रोड के हैड ऑफिस में बैठते हैं।

घर से सवेरे ही निकल कलकत्ता के हेड ऑफिस मे चले आते है। कितने ही दिन से फैक्टरी बन्द थी। जिस दिन से कलकत्ता की फैक्टरी खुल गई है उसी दिन से व्यस्तता बढ़ गई है। दुबारा मन लगाकर काम कर रहे हैं।

पहले बीच-बीच में टेलीफोन कर मां तंग करती थी। जिस दिन नंदिता सास से झगड़कर बेलुड़ के नए मकान मे चली गई थी उसी दिन से मा का गुस्सा बहू पर बढ़ गया था।

नंदिता चूंकि सास की परवाह नही करती इसलिए उनका गुस्सा उमड़कर मुक्तिपद पर टिक गया था। इसके चलते मुक्तिपद के मन मे क्षोभ जगता, पर लड़का होने के नाते मा को अस्वीकार नही कर पाते। इसीलिए हज़ारों काम रहने के बावजूद अक्सर बिडन स्ट्रीट के घर पर जाते थे।

जाने पर भी नंदिता की निन्दा कान खोलकर सुनना पड़ता। मुक्तिपद उन बातो का कोई विरोध नही करते। मुह बन्द कर सारा कुछ बेझिझक बरदाश्त कर लेते। एक ओर था फैक्टरी का श्रमिक-संकट का झमेला और दूसरी ओर मां की फटकार। दोनों तरफ के झमेलों को संभाल कर चलने के कारण उसका दबाव शरीर पर ही ज्यादा पड़ता। उसके बाद थी सौम्यपद की शादी की चिन्ता। कहा से किस उपले पाथनेवाली मृत बाप की लड़की से सौम्य की शादी का रिश्ता तय कर सारे मामले को और ज्यादा पेचीदा बना दिया था।

मिस्टर चटर्जी की एम० ए० पास लड़की से शादी हुई होती तो यह सब कुछ नही होता। लेकिन उसके बाद ही तमाम गड़बड़ियां शुरू हो गईं। पत्नी का खून करने के अपराध में सौम्यपद को फासी की सजा होने का आसार दिखने लगा। उसके बाद ही शादी हो गई उस उपले पाथनेवाली लड़की के साथ। उसके बाद मुक्तिपद को बोरिया-बस्ता बाधकर इंदौर चला जाना पड़ा। लेकिन वहां जाने पर भी शान्ति नही मिली। वहा भी तरह-तरह की झंझटो का सामना करना पडा। मा तब जिन्दा थी। फिर भी चारो तरफ के झमेलों को सभालते-संभालते मुक्तिपद की हालत खराब हो गई। फैक्टरी एक प्रान्त मे उठाकर दूसरे प्रान्त मे ले जाना क्या आसान बात है? इसमे तो कही आसान है फासी के फंदे पर लटककर जान गवा देना।

ठीक उसी समय कलकत्ता से सौम्यपद का ट्रककॉल आया।

बोला, "अंकल, एक बार यहां आइए, बहुत सारी बातें करनी है–"

मुक्तिपद बोले, "तुम्ही मेरे यहा चले आओ। मुझे बहुत काम है—"

सौम्यपद बोला, "फैक्टरी कलकत्ता शिफ्ट करके ले आइए—"

मुक्तिपद बोले, "तू क्या पागल हो गया है? वहा का लेबर ट्रबल कौन संभालेगा?"

सौम्यपद बोला, "अबकी लेबर-ट्रबल मैं सभालूगा।"

"तू सभालेगा? तू क्या पागल हो गया है?"

सौम्यपद ने कहा, "लेबर-ट्रबल के जो लोग सरगना हैं, उन्हें मैंने अपने बस मे कर लिया है—"

"ऐसी बात है? कैसे बस मे किया?"

"और कैसे! रुपया देकर।"

मुक्तिपद ने पूछा, "तुझे इतने रुपये कहा मिले?"

"सारी रकम विशाखा ने दी है—मेरी पत्नी विशाखा ने।"

"किन लोगो को बस मे कर लिया है?"

सौम्यपद ने कहा, "डी० ए० पी० को। जिन लोगों ने हमारी फैक्टरी में लेवर-ट्रवल की गड़वड़ी पैदा कर दी थी। वरदा घोषाल, गोपाल हाजरा, श्रीपति मिश्र सवों को वस में कर लिया है—"

"कितना रुपया देना पड़ा ?"

इस तरफ से सौम्यपद ने कहा, "लगभग अस्सी-नव्वे लाख रुपये खर्च करना पड़ा।"

"एक मुश्त देना पड़ा ?"

सौम्यपद ने कहा, "नहीं, एक मुश्त नहीं, किस्तों में—आप जल्दी चले आइए—"

उस छोर से मुक्तिपद ने कहा, "ठीक है, मैं कल ही रवाना हो रहा हूं। ग्रैण्ड होटल में फोन करने पर मैं मिल जाऊंगा। उन तीनों को मेरे होटल में बुलाकर ले आना। वहीं वातचीत होगी।···रख रहा हूं···"

यही है वेलुड़ के सैक्सवी मुखर्जी कंपनी की पुनर्स्थापना का संक्षिप्त इतिहास। इसी तरह शुरू हुई संदीप की महायात्रा।

सचमुच, यह संदीप की महायात्रा ही है। मुक्तिपद मुखर्जी कल्पना भी नहीं कर सके कि विशाखा ने अस्सी-नव्वे लाख रुपया कहां से दिया। सोचा था, विडन स्ट्रीट की संपत्ति के बंटवारे के समय विशाखा को जो रकम मिली थी उसी से विशाखा ने अस्सी-नव्वे लाख रुपया दिया है। उस रकम के सारे रुपये दलाल हमीद के पेट में चला गया है, मुक्तिपद को इसकी जानकारी कैसे हो सकती है ? कौन जानता ही है जो यह वात वताएगा ?

उसके वाद मुक्तिपद के होटल के कमरे में वाकई मीटिंग हुई थी। वह अत्यन्त गोपनीय मीटिंग थी। अखवारों के रिपोर्टरों को इस मीटिंग के वारे में जानकारी प्राप्त नहीं हो सकी। यहां तक कि सैक्सवी मुखर्जी के चीफ एकाउंटेन्ट को भी नहीं। उसी तरह का आदेश था श्रीपति मिश्र, वरदा घोषाल और गोपाल हाजरा का।

वहां सैक्सवी मुखर्जी कंपनी के मालिकों की तरफ से डी० ए० पी० के नेताओं को कितने रुपये दिए गए, किसी को इसकी भी जानकारी प्राप्त नहीं हो सकी। यहां तक कि नंदिता भी नहीं जान पाई कि कितने रुपये देकर यह मामला तय किया गया।

उस दिन पांच नंवर भुवन गांगुली लेन के मकान वापस आने में सौम्यपद को वहुत रात हो गई।

विशाखा और विजली वहुत देर से इन्तजार कर रही थीं। पूछा, "वापस आने में इतनी रात हो गई ? लगता है फिर व्हिस्की पीने वैठ गए थे ?"

सौम्यपद ने कहा, "नहीं, व्हिस्की पीने क्यों जाता ? व्हिस्की पीने से कहीं कॉन्फ्रेंस चल सकता है ?"

विशाखा ने पूछा, "सव कुछ तय हो गया ?"

"हां, सैक्सवी मुखर्जी कंपनी फिर से चालू होने जा रही है। डी० ए० पी० सह-मत हो गया है और हम लोग भी। अव कोई गड़वड़ी पैदा नहीं होगी। समझौता हो गया है।"

विजली भी खड़ी होकर सारी वात सुन रही थी। अव विशाखा का ध्यान उस तरफ गया। वोली, "तू खड़ी-खड़ी यहां क्या कर रही है ? अपने कमरे में चली जा।"

इसी तरह सूत्रपात हुआ। सैक्सवी मुखर्जी कंपनी धीरे-धीरे पुनः कलकत्ता लौट-कर चली आई। वाहर के किसी आदमी को पता नहीं चला कि उस दिन होटल के कमरे में क्या समझौता हुआ। जव फैक्टरी आहिस्ता-आहिस्ता चालू हालत में हो गई तो अखवार

के पन्ने पर छपा कि वेलुड की मैनमयी मुखर्जी कंपनी पुनः चालू हो गई है। इंदौर से फैक्टरी फिर से कलकत्ता वापस आ गई है। लेकिन क्यों वापस आ गई, किससे क्या समझौता हुआ, किसी को यह मालूम नहीं हो सका। फैक्टरी के ऑफिस में मुक्तिपद के चेंबर के दरवाजे पर पीतल के फलक पर फिर से लिखा गया मिस्टर एम० पी० मुखर्जी, मैनेजिंग डाइरेक्टर और उसके बगलवाले कमरे के दरवाजे पर पीतल के फलक पर लिखा गया मिस्टर एस० पी० मुखर्जी, डाइरेक्टर।

आम तौर पर विशाखा बिजली को घर में अकेली छोड़ कहीं नहीं जाती। क्योंकि विशाखा को बिजली से ही ज्यादा भय है। बाप के मरने के बाद से बिजली का सजना-संवरना और अधिक बढ़ गया है। बालों को करीने से बांध सुन्दरी होने की चेष्टा करती है। जब सौम्यपद फैक्टरी से घर आता है। उस समय उसके सजने-संवरने का तामझाम और बढ़ जाता है। मुंह में ज्यादा साबुन लगाती है। इस तरह सजती-संवरती है कि पूरे तौर पर आकर्षित कर सके।

विशाखा को यह अच्छा नहीं लगता। बहुत सालों तक इंतजार करने और बहुत त्याग करने के बाद पति को उसकी अपमृत्यु से बचाकर घर लाने में सक्षम हो सकी है। इतनी बड़ी साधना के धन को वह क्या पुनः अपमृत्यु के हाथ में सौंप देगी?

लेकिन बिजली का भी कोई गुनाह नहीं है। उसके मन में भी तो घर-संसार और संतान पाने की लालसा हो सकती है! उसके अन्दर भी तो पत्नी बनने की इच्छा हो सकती है, मां बनने की इच्छा हो सकती है।

और विशाखा?

विशाखा का अपने के नाम पर सौम्यपद के सिवा है ही कौन? सौम्यपद तो उसके अकेले का है। वहां वह भागीदारी का अधिकार किसी को क्यों देगी?

और संदीप?

संदीप अपने लिए कुछ भी नहीं चाहता। उसका भी कोई नहीं है। उसे अपने अन्दर ही एक व्यक्ति का संधान मिल गया है और वह उसी में सन्तुष्ट है। वह है सिर्फ एक तस्वीर। विशाखा की तस्वीर को दीवार पर टांग कर रखने पर ही वह सब कुछ पाने के आनन्द में विभोर है। उसके लिए अब कुछ चाहने या पाने के लिए नहीं रह गया है। कुछ न पाने के बावजूद वह सब कुछ पाने के आनन्द में डूबा हुआ है।

यही कारण है कि कोई सुयोग मिलते ही वह संदीप के पास भागी-भागी जाती है।

उस दिन ऑफिस जाने के दौरान सौम्यपद कह गया, "आज हम लोगों के डाइरेक्टर बोर्ड की मीटिंग है, देर रात से लौटूंगा। तुम अन्यथा न लेना।"

"वहां क्या कॉकटेल पार्टी है?"

सौम्यपद ने कहा, "नहीं-नहीं, तुम इतनी चिन्ता क्यों कर रही हो? तुम्हें तो मैंने वचन दिया है कि बगैर तुमसे पूछे किसी दावत में शरीक नहीं होऊंगा। इसके अलावा मुझे दोपहर में एक और जरूरी काम है।"

"वह कौन-सा ऐसा जरूरी काम है?"

सौम्यपद ने कहा, "बाबा ने एक रिवॉल्वर का लाइसेंस लेने को कहा है। बाबा ने भी एक लाइसेंस लिया है।

"रिवॉल्वर? यानी पिस्तौल?"

सौम्यपद ने कहा, "हां, कलकत्ता में आजकल पार्टी-पार्टी के बीच मर्डर हो रही

० ए० पी० यूनियन पर सभी बिगड़े हुए हैं—"

"क्यों ?"

सौम्यपद ने कहा, "यूनियनों की रस्साकशी के कारण सभी फैक्टरियां बन्द हो और सिर्फ हमारी फैक्टरी का ही उत्पादन बढ़ता जा रहा है। अब की हमारी ने नुकसान की पूर्ति कर दो करोड़ रुपये से अधिक का उत्पादन बढ़ाया है। इससे यूनियन के लीडरों को गुस्सा नहीं होगा ?"

विशाखा ने कहा, "इससे दूसरे यूनियन के लीडरों को गुस्सा क्यों होगा ?"

सौम्यपद ने कहा, "उनकी आमदनी की रकम घट जाती है तो उन्हें रंजिश होती इसीलिए मिस्टर हाजरा ने मुझे और चाचा को एक-एक रिवॉलवर का लाइसेंस लेने हा है। और उन लोगों ने खुद भी लिया है।"

विशाखा बोली, "तुम्हारी बात मेरी समझ में नहीं आ रही है। मुझे तो वैसी कोई ड़बड़ी नजर नहीं आ रही है—"

"तुम या हम देख नहीं पा रहे हैं मगर अन्दर ही अन्दर नक्सलवादियों की तरह एक और पार्टी बनाने की कोशिशें चल रही हैं। दुबारा पहले की ही तरह गड़बड़ी पैदा करने का माहौल तैयार किया जा रहा है। अचानक उसकी चिनगारी एक दिन भड़क उठेगी।"

विशाखा बोली, "पता नहीं क्या बात है ! खैर जो अच्छा समझो वही करो, मैं क्या कहूं ! अखबारों से वैसा कुछ आभास मालूम नहीं हो रहा है—

सौम्यपद ने कहा, "जब आंधी चलने को होती है तो वह क्या पहले से ही सूचना देकर आती है? मिस्टर हाजरा, मिस्टर घोषाल वगैरह पहले से अटकल लगा लेते हैं। उन लोगों को देश की अन्दरूनी खबरों की जानकारी रहती है—"

उसके बाद एकाएक कलाई घड़ी की ओर निगाह जाते ही सौम्यपद चौंक पड़ा। बोला, "चलता हूं, बात करते-करते बहुत देर हो गई। आज दिन-भर कार्य-व्यस्त रहना होगा। तुम्हें कहीं जाना है ? अगर ऐसी बात हो तो फिर कहो, गाड़ी भेज दूंगा।"

विशाखा ने कहा, "मुझे कहीं नहीं जाना है। अगर काम न रहे तो शाम के बाद गाड़ी भेज देना। बहुत दिनों से न्यू मार्केट जा नहीं सकी हूं। शाम को वहां आध घंटे के लिए जाकर कुछ खरीददारी कर सकती हूं।"

सौम्यपद के जाने के बाद विशाखा को ज़रा सुकून का अहसास हुआ। जब तक सौम्यपद घर पर रहता है विशाखा को चैन नहीं मिलता। कब बिजली सौम्यपद के कमरे में घुस जाएगी, इसका कोई ठिकाना नहीं। और सौम्यपद आदमी की दृष्टि से वैसा ह है। लड़की पर नजर पड़ते ही उसकी जीभ से राल टपकने लगती है— खास तौर से व लड़की यदि खूबसूरत और कमसिन हो। वह इसी स्वभाव को लेकर पैदा हुआ है। य उसकी बड़ी और प्रमुख कमजोरी है। यही करके उसने अपना सर्वनाश किया है अ विशाखा के जीवन में भी सर्वनाश ले आया है।

सौम्यपद ने ठीक शाम के समय ही गाड़ी भेज दी। शाम यानी चारों तरफ अं गहरा चुका था। अब तक संदीप बैंक से अवश्य ही घर लौट चुका होगा।

विशु ने कहा, "छोटे साहब ने दो घण्टे के लिए गाड़ी भेज दी है। आपको कहीं जाना हो तो जाने कहा है— उनकी मीटिंग खत्म होने में दो घण्टे का समय लग

विशाखा ने बिजली को पुकारा। बिजली उस समय रसोईघर में मंगला को रसोई के में मदद कर रही थी। बोली, "बिजली, मैं जरा बाहर निकल रही हूं, आध घण्टे मियान लौट आऊंगी—"

यह कहकर गाड़ी-ब्लाउज-मामा बदलकर गाड़ी में बैठ गई। बोली, "चलो, संदीप बाबू के घर।"

विशु इसके पहले वहां कई बार जा चुका है। पता उसे मालूम है। इसलिए उससे ज्यादा कुछ कहना नहीं पड़ा। विशु जब नेबूबागान की गली के मुहाने पर पहुंचा तो लोगों की वहां जबर्दस्त भीड़ थी। गाड़ी उसके अन्दर नहीं जा सकेगी।

सहसा यहां ऐसा क्या हुआ जो इतने लोगों की भीड़ इकट्ठी हो गई है!

विशु बोला, "अब भीतर घुसना मुश्किल है भाभी रानी।"

विशाखा भी उस भीड़ की ओर निहार रही थी। इसके पहले वह कितनी ही बार आ चुकी है, लेकिन इस तरह की भीड़ नहीं देखी थी। गाड़ी सीधे घर के सामने ही जाकर खड़ी होती थी।

कुछेक नौजवान विशाखा की गाड़ी के सामने आकर खड़े हो गए। बोले, "गाड़ी घुमा लो भाई, गाड़ी अन्दर नहीं जा सकेगी—"

विशु बोला, "मैं जाकर देख आऊं भाभी रानी, कि क्या हुआ है?"

विशाखा बोली, "नहीं, जरूरत नहीं है। लौट चलो। किसी दूसरे दिन आऊंगी, आज रहे ।"

[illegible] चुपचाप बैठी

[illegible] है। विशाखा पहले भी बहुत बार आ चुकी है। एकबारगी संदीप के घर के दरवाजे के सामने गाड़ी ले जाकर खड़ी करती थी।

लेकिन आज ऐसी कौन-सी वारदात हुई कि घर तक पहुंच नहीं सकी, गली के मोड़ पर ही खड़ा रहना पड़ा? गली की भीड़ जैसे और भी बढ़ रही है। आसपास के तमाम मकानों के आदमी झुककर बरामदे में भीड़ की वजह समझने की कोशिश कर रहे हैं। विशाखा गाड़ी के अन्दर चुपचाप बैठी थी, अधीर आग्रह के साथ। विशु लौटने में इतनी देर क्यों कर रहा है?

ठीक उसी समय विशु घबराया हुआ वापस आया। उस समय भी वह हांफ रहा था। उसके साथ रतन था।

रतन पर आंखें जाते ही विशाखा भय से आतंकित हो उठी। पूछा, "क्या हुआ है रतन? तुम लोगों के रास्ते में इतनी हलचल क्यों है?"

रतन ने अब रोना शुरू कर दिया है।

किसी तरह कहा, "मेरे मालिक को पकड़कर ले गए—"

"कौन पकड़कर ले गया?"

"पुलिसवाले।"

"क्यों?"

रतन ने कहा, "उनका कहना है कि मालिक ने बैंक के सब्बे साख रुपये का गबन किया है—"

"अयं, यह क्या कह रहे हो तुम!"

"रतन अब भी रोए जा रहा है। रोते-रोते उसका गला अवरुद्ध हो गया। विशाखा की हालत अभी पागल के मानिन्द है। बोली, "किसने कहा कि तुम्हारे मालिक ने बैंक के रुपये का गबन किया है?"

"हम लोगों के मकान-मालिक ने।"

"मकान-मालिक को कैसे मालूम हुआ?"

रतन ने कहा, "थाने से खबर लेकर आया है, पुलिसकर्मियों ने भी मकान-मालिक को बताया है। इसी वजह से मुझे मकान खाली कर देने कहा है। अब मैं क्या करूं? अभी कहां जाऊं? घर का असबाब छोड़कर कैसे जाऊं?"

विशाखा ने कहा, "तुम चिन्ता मत करो। मैं हूं ही। अन्ततः मकान-मालिक तुम्हें यदि मकान छोड़ देने कहे तो तुम मेरे मकान में रहना। तुम्हारे लिए चिन्ता की कोई बात नहीं।"

उसके बाद जरा सोचने के बाद बोली, "तुम्हारे मालिक के कमरे की दीवार पर मेरी जो तस्वीर टंगी हुई थी, उसे मुझे दे सकते हो? उसे मैं ले जाना चाहती हूं।"

रतन ने कहा, "नहीं, वह नहीं है—"

"नहीं है? क्यों?"

रतन ने कहा, "उसे जाते वक्त मालिक अपने साथ लेते गए।"

विशाखा बोली, "ठीक है, अभी मैं चलती हूं। तुम्हें कोई सूचना देने की जरूरत पड़ेगी तो मेरे घर पर चले आना। मैं तुम्हारा इन्तजार करती रहूंगी—"

यह कहकर अब रुकी नहीं। विशु से कहा, "विशु, अब घर चलो।"

विशु ने गाड़ी चालू कर दी। उसके बाद विशाखा का दिमाग उसके वश में नहीं रहा। उसका पूरा जेहन कठोर पत्थर में परिणत हो गया। गाड़ी किस रास्ते से कहां जा रही है, उसकी भी सुधबुध नहीं रही उसे। सम्पूर्ण शरीर—मन-मिजाज जैसे एक यन्त्र बनकर अपनी अभ्यस्त क्रिया करने लगे।

अपने जीवन का परिणाम कौन देखना चाहता है? किसके पास इतनी फुर्सत है? सभी वर्त्तमान को लेकर ही व्यस्त हैं। सिर्फ व्यस्त नहीं, परेशान भी हैं। जब हम ट्रेन पर चढ़ते हैं तो सिर्फ बाईं तरफ के स्टेशनों को देखकर आनन्द-विभोर हो उठते हैं, दाहिनी ओर के स्टेशनों की ओर आंख उठाकर भी नहीं देखते।

लेकिन बाईं तरफ तो सारा कुछ अंधेरे में डूबा हुआ है, कुहासे से लिपटा हुआ। कुछ भी नहीं देख सके। हमारा जन्म व्यर्थ हो गया। दाहिनी तरफ ही तो जीवन का उत्सव मनाया जा रहा है, वहीं तो हमारा आनन्द-यज्ञ अनुष्ठित हो रहा है। वहीं का तो हमें निमन्त्रण मिला है।

उस आनन्द-यज्ञ के आयोजन में हम शामिल नहीं हो सके। इसीलिए हम क्षुब्ध हैं, हताशा से ग्रस्त और दुखी हैं।

लेकिन यदि हम दाहिनी दिशा देख पाते?

यही वजह है कि संदीप के जीवन में हताशा नहीं है। उसने जन्म से ही जीवन की दाहिनी दिशा देखी है। वह जान गया है कि प्राप्ति में परमार्थ नहीं, देने में ही परमार्थ है। जो दे सकता है वह स्वयं को प्राप्त कर सकता है और स्वयं को दे भी सकता है। वह स्वयं को प्राप्त करता है और दूसरों को भी प्राप्त करता है। अपना-पराया उसके लिए एकाकार हो जाता है। उसे परमार्थ की प्राप्ति होती है।

संदीप उसी परमार्थ को पाने के लिए जीवन-भर लालायित था। इसीलिए वह काशी बाबू और मल्लिक चाचा को पसंद करता था। इसीलिए वह रामप्रसाद को पसन्द करता था।

रामप्रसाद का वह गीत उसे अब भी याद है:

मन, तू सोच रहा क्यों इतना
मातृहीन बालक के जैसा।

भव में आकर सोच रहे हो बैठे-बैठे
होकर भीत काल के भय से
अरे, काल का काल भी जो महाकाल है
वह मां के चरणों पर अवनत।

संदीप जब देलुह पहुंचा तो खासा तीसरे पहर का वक्त हो गया था। सूरज पश्चिम दिशा की ओर झुक गया था।

एकाएक कारखाने से एक विकट विलम्बित भोंपू की आवाज आई। यह भोंपू की पहली आवाज है। इसका मतलब यह कि अब इसके पांच मिनट बाद ही भोंपू एक बार फिर बजेगा। उस समय छुट्टी हो जाएगी। हाथ में दो झोले लिए संदीप गेट के सामने खड़ा हो गया।

सिर्फ पांच मिनट ही बाकी हैं। उसके बाद ही कारखाने का गेट खुल जाएगा। उसके बाद चींटियों की कतार की तरह लोगों के झुंड बाहर निकल आएंगे। उन लोगों के सामने खड़े होने में संदीप के लिए शर्म की कोई बात नहीं होगी। क्योंकि उसका चेहरा दाढ़ी-मूछों से भरा हुआ है। उसे देखकर कोई पहचान नहीं पाएगा कि वही किसी दिन नेशनल यूनियन के बड़ा बाजार ब्रांच का मैनेजर था। यह भी नहीं जान पाएगा कि बैंक के नब्बे लाख रुपये का गबन करने के अपराध में उसे आठ साल के सश्रम कारावास की सजा मिली थी। उसे देखकर कोई समझ नहीं पाएगा कि आज ही उसे जेल से रिहा किया गया है।

यह बात सच है, यह तो उसके शरीर पर लिखा हुआ नहीं है। आठ साल के अन्तराल में लोग यह बात भूल चुके होंगे। आठ साल का अरसा क्या कोई कम होता है? इन आठ बरसों के दौरान पृथ्वी के मानचित्र में कितने ही देशों के रंग में जो बदलाव आ गया है, उसका क्या किसी ने हिसाब रखा है? इन आठ बरसों के दरमियान कितने करोड़ आदमियों की मृत्यु और कितने करोड़ आदमियों के जन्म हुए हैं, इसका भी किसी ने हिसाब रखा है?

उस दिन की बात उसे याद आई। उसके जीवन का वह अविस्मरणीय दिन। जिस दिन वह अदालत में मुजरिम की हैसियत से कठघरे में खड़ा था।

अदालत में सरकारी वकील ने न्यायाधीश के सामने ही उससे जिरह किया था। पूछा था, "आप बैंक के मैनेजर होकर यह स्वीकार करते हैं कि आपने पब्लिक के द्वारा जमा किए गए नब्बे लाख रुपये का गबन किया है?"

संदीप ने कहा था, "हां, मैं स्वीकार करता हूं—"

सरकारी वकील ने पूछा, "आपने गबन क्यों किया था?"

संदीप ने कहा था, "रुपये के लिए मुझमें लोभ जग गया था।"

"लेकिन आपकी तो कोई घर-गृहस्थी नहीं है, आपके मां-बाप, भाई-बहन, पत्नी और बाल-बच्चे नहीं हैं, फिर आपको रुपयों के प्रति इतना लोभ क्यों हुआ?"

उस बात का संदीप ने कोई उत्तर नहीं दिया था। रुपया का लोभ क्या सिर्फ मां-बाप, भाई-बहन, पत्नी बाल-बच्चे रहने से ही होता है? आदमी तो दुनिया में सबकुछ पाना चाहता है, चाहे प्रयोजन रहे या न रहे। लोभ तो छः रिपुओं में से एक है।

"मेरी बात का उत्तर दीजिए।"

संदीप ने कहा था, "हिटलर का भी तो कोई नहीं था—मां-बाप, भाई-बहन, पत्नी और बाल-बच्चे नहीं थे, लेकिन इतनी बड़ी लड़ाई छेड़कर उसे उतने देशों को जीतने का लोभ क्यों हुआ था?"

इसके बाद स्टैंडिंग काउंसिल ने पूछा था, "अच्छा, एक और बात पूछता हूं,

बिलकुल सही-सही जवाब दीजिएगा।"

"कहिए!"

सरकारी वकील ने पूछा, "विशाखा देवी उर्फ अलका देवी को आप पहचानते हैं?"

संदीप ने कहा, "हां।"

"उस विशाखा देवी से आपका कौन-सा रिश्ता है?"

संदीप ने कहा, "किसी ज़माने में मैं बिडन स्ट्रीट के मुखर्जी बाबुओं के मकान में नौकरी करता था। वहीं विशाखा देवी से मेरा पहले-पहल परिचय हुआ था।"

"वह परिचय किस तरह का था?"

"विशाखा देवी की विधवा मां और उसकी देखरेख की जिम्मेदारी मुझे सौंपी गई थी।"

सरकारी वकील ने पूछा, "इसके लिए क्या आपको महावारी तनख्वाह मिलती थी?"

"हां।"

"कितनी तनख्वाह मिलती थी?"

"नकद पन्द्रह रुपये और उसके साथ रहने-खाने की सुविधा।"

"उसी काम के सिलसिले में आप दोनों एक-दूसरे को प्यार करने लगे थे? और सिर्फ इतना ही नहीं, आखिर में उसके साथ सात फेरे लगाकर आपने शादी की थी?"

उस समय पूरे न्यायालय-कक्ष में निस्तब्धता छाई हुई थी। एक पिन भी गिर पड़े तो उसकी आवाज़ सुनाई पड़ जाए, ऐसी निस्तब्धता। शुरू में इस प्रश्न से संदीप को जरा परेशानी महसूस हुई थी। उसके बाद साहस बटोर कर कहा था, "मैं इस प्रश्न का उत्तर नहीं दूंगा—"

वकील ने न्यायाधीश की ओर मुखातिब होकर कहा था, "मी लॉर्ड, देखिए, मुजरिम मेरे असली प्रश्न का उत्तर नहीं दे रहा है। मैं साबित करना चाहता हूं कि इस नब्बे लाख रुपए के गबन के मामले में और भी लोग जुड़े हुए हैं—"

इस पर न्यायाधीश ने संदीप की ओर देखते हुए पूछा था, "आप इस प्रश्न का उत्तर क्यों नहीं दे रहे हैं?"

संदीप ने कहा था, "मैं हुजूर से अदब के साथ अर्ज करना चाहता हूं कि मुझसे यह सवाल न करें। मैंने जान-सुनकर, स्वस्थ चित्त और सही दिमाग की हालत में इन रुपयों की चोरी की है। इसके लिए दुनिया का और कोई व्यक्ति अपराधी नहीं है। इसके लिए माननीय न्यायालय मुझे जो भी सजा देगा, मैं सहर्ष स्वीकार कर लूंगा। किसी के खिलाफ मुझे कोई शिकायत नहीं है। इस चोरी के लिए मुझे किसी ने नहीं उकसाया था, किसी ने उत्साहित नहीं किया था और कोई दूसरा व्यक्ति इस मामले से जुड़ा हुआ नहीं है।"

उस दिन अदालत में संदीप को आठ साल के सश्रम कारावास की सजा सुनाई गई, उस समय वह जिस तरह अविचल था, आज भी इस संबलहीन स्थिति में वैसा ही अविचल है। उस दिन उसका कुछ या कोई न रहने के बावजूद सब कुछ था, सभी थे, आज भी उसी प्रकार उसका सब कुछ, सभी हैं। अभी ही वह यथार्थ रूप में सबसे एकाकार हो सका है। जब तक उसके पास आश्रय था तब तक वह निराश्रय था। जब तक उसे माथे के ऊपर छत थी, उसके पैरों के नीचे ज़मीन नहीं थी। जब तक वह संसार में था तब तक वह संसारी नहीं था, जब वह सब कुछ त्यागकर वैरागी हो गया तो उसी समय जैसे उसने असली संसार प्राप्त किया। यह एक अजीब ही अहसास है। ज्ञान जब विश्व में अखण्ड

नियम की खोज करता है, जब मनुष्य पर्यवेक्षण करता है कि कार्य और कारण में कोई अन्तर नहीं है उस समय वह मुक्ति प्राप्त करता है—यह बात रवीन्द्रनाथ ठाकुर कह गए हैं। इन बातों को जब उसने काशी बाबू से सुना था उस समय उसका अर्थ उसकी समझ में नहीं आया था। इतने दिनों के बाद, आज वह बात उसके लिए जैसे सच बन गई है।

आदमी का झुंड चींटी की पंक्तियों की तरह कारखाने से छुट्टी के आनन्द में बाहर निकल रहे हैं। लेकिन वे नहीं जानते कि कल ही फिर नए सिरे से उनकी बंदियों जैसी हालत हो जाएगी। यही सिलसिला हमेशा ही चलता रहेगा।

लेकिन संदीप? संदीप अब हमेशा-हमेशा के लिए स्वतंत्र है। इस विश्व में उसकी स्वतंत्रता' फैली हुई है आकाश, वायु और नीले आकाश के तले। किसी को जवाब देही देने को वह जिम्मेदार नहीं है। कोई उसे अगर फांसी पर लटका दे तो आकाश, वायु और अनंत नीलिमा को ही फांसी देनी होगी। लेकिन यह सब किसी के लिए संभव नहीं है।

सभी के हाथ में कागज के एक-एक पैकेट हैं और वे खुशियों से फूले नहीं समा रहे हैं। संदीप को लगा, वे लोग अभाव में भी खुश हैं। कल वे पुनः काम की शृंखला में बन्दी हो जाएंगे, यह बात जैसे उन्हें याद ही न हो।

पास ही चाय की एक दुकान है। संदीप वहीं जाकर बैठ गया। जितने दिनों तक फैक्टरी बंद थी, यहां की सारी दुकानें बंद थीं। बहुत दिनों से दुकानदारों को भोजन नसीब नहीं हो रहा था, उसके चेहरे पर हंसी नहीं थी और वे बेरोजगार थे। औरतें जिस्म-फरोशी कर पेट भरती थीं, मर्द शहर जाकर फुटपाथ पर पकौड़े बेचकर पैसा कमाने की जी-जान से कोशिश करते थे। उसके बाद जब फैक्टरी खुल गई तो दुकानदार और-और लोगों के साथ अपने-अपने घर लौट आए।

"कुछ खाइएगा?"

संदीप को भूख नहीं लगी है। लेकिन सवेरे से चलते-चलते वह थक गया था। पूछा, "खाने की क्या चीज है?"

दुकानदार ने कहा, "फरकी है, पकौड़े हैं। बताशे और मुरकी है। आपको क्या चाहिए, बताइए।"

संदीप ने जो मांगा, दुकानदार ने वही दिया। उसके बाद कहा, "पानी लीजिए।"

संदीप ने खाते-खाते पूछा, "फैक्टरी कब खुली भाई।"

"यही आठेक साल हुए। बहुत दिनों तक कारखाना बंद था इसलिए बिक्री बिल-कुल ठप्प पड़ गई थी।"

संदीप ने पूछा, "इतने दिनों के बाद कारखाना फिर से चालू क्यों हो गया?"

"भगवान जाने! कारखाने के खुलते ही हम लोगों का भाग्य भी जग गया। सुना है, कारखाने का मालिक अब बिलकुल भला आदमी हो गया है, शराब पीना बन्द कर दिया है। बहुत दिनों तक जेलखाने में था न—"

"कारखाने का मालिक जेल में था? क्यों?"

दुकानदार ने कहा, "इसलिए कि अपनी घरवाली की हत्या कर दी थी।"

"हत्या क्यों की थी?"

"क्यों, आपको कुछ भी मालूम नहीं? मालिक का स्वभाव-चरित्र बहुत ही बुरा था। इसलिए मालिक की फिर दूसरी शादी हुई। यह औरत भली है। पति को मना-मना कर शराब के नशे से छुटकारा दिला दिया है। इसीलिए कारोबार में दत्तचित्त हो सका है। मालिक का चाचा कारखाना उठाकर इंदौर ले गया था। वे भी अब बेलुड़ लौट आए

हैं। इसीलिए कारखाना फिर से चालू हो गया और हजारों आदमी के सुदिन लौट आए—"

संदीप ने पूछा, "जो लोग कारखाने से लौट रहे हैं उनके हाथ में कागज का पैकेट क्यों है भाई? उसमें क्या है?"

दुकानदार ने कहा, "मिठाई।"

"मिठाई? मिठाई का पैकेट किसने दिया?"

दुकानदार ने कहा, "कारखाने के बड़े मालिक ने।"

"मिठाई के पैकेट सभी लोगों को दिए? हर रोज देते हैं क्या?"

"नहीं, आज पहली बार दिया है।"

संदीप ने पूछा, "क्यों दिया है?"

दुकानदार ने कहा, "खुशी की वजह से दिया। आज बड़े मालिक की लड़की की शादी है।"

"बड़े मालिक की लड़की की शादी है? बड़े मालिक कौन हैं?"

दुकानदार ने कहा, "यह लंबी दास्तान है।"

"बड़े मालिक का नाम क्या है?"

दुकानदार ने कहा, "नाम बताने से आप क्या पहचान लेंगे? बड़े मालिक का नाम है मुक्ति बाबू। असली नाम मुक्तिपद मुखोपाध्याय। उनकी लड़की का पुकारू नाम है पिकनिक।"

"पिकनिक! बड़ा ही अजीब-सा नाम है! ऐसा नाम तो शायद ही सुनने को मिलता है।"

दुकानदार ने कहा, "यह सब बात मैंने दूसरे से सुनी है। वह लड़की शादी के पहले घर से भाग गई थी।"

"भाग गई थी का मतलब? कहां भाग गई थी?" संदीप ने पूछा।

"विलायत। वह लड़की भी अजीब ही किस्म की है। बड़े आदमी की लड़की होने से जैसा कि हुआ करता है। छुटपन में मां से लाड़ पाकर नशा करना शुरू कर दिया था। बाप ने एक दिन डांटा-फटकारा तो भाग गई—"

"उसके बाद?"

दुकानदार के पास खबरों का खजाना है। उसी से पता चला कि मां-बाप से छिपाकर एक बड़े आदमी के लड़के के साथ नशे का सेवन करती थी। इंदौर चले जाने के बाद भी छिपकर कलकत्ता चली आती। उस समय मुक्तिपद बाबू चिन्ता में पड़ जाते। लड़की घर लौटकर न आए तो कौन ऐसे मां-बाप हैं जिन्हें चिन्ता नहीं होगी। ऐसे में थाने सूचना दर्ज कराई जाती और मुक्तिपद बाबू कलकत्ता, मद्रास, बम्बई सारी जगहों को छान मारते। हर जगह पुलिस के मुख्यालय में जाकर डायरी करते। फैक्टरी के काम में सुस्ती आ जाती। कारोबार ठप्प पड़ जाता।

आखिर में लंदन चले जाने की बात की जानकारी प्राप्त हुई। उनकी बेटी सरोज सरकार नामक एक लड़के के साथ घर-गृहस्थी बसाकर रह रही है। दो बाल-बच्चे भी हो चुके हैं।

इधर कलकत्ते की फैक्टरी चालू हो गई है और उधर लड़की की वैसी हालत। अकेला आदमी किस-किस तरफ नजर रखे। सौम्यपद पर भरोसा नहीं किया जा सकता है।

तब गोपाल हाजरा का ही भरोसा था।

गोपाल हाजरा ने कहा, "आप चले जाइए मिस्टर मुखर्जी। यहां कोई गड़बड़ी

नहीं होगी, मैं इसका वचन देता हूं—"

मिस्टर हाजरा ने वाकई अपने वादे को निभाया था। किसी तरह की गड़बड़ी नहीं हुई थी। डी० ए० पी० शुरू में ही शर्तनामे का पालन कर रहा है।

मुक्तिपद लंदन चले गए और दो दिन बाद ही रिकमिक और मरोब सरकार को उनके बाल-बच्चे के साथ बेलुड़ ले आए।

बोले, "तुम लोग एक साथ रह रहे हो, इसमें मुझे कोई आपत्ति नहीं है, लेकिन विधि-विधान के साथ शादी न करना अच्छा नहीं रहेगा। मैं अभी तुरन्त शादी का इंतजाम करूंगा—"

लड़के का बाप राजी हो गया। बोला, "हां, आप ठीक ही कह रहे हैं। तुम लोगों के लिए पारिवारिक शादी करना उचित था—"

दुकानदार को सारा कुछ मालूम है, ऐसा प्रतीत हुआ। बोला, "आज ही यह शादी हुई। इसी वजह से फैक्टरी के तमाम लोगों को एक-एक पैकेट मिठाई दी गई है।"

संदीप ने कहा, "तो फिर अब फैक्टरी में कोई गड़बड़ी नहीं चल रही है?"

दुकानदार ने कहा, 'नहीं अब गड़बड़ी नहीं है, इसी वजह से अब इस मुहल्ले के हम सभी दुकानदारों को कुछ पैसे कमाकर पेट भरने का मौका मिल रहा है। सुना है, अबकी फैक्टरी के माल का उत्पादन दो करोड़ से अधिक रुपए का हुआ है—"

सूर्य अब ढल चुका है। संदीप कीमत चुकाकर उठकर खड़ा हो गया। अब विलंब करने से काम नहीं चलेगा। उसे बहुत दूर जाना है। बाग बाजार क्या यहीं है!

दुकानदार ने पूछा, "आप कहां रहते हैं बाबूजी?"

संदीप ने कहा, "इसका मतलब?"

संदीप को यह सवाल अजीब जैसा लगा। तमाम लोगों के लिए रहने की जगह तो एक ही होती है। सभी एक ही जगह में रहते हैं। एक ही तो धरती है, एक ही तो जीवन है। यह नहीं, एक ही सूर्य और एक ही चन्द्रमा है। सभी आदमी का तो एक ही आश्रयस्थल है।

तो भी उसकी बात का जवाब देना पड़ा। जवाब न देना अच्छा नहीं रहेगा। बोला, "मैं यहीं का आदमी हूं। बहुत दिनों से यहां नहीं आया था, इसलिए देखने के खयाल से चला आया। क्यों, तुम यह बात पूछ क्यों रहे हो भाई?"

"इसलिए पूछ रहा हूं कि सुनने में आया है, एक व्यक्ति ने बैंक से नब्बे लाख रुपये की चोरी करके इन लोगों की कंपनी को दिया था। सुना है, उसका नाम कोई लाहिड़ी है। आपने सुना है? उसे आठ साल पहले जेल की सजा मिली थी—"

"हो सकता है, लेकिन मैं उसे नहीं पहचानता। उसने रुपया क्यों दिया था?"

दुकानदार ने कहा, "सुनने को तो बहुत कुछ मिला है मगर उन बातों पर विश्वास नहीं होता।"

संदीप ने कहा, "हां, यह हो सकता है। दुनिया में कितनी ही तरह के पागल हैं। यह भी शायद किसी पागल का कारनामा होगा। वह जो रुपया देगा, उसमें उसका कौन सा स्वार्थ है? स्वार्थ के अलावा दुनिया में कोई काम करता है?"

दुकानदार ने कहा, "हां, मेरा भी सोच यही है। स्वार्थ के अलावा कौन है जो कोई काम करता हो? निंदा करने वालों की तादाद ही ज्यादा होती है। कोई बंगाली किसी बंगाली की निन्दा किए बगैर नहीं रह सकता। दरअसल बंगाली ही बंगाली के सबसे बड़े दुश्मन होते हैं—"

दुकानदार अशिक्षित साधारण आदमी है। फिर भी बहुत तकलीफ उठाने के बाद ही इस तरह की बातें उसके मुंह से निकल रही हैं।

बैंक से उतने सारे रुपयों की चोरी की थी।

याद है। एक दिन अचानक इसी मकान में विशाखा आकर हाजिर हो गई थी। रतन ने बदस्तूर दरवाज़ा खोल दिया था और विशाखा पर नज़र पड़ते ही संदीप अचकचा उठा था।

संदीप ने कहा था, "तुम अचानक !"

विशाखा ने हंसते हुए कहा था, "अकेली नहीं हूं, मेरे साथ कौन है देखो—"

इस कथन के दौरान ही जो आदमी सामने की तरफ बढ़कर आया उसे देखकर संदीप अवाक् हो गया और तत्क्षण कुर्सी छोड़कर खड़ा हो गया।

बोला, "अरे आप हैं ! मेरे लिए कितने सौभाग्य की बात है, बैठिए-बैठिए—"

सौम्यपद ने कहा, "मुझे यही बुलाकर ले आई है—"

यह कहकर विशाखा की ओर उंगली से इशारा किया।

विशाखा तब तक एक कुर्सी पर बैठ चुकी थी। बोली, "हां, मैं ही बुलाकर ले आई हूं। कहा : चलो, संदीप के घर चलो। चलकर उस आदमी से मिल लेना जो इतने दिनों से मुझे रुपया देते आ रहा है।"

उसके बाद छोटे बाबू की ओर ताकती हुई बोली, "जानते हो, यह संदीप था, इसीलिए मैं इतने बरसों तक ज़िन्दा रह सकी। तुम जेलखाने में थे। घर-द्वार बेचने पर जितने भी रुपये मिले, हमीद के पेट में चले गए। उसके बाद जिन रुपयों से तुम लोगों की फैक्टरी चालू हुई, उसका सारा श्रेय संदीप को ही है।"

छोटे बाबू मुसकराए। देखकर लगा, यह कृतज्ञता की मुसकान है।

बोले, "मैंने सब कुछ सुना है।"

संदीप ने कहा, "मैंने बहुत दिनों तक आपका अन्न खाया है, इसीलिए···"

विशाखा ने कहा, "नहीं, यह कोई बड़ी बात नहीं है। हम लोगों के गर्दिश के दिनों में तुम न रहते तो क्या होता ! हज़ारों लोग बेरोज़गार थे, फैक्टरी बन्द। दूसरी ओर लेबर-ट्रबल। उस समय जब चारों तरफ अंधेरा ही अंधेरा दिख रहा था, तुम रुपया न देते तो क्या दशा होती !"

छोटे बाबू ने कहा, "हम लोगों को और भी कई लाख रुपयों की ज़रूरत है। रुपया दिए बगैर पार्टी के लीडरान नहीं हिलेंगे। वे लोग और भी रुपयों की मांग कर रहे हैं। मेरे चाचा भी रुपया देने को सहमत हो गए हैं। आपके बैंक से यदि और कुछ रुपये मिल जाएं तो बड़ा ही उपकार हो।"

संदीप ने कहा, "मैं यथासाध्य कोशिश करूंगा। जितनी भी जल्द हो सके मैं विशाखा को रुपया दे आऊंगा। आप लोग मुझे थोड़ा वक्त दीजिए।"

इस बीच रतन अपने मन से दो प्याली चाय बनाकर ले आया और मेज़ पर रख गया।

छोटे बाबू ने कहा, "चाय क्यों ले आया ?"

बात तो सही है। संदीप ने कहा, "नहीं-नहीं, चाय क्यों ले आए ? मैंने तो चाय बनाने नहीं कहा था। पीने की इच्छा न हो तो छोड़ दीजिए।"

विशाखा ने कहा, "नहीं; पिएंगे। व्यर्थ ही चाय बर्बाद क्यों कर दूं, पी लो—"

आश्चर्य ! छोटे बाबू ने विशाखा की बात सुनकर सचमुच ही चाय के घूंट लेना शुरू कर दिया। यह भी शायद एक तरह की कृतज्ञता की अभिव्यक्ति या भलमनसाहत है। आदमी जिससे उम्मीद करता है उसके दान को अस्वीकार करने का मतलब है, अपमानित करना।

संदीप ने कहा, "मैंने रतन से चाय बनाने नहीं कहा था, तो

आया—"

सौम्यपद ने कहा, "सो वनाने दीजिए। उस पर नाराज होने की ज़रूरत नहीं, चाय पीने में अच्छी ही लग रही है।"

विशाखा वोली, "हां, मुझे भी अच्छी लग रही है—"

संदीप ने कहा, "रुपये आप लोगों को कव चाहिए ?"

सौम्यपद ने कहा, "जितनी जल्दी मिल जाए, उतना ही अच्छा। महीने का आखिरी सप्ताह चल रहा है, सवको वेतन देना है, साथ ही प्रोडक्शन भी वढ़ाना है। इसके अलावा वरदा घोषाल और गोपाल हाजरा भी रुपये के लिए तकाजे कर रहे हैं।"

"उन लोगों को पहले भी तो रुपया दे चुके हैं। अव और चाहिए ?"

सौम्यपद वावू ने कहा, "जव तक फैक्टरी रहेगी, हमेशा उन्हें रुपया देना पड़ेगा। यही नियम है, वरना लेवर-ट्रवल शुरू हो जाएगा। फैक्टरी को चालू हालत में रखने के लिए सभी को रुपया देते रहना पड़ेगा। अव की रेलवे मिनिस्टर को पकड़ना है। रेलवे हम लोगों की एक वहुत वड़ी पार्टी है। जव आउटपुट वढ़ेगा तो कमीशन देना होगा। कमीशन न देंगे तो हमें कोई काम नहीं मिलेगा। इसके वाद जव इंस्पेक्टरों का जत्था माल का इंसपेक्शन करने आएगा उस समय उन्हें घूस देना पड़ेगा, नहीं तो माल 'पास' नहीं करेंगे। यही है सभी वेंगॉल की फैक्टरियों का हालचाल। इसके वाद पुलिस वाले हैं, उन्हें चन्दा देना पड़ेगा—"

संदीप ने पूछा, "अभी आपको कितने रुपयों की ज़रूरत है ?"

सौम्य वावू ने कहा, "अभी ढाई लाख रुपये देने से काम चल जाएगा।"

संदीप ने कहा, "ठीक है, कल-परसों के वीच ही मैं यह रकम जाकर पहुंचा आऊंगा।"

सौम्य वावू वोले, "ठीक है, मैं कल घर पर ही रहूंगा, आपका इंतज़ार करता रहूंगा। अभी चलता हूं। आज रात दस वजे तक मिस्टर हाजरा के आने की वात है।"

सौम्यपद वावू उठकर खड़े हो गए। विशाखा वोली, "जानते हो संदीप···"

यह कहकर सौम्य वावू की ओर देखा। वोला, "वह वात संदीप को वता दूं ?"

"कौन-सी वात ?"

"वही तुमने जो रिवॉलवर खरीदा है।"

यह कहकर संदीप की ओर मुखातिव होकर वोली, "जानते हो संदीप, मेरे चचिया ससुर और छोटे वावू दोनों ने एक-एक रिवॉलवर खरीदा है।"

"क्यों ?"

"मिस्टर हाजरा ने सलाह दी है। दूसरी पार्टी का यूनियन खून-खरावे पर उतर सकता है इसीलिए। कोई नहीं चाहता कि डी० ए० पी० पार्टी इतनी वड़ी वन जाए। अव आपस में ही झगड़ा छिड़ गया है। डी० ए० पी० पार्टी के वहुत सारे दुश्मन हो गए हैं।"

संदीप ने कहा, "रिवॉलवर लेना अच्छा ही हुआ है। आजकल चारों तरफ वात की वात में खून-खरावा हो रहा है। इस वक्त ज़रा सावधान रहना ही वेहतर है।"

विशाखा वोली, "लेकिन यदि कोई एक्सिडेण्ट हो जाए ?"

संदीप ने कहा, "एक्सिडेण्ट यदि होने को होगा तो वग़ैर रिवॉलवर के भी हो सकता है। आपने ठीक ही किया है छोटे वावू।"

विशाखा ने आपत्ति की, "अयं, तुम 'सपोर्ट' कर रहे हो ? यह सव चीज़ घर पर रखना उचित नहीं है।"

संदीप ने कहा, "गरीवों को वह सव चीज़ रखने की ज़रूरत नहीं है, लेकिन

आजकल तो पैसे वालों पर ही लोगों को गुस्सा रहता है। सुना है, हर मिनिस्टर, हर फिल्म स्टार के पास रिवॉलवर रहता है। रहने में कोई दोष नहीं है। एक प्रोटेक्शन रहना बेहतर है—"

सौम्यपद अब तक बातचीत सुन रहे थे। अब बोले, "अब नहीं बैठूंगा सदीप बाबू। चलता हूं। हो सकता है मिस्टर हाजरा आकर मेरे लिए बैठे हुए हों।"

इतनी देर तक सम्पूर्ण अतीत ही सदीप को जैसे ग्रसित किए हुए था। कहा गए वे दिन और कहा गई वे घटनाएं ! अतीत जैसे अब तक घुटनों के बल चलता हुआ उसकी तरफ बढ़ रहा था।

वही छोटे बाबू अब फिर से मैकनवी मुखर्जी कम्पनी के डिप्टी मैनेजिंग डाइरेक्टर बन गए हैं। अच्छा ही हुआ। लेकिन यह अच्छा नहीं है कि पालिटिक्स पार्टी को चन्दा देना होगा, पुलिस को चन्दा देना होगा, साथ ही साथ गुण्डों को भी चन्दा देना होगा। इतना चन्दा क्यों देना पड़ेगा ? उस चन्दे की बात इनकम टैक्स के खाते में तो दर्ज नहीं रहेगी।

मगर चन्दा दिए बगैर व्यवसाय भी नहीं चल सकता। यह जो सदीप ने सौम्य बाबू को इतने रुपये दिए हैं, उसका रेकार्ड तो कहीं नहीं है। यह सब बात कहीं लिखी हुई नहीं रहेगी। इनकम टैक्स ऑफिस यदि जानना चाहे कि यह सब रुपया कहा से आया तो क्या जवाब देगा ? लेकिन अगर रिश्वत दी जाएगी तो कोई कैफियत तलब नहीं करेगा। रुपया देने से ही सभी दोस्त और न देने से ही सभी शत्रु हो जाते हैं।

'तो क्या दुनिया में 'सुख' नामक शब्द क्या शब्दकोश की ही शोभा बढ़ाता रहेगा। यथार्थ की दुनिया में जीने से सुख क्या हासिल नहीं होगा ?

सदीप ने आठ वर्ष तक जेल में बैठे-बैठे सिर्फ यही बात सोचा है। सोचा है, कि क्या करने से आदमी सुखी हो सकता है। पुण्य करने से ही क्या सुख प्राप्त हो सकता है ? स्वयं ईश्वर का भी कोई बैंक है ? पुण्य क्या एक डिमांड ड्राफ्ट है कि उसे किसी भी बैंक में जमा करने से ईश्वर से आशीर्वाद मिलेगा ?

याद आ गई पाच नम्बर भुवन गागुली लेन के मकान की बात। वह मकान ज्यादा दूर नहीं है। सदीप ने आहिस्ता-आहिस्ता उसी ओर कदम बढ़ाए। सड़क पर लोगों की भीड़ बढ़ती जा रही है। अभी अदालत बन्द होने का वक्त है। वह चारों तरफ निगाह दौड़ाने लगा।

आठ साल के बाद पुन उस मुहल्ले में जा रहा है। याद आया, उन दिनों दीवार पर जो नारे लिखे रहते थे वे अब भी हैं। अन्तर बस इतना ही है कि ये कुछ धुधले हो गए हैं। लेकिन साफ-साफ पढ़े जा सकते हैं—

"हलदिया में जहाज-निर्माण का
कारखाना बनवाना होगा।"

एक दूसरी दीवार पर लिखा हुआ है—

"केन्द्रीय कल-कारखानों में केन्द्रीय पुलिस वाहिनी
रखना बन्द करो।"

एक और दीवार पर लिखा हुआ है—

"केन्द्र की आय का पचहत्तर प्रतिशत भाग
राज्य सरकार को देना होगा"

एक और दीवार पर लिखा हुआ है—

"खूनी सी० पी० एम० को
अब एक भी वोट नहीं दो"

और एक जगह लिखा हुआ है—

"डाइरेक्ट एक्शन पार्टी जिन्दाबाद"

संदीप उन पुराने नारों को देखकर अवाक् हो गया। इतने दिनों के बाद भी उन लिखावटों को किसी ने नहीं मिटाया है। अब भी वे नारे एक ही जगह में स्थिर हैं, एक ही शक्ल लिए। हालांकि कितने ही साल चुपचाप खिसककर चले गए। यहां के लोग क्या एक ही जगह स्थाणु की तरह खड़े हैं? इतने सालों के दरमियान इनमें कोई परिवर्तन नहीं आया? तो क्या जो लोग सत्ता को अपने शिकंजे में कसकर देश के शासन की कुर्सी पर बैठे हुए थे, वे अब भी बैठे हुए हैं?

आश्चर्य! संदीप आश्चर्यचकित हो गया देश का माहौल देखकर। ये लोग क्या कभी इंसान नहीं होंगे? अब भी क्या पॉलिटिक्स लेकर सब लोग उन्मत्त हैं?

संदीप को विशाखा और सौम्य बाबू से मिलने की इच्छा हुई। वे लोग कैसे हैं, यह जानने की भी इच्छा हुई। अपना सब कुछ खोकर जिनके जीवन को पुनः सुखी बनाने की उसे चाह थी वह सम्भव हो सका या नहीं, इसे भी देखने की उसे इच्छा हुई। अगर वे सुखी होंगे तो फिर उसे कोई दुख नहीं रह जाएगा। ऐसी स्थिति में वह समझेगा कि उसका ज़िन्दा रहना सार्थक हुआ है। उसका मनुष्य-जीवन सफल हुआ है।

मैंने कहा, "इसके बाद?"

अजय बाबू हर रोज संदीप के जीवन की थोड़ी बहुत कहानी कहते और कहानी के बाकी हिस्से को अगले दिनों के लिए रख लिया करते थे।

एक दिन मैंने पूछा, "इतनी सारी बात आपको हमीद साहब ने बताई है?"

अजय बाबू ने कहा, "हां। लेकिन एक दिन में नहीं कही थी। मैं हाईकोर्ट का एडवोकेट था और हमीद साहब गरीबी के रेखा के नीचे से उठकर बहुत बड़े दौलतमन्द हो गए थे। आदमी एक बार बड़ा आदमी बन जाता है तो अपने अतीत के दुष्कर्म की कहानी कहने में उसे संकोच का अनुभव नहीं होता। हमीद साहब कहते—मैं तब अकेले नहीं था, मेरे गिरोह में बहुत सारे आदमी थे। हम सबों का यही पेशा था। अभी अलबत्ता बड़ा आदमी बन गया हूं लेकिन उन दिनों हम लोगों के लिए उस रास्ते के अलावा और कोई रास्ता नहीं था। मेरे अब्बाजान का भी यही पेशा था। लेकिन अब्बा उन पैसों से बड़े आदमी नहीं हो सके थे। बड़ा आदमी बनने के बाद मैंने उस पेशे को छोड़ दिया। अब यह सब किसके लिए करूं? मेरे तीन बेटे हैं। तीनों लड़के ऊंचे ओहदे पर हैं और उन्हें खासी मोटी रकम तनख्वाह के तौर पर मिलती है। वे लोग मेरे अतीत के बारे में नहीं जानते। आप क्योंकि सौम्यपद के मामले से परिचित हैं इसलिए एकमात्र आपको ही सारा कुछ बता रहा हूं। इसके अलावा संदीप लाहिड़ी जब जेल की सजा काट रहे थे तो मैंने उन्हें भी देखा है। मैं उन्हें भी पहचानता हूं। मैंने उन्हें आखिरी घड़ी तक देखा है।"

"हमीद साहब ने क्या देखा है?"

अजय बाबू ने कहा, "उनका अन्त भी देखा है हमीद साहब ने—अन्त बड़ा ही दर्दनाक है—"

अजय बाबू बोले, "नेबू बागान लेन के मकान से संदीप साहिड़ी भुवन गांगुली लेन के विशाखा के मकान में गए।"

याद है, सदीप को अपने जीवन का यह एक मर्मभेदी निर्णय। उस दिन वह विशाखा से मिलने क्यों गया? दरअसल विशाखा से मुलाकात करना वैसी कोई महत्वपूर्ण बात नहीं थी। महत्वपूर्ण बात यह थी कि वह जानना चाहता था कि विशाखा सुखी हुई है या नहीं। यानी इतने दिनों तक वह जो जेल की सजा भुगतता रहा, वह सार्थक हुआ है या नहीं, यही देखना उसका मकसद था।

भुवन गांगुली लेन के मकान मे आठ साल पहले सदीप बहुत बार जा चुका है। सौम्य बाबू के रिहा होने के बाद भी बहुत बार गया है और सौम्य बाबू से गपशप किया है। सौम्य बाबू बहुत ही गम्भीर प्रकृति के हैं, फिर भी उन्होंने संदीप से बहुत अच्छा सलूक किया है। लेकिन यह सब बहुत पहले की बात है। उस समय संदीप की बहुत आवभगत करते थे।

यह क्या आज की बात है? उसके बाद आठ-नौ साल गुजर चुके हैं।

संदीप ने आहिस्ता-से दरवाजे की कुण्डी खटखटाई। इतने बरसों के दरमियान मकान में कोई रद्दोबदल नहीं हुआ है। विशाखा ने पुराना मकान ही खरीदा था। उसके बाद मकान में रंग-रोगन नहीं लगाया गया है। उस पर से होकर कितनी ही गरमियां, बरसातें और सरदियां गुजर चुकी हैं फिर भी मकान में कोई फेर-बदल या परिवर्तन नहीं हुआ।

कुंडी खटखटाने के बाद भी बहुत देर तक प्रतीक्षा करनी पड़ी। उसके बाद दरवाजा खुला।

संदीप ने मंगला को पहचान लिया।

सदीप ने कहा, "तुम मगला हो न?"

मंगला बोली, "हां। आज हमें कोयले की जरूरत नहीं है···"

संदीप ने कहा, "मैं कोयलावाला नहीं हूं। तुम मुझे पहचान नहीं पा रही हो?"

फिर भी मंगला पहचान नहीं सकी। लेकिन थोड़ी देर बाद ही उसकी चेतना वापस आ गई।

बोली, 'ओ दादा बाबू, आप हैं! शुरू मे मैं पहचान नहीं सकी। लेकिन आपका चेहरा यह कैसा हो गया है? जेल से कब रिहा हुए?"

सदीप ने कहा, "आज ही सवेरे।"

मगला बोली, "आइए-आइए, अन्दर आइए—"

"तुम्हारे मालिक घर मे हैं?"

सदीप इस बीच मकान के अन्दर कदम रख चुका है।

मगला बोली, "मालिक इस मकान में नहीं रहते हैं—"

यह सुनकर सदीप को आश्चर्य हुआ। बोला, "इस घर मे नहीं रहते? फिर कहां रहते हैं? तुम्हारी भाभी रानी क्या कर रही हैं?"

मगला बोली, "भाभी रानी बीमार हैं, कमरे मे लेटी हुई हैं। चलिए—"

यह कहकर बगल के कमरे मे ले जाते ही सदीप ने देखा, विशाखा बिस्तर पर अकेली लेटी हुई है। कमरे की खिड़कियां और दरवाजे बन्द हैं। चारों तरफ अंधेरा फैला हुआ है।

संदीप के पैरों की आहट सुनकर विशाखा ने आख उठाकर देखा। लेकिन जैसे पहचान नहीं सकी हो। पूछा, "कौन?"

सदीप बोला, "मैं हूं—"

एक ओर दीवार पर लिखा हुआ है—

"खूनी सी० पी० एम० को
अब एक भीवोट नहीं दो"

और एक जगह लिखा हुआ है—

"डाइरेक्ट एक्शन पार्टी ज़िन्दाबाद"

संदीप उन पुराने नारों को देखकर अवाक् हो गया। इतने दिनों के बाद भी उन लिखावटों को किसी ने नहीं मिटाया है। अब भी वे नारे एक ही जगह में स्थिर हैं, एक ही शक्ल लिए। हालांकि कितने ही साल चुपचाप खिसककर चले गए। यहां के लोग क्या एक ही जगह स्थाणु की तरह खड़े हैं? इतने सालों के दरमियान इनमें कोई परिवर्तन नहीं आया? तो क्या जो लोग सत्ता को अपने शिकंजे में कसकर देश के शासन की कुर्सी पर बैठे हुए थे, वे अब भी बैठे हुए हैं?

आश्चर्य! संदीप आश्चर्यचकित हो गया देश का माहौल देखकर। ये लोग क्या कभी इंसान नहीं होंगे? अब भी क्या पॉलिटिक्स लेकर सब लोग उन्मत्त हैं?

संदीप को विशाखा और सौम्य बाबू से मिलने की इच्छा हुई। वे लोग कैसे हैं, यह जानने की भी इच्छा हुई। अपना सब कुछ खोकर जिनके जीवन को पुनः सुखी बनाने की उसे चाह थी वह सम्भव हो सका या नहीं, इसे भी देखने की उसे इच्छा हुई। अगर वे सुखी होंगे तो फिर उसे कोई दुख नहीं रह जाएगा। ऐसी स्थिति में वह समझेगा कि उसका ज़िन्दा रहना सार्थक हुआ है। उसका मनुष्य-जीवन सफल हुआ है।

मैंने कहा, "इसके बाद?"

अजय बाबू हर रोज संदीप के जीवन की थोड़ी बहुत कहानी कहते और कहानी के बाकी हिस्से को अगले दिनों के लिए रख लिया करते थे।

एक दिन मैंने पूछा, "इतनी सारी बात आपको हमीद साहब ने बताई है?"

अजय बाबू ने कहा, "हां। लेकिन एक दिन में नहीं कही थी। मैं हाईकोर्ट का एडवोकेट था और हमीद साहब गरीबी के रेखा के नीचे से उठकर बहुत बड़े दौलतमन्द हो गए थे। आदमी एक बार बड़ा आदमी बन जाता है तो अपने अतीत के दुष्कर्म की कहानी कहने में उसे संकोच का अनुभव नहीं होता। हमीद साहब कहते—मैं तब अकेले नहीं था, मेरे गिरोह में बहुत सारे आदमी थे। हम सबों का यही पेशा था। अभी अलबत्ता बड़ा आदमी बन गया हूं लेकिन उन दिनों हम लोगों के लिए उस रास्ते के अलावा और कोई रास्ता नहीं था। मेरे अब्बाजान का भी यही पेशा था। लेकिन अब्बा उन पैसों से बड़े आदमी नहीं हो सके थे। बड़ा आदमी बनने के बाद मैंने उस पेशे को छोड़ दिया। अब यह सब किसके लिए करूं? मेरे तीन बेटे हैं। तीनों लड़के ऊंचे ओहदे पर हैं और उन्हें खासी मोटी रकम तनख्वाह के तौर पर मिलती है। वे लोग मेरे अतीत के बारे में नहीं जानते। आप क्योंकि सौम्यपद के मामले से परिचित हैं इसलिए एकमात्र आपको ही सारा कुछ बता रहा हूं। इसके अलावा संदीप लाहिड़ी जब जेल की सज़ा काट रहे थे तो मैंने उन्हें भी देखा है। मैं उन्हें भी पहचानता हूं। मैंने उन्हें आखिरी घड़ी तक देखा है।"

"हमीद साहब ने क्या देखा है?"

अजय बाबू ने कहा, "उनका अन्त भी देखा है हमीद साहब ने—अन्त बड़ा ही दर्दनाक है—"

अजय बाबू बोले, "नेबू बागान लेन के मकान से संदीप सीधे ही भुवन गांगुली लेन के विशाखा के मकान में गए।"

याद है, संदीप को अपने जीवन का वह एक मर्मवेधी निर्णय। उस दिन वह विशाखा से मिलने क्यों गया? दरअसल विशाखा से मुलाकात करना वैसी कोई महत्त्वपूर्ण बात नहीं थी। महत्त्वपूर्ण बात यह थी कि वह जानना चाहता था कि विशाखा सुखी हुई है या नहीं। यानी इतने दिनों तक वह जो जेल की सजा भुगतता रहा, वह सार्थक हुआ है या नहीं, यही देखना उसका मकसद था।

भुवन गांगुली लेन के मकान में आठ साल पहले संदीप बहुत बार जा चुका है। सौम्य बाबू के रिहा होने के बाद भी बहुत बार गया है और सौम्य बाबू से गपशप किया है। सौम्य बाबू बहुत ही गम्भीर प्रकृति के हैं, फिर भी उन्होंने संदीप से बहुत अच्छा सलूक किया है। लेकिन यह सब बहुत पहले की बात है। उस समय संदीप की बहुत आवभगत करते थे।

यह क्या आज की बात है? उसके बाद आठ-नौ साल गुजर चुके हैं।

संदीप ने आहिस्ता-से दरवाजे की कुण्डी खटखटाई। इतने बरसों के दरमियान मकान में कोई रद्दोबदल नहीं हुआ है। विशाखा ने पुराना मकान ही खरीदा था। उसके बाद मकान में रंग-रोगन नहीं लगाया गया है। उस पर से होकर कितनी ही गरमियां, बरसातें और सरदियां गुजर चुकी हैं फिर भी मकान में कोई फेर-बदल या परिवर्तन नहीं हुआ।

कुंडी खटखटाने के बाद भी बहुत देर तक प्रतीक्षा करनी पड़ी। उसके बाद दरवाजा खुला।

संदीप ने मंगला को पहचान लिया।

संदीप ने कहा, "तुम मंगला हो न?"

मंगला बोली, "हां। आज हमें कोयले की जरूरत नहीं है..."

संदीप ने कहा, "मैं कोयलावाला नहीं हूं। तुम मुझे पहचान नहीं पा रही हो?"

फिर भी मंगला पहचान नहीं सकी। लेकिन थोड़ी देर बाद ही उसकी चेतना वापस आ गई।

बोली, "ओ दादा बाबू, आप हैं! शुरू में मैं पहचान नहीं सकी। लेकिन आपका चेहरा यह कैसा हो गया है? जेल से कब रिहा हुए?"

संदीप ने कहा, "आज ही सवेरे।"

मंगला बोली, "आइए-आइए, अन्दर आइए—"

"तुम्हारे मालिक घर में हैं?"

संदीप इस बीच मकान के अन्दर कदम रख चुका है।

मंगला बोली, "मालिक इस मकान में नहीं रहते हैं—"

यह सुनकर संदीप को आश्चर्य हुआ। बोला, "इस घर में नहीं रहते? फिर कहां रहते हैं? तुम्हारी भाभी रानी क्या कर रही हैं?"

मंगला बोली, "भाभी रानी बीमार हैं, कमरे में लेटी हुई हैं। चलिए—"

यह कहकर बगल के कमरे में ले जाते ही संदीप ने देखा, विशाखा बिस्तर पर अकेली लेटी हुई है। कमरे की खिड़कियां और दरवाजे बन्द हैं। चारों तरफ अंधेरा फैला हुआ है।

संदीप के पैरों की आहट सुनकर विशाखा ने आंख उठाकर देखा। लेकिन जैसे पहचान नहीं सकी हो। पूछा, "कौन?"

संदीप बोला, "मैं हूं—"

"मैं कौन ?"

संदीप ने कहा, "मैं संदीप हूं। तुम्हें क्या हुआ है ?"

संदीप का नाम सुनते ही विशाखा समझ नहीं सकी कि वह क्या करे। बिस्तर से किसी तरह उठने की कोशिश करने लगी।

बोली, "तुम्हें जेल से कब छुटकारा मिला ?"

"आज ही सवेरे। लेकिन तुम्हारा चेहरा-मोहरा ऐसा क्यों हो गया है विशाखा ? सुना, छोटे बाबू अब इस घर में नहीं रहते हैं। वे कहां हैं ?"

इतने सारे प्रश्नों का क्या उत्तर दे यह समझ न पाने के कारण विशाखा को रो देने की इच्छा हुई। मुंह से एक भी शब्द बोल नहीं सकी।

संदीप ने कहा, "तुम बोल क्यों नहीं रही हो ? क्या हुआ है ? तुम्हें बुखार है ? लेटी रहो। मैं बाद में आऊंगा, अभी चल रहा हूं—"

"नहीं-नहीं, तुम चले मत जाना। तुम इतने सालों के बाद आए हो। तुमसे मुझे बहुत सारी बातें कहनी हैं। बैठो, इस कुर्सी पर बैठ जाओ—"

संदीप ने कहा, "मेरे लिए तुम्हें चिंता नहीं करनी है। तुमसे मिलने के खयाल से ही मैं तुम्हारे घर पर आया हूं। तुम क्या बीमार हो ? डाक्टर से दिखाया है ?"

विशाखा ने कहा, "डाक्टर को दिखाकर क्या होगा। अब मैं ज़िन्दा नहीं रहना चाहती। अब मेरे लिए मर जाना ही बेहतर है। तुमने हम लोगों को इतने रुपये क्यों दिए ? रुपया देने के कारण ही तुम्हें आठ साल जेल की सज़ा भुगतनी पड़ी। उन रुपयों से मेरा कोई उपकार नहीं हुआ। इससे बेहतर तो यही था कि तुम इतने रुपये नहीं देते। तुमने इतने सारे रुपये क्यों दिए ? इससे किसका कौन-सा फायदा हुआ ? व्यर्थ ही तुम्हें जेल की सज़ा भुगतनी पड़ी—

संदीप ने कहा, "मेरी बात छोड़ो, अपनी बताओ—"

विशाखा बोली, "अपनी और क्या बताऊं। मैं तो मरने जा रही हूं—पिछले जन्म में शायद बहुत पुण्य किया था, इसलिए आज तुमसे भेंट हो गई—"

संदीप ने कहा, "बार-बार मरने की बात क्यों कर रही हो ? क्या हुआ है, यही बताओ। सच-सच बताओ, कि तुम लोगों के बीच कौन-सा वाकया हुआ है ? मैं तुम्हारे यहां आने के पहले तुम लोगों के बेलुड़ के कारखाने में गया था। वहां जाने पर देखा, फैक्टरी ठीक हालत में चल रही है। मुक्तिपद बाबू की लड़की की शादी हुई है और फैक्टरी के स्टाफ को मिठाई बांटी गई है। मैंने सोचा था, तुम भी सुख से हो। यही देखने तुम लोगों के घर पर आया। मगर तुम्हारी ऐसी हालत क्यों हो गई ? इसकी तो मैंने कल्पना भी नहीं की थी।"

विशाखा बोली, "यह मेरे भाग्य का ही दोष है संदीप। हां, सारा दोष मेरे भाग्य का ही है। मेरी ददिया सास के गुरुदेव ने मेरा 'विशाखा' नाम बदलकर 'अलका' रखना चाहा था। उनके कथानुसार नाम नहीं बदला गया—बदला जाता तो हो सकता था, मेरी यह हालत नहीं हुई होती—"

यह कहकर चादर से मुंह ढंककर सिसकने लगी।

संदीप ने विशाखा के सामने जाकर चादर को आहिस्ता से उसके मुंह पर से हटा दिया और कहा, "छि, रोना नहीं चाहिए। जो लोग बेवकूफ होते हैं, वे ही रोते हैं। रोओ मत, मैं तो हूं ही। मैं तुम्हें सुखी बनाकर छोड़ूंगा। बताओ, तुम्हें क्या हुआ है ? छोटे बाबू तुम्हें इस हालत में छोड़कर क्यों चले गए ? कहां चले गए ?…"

विशाखा के रोने का आवेग तब भी कम नहीं हुआ था। बोली, "कमीनी के चलते—"

"कमीनी ? वह कमीनी कौन है ?"

"वही बिजली। तुम तो जानते ही हो कि वह कौन है। उसी बिजली ने छोटे बाबू पर जादू-टोना कर दिया है—"

"मतलब ?"

विशाखा ने कहा, "मेरे हाथ से छोटे बाबू को छीन लिया है—"

"छीन लिया है ?"

"हां, छीन लिया है संदीप, छीन लिया है। तुम्हें तो छोटे बाबू के नशे की बात मालूम है। नशा करने को मिले तो छोटे बाबू को और कुछ नहीं चाहिए।

संदीप ने कहा, "नशा ? किस चीज का नशा ? शराब ? तुम शराब के बारे में कह रही हो ?"

विशाखा बोली, "सिर्फ शराब ही क्यों, हर तरह का नशा। तुम तो जानते ही हो संदीप कि मैं हर वक्त छोटे बाबू को सम्भाले रखती थी। मैंने बहुत दिनों तक छोटे बाबू को बगैर शराब पिलाए भी रखा था। उस समय देखने को मिला था कि उनकी सेहत काफी अच्छी होती जा रही है, लेकिन सब गुड़ गोबर कर दिया उस चुड़ैल ने। चाचा ने उसकी शादी तक नहीं की। उसी ने लील लिया छोटे बाबू को—"

"कैसे ?"

विशाखा ने कहा, "चाचा ने अपने जीवन-काल में ही उसे उकसाना शुरू कर दिया था। आखिर में जब चाचा मर गया तो वह बिलकुल छुट्टा हो गई। मैं थोड़ी देर के लिए भी कहीं बाहर जाती तो बिजली छोटे बाबू के कमरे में घुस जाती। उसके बाद जब लौट-कर आती तो देखती, दोनों पलंग पर लिपटकर लेटे हुए हैं…"

"उसके बाद ?"

विशाखा बोली "उसके बाद और क्या ! रोना-धोना… केवल रोना-धोना… आखिर में उसे एक दिन घर से बाहर निकाल सदर दरवाजे की सिटकनी बन्द कर दी। उसके बाद बाहर मुहल्ले-भर में कुहराम मचाकर रोना-धोना शुरू कर दिया…"

"उसके बाद क्या हुआ ? छोटे बाबू कुछ कहते नहीं थे ?"

विशाखा बोली, "उस समय छोटे बाबू का मन और मिजाज कुछ और ही तरह का हो गया। एक दिन छोटे बाबू रिवॉलवर उठाकर मेरा खून करने आए। इस पर मैंने दरवाज़ा खोल दिया। मुहल्ले में भी उस समय कुहराम मच गया। लोग बाग दल बांधकर निन्दा-शिकायत करने लगे, भले लोगों के मुहल्ले में यह सब घटिया किस्म की हरकत नहीं चलेगी—"

"तुमने क्या किया ?"

विशाखा बोली, "मैं औरत ठहरी, क्या कर सकती थी ? बीच-बीच में घर में ढेले फेंके जाने लगे। सड़क पर जाने के दौरान बहुत सारे लोग छोटे बाबू के नाम गाली बकने लगे।"

"उसके बाद ?"

विशाखा ने कहा, "उसके बाद छोटे बाबू एक दिन मकान छोड़ दूसरे मुहल्ले में चले गए। उसके बाद से मैं इस घर में अकेली पड़ी हुई हूं। मेरी देख-भाल करनेवाला कोई नहीं है।"

"छोटे बाबू तुम्हें छोड़कर कहां चले गए ?"

विशाखा बोली, "पार्क स्ट्रीट—"

"पार्क स्ट्रीट ? वहां क्या मकान खरीदा है ?"

"हां।"
"मकान का नम्बर क्या है ? पता क्या है ?"

यह भी एक विचित्र कहानी है। सैक्सबी मुखर्जी कम्पनी का उत्पादन अब शुरू हो गया है। चारों तरफ से ऑर्डर मिल रहे हैं। माल खरीदने के पहले इंस्पेक्टरों का जत्था माल की जांच करने के वास्ते आता। उसके द्वारा पास कर देने के पहले उन्हें कमीशन या रिश्वत जो भी कहा जाए, देना पड़ता है। उनके रहने-खाने के मद में भी काफी खर्च होता है।

मालिक-पक्ष को इस सम्बन्ध में कोई आपत्ति नहीं है। मिस्टर मुखर्जी इन सब मामलों में खुले हाथ खर्च करते हैं। इसके पहले देवीपद मुखर्जी ने भी घूस दिया है। फिलहाल मुक्तिपद मुखर्जी भी घूस दे रहे हैं। जितना भी घूस दिया जाएगा आर्डर भी उतना ही बढ़ेगा।

लेकिन हां, एक और खर्च बढ़ गया है। वह है यूनियन का उत्पात। पहले वह इस मात्रा में नहीं था। अब लेबर ट्रबल से बचने के लिए पार्टी-लीडरों को भी कमीशन देना होगा। पहले गोपाल हाजरा नहीं था। अब उन लोगों का रौब-दाब संभालने के लिए रुपया खर्च करना होगा। जितने दिन बीतते जा रहे हैं उन लोगों के पीछे खर्च की तालिका लंबी होती जा रही है।

सो हो, गोपाल हाजरा वगैरह की अर्थ-लिप्सा, इंस्पेक्टरों की अर्थ-लिप्सा बढ़ने पर भी घाटा नहीं है। माल की कीमत बढ़ा देने से ही लाभ की संख्या बढ़ जाएगी। इसके लिए मालिकों को परवाह नहीं है। पब्लिक को यदि कष्ट हो तो हमारी कोई क्षति नहीं है। हम लोगों का पॉकेट भरा हुआ होना चाहिए।

गोपाल हाजरा भी यही बात कहता है, "माल की कीमत बढ़ा दीजिए मिस्टर मुखर्जी। रुपया तो देगी गवर्नमेण्ट। आप इतना सोच क्यों रहे हैं। गवर्नमेण्ट कोई अपने पॉकेट से रुपया नहीं दे रही है। रेलवे टिकट की कीमत बढ़ाकर सारे घाटे की पूर्ति कर लेगी। मरेगी तो पब्लिक ही। पब्लिक को कोई अक्ल तो है नहीं, उन्हें रेलगाड़ी पर चढ़ना ही होगा। पहले जिस स्टेशन का रेलवे किराया तीन रुपया था अब उसी का किराया हो गया है ग्यारह रुपया। इससे भी क्या रेल के टिकटों की बिक्री में कोई कमी आई है ? आजकल तो सभी चीजों की कीमत बढ़ती जा रही है। ऐसे स्थिति में रेल का किराया बढ़ने में ही दोष है ? देखिए, व्हिस्की की कीमत और बढ़कर कितनी हो गई। इससे क्या व्हिस्की की खपत में कोई कमी आई है ? आपने क्या व्हिस्की पीने की मात्रा कम कर दी है ? किसीने कमी नहीं की है। व्हिस्की की कीमत चाहे जितनी भी बढ़ जाए हम में से कोई व्हिस्की पीने की मात्रा कम नहीं करेगा—न ही व्हिस्की पीना बन्द करेगा।"

इस बातचीत के दौरान ही एक दिन मकान की खिड़की पर एक ढेला आकर गिरा। ढेला गिरने की आवाज सुनकर गोपाल हाजरा चौंक पड़ा।

"यह किस चीज की आवाज है ?
सौम्यपद ने कहा, "इसी तरह बीच-बीच में कोई ढेला फेंकता है—"
गोपाल हाजरा ने पूछा, "कौन फेंकता है ?"
सौम्यपद ने कहा, "कौन फेंकता है, मालूम नहीं। यह घटिया किस्म के लोगों का मुहल्ला है, इसलिए यहां रहने पर बीच-बीच में यह सब बरदाश्त करना पड़ता है।"

"आप बरदाश्त क्यों करते हैं ? मुहल्ले के ओ० सी० के पास सूचना भेज सकते हैं—"

"सूचना दी है, डायरी भी की है। लेकिन पुलिस किसी को पकड़ने में कामयाब

नहीं हो सकी है।"

मोशान हाजरा बोला, "तो फिर मुहल्ला छोड़ दीजिए। आप इस कम्पनी के डाइरेक्टर बोर्ड के वाइस प्रेसिडेंट हैं। आप ऐसे मुहल्ले में क्यों रहते हैं? इससे तो नौजवान आपकी नौकरी के लिए तंग कर मारेंगे। कभी भी गोली चला देंगे। कैसे आप इस मुहल्ले में रह सकते हैं। ऐसा कर सकते हैं?"

सौम्यपद बोला, "हम लोगों का घर तो रेनर स्ट्रीट में था, लेकिन वह बिक गया है—"

"तो फिर पार्क स्ट्रीट में मकान खरीदिए। मैं आपके लिए पार्क स्ट्रीट में मकान का इन्तजाम करा दूंगा। बोलिए, खरीदिएगा?"

सौम्यपद बोला, "हां, खरीद सकता हूं—"

मोशान हाजरा बोला, "ठीक है, मैं आज से ही पार्क स्ट्रीट में मकान खोजना शुरू कर दूंगा।"

बस, ऐसे ही हुआ सूत्रपात। इसके बाद ही डाइरेक्टर-बोर्ड की स्पेशल मीटिंग हुई। डाइरेक्टर बोर्ड के सभी सदस्य आकर इकट्ठे हुए। बहसबाजी का दौर चला। मैनेजिंग डाइरेक्टर बोर्ड के प्रेसिडेंट हैं मिस्टर एन० पी० मुखर्जी। उन्होंने मीटिंग में प्रस्ताव पेश किया कि वाइस प्रेसिडेंट मिस्टर एस० पी० मुखर्जी के लिए पार्क स्ट्रीट में चालीस लाख रुपये में एक मकान खरीदा जाए। क्योंकि उनके मौजूदा रेनर स्ट्रीट के मकान में जगह की कमी है। इसके चलते कंपनी के काम में असुविधा हो रही है। कंपनी की भलाई के निमित्त उनके लिए नया मकान खरीदने में चालीस लाख रुपया खर्च होगा। उसके साथ फर्नीचर का खर्च अलग से।

प्रस्ताव बात की बात में पास हो गया।

उसके बाद?

उसके बाद कहीं से लोगों का एक दल आया और उसने सरो-सामान हटाना शुरू कर दिया। जहां का पलंग था, वह वहीं रह गया। मेज, कुर्सी, टेबल आदि किसी चीज को उन लोगों ने नहीं छुआ। सिर्फ ले गए फाइलों के बंडल और आवश्यक कागज-पत्तर।

विशाखा ने पूछा, "तुम लोग यह सब कहां ले जा रहे हो?"

उन लोगों ने कहा, "साहब का हुक्म···"

"साहब ने क्या हुक्म दिया है?"

उन लोगों ने कहा, "कागज-पत्तर और फाइलों के बंडल ले जाने का हमें हुक्म मिला है।"

"कहां ले जाओगे?"

उन लोगों ने कहा, "साहब के नए मकान में—"

"नया मकान? नया मकान कहां है?"

"हमें यह मालूम नहीं मेम साहब।"

बाहर टेम्पो खड़ा था। उसी के अन्दर सारा कुछ लाद दिया। उसके बाद सब लोग चले गए। मंगला मुंह बाए सब कुछ देख रही थी। विशाखा की भी वही स्थिति थी। सबके चेहरे पर विस्मय, कुतूहल और प्रश्न टंगे थे।

विशाखा ने फौरन ऑफिस फोन किया। टेलीफोन से वाइस प्रेसिडेंट से बातें करने की इच्छा प्रकट की।

ऑपरेटर ने बदस्तूर अपने कर्तव्य का पालन किया। लेकिन कर्तव्य का पालन करने से क्या होगा! वाइस प्रेसिडेंट के कमरे में कोई उत्तर नहीं मिला। बोला, "आप

कौन बोल रही हैं ?"

विशाखा ने कहा, "मैं मिसेज मुखर्जी हूं—"

ऑपरेटर ने कहा, "वे ऑफिस में नहीं हैं, कहीं बाहर निकले हुए हैं।"

विशाखा फोन रख बिस्तर पर औंधे मुंह लेट गई। उस समय जो लेटी तो फिर उठने का नाम नहीं लिया। मंगला ने आकर पुकारा, "भाभी रानी—"

बिजली ने भी बगल में आकर पुकारा, "ओ विशाखा दी, विशाखा दी, उठो-उठो—"

उसके बाद रात हो गई। घड़ी ने नौ बजने की सूचना दी। उसके बाद दस, उसके बाद ग्यारह बजने की। तो भी सौम्यपद घर लौटकर नहीं आया।

दिन या रात किसी के लिए रुकी नहीं रहती। इसलिए रात भी ठिठककर खड़ी नहीं रही। उसके बाद रात गहरा गई। मंगला और बिजली ने बगल में बैठकर पूरी रात गुज़ार दी।

लेकिन रात बीतने के बाद भी सौम्यपद नहीं लौटा।

उसके बाद फिर दिन का आगमन हुआ। पूरब के आसमान में पुनः सूर्योदय हुआ। लेकिन उस दिन भी सौम्यपद घर नहीं आया। घर पर खाने-पीने का दौर नहीं चला। रातोंरात यह मकान जैसे मरघट में परिणत हो गया।

आहिस्ता-आहिस्ता सब कुछ क्रमशः स्वाभाविक होता जा रहा था। हो सकता है, कुछ दिनों तक यही सिलसिला चलता रहता। विशाखा ने उसके दूसरे ही दिन दुबारा ऑफिस में फोन किया। लेकिन फोन घनघनाया तक नहीं। फिर फोन किया मगर इस पर भी कोई उत्तर नहीं मिला।

उसके बाद एक दिन सदर दरवाज़े की कुण्डी खटखटाने की आवाज़ हुई।

मंगला ने दरवाज़ा खोलते हुए पूछा, "कौन ?"

जो लोग आए थे उन्होंने कहा, "हम टेलीफोन ऑफिस से आ रहे हैं। हमें लाइन काटने का हुक्म मिला है।"

"हुक्म किसने दिया है ?"

उन लोगों ने कहा, "ऑफिस—"

अन्ततः वे टेलीफोन का तार काटकर चले गए। साथ ही रिसीवर भी ले गए। उस समय न गाड़ी रही, न टेलीफोन। संपर्क का सारा सूत्र कट गया। सौम्यपद से विशाखा का सारा संबंध छिन्न-भिन्न हो गया।

उसके बाद एक दिन एक और भी अजीब कांड हुआ।

अचानक बिजली एक दिन लापता हो गई। बिजली रात में कब भागकर चली गई किसी को इसकी आहट भी नहीं मिली।

विशाखा ने पूछा, "तेरी दीदी रानी कहां चली गई ?"

मंगला बोली, "सवेरे से बिजली दीदी रानी पर नज़र नहीं पड़ रही है—"

"फिर क्या हुआ ? कहां चली गई ?"

"बिजली कहां चली गई, दोनों में से किसी को यह मालूम नहीं हो सका। उसके बाद एक दिन अचानक एक आदमी आया और पांच सौ रुपया दे गया।"

"किसने रुपया भेजा है ?"

उस आदमी ने कहा, "छोटे साहब ने।"

"कहां के छोटे साहब ने ?"

"ऑफिस के छोटे साहब ने ?"

"छोटे साहब कहां रहते हैं ?"

यह बात वह नहीं जानता।

एक दिन जीवन से हताश होकर विशाखा मंगला को अपने साथ ले छोटे बाबू के वेलुड़ ऑफिस गई। विशाल कारखाना। विशाखा इस कारखाने में कभी नहीं आई थी। गेट के पास जाकर एक दरबान से अन्दर जाने की अनुमति मांगी।

"किससे मिलना चाहती हैं ?"

"छोटे बाबू से—"

"किस छोटे बाबू से ?"

"मुखर्जी साहब !"

दरबान ने पूछा, "बड़े मुखर्जी साहब या छोटे मुखर्जी साहब से ?"

"छोटे मुखर्जी साहब से।"

दरबान ने कहा, "ठहरिए, पहले छोटे मुखर्जी साहब से पूछकर आता हूं।"

यह कहकर गेट बन्द कर दिया। उसके बाद कहीं चला गया। बाहर विशाखा और मंगला खड़ी रहीं।

थोड़ी देर बाद दरबान लौटकर आया और बोला, "अभी छोटे मुखर्जी साहब मिल नहीं पाएंगे। काम में बहुत ही व्यस्त हैं।"

"मिल नहीं सकेंगे, काम कर रहे हैं ?"

एकाएक कोई आदमी गाड़ी से आया। वह अन्दर घुस गया। दरबान ने उसे देख-कर लम्बा सलाम किया। सलाम करने के बाद दरवाजा खोल दिया। गाड़ी सरसराती हुई अन्दर चली गई। दरबान ने फिर से गेट बन्द कर दिया।

विशाखा ने उस आदमी को पहचान लिया। मिस्टर हाजरा थे। गोपाल हाजरा ने विशाखा को देखकर भी नहीं पहचाना। मिस्टर हाजरा के लिए हमेशा द्वार खुला रहता है।

विशाखा की ऐसी हालत हो गई कि उसकी आंखों से आंसू टपक पड़ेंगे।

अब विशाखा क्या करे !

थोड़ी देर तक खामोश रहने के बाद मंगला से कहा, "चल, घर चल मंगला—"

"उसके बाद अन्त में क्या हुआ ?"

अजय बाबू बोले, "अन्त की आप कल्पना भी नहीं कर सकते हैं। अन्त बड़ा ही 'पैथेटिक' है—"

मैंने कहा, "अन्त यदि भला हुआ तो मैं सदीप पर उपन्यास लिखूंगा।"

अजय बाबू ने कहा, "ज़रूर लिखिए। हमीद साहब ने मुझे सब कुछ बताया है। जिन्दगी के आखिरी दौर में हमीद साहब को बहुत ही अनुताप हुआ था। वे सिर्फ देह पर वस्त्र पहने पाकिस्तान से भारत आए थे। शुरू में पैरों में घुंघरू बांध, नाच-नाचकर चना-चूर बेचते और पेट भरते थे। उनके दिन बहुत ही तकलीफ में गुजरे थे। आखिर में बहुत घाटों का पानी पीने के बाद जेलखाने में उस तरह की दलाली कर बेशुमार पैसा कमाया था। लेकिन इतने बड़े आदमी हो जाने के बावजूद सदीप लाहिड़ी का मामला भूल नहीं सके थे। जेलखाने में जितने भी बड़े आदमी कैदी के रूप में थे, सभी ने उन्हें दलाली का पैसा दिया था। और पैसे के बल पर आराम की जिन्दगी बिताई थी। लेकिन एकमात्र सदीप ही एक ऐसा आदमी था जिसने अनगिनत अनुरोध करने के बावजूद किसी तरह के आराम की इच्छा जाहिर नहीं की थी। जो लोग शराब चाहते थे हमीद साहब ने उनके लिए शराब की आपूर्ति की थी। वैसे लोगों को जेल का खाना नहीं खाना पड़ता था।

लेकिन संदीप लाहिड़ी को कभी शराब पिलाने में कामयाब नहीं हो सके थे हमीद साहब। उसने जेल की सूखी जली रोटी खाकर ही आठ साल गुज़ार दिए थे। बीड़ी नहीं, सिगरेट नहीं—किसी भी तरह की विलासिता भी नहीं थी उसके साथ। उसने एकाग्र चित्त से सिर्फ विशाखा के सुख की कामना की थी, विशाखा के दांपत्य जीवन की समृद्धि की कामना की थी। अपने आपके लिए उसने कभी किसी दिन किसी चीज की चाह नहीं की थी। हमीद साहब ने अपनी दलाली की ज़िन्दगी में उस किस्म के किसी दूसरे व्यक्ति को नहीं देखा था। लेकिन एक बात। ज़िन्दगी भर जेलखाने में दलाली करके हमीद साहब ने एक भी पैसा इनकम टैक्स के रूप में नहीं दिया था।"

मैंने पूछा, "आखिर में विशाखा छोटे बाबू से मिलने में कामयाब हो सकी?"

अजय बाबू ने कहा, "हां, कामयाब हो सकी। जी-जान से कोशिश करने पर क्या नहीं होता? जो आदमी पांच सौ रुपया लेकर आता था, उस महीने भी वह पांच सौ रुपया लेकर भुवन गांगुली लेन के मकान में देने आया।"

उस बार विशाखा ने कहा, "तुम मेरा एक उपकार कर सकते हो भैया?"

उस आदमी ने कहा, "कौन-सा उपकार?"

विशाखा ने अपने पुराने सवाल को ही दुहराया, "अपने छोटे साहब के पार्क स्ट्रीट का तुम पता बता सकते हो? बता दोगे तो यह पांच सौ रुपया तुम्हें ही दे दूंगी।"

वही आदमी संभवतः हर महीने रुपया लेकर आता था। अबकी यह सवाल सुनकर वह अवाक् हो गया।

विशाखा बोली, "दो, अबकी मैं रसीद पर हस्ताक्षर कर देती हूं—रसीद दो—"

उस आदमी के हाथ से रसीद लेकर उस पर हस्ताक्षर कर दिया। उसके बाद रुपये लेकर उस आदमी की ओर बढ़ा दिए।

बोली, "यह लो, इन पांच सौ रुपयों को तुम रख लो। अब अपने साहब के मकान का पता बताओ—"

उस आदमी को शुरू में रुपया लेने में दुविधा का अहसास हुआ था, उसके बाद न जाने क्या सोचकर रुपये ले लिए।

विशाखा बोली, "मैं जानती हूं, तुम्हें छोटे साहब के मकान का पता मालूम है पर तुम बताते नहीं। आज बता दो।"

यह बात कहने के दौरान विशाखा की आंखें शायद छलछला आई थीं। उस आदमी का दिल शायद दया से पसीज गया।

बोला, "आप छोटे साहब से यह नहीं कहिएगा कि मैंने उनका पता आपको बताया है। क्योंकि उन्होंने आपको पता बताने से मना किया है।"

"नहीं कहूंगी। मैं वचन देती हूं कि नहीं कहूंगी। तुम बता दो।"

पता बताकर और रुपया लेकर वह आदमी चला गया। उसी दिन शाम के वक्त मंगला को अपने साथ ले विशाखा एक टैक्सी से छोटे साहब के पार्क स्ट्रीट स्थित मकान की ओर रवाना हो गई। पार्क स्ट्रीट का रास्ता बहुत लम्बा है। लेकिन ठीक-ठीक नंबर मालूम रहे तो ठिकाने पर पहुंचने में कौन-सा कष्ट हो सकता है!

छोटे बाबू के मकान के सामने जाकर विशाखा सदर दरवाजे की कुंडी खटखटाने लगी। किसी ने प्रत्युत्तर नहीं दिया।

देखने को मिला कि कॉलिंग बेल का एक स्विच है। सामने नेम प्लेट पर छोटे बाबू का पूरा नाम लिखा हुआ है। घंटी बजते ही एक आदमी दौड़ा-दौड़ा आया और उसने दरवाजा खोल दिया। पूछा, "किससे मिलना है?"

"सौम्यपद मुखर्जी ऑफिस से आ चुके हैं ?"

"आपका शुभ नाम ?"

विशाखा ने जैसे ही अपना नाम बताया, वह आदमी अन्दर चला गया। विशाखा ने अब देर नहीं की, उसके पीछे-पीछे अन्दर चली गई। विशाल सजे-संवरे हुए कमरे। इसी के कई कमरे। उसके बाद एक कमरा। विशाखा ने देखा, वह आदमी एक व्यक्ति के पास जाकर कुछ कह रहा है। जिसके साथ वह आदमी बातें कर रहा है उस पर आंखें जाते ही विशाखा चौंक पड़ी। यह तो छोटे बाबू हैं। छोटे बाबू के सामने शराब का एक गिलास है।

"क्या बात है, तुम क्यों आई हो ?"

छोटे बाबू के सामने एक महिला पीछे की तरफ पीठ किए बैठी थी। उसने अब अपना चेहरा घुमाया। विशाखा उसे देखकर अचम्भित हो गई। बिजली भी बैठकर छोटे बाबू के साथ एक गिलास से शराब के घूंट ले रही है।

"विशाखा दी ! तुम ?"

"बिजली, तू ! तूने मेरा यह सर्वनाश किया ?"

छोटे बाबू चिल्ला उठे, "तुम क्यों आई ? रुपया समय पर नहीं मिला है ?"

उत्तर में विशाखा ने कहा, "मेरा इस घर में आना क्या अन्याय है ?"

"हां, अन्याय है।"

विशाखा ने कहा, "तो फिर तुमसे मेरी शादी क्यों हुई थी ? क्यों मैं तेरी पत्नी बनी थी ?"

छोटे बाबू ने कहा, "तुम्हें किसने इस मकान में घुसने दिया ?"

विशाखा ने कहा, "यह सिर्फ तुम्हारा ही नहीं, मेरा भी मकान है। तुम क्या यह कहना चाहते हो कि मुझे अपने घर में घुसने का अधिकार नहीं है ?"

छोटे बाबू ने कहा, "नहीं। तुम्हें कोई अधिकार नहीं है। तुम मेरी कोई नहीं हो—"

विशाखा ने कहा, "तुम जो चीज पी रहे हो इसके कारण तुम्हारा दिमाग अभी सही रास्ते पर नहीं है। तुम स्वाभाविक स्थिति में होते तो समझ पाते कि क्या बोल रहे हो।"

"मेरी बात काटने की तुम्हें हिम्मत कैसे हो रही है ? कह रहा हूं, तुम मेरे घर से निकल जाओ—"

विशाखा बोली, "नहीं, मैं जाने के लिए नहीं आई हूं।"

छोटे बाबू ने कहा, "फिर तुम क्या यह चाहती हो कि अपने दरवान से तुम्हें बाहर निकलवा दूं ?"

विशाखा ने कहा, "मैं चले जाने के लिए नहीं आई हूं।"

"तुम्हें मैंने नहीं बुलाया था, फिर क्यों आई ?"

"अपने पति के घर में आना क्या अन्याय है ?"

छोटे बाबू ने कहा, "तुम्हारे भुवन पाललेन के मकान से मैंने तुम्हें निकालकर बाहर नहीं किया है। वहां तो मैंने तुम्हें रहने दिया है।"

विशाखा ने कहा, "तो तुम वहां क्यों नहीं रहते ?"

"क्यों नहीं रहता हूं ?"

"हां, तुम उस मकान में क्यों नहीं रहते ? उस मकान ने कौन-सा गुनाह किया है ?"

छोटे बाबू ने कहा, "जिस मुहल्ले में लोग मकान में ढेले-पत्थर फेंकते हैं, उस

मुहल्ले में क्या रहा जा सकता है ?"

"मैं उस मकान में कैसे रह रही हूं ?"

छोटे वावू ने कहा, "यह क्या कह रही हो तुम ? तुम और मैं क्या एक ही हैं ?"

"एक नहीं हैं ? पति और पत्नी क्या अलग-अलग होते हैं ?"

छोटे वावू ने कहा, "मुहल्ले के छोकरे मेरे कारखाने में नौकरी मांगेंगे और मैं उन्हें नौकरी नहीं दे पाऊंगा। ऐसी हालत में उस मकान को छोड़कर चले आने के सिवा मेरे लिए कौन-सा उपाय था ?"

"लेकिन मैं ? मुझे क्यों छोड़ दिया ? मैंने कौन-सा गुनाह किया था ?"

छोटे वावू ने कहा, "इस वात का उत्तर देना होगा ?"

"हां।"

"तुम मेरी वात पर नहीं चलती हो। मैं देर रात से घर लौटता हूं तो तुम आपत्ति करती हो। मैं शराव पीता हूं तो तुम एतराज करती हो। तुम क्या यह कहना चाहती हो कि शराव पीना वुरा है ? कितने वड़े-वड़े सभ्य शिक्षित आदमी शराव पीते हैं, यह जानती हो—"

विशाखा ने कहा, "मैं तुम्हें शराव पीने को मना न करूं तो तुम मुझे अपने साथ रहने दोगे ?"

अव छोटे वावू ने कुछ देर तक सोचा। उसके वाद वोला, "मुझे तुम पर यकीन नहीं होता है—"

"क्यों, यकीन क्यों नहीं होता ? एक वार मैंने तुम्हें फांसी के शिकंजे से छुड़ाया है, यह वात तुम इतनी जल्दी भूल गए ?"

छोटे वावू ने कहा, "ज्यादा शराव पीकर कहीं तुम्हारा खून न कर डालूं, तुम्हें यही भय रहता है न ?"

विशाखा ने कहा, "यह जो मुझे त्यागकर विजली के साथ अलग ही मकान में रह रहे हो, यह भी क्या एक किस्म का खून नहीं है ? इसे क्या ज़िन्दा रहने देना कहा जा सकता है ? इससे तो वेहतर है गला दवाकर मार डालना। मुझे क्या तकलीफ है, यह मैं तुम्हें कैसे समझाऊं ?"

"मैं तो हर महीने पांच सौ रुपया भेज देता हूं। तुम्हें वह रकम नहीं मिलती है ? इससे तुम्हारी गृहस्थी नहीं चलती है ?"

विशाखा की आवाज़ अव तेज हो गई।

वोली, "गृहस्थी चलना ही क्या सव कुछ है ? औरतें क्या और कुछ नहीं चाहती ? वह क्या मां वनना नहीं चाहती ? उसे क्या और कोई अभिलाषा-आकांक्षा नहीं होती ? रुपया मिलने से ही उसकी चाह और प्राप्ति समाप्त हो जाती है ? वोलो, जवाव दो। चुप क्यों हो ?"

तो भी छोटे वावू के मुंह से कोई शब्द नहीं निकला। विशाखा अव एकाएक एक कांड कर वैठी। सहसा छोटे वावू के सामने फर्श पर वैठ छोटे वावू के पैरों को कसकर पकड़ लिया।

पांवों को कसकर पकड़ने के वाद कहने लगी, "मेहरवानी कर मुझे अपने घर में रहने दो। मुझे इस तरह जला-जलाकर मत मारो। तुम्हारे पैर छूकर कह रही हूं कि अव मैं तुम्हें शराव पीने से मना नहीं करूंगी। तुम्हें जितनी भी मर्जी हो, शराव पीना, मैं हर्गिज मना नहीं करूंगी।"

छोटे वावू ने कहा, "लेकिन तुम शराव पीने में मेरा साथ दे सकोगी ? यह विजली जिस तरह पीती है, तुम पी सकोगी ?"

अचानक बिजली बोल पड़ी। अब तक वह कुछ नहीं बोली थी। अब वह आगे बढ़कर सामने चली आई और बोली, "ऐ विशाखा दी, पैर छोड़ दो, यह क्या कर रही हो ?"

उसके बाद एकाएक चिल्लाकर पुकारा, "बच्चन, ऐ बच्चन—"

पुकार सुनते ही बच्चन दौड़ा-दौड़ा आया। बिजली बोली, "ऐ बच्चन, तू कहाँ रहता है ? अभी इन लोगों को धकियाकर बाहर निकाल दे—"

विशाखा बिजली की बात सुनकर दंग रह गई। उस बिजली की यह हिम्मत ! उन लोगों को धकियाकर बाहर निकाल देने को कह रही है !

विशाखा ने बिजली की ओर देखकर कहा, "अरी कमीनी, तेरी यह हिम्मत ! मुझे धकियाकर बाहर निकाल देने कह रही है ? इतने दिन चाचा और तुझे घर में रखकर मैंने दूध पिलाकर साँप पाला था ! उसका आज यह नतीजा ! तू आज मुझे मेरे अपने घर से भगा रही है।"

"भगाऊँगी नहीं ? देख नहीं रही हो कि बेचारा दिन-भर खटने के बाद घर में जरा आराम कर रहा है और ऐन वक्त पर आकर तुमने तंग करना शुरू कर दिया ?"

"यह कहते हुए तुझे शर्म नहीं आ रही है ? इस आदमी के लिए तुमसे बढ़कर मुझे ही अधिक माया-ममता है। तू हम लोगों के बीच दखल देने वाली कौन होती है ? तू इस घर से निकल जा। यह मेरे पति का घर है, तूने यहाँ आकर क्यों अड्डा जमा दिया ? तू अभी फौरन इस घर से चली जा—"

"क्या कहा ?"

छोटे बाबू ने चिल्लाते हुए कहा, "बिजली क्यों निकलेगी ? तुम्हें ही निकलना है।"

[illegible] "ऐ बच्चन तू मुँह बाए ताक रहा है [illegible]" [illegible] गाएगा ? इसी-लिए विशाखा की ओर ताकते हुए कहा, "चलिए बाहर, बाहर चलिए—"

तब भी विशाखा को छोटे बाबू के पैरों के पास बैठे देखकर मंगला बोली, "भाभी रानी चलो, घर चलो—"

यह कहकर विशाखा की पीठ पर हाथ रखकर पुकारने लगी।

लेकिन विशाखा का उस समय रुलाई से बुरा हाल हो गया था। किसी तरह उठ-कर खड़ी हो गई। उसके बाद आँसू पोंछती हुई बाहर की ओर जाने लगी। उसके बाद सीढ़ियाँ उतरकर एकबारगी खुले रास्ते पर चली आई।

मंगला थी यह खैरियत थी। मंगला एक टैक्सी बुला लाई और किसी तरह उसे पाँच नम्बर गांगुली लेन के मकान में उतारा।

उसके बाद जो बिछावन पर आकर लेटी तो तीन दिन तक न उठी और न ही कुछ मुँह के अन्दर डाला। चूँकि मंगला थी इसलिए वह हर वक्त आसपास मँडराती रही, वरना घर आते ही गले में रस्सी का फंदा डालकर खुदकुशी कर लेती।

संदीप ने कहा, "इसके बाद क्या हुआ ?"

विशाखा बोली, "इसके बाद तो यही मुझे देख रहे हो। तीन इतने दिनों तक गले में रस्सी का फंदा क्यों नहीं डाला, यह नहीं जानती। गले में फंदा डाल लिया होता तो हो सकता है चैन की साँस लेने का मौका मिलता। मेरे कपाल में कितना दुर्भाग्य था ! तुम

कैसे थे ?"

"मैं ? मेरे बारे में पूछ रही हो ? आज ही जेल से निकला हूं। निकलने के बाद पहले बारह बटे ए विडन स्ट्रीट के मकान में गया था। वहां से गया तुम लोगों के उस मनसातल्ला लेन के मकान में। उस मकान को एक बार देखने की इच्छा हुई। वहां एक होटल जाकर खाना खा लिया। वहां यह बोझा मेरे हाथ में आ गया। एक आदमी मुझे यह झोला देकर कहां जो चला गया, पता नहीं। फिर लौटकर नहीं आया। उसके लिए कितनी देर तक इन्तजार करता रहता। आखिर मैं हावड़ा गया। हावड़ा से बेलुड़। बेलुड़ जाकर तुम लोगों का कारखाना देखा। उसी समय कारखाने में छुट्टी हुई। देखा, प्रत्येक आदमी के हाथ में मिठाई का एक-एक पैकेट है। सुना; आज मुक्तिपद बाबू की लड़की पिकनिक की शादी है। सरोज सरकार नामक किसी व्यक्ति से शादी होने जा रही है। वह एक अजूबा शादी है। मेरी शादी से भी अजीब तरह की शादी—"

"हां, मैं तो पिकनिक को पहचानती हूं। वह भी ड्रग्स का सेवन करती थी। एक बार मैं भी ड्रग्स के पल्ले पड़कर कलकत्ता की सड़क पर बेहोशी की हालत में पड़ी हुई थी, याद है ?"

संदीप ने कहा, "याद क्यों नहीं रहेगी ? तुमसे मेरा जब से परिचय हुआ है तब से जितनी भी घटनाएं घटी हैं, मुझे जबानी याद है। यही देखो, मेरे इस झोले में तुम्हारा वही फोटो है। यह देखो—"

यह कहकर संदीप ने अपने झोले से विशाखा की तस्वीर निकालकर दिखाई।

"यह क्या, इसे अब भी तुम अपने पास रखे हुए हो ?"

संदीप ने कहा, "इसे ही साथ लेकर मैं जेलखाना गया था। यह आजीवन मेरे पास रहेगी। मरने के दिन तक। इसीलिए इसे अपने साथ लेकर घूम-फिर रहा हूं—"

विशाखा एक क्षण चुप रही। उसके बाद बोली, "मरने की बात जबान पर मत लाओ। तुम न रहोगे तो मेरे मरने के समय मेरी देखरेख कौन करेगा ? तुम्हीं मेरे सब कुछ हो। तुम्हारे अलावा आज मेरा इस दुनिया में कोई नहीं है। आज से तुम मेरे घर पर ही रहा करो।"

सदीप ने कहा, "अब यह होना मुश्किल है विशाखा। तुम्हारी शादी सौम्यपद बाबू से हो चुकी है। उसके बाद हम दोनों का एक घर में रहना नहीं हो सकता है—"

"लेकिन तुम आज जेल से छूटे हो, अब तुम्हारी नौकरी भी नहीं रही। तुम्हारे रहने के लिए कोई मकान भी नहीं होगा। कहां रहोगे ?"

संदीप ने कहा, "मैं अपने नेबू बागान लेन का मकान भी जाकर देख आया हूं। मकान मालिक ने अब उस मकान को दूसरे किराएदार को दे दिया है—और रतन भी नहीं है।"

"रतन मेरे घर पर आया था। तुम्हारा पलंग, अलमारी, कुर्सी, मेज़ वगैरह मेरे मकान में रखकर वह देश चला गया है। उन सामानों को तुम लेते जाओ—"

"वह सब तुम अपने पास ही रहने दो। मुझे उनकी ज़रूरत नहीं है।"

विशाखा ने कहा, "लेकिन मैं रखकर क्या करूंगी ? तुम्हारी चीजें हैं, तुम्हीं ले जाओ।"

संदीप ने कहा, "यह सब बात बाद में सोचूंगा। अब यह बताओ कि तुम अपनी गृहस्थी कैसे चला रही हो ? सौम्यपद बाबू तुम्हें हर महीने नियमित तौर पर रुपया भेजा करते हैं ?"

"भेजते थे मगर मैं लेती नहीं थी, इसलिए अब भेजना बन्द कर दिया है।"

"तो फिर तुम दो जनों की गृहस्थी कैसे चलती है ?"

विशाखा ने कहा, "मकान का आधा हिस्सा किराए पर लगा दिया है। उसी आमदनी से किसी तरह चला लेती हूं—"

सब कुछ सुनने के बाद संदीप गंभीर हो गया। बहुत देर तक सोच में डूबा रहा। उसके बाद बोला, "अभी तुम मेरे साथ चल सकती हो?"

"कहां?" विशाखा ने पूछा।

"छोटे बाबू के पार्क स्ट्रीट स्थित मकान में। अब छोटे बाबू अवश्य ही घर लौट आए होंगे।"

विशाखा बोली, "पांच साल पहले गई थी। उस समय छोटे बाबू ने अपने नौकर के द्वारा बाहर निकलवा दिया था। अब फिर उनके पास जाना क्या अच्छा होगा? अगर इस बार सचमुच ही गरदनिया देकर निकाल दें तो?"

संदीप ने कहा, "चलकर देखते हैं। देखेंगे कि छोटे बाबू क्या कहते हैं। मैं जाकर सुनना चाहता हूं कि इस मसले पर वह क्या कहना चाहते हैं?"

"मैं तुम्हारे बारे में सोच रही हूं।"

"मेरे बारे में क्या सोच रही हो?"

विशाखा ने कहा, "देखो, मुझे छोटे बाबू ने अपमानित किया तो मैंने मुंह बन्द करके सह लिया। मैं औरत हूं। औरतें सब कुछ बरदाश्त कर सकती हैं। लेकिन तुम? तुम्हें अपमानित करेंगे तो मैं कैसे बरदाश्त करूंगी?"

संदीप ने कहा, "मेरे बारे में तुम्हें नहीं सोचना है। मैंने कभी खुद के लिए सुख की चाह नहीं की है। मैंने चाहा है, सभी सुखी होवें और यह भी चाहा है कि तुम सुखी होओ, [illegible] मेरा [illegible] हो [illegible]

उसकी बातें सुनकर विशाखा की आंखों से फिर आंसू की बूंद टपकने लगी।

संदीप ने कहा, "अब देर मत करो। देरी करने से हो सकता है विजली को साथ लेकर कहीं निकल जाए। वैसे में छोटे बाबू से मुलाकात नहीं हो सकेगी।"

विशाखा बोली, "लेकिन मैं पांच साल से इसी बिस्तर पर लेटी हुई हालत में रही हूं। उठकर खड़े होने से सिर चकराने लगता है। मैं क्या जा सकूंगी?"

संदीप ने कहा, "मैं आज तुम्हारा हाथ पकड़े तुम्हें संभालकर ले चलूंगा। डर की कौन-सी बात है?"

"इतने दिनों के बाद तुम जेल से निकले हो, आज जरा आराम नहीं करोगे? एक दिन बाद ही चला जाए तो इसमें दोष ही क्या है? छोटे बाबू तो भागे नहीं जा रहे हैं—"

संदीप ने कहा, "तुम्हारा यह अपमान अब मुझसे बरदाश्त नहीं हो रहा है। जिसके लिए मैंने इतना किया। उसी को कष्ट दिया तुम्हारे छोटे बाबू ने? चलो, तैयार हो जाओ। मंगला से कह दो कि दरवाजा बंद कर ले। मैं एक टैक्सी ले आता हूं। इस बीच तुम तैयार हो जाओ। अब देर मत करो। दिन-भर बहुत चक्कर लगाया है। चलता हूं—"

यह कहकर हाथ के झोले को लिए बाहर चला गया।

थोड़ी देर बाद ही संदीप टैक्सी लेकर आ गया।

मकान के बाहर से ही संदीप पुकारने लगा, "कहां हो विशाखा, आओ विशाखा—"

उस वक्त भी आते न देखकर संदीप ने विशाखा को पुकारते हुए घर के अन्दर,

प्रवेश किया।

"कहां हो विशाखा? तुम कहां गई?"

तो भी विशाखा का प्रत्युत्तर नहीं मिला। संदीप ने मंगला को पुकारा, "मंगला, मंगला—"

संसार में हम जो चाहते हैं हमें प्राप्त होता है। वर्षा काल में हमें जल प्राप्त होता है। ग्रीष्मकाल में उत्ताप और शीतकाल में हमें तरह-तरह की फसलें प्राप्त होती हैं। हर ऋतु में प्रकृति हमारी हर प्रकार की मांग की पूर्ति करती है।

लेकिन प्रकृति के पीछे जो शक्ति दिवा-निशि अविराम कार्यरत है, उस शक्ति के बारे में हमने कभी सोचा है?

थोड़ा बड़ा होते ही संदीप की जान-पहचान विशाखा से हुई थी। उस समय से जो शक्ति उसे सदैव प्रेरणा देती रही है, संदीप ने उसके बारे में कभी नहीं सोचा था। उसका सोच था, उसके नौकरी पाने, नौकरी में उन्नति होने, उसके ज़िन्दा रहने, चलने-फिरने सबके पीछे उसकी खुद की कार्य-क्षमता या भाग्य का हाथ है। लेकिन असली बात क्या यही है?

इन आठ बरसों तक जेल में रहने पर उसे अहसास हुआ है कि दरअसल वह कुछ भी नहीं है। वह उपलक्ष्य मात्र है। जिसने असल में आड़ में खड़े होकर उसे प्रेरणा दी है वह एक दूसरी शक्ति है। उस शक्ति की उसने विगत आठ बरसों के दौरान सर्जना की है, वह है उसका प्रेम। वही प्रेम उसे अपने साथ ले पूरे कलकत्ते का चक्कर लगा रहा है। उसी प्रेम की प्रेरणा से वह शुरू से ही चक्कर काटता रहा है। इसीलिए वह शुरू में बिडन-स्ट्रीट भवन में उपस्थित हुआ था। उसके बाद गया था खिदिरपुर के मनसातल्ला लेन के मकान में, जहां एक दिन उसकी विशाखा से पहली मुलाकात हुई थी। उसके बाद गया था बेलुड़। जहां से मुहिम की शुरूआत हुई थी। उसके बाद गया था नेबू बागान लेन के मकान में जहां विशाखा और सौम्य बाबू रुपये के लिए अक्सर आते थे। उसके बाद गया भुवन गांगुली लेन के विशाखा के मकान में। जहां सौम्य बाबू और विशाखा ने सुख का घर-संसार बसाया था। इस भुवन गांगुली लेन में न आया होता तो संदीप को पता ही नहीं चलता कि उसका सम्पूर्ण स्वप्न-सौध धराशायी होकर मलबे में बदल गया है।

उसी समय संदीप के हृदय में भारी चोट पहुंची। उसके जीवन की समस्त प्रेरणा के मूल में ऐसा आघात लगेगा, उसकी उसने कल्पना नहीं की थी। उसी समय महसूस हुआ कि उसकी पूरी निष्ठा, त्याग, कारावरण और शक्ति की जड़ में किसी ने कुठाराघात किया है।

तो क्या उसकी तमाम प्रेरणा असत्य है? तो क्या वह जीवन भर मरीचिका के पीछे भटकता रहा है?

तो वह किसकी तस्वीर अपने साथ ले चक्कर लगा रहा है? हर रात वह किसकी तस्वीर को देखते हुए नींद की बांहों में लिपट गया है? तो क्या सारा कुछ मरीचिका है?

विशाखा को जाने की इच्छा नहीं थी। पांच साल पहले की अभिज्ञता उस समय भी उसके मन को जकड़े हुए थी। उसने कहा, "मुझे बड़ा ही डर लग रहा है संदीप—"

संदीप ने कहा, "डरने से काम नहीं चलेगा। अगर तुम्हारा कोई अपमान होगा तो मैं उसे अपना अपमान समझूंगा। फिर मैं तुम्हारे साथ क्यों चल रहा हूं?"

"लेकिन अगर छोटे बाबू तुम्हारा अपमान करें तो मैं उसे अपना अपमान समझूंगी।"

संदीप ने कहा, "मैं अपने अपमान की बात सोचता तो तुम्हें अपने साथ लेकर जाने को तैयार नही होता। जिस दिन तुम्हारे भले के लिए बैंक से रुपये निकालकर छोटे बाबू के हाथ मे दिया था उसी दिन मेरे मान-अपमान की पारी खत्म हो गई थी। मान किसके पास चाहूंगा ? मेरा मान-सम्मान मेरे अपने पास रहना ही काफी है—"

"मगर···"

संदीप ने कहा, "अब अगर-मगर नही। जिस दिन रुपये का गबन करने के मामले मे पुलिस मुझे पकड़कर ले गई थी उसी दिन मेरे मान-अपमान की पारी खत्म हो गई थी। अब कोशिश करके देखूं कि मैं तुम्हारे अपमान का बदला ले सकता हूं या नहीं। तुम्हारे मान की रक्षा कर सका तो मेरे अपमान का बदला लेना हो जाएगा।"

चारो तरफ दुकानों में प्रकाश माला झलमला रही है। यह भुवन गांगुली लेन नही, पार्क स्ट्रीट है। यहां खोजने पर कलकत्ता नही मिलेगा। यहा लदन-न्यूयार्क की तलाश करने से सब शहर मिल सकते हैं, लेकिन बहुत खोज-बीन करने पर भी भारत नही मिलेगा। अंग्रेज भारत को छोड़कर अवश्य ही चले गए लेकिन तो भी इस पार्क स्ट्रीट मे वे गर्व से विराजमान हैं। यहा जो लोग वास करते हैं वे सवेरे नाश्ता नहीं करते 'ब्रेक फास्ट' करते हैं। दोपहर मे भात नही खाते, लच खाते हैं। रात मे रोटी-सब्जी नहीं, डिनर खाते हैं, ब्रेड खाते हैं। व्हिस्की पीते हैं।

"मकान का नंबर क्या बताया ?"

विशाखा ने कहा, "सतहत्तर।"

नंबर क्या बाहर से दिख जाते हैं ? विशाखा यहा सिर्फ एक ही बार आई है। उस समय उसके साथ मंगला थी। अभी संदीप है। संदीप ने इस कलकत्ता को देखा है वह इन सब अचलो को जानता-पहचानता है। किसी जमाने मे विशाखा यद्यपि रसेल स्ट्रीट मे रहती थी लेकिन दादी मां की गाड़ी से कॉलेज जाती-आती थी। लेकिन संदीप पैदल चलने वाले दल में था।

उसने कहा, "मैंने सतहत्तर नंबर मकान को खोजकर निकाल लिया है—"

सौम्यपद मुखर्जी हर रोज नियमित तौर पर ऑफिस जाता है। जिस दिन कलकत्ता के ऑफिस में ज्यादा काम रहता है, उस दिन दोपहर तक का वक्त कलकत्ता मे बिताकर तीसरे पहर बेलुड़ की फैक्टरी पहुचता है।

लेकिन उस दिन इयर-क्लोजिंग के कारण कलकत्ता के ऑफिस में डाइरेक्टर बोर्ड की मीटिंग थी। बैलेंस-शीट तैयार करके पास करने की बात थी। सभी डाइरेक्टर उपस्थित थे। मुक्तिपद आ चुके थे। चीफ एकाउंटेण्ट नागराजन ने पूरी रिपोर्ट पढी।

इसी के सन्दर्भ मे बोर्ड मे बहुत देर तक बातचीत और बहस का दौर चलता रहा। देखने को मिला कि पिछले साल कम्पनी के उत्पादन में पन्द्रह प्रतिशत की वृद्धि हुई है। इसके चलते कम्पनी को नेट प्रोफिट कुल मिलाकर दो करोड रुपया हुआ है। स्टाफ के वेतन तथा और अधिक स्टाफ की नियुक्ति होने के कारण प्रतिष्ठान के खर्च मे वृद्धि होने के बावजूद दो करोड रुपये का मुनाफा देखकर सभी डाइरेक्टर खुश हैं।

टैक्सकानसल्टेंट विजयेश कानूनगो भी हाजिर थे। उन्होंने हिसाब करके दिखा दिया कि ऑवर-आल प्रोफिट दो करोड़ सवा दो करोड से कम नही हो सकता है।

सरोज सरकार, मुक्तिपद का एकमात्र दामाद नया डाइरेक्टर बनाया गया है। उसने प्रस्ताव रखा—तो फिर शेयर-होल्डरों के डेविडेंट का पर्सेंटेज कुछ और बढ़ाने से बाजार मे सैक्सबी मुखर्जी कम्पनी का गुडविल और बढ़ जाएगा। और इनके

फलस्वरूप शेयर मार्केट में और भी शेयर-होल्डर बढ़ जाएंगे। लोग कम्पनी के और अधिक शेयर खरीदेंगे।

बातचीत करते-करते लंच का समय हो गया। ग्रैण्ड होटल से भरपूर लंच आया। लंच के बाद भी मीटिंग चलने लगी।

उसमें मैनेजिंग डाइरेक्टर का वेतन बीस हज़ार से बढ़ाकर पचीस हज़ार करने का प्रस्ताव पास हुआ। डिप्टी मैनेजिंग डाइरेक्टर के वेतन में भी वृद्धि हुई। यानी सौम्यपद का वेतन बढ़ गया। उन्हें पन्द्रह हज़ार मिल रहा था। बढ़कर हो गया बीस हज़ार। डाइरेक्टर सरकार के वेतन में भी वृद्धि हुई। साथ ही नागराजन के वेतन में भी।

सबों का वेतन बढ़ा ही, साथ-ही-साथ भत्ते में भी दस गुना की वृद्धि हो गई। फ्री मेडिकल ट्रिटमेंट का भत्ता भी बढ़ गया। क्योंकि दिखाया गया कि दवा और पेट्रोल की कीमत भी बढ़ गई है। उस पर है प्रोफिट-लॉस-सरचार्ज प्रोफेशनल शेयर-होल्डर की बात। प्लस डाइरेक्टरों की छुट्टी। छुट्टी के दौरान विलायत घूमने के लिए जाने का पूरा खर्च कम्पनी वहन करेगी। उसके लिए भी बजट में प्रोविजन रखा गया। फ्री हॉली डे ट्रैवल।

सारे झमेले सब मिट गए तो तीसरे पहर के पांच बज रहे थे। मुक्तिपद ज्यादा देर तक नहीं रुके। उनकी लड़की की शादी पहले ही हो चुकी थी लेकिन प्रीतिभोज बाकी था। उन्होंने प्रस्ताव रखा कि प्रत्येक स्टाफ को कम्पनी के खर्च से एक-एक पैकेट मिठाई मुफ्त में बांटी गई है। उसे भी खर्च के आइटम में जोड़ा जाएगा। वह मिसलेनियस कॉलम में जोड़ा जाएगा। वह भी बगैर बहस के पास हो गया। सभी ने बैलेंस-सीट के नीचे हस्ताक्षर किए। उसके बाद छुट्टी।

मुक्तिपद गाड़ी चलाते हुए अपने बेलुड़ के मकान में चले गए। वहां उस समय सभी उनकी प्रतीक्षा में थे। उनके पोते तक। नंदिता और पिकनिक भी प्रतीक्षा कर रही थीं मिस्टर मुखर्जी की। और सौम्यपद?

सौम्यपद हर रोज शाम के बाद घर चला आता है। ड्राइवर गाड़ी को लाकर घर के सामने खड़ी करता है। उसके बाद साहब जब गाड़ी से उतर जाते हैं तो वह उसे गैरेज में रख देता है।

साहब पर नजर पड़ते ही बच्चन उन्हें सलाम करता है। साहब उस तरफ मुड़कर देखे बिना लम्बे डग भरते हुए सीधे ऊपर चले जाते हैं। उस समय बिजली सज-संवर कर तैयार रहती है। सौम्यपद जैसे ही कमरे में प्रवेश करता है, बिजली आगे बढ़कर चली आती है। पूछती है, "मीटिंग हो गई?"

बदन से कोट उतारते हुए सौम्यपद कहता है, "हां, हो गई—"

जरा चुप रहने के बाद कहता है, "जानती हो, अब दिल्ली या कश्मीर सैर-सपाटे के लिए नहीं जाऊंगा। अबकी स्वीडेन जाऊंगा—उस मुल्क में कभी नहीं गया हूं।"

"स्वीडेन जाओगे? यह किसने तय किया?"

सौम्यपद ने कहा, "अबकी डाइरेक्टर बोर्ड में यही तय हुआ कि डाइरेक्टर लोग सपरिवार विदेश की यात्रा कर सकते हैं। सारा खर्च कम्पनी देगी। बहुत दिनों से कहीं जा नहीं सका हूं। अबकी कम्पनी को दो करोड़ रुपये का लाभ हुआ है, इसी वजह से हम लोगों को स्पेशनल बेनिफिट दे रही है—"

"कब जाओगे?"

सौम्यपद ने कहा, "गरमियों में ही जाना अच्छा रहेगा। उस समय कलकत्ता का क्लाइमेट मुझे असह्य जैसा लगता है। उस समय वहां ठंड रहती है—"

बिजली ने कहा, "आज ही पिकनिक की शादी हुई है न?"

सौम्यपद ने कहा, "शादी होने से क्या होगा, शादी होने के पहले ही [illegible] बच्चे हो चुके हैं। आज फैक्टरी के तमाम स्टाफ को एक-एक पैकेट मिठाई बांटी गई—"

थोड़ी देर रुककर सौम्यपद बोला, 'देखो, आज घर पर डिनर नहीं बना है। चलो, 'मोकाम्बो' चलकर डिनर खा लें।"

"और कॉकटेल?"

सौम्यपद ने कहा, "कॉकटेल का दौर घर पर ही [illegible]। [illegible] हो गया है, इसे आज घर पर 'सेलिब्रेट' कर लें। घर में क्या है?"

बिजली ने कहा, "तुम्हारा फेवरिट ड्रिंक तो है 'जिन एंड लिम'। वह खत्म हो गया है। रम पियोगे?"

सौम्यपद ने विरक्ति की अदा के साथ कहा, "रम तो घोड़ा पीता है। रम पीने से आज का मूड बिगड़ जाएगा।"

"तो फिर आज 'व्हाइट हॉर्स' पियोगे?"

सौम्यपद ने पूछा, "व्हाइट हॉर्स स्टॉक में है?"

बिजली के पास स्टॉक की चाबी रहती है। उसे पता रहता है कि कौन-सी चीज़ कितनी मात्रा में है।

वह उठकर गई और स्टॉक की आलमारी का ताला खोला। वहां से एक बोतल ले आई।

"यह कोई बुरा नहीं रहा। व्हाइट हॉर्स से 'बेस' तैयार करूंगा और 'जिन एंड लिम्स' में समाप्त करूंगा। उसके बाद बाहर जाकर डिनर खाया जाएगा।"

उसके बाद सौम्यपद के गिलास में थोड़ी-सी 'व्हाइट हॉर्स' डाल दी। किचन जाकर बावर्ची को कुछ स्नैक्स तैयार करने का आर्डर दे आई।

इस समय बड़ा ही आराम मिलता है। दिन-भर के परिश्रम के बाद रिलैक्स करने के लिए कॉकटेल बेजोड़ चीज़ होती है। सौम्यपद ने पुकारा, "बच्चन—"

बच्चन साहब के पास आया।

साहब ने कहा, "एक बोतल जिन एंड लिम्स ले आओ—"

बिजली ने लॉकर से रुपया निकालकर दिया। बच्चन को सब कुछ मालूम है। यह तो साहब का रोज़मर्रा का काम है। उसके बाद रात के समय [illegible] साहब और मेमसाहब दोनों गाड़ी लेकर बाहर निकलते हैं। गाड़ी बिशु चलाता है। बिशु को भी मालूम है कि साहब और मेमसाहब कहां जाते हैं। वह [illegible] आएंगे, इसका कोई ठीक नहीं। बिशु भी बच्चन की तरह हुक्म का नौकर है। [illegible] हुक्म दिया जाएगा, उसी की वह तामील करेगा। बिशु कभी 'बिनाक्षी' मेमसाहब की गाड़ी चलाया करता था। बिनाक्षी मेमसाहब को भी लेकर [illegible] है। अब कहां है वह बिनाक्षी मेमसाहब और कहां से यह नई 'बिजली' मेमसाहब आकर अड्डा जमाए बैठ गई!

किसी ज़माने में उसने बड़े मुखर्जी साहब की भी गाड़ी चलाई है। [illegible] वह आजीवन इस मुखर्जी परिवार की ही निरन्तर सेवा करता रहा [illegible] सेवाकर उसने जिन्दगी गुज़ार दी। वह इस परिवार का उत्थान, [illegible] और [illegible] देख चुका है कि उसके लिए अब देखने को कुछ बाकी नहीं बच रहा है। [illegible] विडन स्ट्रीट, बेलुड और भुवन गांगुली लेन में जाकर [illegible] टिका हुआ है। पहले जो चल रहा था, अब भी वही चल रहा [illegible] अब भी पुरानापन नहीं आया है। जब तक वह ड्यूटी पर [illegible] रहता। बाकी समय में आदमी। हालांकि साहब और मेमसाहब उसे [illegible]

ही नहीं। दरअसल सही मानी में वह एक यन्त्र ही है, उसे आदमी नहीं होना चाहिए था।

विशु को मालूम है कि अभी साहब के मौज का समय है। अभी साहब मेमसाहब के साथ मौज-मस्ती मनाने के ख्याल से बैठे हुए हैं। अभी साहब कहीं नहीं जाएंगे। अभी वह निश्चिन्तता के साथ सो सकता है। उसके बाद जब उसकी बुलाहट आएगी तो वह गैरेज से गाड़ी निकाल ड्यूटी बजाने के लिए तैयार हो जाएगा। और उसके बाद कितनी रात तक उसे ड्यूटी बजानी होगी, यह बात न तो वह जानता है और न ही साहब या मेमसाहब जानते हैं।

पहले जब पुरानी मेमसाहब थीं तो उस समय उसकी ड्यूटी की अवधि निर्धारित थी। वह मेमसाहब शराब नहीं पीती थी। इसलिए हमेशा साहब को संभाले रहती थी। लेकिन इस मेमसाहब के आने से सिलसिला ही बदल गया। यह मेमसाहब साहब की तरह ही अधिक मात्रा में पी लेती है। कभी-कभी इस मेमसाहब को पकड़-धरकर घर के अन्दर पहुंचाना पड़ता है वरना लड़खड़ाकर गिर पड़ने का भय बना रहता है। साहब जितनी पीते हैं यह मेमसाहब भी उतनी ही पीती हैं। इसलिए विशु की जिम्मेदारी आजकल बढ़ गई है। यही वजह है कि उसे जितनी देर के लिए फुर्सत मिलती है, सोने में वक्त गुजार देता है।

पार्क स्ट्रीट के नए मकान में आने के बाद विशु को एक अच्छा-सा कमरा मिल गया है। गैरेज के ठीक ऊपर ही। उस दिन भी कारखाने से साहब को घर पहुंचाकर उसने गाड़ी गैरेज में रख दी थी और अपने कमरे में सो गया था। समझ गया कि साहब जरा आराम करने के बाद यथासमय बुला भेजेंगे। उस समय उसकी रात की ड्यूटी का प्रारंभ होगा। उसके पहले ही बच्चन हर रोज की तरह उसे पुकार कर नींद से जगा देगा। कहेगा, "विशु उठो-उठो, साहब बाहर निकलेंगे।"

उस दिन घर के अन्दर छोटे बाबू के विश्राम के दौर की शुरुआत हो चुकी थी। विश्राम का मतलब शिराओं को शिथिल करना और शिथिल करने का एकमात्र उपाय है व्हिस्की। छोटे बाबू शुरू में 'व्हाइट हॉर्स' पसन्द करता था। पर कुछ दिनों बाद ही वह पुरानी हो गई। उस समय बाजार में 'किंग ऑफ किंग्स' चली आई थी। वे दोनों को ही पसन्द करते हैं लेकिन 'किंग ऑफ किंग्स' ज्यादा पसन्द करते हैं।

'व्हाइट हार्स' के साथ तब बावर्ची स्नैक्स दे गया था। वह भी शराब के साथ चल रहा था।

छोटे बाबू ने कहा, "जानती हो, आज कम्पनी के शेयर का डेविडेंट डिक्लेयर कर दिया गया है।"

बिजली ने कहा, "अबकी कम्पनी को कितना प्रोफिट हुआ ?"

"नेट ढाई करोड़—"

"मुक्तिपद बाबू खुश हैं ?"

छोटे बाबू ने कहा, "सिर्फ चाचा ही क्यों, सभी खुश हैं। पिकनिक के कारण मन में कुछ अशान्ति थी। उसकी भी इतने दिनों के बाद शादी हो गई, इसलिए इसकी वजह से भी खुश हैं—"

"और उन लोगों का क्या हालचाल है ?"

"किन लोगों का ?"

"मिस्टर हाजरा वगैरह का ?"

छोटे बाबू शराब के गिलास से घूंट लेता हुआ बोला, "मिस्टर हाजरा का भी कमीशन बढ़ा दिया गया है। पहले तीन लाख रुपया दिया जाता था अब उस रकम को बढ़ाकर साढ़े तीन लाख रुपया कर दिया गया है। उस रकम को मिसलेनियस एकाउंट में

छोड़ दिया गया है। बाहर के किसी आदमी को पता नहीं चला था, अब भी पता नहीं चलेगा। वरना लेबर-ट्रबल हो जाता।"

बिजली बोली, "और लेबर ?"

छोटे बाबू ने कहा, "उन लोगों के वेतन में मामूली वृद्धि हुई है। कुछ न बढ़ाने से वे लोग मिस्टर हाजरा की पार्टी छोड़कर दूसरी पार्टी में चले जाते। अभी तो पार्टीबाजी का ही जमाना है। जो आदमी किसी भी पार्टी में नहीं रहेगा उसके भाग्य में दुख-ही-दुख है। वह अपने जीवन में कुछ नहीं कर सकेगा।"

"तो फिर अभी सभी लोग सुखी हैं ?"

छोटे बाबू ने कहा, "हां, हम लोग भी सुखी हैं। इसीलिए तो मैं आज का दिन 'मोकैम्बो' में डिनर लेकर सेलिब्रेट करना चाहता हूं।"

यह कहकर स्लैक्स उठाकर मुंह में डाला। उसके बाद आंख उठाकर घड़ी की ओर देखा। नाइट इज स्टिल यंग—

अचानक छोटे बाबू को लगा, कमरे के अन्दर जैसे उसकी भूत पर नजर पड़ गई हो। बोला, "कौन ?"

भूत बोला, "मैं··· हम लोग···"

दाढ़ी-मूछों से भरा चेहरा। मैले-कुचैले कपड़े। उसके साथ कोई और है। भूत उसे अपने हाथ से थामे कमरे के अन्दर ला रहा है।

"तुम कौन हो ? क्या चाहते हो ?"

"आपसे मुलाकात करना।"

"मुझसे ? किसके परमिशन से अन्दर आए ?"

"परमिशन किससे लूंगा ? बाहर कोई भी नहीं था।"

छोटे बाबू ने कहा, "दरवाजे का कालिंग-बेल क्यों नहीं दबाया ? मालूम है, मैं अभी रिलैक्स कर रहा हूं। यह क्या कोई भीख मांगने का वक्त है ? भीख मांगना हो तो भिखमंगे क्या अन्दर घुस आते हैं ?"

भूत ने कहा, "मैं भीख मांगने नहीं आया हूं।"

"भीख मांगने नहीं आए हो तो अन्दर क्यों चले आए ? अभी मैं किसी से नहीं मिलता।"

"कहा न, कि मैं भीख मांगने नहीं आया हूं और न ही मुलाकात करने।"

छोटे बाबू ने कहा, "फिर घर के अन्दर क्यों आए हो ?"

भूत ने कहा, "देखने—"

छोटे बाबू ने कहा, "किसको देखने ?"

"आपको। जिसे मैंने नब्बे लाख रुपया दिया था—"

"नब्बे लाख रुपया मुझे दिया था ? कब ?"

"तकरीबन आठ साल पहले।"

"आठ साल पहले ?"

"हां, उस समय मैं नेशनल यूनियन बैंक का मैनेजर था—बड़ा बाजार ब्रांच का। उन रुपये के गबन के कारण मुझे आठ साल जेल की सजा मिली थी। आज सवेरे मुझे जेल से रिहा किया गया है। बाहर निकलकर मैं सभी पुराने स्थानों को घूम-घूमकर देख रहा हूं। मैं आपकी बेलुड़ की फैक्टरी भी देख आया हूं। देखा, फैक्टरी बहुत अच्छी तरह चल रही है—"

छोटे बाबू में इतनी देर बाद थोड़ी-सी नरमी आई। बोला, "तुम्हारा नाम सदीप साहिड़ी है न ?"

संदीप ने कहा, "खैर, आपने इतनी देर वाद मुझे पहचान लिया। न पहचानना ही स्वाभाविक है। जिससे आदमी उपकृत होता है उसे वाद में पहचान नहीं पाता। आपने मुझे पहचान लिया, इसके लिए वहुत-वहुत धन्यवाद !"

"तुम्हें आज ही जेल से छुटकारा मिला है ?"

"हां।" संदीप ने कहा।

"तुम्हारी नौकरी क्या वरकरार है ?"

संदीप ने कहा, "नौकरी कैसे रह सकती है ? चोरी करने पर कभी किसी की नौकरी रह सकती है ?"

"फिर अव क्या करोगे ? किस तरह जीवन जियोगे ?"

संदीप ने कहा, "इस वात पर अव तक सोचने का समय नहीं मिला है। उस पर तव सोचूंगा जव मेरी सारी वातों का उत्तर मिल जाएगा।"

"तुम क्या कहना चाहते हो ?"

संदीप अव तनकर खड़ा हो गया। वोला, "एक दिन आपने मेरे पास आकर सहायता मांगी थी, यह वात आपको याद है ? आपने रुपया मांगा था ?"

"हां, इससे क्या हुआ ?"

संदीप ने कहा, "एक दिन मुझसे ही इस विशाखा की शादी होने वाली थी, याद है ?"

छोटे वावू ने इस वात का उत्तर नहीं दिया। संदीप फिर कहने लगा, "उस विवाह के अवसर पर आप अचानक मेरे घर में आकर हाज़िर हो गए थे, याद है ? आपके साथ पुलिस का पहरा था, याद है ?"

छोटे वावू ने इस वात का भी कोई जवाव नहीं दिया।

"उस शादी के पीढ़े से मुझे उठाकर आप ही उस शादी के पीढ़े पर वैठ गए थे और उस दिन इसी विशाखा से आपकी शादी हुई थी, याद है ? उसके वाद जव शादी हो गई तो आप दुवारा जेल चले गए, याद है ?"

अव की भी छोटे वावू ने कोई जवाव नहीं दिया। संदीप ने कहा, "मेरी वात का उत्तर क्यों नहीं दे रहे हैं ? उत्तर दीजिए। कहिए, मैं ठीक कह रहा हूं या नहीं।"

छोटे वावू ने इस वात का कोई जवाव न देकर सिर्फ इतना ही क्या, "इससे क्या हुआ ?"

संदीप ने कहा, "क्या हुआ है, यह वाद में कहूंगा। अभी आपको सिर्फ सारी वातों की याद दिला रहा हूं।···उसके वाद आपका मामला हाईकोर्ट में चला। आपको फांसी दी जाए या नहीं, इसी का विचार शुरू हुआ। याद है ?"

छोटे वावू तो भी खामोशी ओढ़े रहा। संदीप एक क्षण चुप रहा। उसके वाद फिर वोला, "नहीं, आपको यह सव वात याद नहीं आएगी। आप अभी सैक्सवी मुखर्जी कंपनी के डिप्टी मैनेजिंग डाइरेक्टर हैं। आपको वह सव वात याद न आना स्वाभाविक है। एक वार दौलत के शिखर पर पहुंचने के वाद वीते दिनों के अभाव, दुख-दुर्दशा की वात याद रखना उचित नहीं है। तो भी मैं आपको सारी घटनाओं की याद दिला देना चाहता हूं, इससे भले ही आपको कोई लाभ न हो मगर मुझे और इस विशाखा को लाभ होगा—"

छोटे वावू तव तक ऊव चुका था। वोला, "जो कहने को है, जल्द-से-जल्द कहो, मुझे वहुत काम है—"

"काम ? आप काम की वात कह रहे हैं ? काम किसे नहीं रहता ? आजकल एक वेकार आदमी को भी काम रहता है—मैं काम की ही वात करने आया हूं—"

"फिर मेरा चरित्र-चर्चा करना शुरू कर दिया? जो कुछ कहना है, कहते जाओ—"

संदीप ने कहा, "एक दिन आप इस विशाखा को अपने साथ ले मेरे [illegible] लेन के मकान में गए थे, याद है? या फिर याद नहीं है?"

छोटे बाबू ने कहा, "जो कुछ कहना है, कहते जाओ—"

"उस दिन लेकिन आप और ही तरह के आदमी थे। उस दिन मैं था [illegible] यूनियन बैंक के बड़ा बाजार ब्रांच का मैनेजर और आप बेरोजगार थे—"

"उसके बाद?"

"उसके बाद आपने मुझसे कई लाख रुपये कर्ज मांगा था। याद है?"

"उसके बाद?"

संदीप ने कहा, "आपके साथ थी विशाखा देवी। मैंने उस दिन आपसे कहा था कि मैं आपकी पत्नी इस विशाखा देवी के लिए सब कुछ कर सकता हूं। याद है? मैंने ऐसा किया भी था। मैंने आपको लाखों रुपये दिए थे। और उसका [illegible] हुआ था कि मुझे आठ साल के लिए जेल की सजा मिली और आपने [illegible] को पुनः चालू हालत में कर लिया। अब आप उसके [illegible] डाइरेक्टर बन गए हैं।"

छोटे बाबू की सहन-शक्ति अब शायद सीमा के बाहर चली गई थी। बोला, "इससे क्या हुआ है?"

संदीप ने कहा, "उससे कुछ नहीं हुआ है, क्या यही सोचते हैं?"

"क्या हुआ है? हां, मैं स्वीकार करता हूं कि मैं [illegible] डाइरेक्टर हो गया हूं। उसमें हजारों आदमी को [illegible] मिल गई है। इसमें कौन सी बुराई हुई है?"

संदीप ने कहा, "इसमें बुराई कुछ नहीं हुई है? [illegible] हुई है, यह मैं स्वीकार करता हूं। आपका भी भला हुआ है। लेकिन..."

छोटे बाबू ने इस बात का मानो [illegible] लिया। बोला, "तुम [illegible] मेरे पास बेवक्त आए हो?"

संदीप ने कहा, "लेकिन और कब आता? [illegible] पहले जेल से छुटकारा मिला है। आपसे मिलने के [illegible] गया था। लेकिन उसी वक्त कारखाने में छुट्टी हो गई। [illegible] की अनुमति नहीं मिली।"

"लेकिन इसे लेकर क्यों आए हो?"

इतनी देर के बाद [illegible] ने विशाखा की ओर देखा।

विशाखा तब भय से थर-थर कांप रही थी। [illegible] मकान में रोते-रोते वापस गई थी। आज [illegible] बावजूद उसका भय दूर नहीं हुआ है। [illegible] पुनः उसका अपमान न कर बैठें। [illegible] बाहर निकाल दें तो?

[illegible] से संदीप का हाथ पकड़कर खींचा। [illegible]

संदीप ने कहा, "तुम चुप रहो। मुझे [illegible] अपमानित करते हैं।"

उसके बाद छोटे बाबू की [illegible] विशाखा ने एक दिन [illegible] या नहीं, कहिए?"

छोटे बाबू ने कहा, "इसी बात को जानने के लिए विशाखा को अपने साथ लेकर आए हो ?"

संदीप ने कहा, "हां—"

छोटे बाबू ने कहा, "तो फिर मेरी मर्जी की बात सुन लो। उस बार मेरी शादी कराई गई थी और कराई थी तो दादी मां ने। अब मैंने अपनी मर्जी से उसे त्याग दिया है। उस बार चूंकि ज़रूरत थी इसलिए मैंने विशाखा से शादी की थी और अब अपनी मर्जी से उसे त्याग दिया है—मेरी विशाखा से सिर्फ शादी ही हुई थी, लेकिन विवाह का कोई आनुषंगिक अनुष्ठान संपन्न नहीं हुआ था।"

"तो ऐसी हालत में विशाखा कहां जाएगी ?"

छोटे बाबू ने कहा, "तुम क्या मुझसे कैफियत मांग रहे हो ?"

संदीप ने कहा, "आप अगर इसे कैफियत समझते हैं तो मैं यही मांग रहा हूं।"

"तुम मुझसे कैफियत मांग रहे हो ? तुम कौन हो ? हू आर यू ?"

संदीप ने कहा, "मुझे कैफियत मांगने का अधिकार है, इसलिए कैफियत मांग रहा हूं।"

"हैंग योर अधिकार ! तुम इस कमरे से निकल जाओ—"

संदीप अब तक नाम मात्र को भी उत्तेजित नहीं हुआ था। अब भी उत्तेजित नहीं हुआ। शांत स्वर में बोला, "मुझे चले जाने में कोई आपत्ति नहीं है लेकिन आपको विशाखा को इस घर में रहने देने का अधिकार देना होगा, विशाखा को आपको पत्नी की मर्यादा देनी होगी।"

छोटे बाबू शुरू से ही उत्तेजित था, अब और भी उत्तेजित हो गया। बोला, "स्काउंड्रेल कहीं के !"

संदीप ने कहा, "आप चाहे मुझे स्काउंड्रेल कहें या लोफर, मैं आपकी बात का रंज नहीं मानूंगा और न ही उत्तेजित होऊंगा। आप बताइए, विशाखा को घर में रहने दीजिएगा या नहीं ?"

अजय बाबू इतना कहकर चुप हो गए। मैंने पूछा, "इसके बाद क्या हुआ ?"

अजय बाबू जीवन-भर हाईकोर्ट में प्रैक्टिस करते रहे हैं। सिर्फ प्रैक्टिस ही नहीं किया है बल्कि बहुत दिनों तक स्टैण्डिंग काउंसिल भी थे। आखिर में जस्टिस भी हुए थे। उस समय हर रोज़ लेक के पास घूमने जाते थे। घर से गाड़ी से आकर लेक के सामने के गेट के पास उतरते थे। उसके बाद पानी की बगल से जानेवाले रास्ते से कहानी सुनाते-सुनाते चहल-कदमी करते थे।

मैं उनकी कहानी सुनने को हर रोज़ छटपटाता रहता था। किसी-किसी दिन कहानी का थोड़ा-सा हिस्सा सुनाते और बाकी हिस्से को सुनने के लिए मैं रोज़-ब-रोज़ उत्कंठित रहा करता था।

वे कहते, "आप तो देख ही रहे हैं आज आदमी किस तरह पैसे के पीछे मारा-मारा फिर रहा है। आज आदमी के लिए पैसा ही परमेश्वर हो गया है। आज भी वह सैक्सबी मुखर्जी कंपनी मौजूद है। उस कंपनी के शेयरों की कीमत दिन-दिन बढ़कर आसमान छू रही है। फिर भी लोग उसके शेयर खरीदने के लिए मुंह बाए बैठे रहते हैं। कब एक रुपया कीमत बढ़ी या एक रुपया कम हुई उसका हिसाब मन ही मन रखते हैं। आदमी के सिर दोष मढ़ा ही क्यों जाए ? हमारी सरकार भी तो दिन-दिन रुपये के पीछे भाग रही है—"

मैंने पूछा, "सो कैसे ?"

"देख नहीं रहे हैं कि सरकार चाहती है, आदमी रुपये के पीछे भागे। सरकार चाहती है कि आदमी जुआ खेले। जबकि हम बचपन से ही सुनते आ रहे हैं कि जुआ खेलना पाप है। हमारे जमाने में जो लोग जुआ खेलते थे हम उन्हें जुआरी कहते थे। उस समय जुआ खेलना निंदनीय काम समझा जाता था। आजकल हम सभी जुआबाज हैं।"

मैंने कहा, "सो कैसे ? आजकल सभी तो जुआ नहीं खेलते—"

"जुआ नहीं खेलते, लेकिन सट्टा खेल रहे हैं। सरकार ने सट्टे को गैर-कानूनी घोषित कर दिया है, लेकिन सरकार खुद ही सट्टा खेल रही है।"

मैं सुनकर अवाक् हो गया। बोला, "कैसे ?"

[illegible]

निकले सकते हैं। लेकिन आज ?"

यह कहकर अजय बाबू जरा चुप हो गए। उसके बाद कहने लगे, "लेकिन आज ? देश में चूंकि लोगों की संख्या बढ़ती जा रही है, इसलिए शहरों, गांवों और कस्बों में दुकानें भी बढ़ रही हैं। उनमें से किस चीज की दुकानों की ज्यादा वृद्धि हो रही है ? सोने और लॉटरी की दुकानों की। क्यों बढ़ रही हैं ? सड़क पर चलने के दौरान आजकल किसी महिला को निखालिस सोने का गहना पहने हुए देखा है ? नहीं। आज चोरी और बदमाशी के जमाने में सभी गिलट के गहने पहन रही हैं। तो फिर सोने की दुकानों में वृद्धि क्यों हो रही है ? कहिए, क्यों ?"

मैं चुप रहा।

अजय बाबू कहने लगे, "इसका कारण है इनकम टैक्स। अंग्रेजों के जमाने में इनकम टैक्स की इतनी वसूली नहीं थी। जिन्हें जो देना चाहिए, दे देते थे। जो लोग टैक्स नहीं देते थे उनकी तादाद कम थी। आज टैक्स न देनेवालों की संख्या बढ़ गई है। ये लोग सोने में रुपया इनवेस्ट करते हैं। सोने में रुपया इनवेस्ट करने से पकड़ना मुश्किल है। यदि पकड़ में आ भी जाते हैं तो बताते हैं कि ये पैतृक जमाने के गहने हैं। कोई साबित नहीं कर सकेगा कि गहने कबके बने हुए हैं। इस युग में काला धन रखने का सर्वाधिक सुरक्षित उपाय है सोने में रुपया लगाना। देश में काले धन का पहाड़ खड़ा हो गया है इसलिए सोने की दुकानों की संख्या में इतनी वृद्धि हो गई है। और लॉटरी···"

मैं उस समय आश्चर्यचकित हो गया था। कहा, "उसके बाद संदीप का क्या हुआ, यही बताइए—"

अजय बाबू ने कहा, "बता रहा हूं। लेकिन उसके पहले यह सब बात नहीं कहूंगा तो संदीप की ट्रैजडी आप ठीक से समझ नहीं सकिएगा। पहले लॉटरी के बारे में ही बता दूं। लॉटरी की दुकानों की संख्या बढ़ने का भी एक कारण है। बगैर मेहनत किए रुपया कमाने के फेर में ही अभी सब लोग व्यस्त हैं। उन्नीस सौ सड़सठ ई० में केरल में पहले-पहल लॉटरी की शुरुआत हुई। उसके बाद पूरे भारत में आज सरकारी लॉटरी की संख्या एक सौ चार हो गई है। उसके बाद हैं गैर-सरकारी लॉटरियां। उनकी भी संख्या कोई कम नहीं है। अभी इस तरह की एक सरकारी लॉटरी है जो पांच फर्स्ट प्राइज देती है। फर्स्ट प्राइजों के बाद हरेक की रुपयों की संख्या है पांच-पांच लाख रुपया। यह किस चीज का लक्षण है ? यह क्या अच्छा है ? सभी अगर इतने रुपये की चाह करने लगें तो मेरि

छोटे बाबू ने कहा, "इसी बात को जानने के लिए विशाखा को अपने साथ लेकर आए हो ?"

संदीप ने कहा, "हां—"

छोटे बाबू ने कहा, "तो फिर मेरी मर्जी की बात सुन लो। उस बार मेरी शादी कराई गई थी और कराई थी तो दादी मां ने। अब मैंने अपनी मर्जी से उसे त्याग दिया है। उस बार चूंकि ज़रूरत थी इसलिए मैंने विशाखा से शादी की थी और अब अपनी मर्जी से उसे त्याग दिया है—मेरी विशाखा से सिर्फ शादी ही हुई थी, लेकिन विवाह का कोई आनुषंगिक अनुष्ठान संपन्न नहीं हुआ था।"

"तो ऐसी हालत में विशाखा कहां जाएगी ?"

छोटे बाबू ने कहा, "तुम क्या मुझसे कैफियत मांग रहे हो ?"

संदीप ने कहा, "आप अगर इसे कैफियत समझते हैं तो मैं यही मांग रहा हूं।"

"तुम मुझसे कैफियत मांग रहे हो ? तुम कौन हो ? हू आर यू ?"

संदीप ने कहा, "मुझे कैफियत मांगने का अधिकार है, इसलिए कैफियत मांग रहा हूं।"

"हैंग योर अधिकार ! तुम इस कमरे से निकल जाओ—"

संदीप अब तक नाम मात्र को भी उत्तेजित नहीं हुआ था। अब भी उत्तेजित नहीं हुआ। शांत स्वर में बोला, "मुझे चले जाने में कोई आपत्ति नहीं है लेकिन आपको विशाखा को इस घर में रहने देने का अधिकार देना होगा, विशाखा को आपको पत्नी की मर्यादा देनी होगी।"

छोटे बाबू शुरू से ही उत्तेजित था, अब और भी उत्तेजित हो गया। बोला, "स्काउंड्रेल कहीं के !"

संदीप ने कहा, "आप चाहे मुझे स्काउंड्रेल कहें या लोफर, मैं आपकी बात का रंज नहीं मानूंगा और न ही उत्तेजित होऊंगा। आप बताइए, विशाखा को घर में रहने दीजिएगा या नहीं ?"

अजय बाबू इतना कहकर चुप हो गए। मैंने पूछा, "इसके बाद क्या हुआ ?"

अजय बाबू जीवन-भर हाईकोर्ट में प्रैक्टिस करते रहे हैं। सिर्फ प्रैक्टिस ही नहीं किया है बल्कि बहुत दिनों तक स्टैण्डिंग काउंसिल भी थे। आखिर में जस्टिस भी हुए थे। उस समय हर रोज़ लेक के पास घूमने जाते थे। घर से गाड़ी से आकर लेक के सामने के गेट के पास उतरते थे। उसके बाद पानी की बगल से जानेवाले रास्ते से कहानी सुनाते-सुनाते चहल-कदमी करते थे।

मैं उनकी कहानी सुनने को हर रोज़ छटपटाता रहता था। किसी-किसी दिन कहानी का थोड़ा-सा हिस्सा सुनाते और बाकी हिस्से को सुनने के लिए मैं रोज-ब-रोज़ उत्कंठित रहा करता था।

वे कहते, "आप तो देख ही रहे हैं आज आदमी किस तरह पैसे के पीछे मारा-मारा फिर रहा है। आज आदमी के लिए पैसा ही परमेश्वर हो गया है। आज भी वह सैक्सबी मुखर्जी कंपनी मौजूद है। उस कंपनी के शेयरों की कीमत दिन-दिन बढ़कर आसमान छू रही है। फिर भी लोग उसके शेयर खरीदने के लिए मुंह बाए बैठे रहते हैं। कब एक रुपया कीमत बढ़ी या एक रुपया कम हुई उसका हिसाब मन ही मन रखते हैं। आदमी के सिर दोष मढ़ा ही क्यों जाए ? हमारी सरकार भी तो दिन-दिन रुपये के पीछे भाग रही है—"

मैंने पूछा, "सो कैसे ?"

"देख नहीं रहे हैं कि सरकार चाहती है, आदमी रुपये के पीछे भागे। सरकार चाहती है कि आदमी जुआ खेले। जबकि हम छुटपन से ही सुनते आ रहे हैं कि जुआ खेलना पाप है। हमारे जमाने मे जो लोग जुआ खेलते थे हम उन्हें जुआरी कहते थे। उस समय जुआ खेलना निंदनीय काम समझा जाता था। आजकल हम सभी जुआबाज़ हैं।"

मैंने कहा, "सो कैसे ? आजकल सभी तो जुआ नहीं खेलते—"

"जुआ नहीं खेलते, लेकिन सट्टा खेल रहे हैं। सरकार ने सट्टे को गैर-कानूनी घोषित कर दिया है, लेकिन सरकार खुद ही सट्टा खेल रही है।"

मैं सुनकर अवाक् हो गया। बोला, "कैसे ?"

अजय बाबू ने कहा, "सरकार सट्टा नहीं खेल रही है ? यह लॉटरी का व्यवसाय क्या है ? अंग्रेजों के शासनकाल के प्रारम्भिक युग में शहरों के विकास के लिए लॉटरी का [illegible]

निचले तबके हैं। लेकिन आज ?"

यह कहकर अजय बाबू जरा चुप हो गए। उसके बाद कहने लगे, "लेकिन आज ? देश में चूंकि लोगों की संख्या बढ़ती जा रही है, इसलिए शहरों, गावों और कस्बों मे दुकानें भी बढ़ रही हैं। उनमे से किस चीज की दुकानो की ज्यादा वृद्धि हो रही है ? सोने और लॉटरी की दुकानो की। क्यों बढ़ रही है ? सडक पर चलने के दौरान आजकल किसी महिला को निखालिस सोने का गहना पहने हुए देखा है ? नहीं। आज चोरी और बटमारी के जमाने में सभी गिलट के गहने पहन रही हैं। तो फिर सोने की दुकानो में वृद्धि क्यों हो रही है ? कहिए, क्यों ?"

मैं चुप रहा।

अजय बाबू कहने लगे, "इसका कारण है इनकम टैक्स। अंग्रेजों के जमाने मे इनकम टैक्स की इतनी बला नहीं थी। जिन्हें जो देना चाहिए, दे देते थे। जो लोग टैक्स नहीं देते थे उनकी तादाद कम थी। आज टैक्स न देनेवालो की सख्या बढ गई है। वे लोग सोने में रुपया इनवेस्ट करते हैं। सोने में रुपया इनवेस्ट करने से पकडना मुश्किल है। यदि पकड़ मे आ भी जाते हैं तो बताते हैं कि ये पैतृक जमाने के गहने हैं। कोई साबित नहीं कर सकेगा कि गहने कबके बने हुए हैं। इस युग में काला धन रखने का सबसे सुरक्षित उपाय है सोने मे रुपया लगाना। देश में काले धन का पहाड खड़ा हो गया है इसलिए सोने की दुकानों की सख्या मे इतनी वृद्धि हो गई है। और लॉटरी···"

मैं उस समय आश्चर्यचकित हो गया था। कहा, "उसके बाद सदीप का क्या हुआ, यही बताइए—"

अजय बाबू ने कहा, "बता रहा हूं। लेकिन उसके पहले यह सब बात नहीं कहूंगा तो सदीप की ट्रैजडी आप ठीक से समझ नहीं सकिएगा। पहले लॉटरी के बारे में ही बता दूं। लॉटरी की दुकानो की सख्या बढ़ने का भी एक कारण है। बगैर मेहनत किए रुपया कमाने के फेर मे ही अभी सब लोग व्यस्त हैं। उन्नीस सौ सड़सठ ई० मे केरल मे पहले-पहल लॉटरी की शुरुआत हुई। उसके बाद पूरे भारत मे आज सरकारी लॉटरी की सख्या एक सौ चार हो गई है। उसके बाद है गैर-सरकारी लॉटरियां। उसकी भी सख्या कोई कम नहीं है। अभी इस तरह की एक सरकारी लॉटरी है जो पाच फर्स्ट प्राइज देती है। फर्स्ट प्राइजों के अब हरेक की रुपयों की संख्या है पाच-पाच लाख रुपया। यह किस चीज का लक्षण है ? यह क्या अच्छा है ? सभी अगर इतने रुपये की चाह करने लगें तो नीति

कहां रहेगी ? नैतिक मूल्यों की ओर कौन ध्यान देगा ?"

मैंने फिर कहा, "उसके बाद संदीप का क्या हुआ, यही बताइए।"

अजय बाबू ने कहा, "मैं हमीद साहब के बारे में सोचता हूं। हमीद साहब ने दलाली कर लाखों रुपया पैदा किया है, पैदा करके अब साधु बन गया है, लेकिन हमीद साहब जैसा आदमी भी संदीप की प्रशंसा करता है।

"कहता है—ऐसा आदमी अब नहीं मिलता है और न ही मिलेगा। वे जब जेल में थे तो मैंने उन्हें कितना ही लोभ दिखाया, कितनी ही बार कहा था कि आप जो चाहिएगा, आपको मिल जाएगा। कहा था—अपने किसी सगे-सम्बन्धी का नाम बताइए, किसी का पता दीजिए। बीड़ी, सिगरेट, शराब-व्हिस्की सारी चीजें मंगा दी जाएंगी। जेलखाने के अन्दर ही आपको 'होम कमफोर्ट' उपलब्ध करा दिया जाएगा। इस पर भी उन्होंने कभी किसी दिन कोई पता नहीं बताया। वे हमेशा कहा करते थे—मुझे किसी चीज की जरूरत नहीं है, मेरा कोई सगा-सम्बन्धी नहीं है, मेरा कोई शुभाकांक्षी नहीं है। मैं एक तनहा आदमी हूं, दुनिया में मेरा अपने के नाम पर कोई नहीं है, सिवाय एक व्यक्ति के···"

लोग-बाग पूछते, "वह कौन है ? उसका नाम-पता बताइए—"

संदीप ने किसी का नाम-पता नहीं बताया था।

एक ही दिन नहीं, बल्कि हजारों दिन तक पूछने पर भी उससे कोई उत्तर नहीं मिला था। संदीप लाहिड़ी जेल में सिर्फ मन लगाकर काम करता था। किसी दिन किसी से दया या करुणा की भीख नहीं मांगी थी। संदीप जानता था कि दया की भीख मांगने के पीछे एक मानसिक नीचता का भाव छिपा रहता है। संदीप यह भी जानता था कि वह जिस कारण जेल की सजा भुगत रहा है वह निंदनीय और बहुत बड़े अपराध का द्योतक है। लेकिन उद्देश्य यदि महान हो तो वह चाहे जितना ही निंदनीय कार्य क्यों न हो, क्षमा के योग्य है। दूसरे के लिए सिर्फ प्राण या जीवन ही नहीं, जीवन का सर्वस्व न्योछावर करना एक धर्म है। वह एकाग्रचित्त से उसी धर्म का पालन कर रहा था।

उस धर्म का वह हमेशा पालन करता रहेगा। जिसके लिए वह धर्म का पालन करता रहेगा वह है विशाखा। उसके लिए तो विशाखा महज एक स्त्री ही नहीं, बल्कि सब कुछ है। विशाखा से उसने कोई प्रतिदान पाने की उम्मीद नहीं की है और न ही वह उसकी चाह करता है। वह एकतरफा भाव से उसे देते ही रहेगा। उसे न तो कुछ पाने की आशा है और न ही इच्छा। एकतरफा देते रहने में ही उसे आनन्द प्राप्त होता रहेगा। यही वजह है कि अपने शयन-कक्ष की दीवार पर टंगी विशाखा की तस्वीर की ओर ताकता रहता था तो मन ही मन एक कामना करता था—तुम सुखी होओ, तुम सार्थक होओ। मनुष्य को जीवन में जो कुछ प्राप्त होने पर सुख मिलता है, तुम्हें वही सब प्राप्त हो। उसी में मेरा सुख है, उसी में मेरी सार्थकता है, उसी में मेरा पारमार्थिक लाभ है। जिन्दगी भर तुम्हें दुख और उपेक्षा मिलती रही है, अबकी छोटे बाबू जेल से लौटकर आएं तो मैं तुम्हें सुखी देख सकूं, यही मेरी कामना है।

यह सब सोचते-सोचते संदीप नींद में खो जाता और एक ही नींद में रात बिता कर सवेरे बिस्तर से फिर उठ जाता। उसके बाद सब काम खत्म कर ऑफिस चला जाता। वहां जाने पर लाखों रुपये का हिसाब-किताब शुरू होने पर भी रात में जिस तस्वीर को देखते-देखते उसकी आंखों में नींद उतर आती, वही तस्वीर उसकी आंखों के सामने तिर आती।

बैंक के एकाउंटेन्ट से आरम्भ कर जो भी लोग उसके कमरे में आते, वे मैनेजर को देखकर अवाक् हो जाते। मैनेजर साहब मानो लेजर खाते पर ध्यान में मग्न होकर

बैठे हुए हैं।

कर्मचारी वर्ग कहते, "मैनेजर साहब अभी व्यस्त हैं। अभी कोई उनके पास नहीं जाना। टिफिन के बाद जाना—"

मैनेजर के हुक्म से हालांकि समूचा दफ्तर चलता, लेकिन सर्वोच्च अधिकारी होने के बावजूद सभी उसे श्रद्धा की दृष्टि से देखते। यह है संदीप, यह है संदीप लाहिड़ी का असली रूप।

वकील हमीद साहब के संदीप लाहिड़ी जैसा सच्चा और महान व्यक्ति बहुत ही कम तादाद में जेलखाने में कैदी बनकर आए हैं, साथ ही संदीप लाहिड़ी जैसा अत्यन्त असाधु अपराधी जेलखाने में बहुत ही कम आए हैं।

उस दिन एक दाढ़ी-मूंछ वाले व्यक्ति के अचानक पार्क स्ट्रीट के थाने में प्रवेश करते ही सभी आश्चर्यचकित हो गए। यह आदमी इस तरह दौड़ा हुआ क्यों आ रहा है? वह आदमी कौन है?

उस आदमी को देखकर लगा, वह जैसे भारी मुसीबत में हो। वह आदमी उस समय भी हाफ रहा था। देखकर लगा, इस आदमी को कुछ जरूरी काम है। लगता है, वह दौड़ता हुआ थाने में आया है। ड्यूटी पर जो पुलिसकर्मी तैनात थे, उन्होंने पूछा, "किससे मिलना चाहते हैं?"

"थाने के ओ० सी० हैं?"

ड्यूटी पर तैनात पुलिसकर्मियों ने कहा, "हां, हैं—"

"किस कमरे में?"

उसने हाथ से इशारा करते हुए कहा, "यहां से सीधे चलकर आखिरी छोर के बाईं तरफ के कमरे में जाइए। वहां आदमी है, बता देगा।"

वह आदमी अब रुका नहीं। उसकी बात सुनते ही तेज कदमों से सामने की ओर जाने लगा। उसके बाद बाईं ओर मुड़ते ही एक आदमी ने पूछा, "आप किससे मिलना चाहते हैं?"

"थाने के ओ० सी० हैं?"

उस आदमी ने पूछा, "आपका नाम क्या है?"

संदीप लाहिड़ी ने कहा, "मेरा नाम है संदीप लाहिड़ी, लेकिन नाम कहने से मुझे नहीं पहचानेंगे—"

आदमी अन्दर चला गया। शायद साहब से अनुमति मांगने के ख्याल से···

अजय बाबू ने कहा, "उस दिन पार्क स्ट्रीट के सतहत्तर नम्बर मकान में आश्चर्यजनक घटना घटित हुई थी। उस घटना का ब्यौरा प्रस्तुत किए बगैर पार्क स्ट्रीट के थाने की घटना स्पष्ट नहीं हो सकेगी। आश्चर्यजनक आदमी है यह हमीद साहब। उसके पास कैसे खबरें पहुंच जाती थीं, यह सोचना मेरे लिए मुश्किल है। हमीद साहब से ही सुनने को मिला है कि अब उस तरह के बहुत सारे दलाल पैदा हो गए हैं। पहले इतने नहीं थे। जमाना जितना ही बुरा होता जा रहा है, हमीद साहब जैसे लोगों के गिरोह में उतनी ही वृद्धि होती जा रही है। सिर्फ जेलखाने में नहीं, बल्कि हर जगह। आप किसी भी ऑफिस में नौकरी की तलाश में जाइए, वहां आपको हमीद साहब जैसे लोग दबोच लेंगे। आप ट्रेन के टिकट का आरक्षण कराने जाइए, वहां भी हमीद साहब जैसे लोग आपको पकड़ लेंगे। वे लोग हर जगह फैल गए हैं। वे लोग किस तरह सारी खबरें इकट्ठी कर लेते हैं,

यह भी एक हैरतअंगेज बात है। अस्पताल में भर्ती होना हो तो वहां भी दलाल की जरूरत पड़ेगी।"

सो उस दिन पार्क स्ट्रीट के सौम्य बाबू के घर विशाखा के साथ पहुंचकर संदीप जब सौम्य बाबू से गरमागरम बहस कर रहा था तो संदीप ने गुस्से में आकर कहा, "आप बताइए कि विशाखा को अपने घर में रहने दीजिएगा या नहीं ? बोलिए, रहने दीजिएगा या नहीं ? कहिए, विशाखा को पत्नी की मर्यादा दीजिएगा या नहीं···"

छोटे बाबू ने दूसरा ही रूप धारण कर लिया। बोला, "तुम मुझे भय दिखा रहे हो ?"

संदीप ने कहा, "आप अपनी पत्नी को यदि घर पर नहीं रहने दीजिएगा तो मैंने किसके लिए बैंक से रुपयों की चोरी की थी ? किसके लिए आठ साल तक जेल की सजा काटता रहा ? आपके जीवन के सुख के लिए ?"

"तुमने किसके लिए रुपयों की चोरी की, यह मैं कैसे जानूंगा ?"

बिजली आगे बढ़कर सामने आई। बोली, "तुम उससे बहस क्यों कर रहे हो ? यह तो जेल से लौटा हुआ एक मुजरिम है।"

संदीप ने कहा, "मैं जेल से लौटा हुआ मुजरिम अवश्य हूं। लेकिन किसकी खातिर जेल की सजा भुगतता रहा ? मैं किसके लिए मुजरिम बना था ?"

छोटे बाबू बोला, "यह तुम्हीं जानो। मुझसे क्यों पूछ रहे हो ?"

संदीप ने कहा, "आप अच्छी तरह जानते हैं कि किसके लिए रुपयों की चोरी कर मैं जेल गया था।"

विशाखा अब तक संदीप के पीछे खड़ी थी और रो रही थी। उसने अब संदीप का हाथ पकड़कर खींचा। बोली, "तुम मुझे यहां क्यों ले आए ? चलो, घर चलें···"

संदीप ने उसकी ओर ताकते हुए कहा, "जाओगी क्यों ? चले जाने के लिए ही क्या तुम्हें यहां लेकर आया हूं ? इस घर में तुम्हें रहने का अधिकार है। तुम डर क्यों रही हो ?"

विशाखा ने कहा, "नहीं-नहीं संदीप, तुम मेरे लिए बहुत तकलीफ झेल चुके हो। अब नहीं झेलनी है। चलो, अब लौट चलें—"

संदीप ने कहा, "नहीं, मैं किसी भी हालत में लौटकर नहीं जाऊंगा।"

विशाखा ने कहा, "तुम्हारे पैरों पड़ती हूं संदीप, अब मुझसे बरदाश्त नहीं हो रहा है। तुम लौट चलो, दिन-भर तुम्हें काफी तकलीफ झेलनी पड़ी है—"

बिजली ने विशाखा की ओर देखते हुए कहा, "हां-हां, लौट जाओ, अब फिर कभी इस घर में कदम मत रखना—"

संदीप ने विशाखा की तरफ से कहा, "बातचीत छोटे बाबू से हो रही है, तुम बीच में क्यों टपक पड़ी ? वह रहेगी, तुम इस घर को छोड़कर चली जाओ—"

अब विशाखा ने भी बिजली की ओर निहारते हुए कहा, "चुप रह कमीनी ! तुझे मैंने अपने घर में अपना सर्वनाश करने के लिए ही रहने दिया था ?"

सौम्यपद ने कहा, "खबरदार ! तुम बिजली से कुछ नहीं कह सकती। मैंने खुद ही उसे लाकर इस घर में रखा है।"

संदीप ने कहा, "आपने यह अन्याय किया है। सामाजिक अन्याय।"

छोटे बाबू ने कहा, "चुप रहो। क्या अन्याय, यह समझने की मेरी काफी उम्र हो चुकी है।"

संदीप ने कहा, "अपनी विवाहिता पत्नी को त्याग करना क्या अन्याय नहीं है ? आप यह क्या कह रहे हैं ?"

विशाखा ने कहा, "नहीं संदीप, तुम गलती कर रहे हो। मेरी उससे शादी नहीं हुई है—"

संदीप ने कहा, "बेकार का बकवास क्यों कर रही हो तुम? छोटे बाबू से तुम्हारी शादी नहीं हुई है?"

विशाखा ने कहा, "नहीं, शादी नहीं हुई है—"

संदीप विशाखा की बात सुनकर अवाक् हो गया। बोला, "शादी नहीं हुई है—इसका मतलब?"

विशाखा बोली, "सचमुच शादी नहीं हुई है।"

संदीप ने कहा, "मैंने अपनी आंखों से देखा है कि तुम दोनों की शादी हुई है। तो फिर मैंने क्या गलत देखा था? तो फिर दादी मां तुम्हें क्यों अपने घर में ले गई थी? तुम्हारे हाथ में सन्दूक की चाबी क्यों दी थी? हिसाब का खाता तुम्हारे हाथ में क्यों थमा दिया था?"

विशाखा ने कहा, "नहीं संदीप, नहीं। विश्वास करो, छोटे बाबू से मेरी शादी नहीं हुई थी।"

"इसका मतलब?"

विशाखा ने कहा, "इसका मतलब यह कि शादी नहीं हुई थी। सिर्फ मांग में सिंदूर भर देने से क्या शादी हो जाती है?"

संदीप ने कहा, "आज इतने दिनों बाद तुमने मुझसे यह बात कही? कि मांग में सिंदूर भरने से ही शादी नहीं होती। तो फिर तुम यह कहना चाहती हो कि छोटे बाबू से तुम्हारी शादी नहीं हुई थी?"

विशाखा ने कहा, "नहीं, नहीं हुई थी। वह सिर्फ लोगों की आंख में धूल झोंकने का अनुष्ठान था। ऐसा न होता तो दुर्भाग्य का मुझ पर ऐसा प्रकोप क्यों होता? स्त्री-आचार कहां हुआ, देह में हल्दी लेपन कहां हुआ, पुष्पशय्या कहां रची गई? सुहागरात कहां मनाई गई? कब यह सब हुआ?"

संदीप ने कहा, "यह सब भले ही न हुआ हो, लेकिन छोटे बाबू से अवश्य ही तुम्हारी शादी हुई है। दादी मां ने मान लिया था, पुरोहितजी ने मान लिया था, समाज ... ही तुम्हारे ... हैं। उस ... यह बिजली

ही मेरी पत्नी है। मैंने रजिस्ट्री कर इससे शादी कर ली है—

"अयं, शादी कर ली है?"

छोटे बाबू ने कहा, "शादी न की होती तो बिजली के साथ एक ही घर में रह सकता था?"

संदीप का पूरा जिस्म गुस्से से थर-थर कांपने लगा। बोला, "स्काउन्ड्रेल, इतनी देर तक मैं भले आदमी की तरह आपके साथ पेश आता रहा, अब तक शालीनता के साथ बातें करता रहा, लेकिन अब मैं बरदाश्त नहीं करूंगा..."

अचानक विशाखा फर्श पर लुढ़क कर गिर पड़ी। संदीप ने कहा, "अब यदि विशाखा को कुछ हो जाता है तो उसकी जिम्मेदारी कौन लेगा?"

छोटे बाबू स्वयं को संयत नहीं रख सका। चटपट बगल की आलमारी से अपनी पिस्तौल निकाल संदीप की तरफ निशाना करते हुए कहा, "मुझे स्काउन्ड्रेल कह... हूं इस घर का मालिक हूं। यह देखो..."

बिजली ने चट से छोटे बाबू के सामने आकर उसका हाथ कसकर पकड़ लिया। तत्क्षण एक भयंकर आवाज़ कर पिस्तौल से आग का गोला बाहर निकल आया।

पार्क स्ट्रीट के ओ. सी. थोड़ी देर पहले अपने दैनिक राउण्ड से वापस आए थे।

अचानक उसके 'ड्यूटी' ने कमरे के अन्दर प्रवेश किया। बोला, "सर एक आदमी आपसे मिलने आया है—"

"मुझसे क्यों? बगल में छोटे साहब के कमरे में जाने कहो—"

"वह आदमी कह रहा है कि आपसे ही मिलना है—"

"अपना नाम बताता है?"

"जी हां, संदीप लाहिड़ी।"

"अच्छा, बुला लाओ।"

संदीप लाहिड़ी ओ. सी. के कमरे में घुसा। ओ. सी. ने कहा, "क्या चाहिए?"

संदीप ने कहा, "मुझे एरेस्ट कर लीजिए सर।"

"क्यों, आपने क्या किया है?"

संदीप ने कहा, "मैंने एक व्यक्ति की हत्या की है—"

"किसने, आपने? किसकी हत्या की है? कब हत्या की है? क्यों हत्या की है?"

मैं उत्कण्ठा के साथ अजय बाबू की कहानी सुन रहा था।

पूछा, "क्यों? संदीप लाहिड़ी को निशाना बनाकर छोटे बाबू ने पिस्तौल से गोली छोड़ी। फिर संदीप क्यों थाने में गया?"

ओ. सी. से दुबारा पूछा, "किसकी हत्या की है?"

"श्रीमती बिजली देवी की।"

"वे कौन हैं?"

संदीप ने कहा, "वे सतहत्तर नम्बर पार्क स्ट्रीट के सौम्यपद मुखर्जी की पत्नी थीं।"

"कब हत्या की है?"

"अभी-अभी। मैं सीधे वहीं से आ रहा हूं। मुझे मेहरबानी कर गिरफ्तार कर लीजिए। मैं खूनी हूं।"

ओ. सी. ने पूछा, "आपने हत्या क्यों की?"

संदीप कुछ कहे कि इसके पहले ही बच्चन घबराए हुए कमरे के अन्दर आया।

"तुम कौन हो?"

"सर, मैं इस रास्ते के मुखर्जी साहब के घर का दरवान हूं। मेरा नाम बच्चन सिंह है।"

"तुम क्यों आए हो?"

बच्चन ने कहा, "इस आदमी ने मेरे मेम साहब की हत्या की है। हत्या करके भागा जा रहा था, इसलिए मैं इसके पीछे दौड़ा-दौड़ा आ रहा हूं।"

"इसने तुम्हारे मेम साहब की तुम्हारे सामने हत्या की है? तुमने हत्या करते हुए देखा है?"

"हां, हुजूर। मैं आध घण्टे के लिए दुकान गया था, साहब के लिए शराब खरीदने

के वास्ते। उसी अन्तराल में इस आदमी के अन्दर घुसकर मेम साहब की हत्या की है—"

"तुमने अपनी आंखों से देखा है?"

"हां हुजूर, मैंने अपनी आंखों से देखा है। मेम साहब अभी तक कमरे के फर्श पर पड़ी हुई हैं। गोली सिर में लगी है, खून से लथपथ हो गई हैं। खानसामा, बावर्ची वगैरह हल्ला सुनकर अपने-अपने कमरे से बाहर निकल आए थे। साहब का ड्राइवर विशु डाक्टर को बुलाने के लिए गया है। टेलीफोन खराब है, इसलिए डाक्टर साहब को फोन से खबर नहीं दी जा सकी। आप एकबार हमारे घर पर चलिए हुजूर। सब कुछ देखने को मिल जाएगा—"

ओ. सी. ने तत्क्षण 'ड्यूटी' को कहकर गाड़ी मंगवाई। उसके बाद संदीप मुखर्जी के हाथ में हथकड़ी पहनाई गई। संदीप ने ज़रा भी आपत्ति नहीं की। आपत्ति तो दूर की बात, बल्कि स्वेच्छा से अपने हाथ आगे बढ़ा दिए।

इस बीच थाने में हलचल मच गई है। इस तरह की घटना उन लोगों ने इसके पहले कभी नहीं देखी थी। खून का मुजरिम खुद ही थाने में आया और खुद को पुलिस के हवाले कर दिया, यह एक विरल घटना है। सिर्फ विरल ही नहीं, बल्कि इस थाने के इतिहास में इस तरह की घटना इसके पहले कभी घटित नहीं हुई थी। इसीलिए ओ. सी. के कमरे में कॉन्सटेबल, छोटे दरोगा, और 'ड्यूटी' के झुण्ड ने उपस्थित होकर भीड़ लगा दी है और वे लोग मुजरिम को देख रहे हैं। मुजरिम के हाथ में एक रिवॉल्वर है।

उसके बाद जीप सबको अपने साथ ले सतहत्तर नम्बर मकान की ओर रवाना हो गई। सौम्यपद का मकान दूर नहीं, करीब ही है। थाने से ज्यादा वक्त नहीं लगा। ओ. सी. सबसे पहले उतरे। उसके बाद उतरा बच्चन। और उसके बाद दो पुलिसकर्मी हथकड़ी बंधे संदीप को लेकर घर के अन्दर घुसे।

मकान के दो-मंजिले पर जाते ही लोगों की भीड़ देखने को मिली। घर के नौकर-नौकरानी, विशु, खानसामा, बावर्ची वगैरह एक व्यक्ति को घेर कर खड़े हैं। पुलिस-वालों पर नज़र पड़ते ही उन लोगों ने हटकर उनके लिए जगह खाली कर दी। ओ. सी. को सामने ले जाकर बच्चन ने सौम्यपद मुखर्जी से उनका परिचय कराया। बोला, "ये हैं मेरे मालिक हुजूर, मुखर्जी साहब—"

मुखर्जी साहब ने भी ओ. सी. को नमस्कार किया। ओ. सी. ने अदब के साथ अपना सिर झुकाया।

पूछा, "आपका ही नाम सौम्यपद मुखर्जी है?"

"हां।"

"आप इस आदमी को पहचानते हैं?"

छोटे बाबू ने कहा, "पहचानता हूं।"

"इसका कहना है कि उसने इस महिला का रिवॉल्वर से खून किया है। यह किसका रिवॉल्वर है?"

छोटे बाबू ने कहा, "मेरा।"

"आपका रिवॉल्वर इसे कैसे मिल गया?"

छोटे बाबू ने कहा, "रिवॉल्वर मेरी आलमारी में था, वहां से निकालकर इसने मेरी पत्नी की हत्या की है। हत्या करने के बाद भाग गया।"

ओ. सी. ने कहा, "भागा नहीं था, मेरे थाने में जाकर खुद को सुपुर्द कर दिया है। इसने स्वीकार किया है कि आपकी पत्नी का मर्डर किया है। मैं इसी की तहकीकात करने के वास्ते आया हूं।"

इस बीच विशु डाक्टर को बुलाकर ले आया है। डाक्टर साहब मरीजा की नाड़ी देखने के लिए हाथ खींचते ही ठिठककर खड़े हो गए। एकबारगी बर्फ के मानिन्द हाथ। उसके बाद सिर पर हाथ रखा। वह भी ठण्डा है। बोले, "पेशेन्ट हैज डायेड—"

अजय बाबू के चुप होते ही मैंने अधीर होकर कहा, "उसके बाद क्या हुआ ?"

अजय बाबू बोले, "हमारी दुनिया में जो लोग भले आदमी हैं उन्हें ही कष्ट झेलना पड़ता है। जो लोग टैक्स की धोखाधड़ी करते हैं, जो लोग मिथ्याचारी हैं, जो लोग दूसरे के विनाश की चिन्ता में हरवक्त अधीर रहते हैं, जो लोग आत्मकेन्द्रित हैं, वे ही सुख से रहते हैं। सुख पर उनका एकाधिकार है। वे मकान बनाते हैं, गाड़ी खरीदते हैं, ऐश्वर्यवान बनते हैं और विलासिता के साथ जीवन जीते हैं। मसलन हमीद साहब। उन पैसों से वे सुख की पराकाष्ठा का जीवन जीते रहे। आदमी जो-जो चाहता है, उन्हें वह सब प्राप्त हुआ। आराम से रह रहे, उनके बाल-बच्चे भी सुख और आराम से समय बिता रहे हैं।"

और सौम्यपद मुखर्जी ? सैक्सबी मुखर्जी कम्पनी के मैनेजिंग डायरेक्टर मुक्तिपद मुखर्जी की मृत्यु के बाद अब सैक्सबी मुखर्जी कम्पनी का मैनेजिंग डाइरेक्टर सौम्यपद मुखर्जी हो गए हैं। उनकी कम्पनी के शेयर अब ऊंची छलांग लगाकर आसमान छूना चाहते हैं। उस कम्पनी के शेयर खरीद लाभान्वित होने के लिए शेयर-मार्केट में होड़ मची हुई है। बिजली के मरने के बाद वे अब जुली नामक एक एंग्लो-इंडियन क्रिश्चन लड़की के साथ सुख का उपभोग कर रहे हैं।

उसके बाद बाकी रहे गोपाल हाजरा, वरदा घोषाल और श्रीपति मिश्र। वे लोग कैसे हैं ? एक वाक्य में कहा जाए तो वे अब देश के, राष्ट्र के सौध-शिखर पर विराजमान हैं। उनकी सेवा, उनके सामने अदब से पेश आनेवाले और उन्हें सलाम करने वाले आदमी की कोई सीमा नहीं है। वे ही इस युग के वेद-कुरान-बाइबिल हैं। वे ही इस युग के गीता-रामायण-महाभारत हैं। उनकी पूजा करने से इष्ट की प्राप्ति होती है। अतः उनका भजन-कीर्तन करो, उनकी सेवा करो, उनका सम्मान करो, उन्हें सलाम करो। डी. ए. पी. पार्टी का मेम्बर बनो। इसी में तुम लोगों को मोक्ष प्राप्त होगा।

इसीलिए पूरी दुनिया में रातों-रात आमूल-चूल परिवर्तन आ गया। अभी आदमी कुछ सोचना नहीं चाहता, किस तरह रुपया कमाया जा सकता है, सिर्फ उसी तरफ सबका ध्यान है। पहले देश में एक ही गोपाल हाजरा था, अब दुनिया करोड़ों गोपाल हाजराओं से भर गई है। रुपया चाहिए, और रुपया चाहिए, और रुपया चाहिए। रुपया होने से और सुख का उपभोग कर सकेंगे। और भी आराम से ज़िन्दगी बसर कर सकेंगे।

लेकिन सुख पाने के लिए जिस कर्त्तव्य का पालन करना पड़ता है, उसका तुम लोग पालन करो। मैं गोपाल हाजरा बनना चाहता हूं। गोपाल हाजरा जैसा आदमी बनने के लिए क्या करना होगा, मुझे वह उपाय बता दो। नशे का माल बेचने से यदि बड़ा आदमी बना जा सकता है तो वह भी करने को राजी हूं। उसके लिए हमलोग हरदयाल और फटिक बनकर गोपाल हाजरा का भजन-कीर्तन करेंगे। मोटे तौर पर हमारा कहना यह है कि दूसरे का चाहे भला हो या बुरा, हमें रुपया चाहिए।

मैंने कहा, "लेकिन विशाखा का क्या हुआ ?"

अजय बाबू बोले, "कह रहा हूं, सब कुछ कह रहा हूं। साथ ही संदीप लाहिड़ी के बारे में अभी बताने ही जा रहा हूं।"

यह कहकर चन्द लमहों तक खामोशी में डूबे रहे। उसके बाद कहने लगे, "प्रेम

और त्याग दोनों अलग-अलग चीज नहीं है। जिस तरह प्रेमहीन त्याग नहीं हुआ करता, उसी तरह त्यागहीन प्रेम भी नहीं हुआ करता है। त्याग का ही अर्थ प्रेम और प्रेम का ही अर्थ है त्याग। आज इस धरती के पारिवारिक जीवन से प्रेम और त्याग दोनों का विलोप हो गया है। यही वजह है कि आज की दुनिया में ये दो चीजें ढूंढने से भी नहीं मिल रही हैं। अभी इन दो चीजों के बारे में चर्चा करने से लोग इसे पागलपन कहेंगे।"

हाईकोर्ट में जब संदीप लाहिड़ी का नारी-हत्या का [illegible]

पहले की ही तरह अपने पांच नम्बर भुवन [illegible]

पड़ी हुई थी। मंगला ने आकर कहा, "भाभ [illegible]

बहुत पुकारने के बाद विशाखा प्रत्युत्तर देती है।

कहती है, "अब दवा खाकर क्या होगा? अब दवा किसके लिए खाऊं?"

उसके बाद पूछती है, "आज कोई खबर सुनने को मिली है?"

"किस चीज की खबर?"

"संदीप की खबर—"

मंगला को किरायेदार से जो खबर मिलती है, वही बता देती है। कहती है, "संदीप दादा बाबू का मामला शुरू हो गया है। दादा बाबू ने खुलेआम कहा है कि उन्होंने ही पिस्तौल से बिजली की हत्या की है—"

विशाखा कहती है, "लेकिन खून तो किया था छोटे बाबू ने। मैंने अपनी आंखों से देखा है। तू मुझे एक बार कोर्ट ले जा सकती है? मैं जाकर यह बात जज साहब से कहूंगी। जज साहब मेरी बात क्या नहीं मानेंगे?"

मंगला कहती है, "लेकिन तुम इस हालत में हाकिम के पास जाकर यह सब बात कैसे कहोगी?"

"मुझे तू एक बार टैक्सी से नहीं ले जा सकती?"

मंगला कहती है, "अभी तुम्हें एक सौ पांच डिग्री बुखार है, डाक्टर बाबू ने तुम्हें हिलने-डुलने से मना किया है।"

विशाखा कहती है, "अखबार में क्या खबर छपी है? एक बार बताओ न, कि क्या खबर छपी है?"

मंगला कहती है, "सुनने में आया कि दादा बाबू ने हाकिम के सामने कबूल किया है कि उन्होंने ही बिजली दीदी को गोली मारकर हत्या की है—"

विशाखा तेज आवाज में कहती है, "बात तो ऐसी नहीं है री। मैं तो उस समय उस कमरे में उपस्थित थी। मैंने सारा कुछ देखा है।"

उसके बाद विशाखा फिर कहती है, "छोटे बाबू ने अलमारी से पिस्तौल निकाल, संदीप को मारने के लिए उसी की ओर गोली चलाई थी। और ठीक उसी समय कमीनी बिजली 'क्या कर रहे हो, क्या कर रहे हो' कह कर सामने चली आई और बाधा डालने की कोशिश की। उस समय पिस्तौल की गोली संदीप के बजाय बिजली के माथे पर जाकर लगी और बिजली तत्क्षण फर्श पर गिर पड़ी—"

"उसके बाद क्या हुआ?"

विशाखा ने कहा, "संदीप ने बिजली को उस हालत में मरते हुए देखकर छोटे बाबू के हाथ से पिस्तौल छीन ली और सीधे बाहर चला गया। वरना छोटे बाबू को खून करने के अपराध में फांसी की सजा मिल जाती—"

उसके बाद जरा सुस्ताकर विशाखा ने फिर कहना शुरू किया, "अरे, संदीप ने सिर्फ मेरी ही खातिर सारा दोष अपने माथे चढ़ा लिया। सोचा, छोटे बाबू आखिर में मुझे ही अपना कर गृहस्थी बसाएगा। मुझे ही सुखी बनाने के लिए संदीप ने यह काम

किया। इसके अलावा और कोई बात नहीं है। लेकिन ऐसा कहां हो सका? संदीप मुझे सुखी बनाने को व्यर्थ ही अपना प्राण गंवाने गया—छोटे बाबू ने क्या अन्ततः मुझे स्वीकार किया?"

यह कहकर फफक-फफकर बिसूरने लगी। कहने लगी, "मुझे तू एक बार हाकिम के पास ले चल—मैं जाकर सारा कुछ खुल्लमखुला कहूंगी।" यह कहते पुनः बेहोश हो गई। इतने में मंगला अब क्या करे! डाक्टर साहब को बुलाने झटपट बाहर चली गई। सदर दरवाजे पर ताला बन्द किया और फिर खड़ी नहीं रही।

और उस ओर तब फांसी के सेल में काफी रात उतर चुकी थी। उस समय उसके खिलाफ फांसी का हुक्म हो चुका था। ठीक आठ बजे उसे फांसी दी जाएगी। एक मिनट भी इधर-उधर नहीं होगा। धरती यदि उलट भी जाए तो कोई इसे रोक नहीं सकता। संदीप को मरने में बेहद प्रसन्नता का अहसास हो रहा था। इस तरह के सुख, आराम और परितृप्ति की मृत्यु का संभवतः किसी ने अनुभव नहीं किया होगा। इसी संदीप के बारे में ही सोचकर शायद कवि लिख गए हैं—'मरण रे, तुहूं मम श्याम समान।' कवि और भी लिख गए हैं—प्रेम के बिना त्याग नहीं हो सकता और त्याग के बिना प्रेम नहीं हो सकता। हमसे जो कुछ प्रयोजन के निमित्त छीन लिया जाता है, अत्याचार करके छीन लिया जाता है, वह त्याग नहीं है। हम लोग प्रेम से जो कुछ देते हैं वह पूरे तौर पर ही देते हैं, उसका कुछ भी अंश अपने पास नहीं रखते और उसी देने में ही दान को सार्थक समझते हैं। लेकिन यह जो प्रेम है, वह भी त्याग की साधना से ही अन्ततः हमारे समक्ष मूर्त्त होता है। जो आदमी सदैव अपनी ओर ही खींचता है, अपने अहंकार को ही विजयी बनाने में व्यस्त रहता है, उस अहंकारी आदमी के मन में प्रेम का उदय नहीं होता—प्रेम का सूर्य कुहरे से ढंका रहता है।

मल्लिक चाचा की बातें पुनः याद आ गई। मल्लिक चाचा कहा करते थे: अभी तुम्हारी उम्र कम है, अभी तुम सिर्फ उम्मीद करते रहो। अभी तुम्हारे लिए सिर्फ प्रत्याशा का समय है। यह प्रत्याशा ही तुम्हें आगे की तरफ बढ़ाते हुए ले जाएगी। अभी इस उम्र में तुम सब कुछ की प्रत्याशा करोगे। प्रत्याशा करोगे सुख-समृद्धि, सौभाग्य सब कुछ की। सारी विघ्न-बाधाओं को अतिक्रमण करने की सीख यह प्रत्याशा ही देगी। दुनिया के तमाम लोगों की जिन्दगी के शुरुआती दौर में यह प्रत्याशा ही उन्हें प्रत्यय में पहुंचाकर उसके बाद फिर परित्राण में पहुंचा देगी। उस प्रत्याशा और प्रत्यय का समन्वय ही विश्व के समस्त मानव-समुदाय का परित्राण है।"

तो क्या आज वह प्रत्यय तक पहुंच चुका है? हां, आज संदीप अपनी फांसी के दिन बेझिझक कह सकता है कि वह इस प्रत्यय तक पहुंचकर परित्राण पाने के निमित्त जा रहा है।

"तुम क्या स्वयं को अपराधी महसूस करते हो?"

संदीप ने कहा, "हां।"

"हां, क्यों कह रहे हो!"

"तुमने बिजली देवी का खून करके कोई अपराध नहीं किया है, तुम्हें क्या ऐसा महसूस होता है?"

संदीप ने कहा, "हां।"

संदीप ने कहा था, "इसलिए कह रहा हूं कि अन्याय का विरोध या प्रतिकार करना प्रत्येक सच्चे आदमी का कर्त्तव्य है।"

और इसके बाद ही उसके सिर पर भारतीय पैनल कोड का सबसे बड़ा दण्ड उतर आया था। आज उसके लिए वही चरमदण्ड सहर्ष स्वीकार करने का लग्न आ गया है।

उसके बाद सवेरा हुआ। उस समय भी उसके मन में कोई क्षोभ नहीं था। विशाखा सुखी है। विशाखा को सौम्यपद मुखर्जी ने स्वीकार कर लिया है। इससे बढ़कर सुख संदीप के लिए और क्या हो सकता है? तुम्हारे सुख में ही मेरा सुख है। वही मेरा परित्राण है, वही मेरा परमार्थ है। संदीप के मन में सिर्फ एक ही दुख रह गया।

जेलर ने पूछा, "तुम्हारी कोई अन्तिम इच्छा है?"

संदीप ने कहा था, "मेरी अंतिम इच्छा यही है कि मुझे फांसी देने के दौरान, मेरे पास जो विशाखा की तस्वीर थी, वह तस्वीर भी मेरे साथ ही रहे। मैं उस तस्वीर को अपने साथ लेकर मरना चाहता हूं—"

जेलर ने आपत्ति की थी। कहा था, "नहीं, हम लोगों के जेलखाने का यह नियम नहीं है। तुम्हें स्वयं के अलावा और किसी चीज़ को अपने साथ रखने का कानूनी अधिकार नहीं है।"

इसलिए सवेरे जब उसकी पुकार हुई तो वह स्वतन्त्र था। तैयार तो वह पहले से *ही था। उसकी यही एक साधारण-सी दुर्बलता थी। लेकिन वह भी जब हाथ से चली गई* तो उसका अपने नाम पर कुछ नहीं रहा। जो चीज़ रह गई वह है देह, उसकी नरदेह!! *वह उस समय बिलकुल स्वतन्त्र था। जो प्रेमस्वरूप हैं उनसे मिलने के लिए जाने पर हमें* स्वतंत्र होना होगा। स्वतन्त्र के अतिरिक्त और किसी से, स्वतन्त्र से आदान-प्रदान नहीं हो सकता। इसीलिए कवि ने कहा है—'वह प्रेमस्वरूप हमसे कह गए हैं कि तुम मुक्त होकर मेरे पास आओ—जो व्यक्ति दास है उसके लिए मेरा आम दरबार अवश्य ही खुला हुआ है, लेकिन वह मेरे खास दरबार में प्रवेश नहीं कर सकेगा। एक समय मन के आग्रह से हम उनके खास दरबार के दरवाजे पर दौड़े जाते हैं, लेकिन द्वाररक्षक हमें बार-बार लौटा देता है। कहता है—तुम्हारा निमन्त्रण-पत्र कहां है? निमन्त्रण पत्र खोजने के दौरान हम देखते हैं कि हमारे पास जो कुछेक निमन्त्रण-पत्र हैं, वे धन के निमन्त्रण-पत्र हैं, यश के निमन्त्रण-पत्र हैं लेकिन अमृत का निमन्त्रण-पत्र नहीं है। अतः हम प्रेम-स्वरूप के खास दरबार में प्रवेश नहीं कर सके।'

उसके बाद एक ऐसा वक्त आया कि उसकी पुकार हुई। उसके हाथ पीछे की *तरफ बांध दिए गए, पांव भी बांध दिए गए। फांसी दिए जाने के स्थान में उसे फांसी के* मंच पर लाया गया। वहां पहले से ही जिला मैजिस्ट्रेट, जेल सुपर और जिन लोगों के रहने की बात थी, वे मौजूद थे। तब तक संदीप के सिर पर टोपी पहनाई जा चुकी थी। वह उस समय किसी को नहीं देख पा रहा था। वहां खड़े-खड़े संदीप मन ही मन प्रार्थना करने लगा। 'हे प्रेमस्वरूप, छुटपन से ही मैंने बहुत कुछ पाने की कामना की थी, तुमने मुझे सब कुछ से वंचित रखकर मुझे पुनर्जीवन दिया था। तुम्हारी यह निष्ठुर करुणा ही मेरे इस इहलोक और परलोक के जीवन का परम पाथेय बनकर रहा'

उस समय सभी जेल-सुपर के आदेश की प्रतीक्षा कर रहे थे। वे घड़ी देख रहे थे। उसके बाद जब ठीक आठ बजे तो उस समय उनके गले से आवाज़ निकली—"हैंग अनटिल डेथ—"

यह कहकर अपने हाथ का रूमाल ज़मीन पर फेंक दिया। जैसा कहा गया, वैसा *ही किया गया। उस समय भी संदीप के मन में बिल्वमंगल की वे बातें तैर रही थीं—*

यह नरदेह
बह जाता जल में

नोच-नोचकर खाते कुत्ते और शृगाल
या चिता-भस्म की तरह उड़ाता इसे पवन है···

अचानक जेलखाने के गेट के सामने एक टैक्सी आकर खड़ी हुई। अन्दर दो महिलाएं बैठी हुई थीं। एक दूसरी को थामकर जेलखाने के गेट के सामने ले आई और बोली, "सिपाहीजी, आज संदीप बाबू को फांसी पर लटकाने का दिन है?"

आदमी ने कहा, "हां—"

"हम क्या संदीप बाबू से ज़रा मिल सकती हैं?"

सिपाही ने कहा, "मुजरिम को फांसी पर लटकाया जा चुका है—"

मंगला पुकारने लगी, "भाभीरानी, ओ भाभीरानी, क्या हुआ? उठो, बातें करो भाभीरानी! बातें करो भाभीरानी···"

इस बीच उनके इर्द-गिर्द के बहुत सारे लोग इकट्ठे हो चुके हैं। चारों तरफ बहुत सारे लोगों की भीड़। एक आदमी ने दूसरे से पूछा, "क्या हुआ है भाई साहब यहां?"

एक आदमी ने कहा, "दिल का दौरा पड़ने के कारण एक औरत की मृत्यु हो गई है।"

यह सुनकर दूसरे आदमी ने कहा, "अयं! मरने के लिए और कोई जगह नहीं मिली? इस जेलखाने के सामने आकर दम तोड़ दिया!"

आदमी ने कहा, "शायद जेलखाने के अन्दर उसका कोई अपना आदमी था। सुना, आज थोड़ी देर पहले उसे फांसी पर लटका दिया गया है। यह सुनकर···"

उस ओर तब तक संदीप प्रेम-स्वरूप के दरवाज़े पर पहुंच चुका था। दरबार-घर के सामने के फाटक पर द्वार-रक्षक खड़ा होकर पहरा दे रहा था। संदीप सामने जाकर जैसे ही खड़ा हुआ, द्वार-रक्षक ने पूछा, "निमन्त्रण-पत्र है?"

संदीप ने कहा, "हां—"

"देखूं? रुपये का निमन्त्रण-पत्र है या ख्याति का निमन्त्रण-पत्र? देखूं?"

संदीप ने निमन्त्रण-पत्र दिखाया।

द्वार-रक्षक ने कहा, "यहां नहीं। यह आम दरबार है। उधर जाइए—"

संदीप सीधे सामने की तरफ जाने लगा। उधर भी एक दरवाज़ा है। वहां भी एक द्वार-रक्षक खड़ा है। संदीप पर निगाह पड़ते ही पूछा, "निमन्त्रण-पत्र है? यह प्रेम-स्वरूप का खास दरबार है—"

यहां भी वही सवाल दुहराया गया, "देखूं! रुपये का निमन्त्रण-पत्र है या ख्याति का?"

संदीप ने अपना निमंत्रण-पत्र निकालकर दिखाया। बोला, "अमृत का निमन्त्रण-पत्र।"

"देखूं—"

तत्क्षण खास दरबार का दरवाज़ा खुल गया। संदीप ने देखा, वहां अभी मंत्रपाठ हो रहा है। समवेत स्वर में उस समय मंत्र पाठ समाप्ति पर पहुंच रहा है: "ॐ मधुवाता ऋतायते मधुक्षरन्ति सिंधव।"

अजय बाबू चुप हो गए। उसके बाद बोले, "यही है इस युग के उस सच्चे आदमी की कहानी। दुनिया के लोगों ने संदीप लाहिड़ी को बैंक का रुपया गबन करने के अपराध में आठ साल तक जेल की सजा भुगतने वाले आदमी के रूप में ही जाना। लेकिन सच्चाई क्या यही है? संदीप लाहिड़ी के चले जाने के बाद भी उस प्रेमस्वरूप के पास एक दिन सभी जाएंगे। उनमें से कुछ के पास संभवतः रुपये का निमन्त्रण-पत्र रहेगा, किसी के पास ख्याति का निमन्त्रण-पत्र रहेगा। उन सबों को प्रेमस्वरूप के आम दरबार में आश्रय मिलेगा। लेकिन खास दरबार में? वहां प्रवेश करने के लिए अमृत का निमन्त्रण-पत्र चाहिए। यह कितने लोगों को प्राप्त हो सकेगा? लगता है, संदीप लाहिड़ी के बाद प्रेमस्वरूप के खास दरबार का दरवाजा हमेशा-हमेशा के लिए बंद हो गया। संदीप लाहिड़ी ही शायद उस खास दरबार का एकमात्र अभियात्री है।

ॐ शान्ति :—

○ ○ ○

नोच-नोचकर खाते कुत्ते और शृगाल
या चिता-भस्म की तरह उड़ाता इसे पवन है···

अचानक जेलखाने के गेट के सामने एक टैक्सी आकर खड़ी हुई। अन्दर दो महिलाएं बैठी हुई थीं। एक दूसरी को थामकर जेलखाने के गेट के सामने ले आई और बोली, "सिपाहीजी, आज संदीप बाबू को फांसी पर लटकाने का दिन है ?"

आदमी ने कहा, "हां—"

"हम क्या संदीप बाबू से ज़रा मिल सकती हैं ?"

सिपाही ने कहा, "मुजरिम को फांसी पर लटकाया जा चुका है—"

मंगला पुकारने लगी, "भाभीरानी, ओ भाभीरानी, क्या हुआ ? उठो, बातें करो भाभीरानी ! बातें करो भाभीरानी···"

इस बीच उनके इर्द-गिर्द के बहुत सारे लोग इकट्ठे हो चुके हैं। चारों तरफ बहुत सारे लोगों की भीड़। एक आदमी ने दूसरे से पूछा, "क्या हुआ है भाई साहब यहां ?"

एक आदमी ने कहा, "दिल का दौरा पड़ने के कारण एक औरत की मृत्यु हो गई है।"

यह सुनकर दूसरे आदमी ने कहा, "अयं ! मरने के लिए और कोई जगह नहीं मिली ? इस जेलखाने के सामने आकर दम तोड़ दिया !"

आदमी ने कहा, "शायद जेलखाने के अन्दर उसका कोई अपना आदमी था। सुना, आज थोड़ी देर पहले उसे फांसी पर लटका दिया गया है। यह सुनकर···"

उस ओर तब तक संदीप प्रेम-स्वरूप के दरवाज़े पर पहुंच चुका था। दरबार-घर के सामने के फाटक पर द्वार-रक्षक खड़ा होकर पहरा दे रहा था। संदीप सामने जाकर जैसे ही खड़ा हुआ, द्वार-रक्षक ने पूछा, "निमन्त्रण-पत्र है ?"

संदीप ने कहा, "हां—"

"देखूं ? रुपये का निमन्त्रण-पत्र है या ख्याति का निमन्त्रण-पत्र ? देखूं ?"

संदीप ने निमन्त्रण-पत्र दिखाया।

द्वार-रक्षक ने कहा, "यहां नहीं। यह आम दरबार है। उधर जाइए—"

संदीप सीधे सामने की तरफ जाने लगा। उधर भी एक दरवाजा है। वहां भी एक द्वार-रक्षक खड़ा है। संदीप पर निगाह पड़ते ही पूछा, "निमन्त्रण-पत्र है ? यह प्रेम-स्वरूप का खास दरबार है—"

वहां भी वही सवाल दुहराया गया, "देखूं ! रुपये का निमन्त्रण-पत्र है या ख्याति का ?"

संदीप ने अपना निमंत्रण-पत्र निकालकर दिखाया। बोला, "अमृत का निमन्त्रण-पत्र।"

"देखूं—"

तत्क्षण खास दरबार का दरवाजा खुल गया। संदीप ने देखा, वहां अभी मंत्रपाठ हो रहा है। समवेत स्वर में उस समय मंत्र पाठ समाप्ति पर पहुंच रहा है : "ॐ मधुवाता ऋतायते मधुक्षरन्ति सिंधव।"

अजय बाबू चुप हो गए। उसके बाद बोले, "यही है इस युग के उस सच्चे आदमी की कहानी। दुनिया के लोगों ने सदीप लाहिड़ी को बैंक का रुपया गबन करने के अपराध में आठ साल तक जेल की सजा भुगतने वाले आदमी के रूप मे ही जाना। लेकिन सच्चाई क्या यही है? सदीप लाहिडी के चले जाने के बाद भी उस प्रेमस्वरूप के पास एक दिन सभी जाएगे। उनमे से कुछ के पास संभवत: रुपये का निमन्त्रण-पत्र रहेगा, किसी के पास ख्याति का निमन्त्रण-पत्र रहेगा। उन सबो को प्रेमस्वरूप के आम दरबार में आश्रय मिलेगा। लेकिन खास दरबार मे? वहा प्रवेश करने के लिए अमृत का निमन्त्रण-पत्र चाहिए। यह कितने लोगो को प्राप्त हो सकेगा? लगता है, संदीप लाहिड़ी के बाद प्रेमस्वरूप के खास दरबार का दरवाजा हमेशा-हमेशा के लिए बंद हो गया। संदीप लाहिड़ी ही शायद उस खास दरबार का एकमात्र अभियात्री है।

ॐ शान्ति :—

० ० ०